मध्यएसिया का इतिहास

खण्ड १

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना-८०००४

समर्पण

परगत डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल को
जिनकी स्मृति अट्ठारह वर्षों के अनन्त वियोग के बाद भी
मेरे जीवन की प्रिय निधि है

वक्तव्य

हमे प्रसन्नता है कि अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिलब्ध विद्वान् महापण्डित श्रीराहुल साकृत्यायन (अब स्वर्गीय) द्वारा लिखित 'मध्यएसिया का इतिहास' नामक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थ के प्रथम भाग का द्वितीय सस्करण परिमार्जित रूप मे विज्ञ पाठको के समक्ष प्रस्तुत हो रहा है। इस ग्रन्थ ने न केवल इतिहास-साहित्य के एक बडे अभाव की पूर्त्ति की है, बल्कि अपनी अद्वितीयता भी सिद्ध कर दी है। अद्यावधि यह ग्रन्थ 'एक-श्चन्द्रस्तमो हन्ति' की भाँति ऐतिहासिक साहित्य-गगन मे अपनी प्रोज्ज्वल प्रभा के कारण ऐकान्तिक रूप मे उपादेय माना जाता है। उल्लेख्य है कि यह जिस भूखण्ड-विशेष का इतिहास है, उसके सम्बन्ध मे शृखलाबद्ध ऐतिहासिक सामग्री बहुत कम सुलभ है और हिन्दी-भाषा मे तो उसका अभाव-सा ही है। परिषद् द्वारा प्रकाशित गौरव-ग्रन्थो मे पाक्तेय यह कृति अपनी सारस्वत विशिष्टता के कारण भारत-सरकार की 'साहित्य-अकादमी' द्वारा पुरस्कृत हुई है। ज्ञातव्य है कि इसका प्रथम संस्करण सन् १९५६ ई० मे ही प्रकाशित हुआ था और पिछले कई वर्षों से इसकी प्रतियाँ अनुपलब्ध थी।

प्रथम सस्करण मे परिषद् की स्वीकृत नीति के अनुसार वर्त्तनी का निर्वाह सम्भव नही हो सका था, क्योकि उसके प्रारम्भिक कुछ पृष्ठो का मुद्रण बिहार से बाहर हुआ था। इस द्वितीय सस्करण मे उसका सम्यक् निर्वाह कर दिया गया है। प्रथम सस्करण की भूमिका मे विद्वान् लेखक ने लिखा था कि 'त्रुटियो के बारे मे विषय-सूची के हेडिंगो और उच्चारणो को अन्तिम मानना चाहिए।' प्रस्तुत संस्करण मे यथासम्भव तदनुरूप सशोधन कर दिया गया है और स्थानो एव व्यक्तियो के नामो मे एकरूपता रखने का प्रयास किया गया है। फिर भी, यदि त्रुटियाँ रह गई होगी, तो वे नगण्य ही होगी और उनका परिमार्जन आगामी सस्करण मे सम्भव हो सकेगा।

हम आश्वस्त है कि मध्यएसिया के इतिहास पर रोचक और सरल भाषा-शैली मे प्रामाणिक ढग से प्रकाश-निक्षेप करनेवाले इस ग्रन्थ का प्रस्तुत सस्करण यथापूर्व उपयोगी माना जायगा और इसका व्यापक स्वागत होगा।

तुलसी-सप्तमी, स० २०४२ वि०
२२ अगस्त, १९८५ ई०, गुरुवार

(पं०) रामदयाल पाण्डेय
(उपाध्यक्ष-सह-निदेशक)

वक्तव्य

(प्रथम संस्करण)

'विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम् ।'

विहार-राज्य के शिक्षा-विभाग के अन्तर्गत यह परिषद् एक साहित्यिक सस्था है। अवतक इसके द्वारा दो दर्जन महत्त्वपूर्ण पुस्तको का प्रकाशन हो चुका है। उन्हें समस्त हिन्दी-ससार ने पसन्द भी किया है।

सन् १९५४ ई० मे विहार के तत्कालीन शिक्षा-सचिव **श्रीजगदीशचन्द्र माथुर**, आइ० सी० एस्० के अनुरोध से, परिषद् ने इस पुस्तक का प्रकाशन स्वीकृत किया था। किन्तु, परिषद् की स्वीकृति से पूर्व ही इसके दूसरे खण्ड के कई फॉर्म लखनऊ मे छप चुके थे। तव भी, हिन्दी मे ऐसी पुस्तक का अभाव और एक अधिकारी विद्वान् द्वारा उस अभाव की पूर्त्ति का सत्प्रयास देखकर, परिषद् ने अपने नियमो के अपवाद-स्वरूप, विशेप परिस्थिति मे वह स्वीकृति दी थी। इसलिए कि लेखक ने इस पुस्तक के दूसरे खण्ड की छपाई पहले ही शुरू करा दी थी, इस पहले खण्ड की पाण्डुलिपि भी दोनो खण्डो की एक-सी छपाई कराने के विचार से लखनऊ भेज दी गई। परन्तु, कुछ अनिवार्य कारणो से जव दूसरे खण्ड की ही छपाई मे विलम्व होने लगा, तव प्रस्तुत खण्ड को पहले ही प्रकाशित करना आवश्यक समझ प्रयाग मे इसकी छपाई का प्रवन्ध करना पड़ा, क्योकि इसके लिए लखनऊ मे खरीदा हुआ कागज भी प्रयाग भेजना था।

हम चाहते थे कि दोनो खण्ड एक साथ ही प्रकाशित हो। पर, दूसरा खण्ड इससे कुछ वडा है। फिर भी, हम उसे अविलम्व प्रकाशित करने मे प्रयत्नशील हैं। आशा है कि वह भी शीघ्र ही पाठको की सेवा मे पहुँचेगा। तवतक इस खण्ड का पहले निकल जाना उचित ही हुआ।

इस पुस्तक मे विभक्तियो के चिह्न सर्वत्र शब्दो के साथ लगे हुए हैं। परिषद् की अन्य पुस्तको मे ऐसा नही है। किन्तु इस पुस्तक के दूसरे खण्ड के कई फॉर्म जैसे पहले छप चुके थे, वैसे ही इस खण्ड के भी छपवाने पड़े। कारण, दोनो खण्डो की छपाई मे समता रखना आवश्यक प्रतीत हुआ। विभक्तियो को शब्दो से हटाकर या सटाकर लिखने-छापने की परिपाटी आज भी हिन्दी-जगत् मे प्रचलित है। अत, पहले के छपे हुए पृष्ठो को नष्ट करके परिषद् की परम्परा के अनुसार पुन नये सिरे से छपाई शुरू कराना हमने अनावश्यक समझा, क्योकि पुस्तक के महत्त्व मे इससे कोई वाधा नही पडी है।

अस्तु। भारत का इतिहास पढने पर प्राय ऐसा अनुभव होता है कि मध्यएसिया के इतिहास से भारत के इतिहास की कितनी ही घटनाएँ सम्बद्ध हैं। परन्तु, हिन्दी मे मध्यएसिया के कुछ देशो के भौगोलिक एव ऐतिहासिक विवरण तो मिलते हैं, सम्पूर्ण मध्यएसिया का क्रमवद्ध इतिहास नही मिलता। इसलिए, अनेक ऐतिहासिक जिज्ञासुओ

का समाधान नहीं हो पाता था। आशा है कि अब यह पुस्तक भारत और उसके पड़ोसी देशों के इतिहास की शृंखला को अटूट सिद्ध करके पाठकों को सन्तुष्ट करेगी।

इस पुस्तक के समर्थ लेखक महापण्डित **श्रीराहुल सांकृत्यायनजी** अन्तरराष्ट्रीय ख्याति के विद्वान् हैं। इस युग के आप एक धुरन्धर साहित्यकार हैं। साहित्य-शोध का क्षेत्र आपके अनवरत अनुसन्धानात्मक परिश्रम एवं लेखनी-सचालन से बहुत उर्वर हुआ है। आपकी अथक लेखनी ने कितने ही ऐसे विषयों को सनाथ किया है, जिनकी ओर हिन्दी-ससार के विद्वज्जनों का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ था। अत, हिन्दी-साहित्य आपकी खोज की लगन और देन से बहुत लाभान्वित हो रहा है। विश्वास है कि यह पुस्तक भी हिन्दी-साहित्य के एक चिर-अनुभूत अभाव की पूर्त्ति करेगी तथा ऐतिहासिक शोध के कामों मे भी सहायक होगी।

दीपावली, सवत् २०१३ वि०

शिवपूजन सहाय
(सचालक)

भूमिका

(प्रथम सस्करण)

भारत के इतिहास की जगह मध्यएसिया के इतिहास पर मैंने क्यो कलम उठाई, यह प्रश्न हो सकता है। उत्तर आसान है। भारत के इतिहास पर लिखनेवाले वहुत है। जिसका अभाव है, उसकी पूर्त्ति करना जरूरी था, यही विचार इस प्रयास का कारण हुआ। अपनी यात्राओ मे मैं रूस और मध्यएसिया के सम्पर्क मे आया, उनके ऊपर कितनी ही पुस्तकें लिखी और अनुवादित की। उसी समय विचार आया, आधुनिक ऐतिहासिक घटनाओ को पिछले इतिहास की पृष्ठभूमि मे देखना चाहिए। इस तरफ आगे वढा, तो यह भी मालूम हुआ, मध्यएसिया का इतिहास हमारे देश के इतिहास से वहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है। द्रविड़ (फिनो-द्रविड़) जाति—जिसने मोहेनजोदड़ो और हड़प्पा के भव्य नगर और यशस्वी सिन्धु-सभ्यता प्रदान की—का सम्वन्ध मध्यएसिया से भी था। हाल के पुरातात्त्विक अनुसन्धान वतलाते है कि आर्यों का सम्पर्क द्रविड जाति से सवसे पहले सिन्धु-उपत्यका मे नही, वल्कि ख्वारेज्म मे हुआ था। वहाँ पराजित करके उनका स्थान ले आर्य भारत की ओर वढे। उनका वढाव पिछली विजित भूमि को विना छोडे आगे की तरफ होता रहा, इसलिए भारतीय आर्यों की परम्परा मे अपने पुराने छोडे हुए स्थान का उल्लेख नही पाया जाता। आर्यों की अनेक लहरो के वाद ग्रीक लोगो ने भी वाख्त्रिया से आकर भारत के कुछ भाग पर शासन किया। शक-कुषाण भी वहाँ से ही होकर आये। तथाकथित हूण—हेफताल—भी मध्यएसिया से भारत की ओर वढे। तुर्क और इस्लाम भी वहाँ से चलकर भारत आया। इन शासको और उनकी जातियो के इतिहास का एक भाग मध्यएसिया मे पडा रहा, जिसे जाने विना हम अपने इतिहास को समझने मे गलती कर बैठते हैं। इस दृष्टि से भी मुझे इस पुस्तक के लिखने की प्रेरणा मिली।

यद्यपि मैं अपने इतिहास को मध्यएसिया—अर्थात् मुख्य चीन, भारत-अफगानिस्तान, ईरान, कॉस्पियन समुद्र और रूस द्वारा घिरी हुई भूमि—तक ही सीमित रखना चाहता था, लेकिन इतिहास की नदी वहुत टेढी-मेढी वहती है, जिसके कारण मुझे इन सीमान्त देशो के इतिहास मे भी कही-कही भटकना पडा। वैसा न करने से विषय के समझने मे कठिनाई होती।

नामो के उच्चारण मे हिन्दी मे अभी हमारी कोई परम्परा नही वनी है, विशेषकर उन नामो के वारे मे, जो कि पहली वार इस पुस्तक मे आ रहे हैं। अंगरेजो और अंगरेजी का उच्चारण सवसे भ्रष्ट होता है, इसलिए मैंने उससे वचने की कोशिश की है। जर्मन इसके वारे मे ज्यादा अच्छे रहते हैं और अपनी अधिक उच्चारणानुरूप लिपि के कारण रूसी सवसे अच्छे हैं। पर, मूल भाषाओ की लिपियो मे जो दोष है, उसे वह कैसे दूर कर सकते हैं? मंगोल-लिपि मे मुश्किल से डेढ दर्जन अक्षर हैं। वहाँ क, ग और ह मे कोई अन्तर नही है। कगान, खगान, हगान, हकान चाहे जिस तरह एक ही लिखे शब्द को पढ

लीजिए। चीनी नामों के उच्चारण में भी ऐसी कठिनाई है। इसके अतिरिक्त, पुस्तक की छपाई जिन निराशाजनक परिस्थितियों में वर्षों रुक-रुक कर होती रही, उनके कारण मैं नामों के एक समान उच्चारण को बराबर इस्तेमाल नहीं कर सका। इस तथा दूसरी बातों में भी विषय-सूची में दिये गये रूप को अन्तिम मानना चाहिए।

पुस्तक की सामग्री का बहुत बड़ा भाग मैंने रूस में अपने दो साल के प्रवास (सन् १९४५–४७ ई०) में जमा किया। इसमें शक नहीं, मध्यएसिया के इतिहास की जितनी सामग्री रूस और रूसी-भाषा में है, उतनी अन्यत्र नहीं मिल सकती। जिस तत्परता से वहाँ ऐतिहासिक और पुरातात्त्विक अनुसन्धान हो रहे हैं, उनके कारण हर साल नई-नई सामग्री प्राप्त हो रही है। अफसोस है, सन् १९४७ ई० के बाद की उपलब्ध सामग्री से बहुत कम का ही इस्तेमाल मैं कर सका। प्रो० तोल्स्तोफ कई वर्षों से पुरातात्त्विक अभियानों के नेता होते रहे हैं। उस विषय में, विशेषकर ख्वारेज्म, कराकुम और किजिलकुम की भूमि के सम्बन्ध में उनका ज्ञान अद्भुत है। सप्तनद के बारे में डॉ० बेर्नस्ताम का अध्ययन गम्भीर है। इन दोनों विद्वानों से जब-जब मुझे मिलने का मौका मिला, उन्होंने समय और श्रम का कुछ भी ख्याल न करके दिल खोलकर अपने ज्ञान से लाभ उठाने का मुझे अवसर दिया। इनका उल्लेख मैं अपनी यात्रा-पुस्तक 'रूस में पच्चीस मास' में कर चुका हूँ। मैं अपनी कुछ कल्पनाओं में उनका आग्रहवान् न होता, यदि उनके साथ विचार-विनिमय के बाद उसमें सार न रहता। 'मध्यएसिया का इतिहास' लिखने के अधिकारी सोवियत विद्वान् ही हो सकते हैं, लेकिन अभी वे भिन्न-भिन्न कालों और अंशों पर ही अनुशीलन कर रहे हैं। न मालूम कबतक वे उस अनुशीलन को क्रमबद्ध इतिहास के महाग्रन्थ के रूप में परिणत करेंगे। उस ग्रन्थ के तैयार होने तक मेरे इस प्रयास का मूल्य रहेगा ही।

दो सालों के बाद रूस से भारत चले आने का एक बड़ा कारण संगृहीत सामग्री और [illegible] को पुस्तक के रूप में लाने का ख्याल था। मैंने वहाँ चार-पाँच मन पुस्तकें जमा की थीं। इसके अतिरिक्त, दो वर्ष में पढ़ी पुस्तकों में बहुत-से नोट लिये थे। वहाँ रहते पुस्तक लिखने पर वह प्रेस का मुँह देख सकती, इसमें पीछे के तजर्बे ने भी सन्देह पैदा कर दिया। इन्हीं पुस्तकों को सुरक्षित लाने के ख्याल से मैं अफगानिस्तान के छोटे रास्ते को छोड़ ईरान होते भारत लौटा। यदि सीधे रास्ते लौटा होता, तो अगस्त, १९४७ ई० में पश्चिमी पाकिस्तान से आता, फिर न मालूम सामग्री और सवारी पर क्या बीतती?

इतनी बड़ी पुस्तक को छापनेवाला मिलना मुश्किल था। एक प्रकाशक ने पहली जिल्द के [illegible] लिये और दूसरी जिल्द को नेशनल हेरल्ड प्रेस में छापने के लिए दिया [illegible] उनकी अपनी शक्ति से बाहर मालूम हुआ। नेशनल हेरल्ड प्रेस ने मेरी जिम्मेवारी पर इस जिल्द को छापना शुरू किया, जिसके लिए [illegible] हो चुका था। [illegible] करने पर यह मालूम [illegible] और यह पता नहीं, दूसरा खण्ड था। श्रीजगदीशचन्द्र माथुर ने पुस्तक की पाण्डुलिपि देखकर इसे बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

को देने के लिए कहा। पर, पहले तो पहलेवाले प्रकाशक को तैयार करना था, जिन्हे मैं वचन दे चुका था। वह राजी हुए। विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की, जिसमे **श्रीजगदीशचन्द्र माथुर** और परिषद् के सचालन-मण्डल ने जो प्रयत्न किया, वह न होता, तो पुस्तक की सद्गति कीडे-मकोडे ही करते।

पुस्तक की पहली जिल्द सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग मे छपी है और दूसरी नेशनल हेरल्ड प्रेस, लखनऊ मे। सम्मेलन मुद्रणालय के अध्यक्ष **श्रीसीताराम गुण्ठे** अपनी चुस्ती और कार्य-क्षमता के लिए प्रसिद्ध है। उन्होने इसको जिस तत्परता से छापा, उसके लिए मैं उनका हृदय से कृतज्ञ हूँ। पहले नेशनल हेरल्ड प्रेस ने फुरती से छापना शुरू किया था, फिर उसने वर्षों तक चुप्पी साध ली। हर्ष है, नये प्रवन्धक ने तत्परता दिखलाई है। आशा है, दूसरा खण्ड भी जल्दी निकल जायगा।

लिखावट खराव होने और अभ्यास छूट जाने के कारण, मैं पुस्तक को टाइपराइटर पर बोलकर लिखवाता हूँ। मुझे परिश्रम का अभ्यास है और वाहरी वाधा उपस्थित न हो, तो सारा समय लिखने-पढने मे विता सकता हूँ। मेरे साथ चलनेवाले सहायक वहुत कम मिल सकते है। **श्रीमगलदेव परियार** इस विषय मे मेरी ही तरह निरलस है। उनकी सहायता और द्रुतगति ने इस पुस्तक मे वड़ी सहायता की है।

त्रुटियो के वारे मे विपय-सूची के हेडिंगो और उच्चारणो को अन्तिम मानना चाहिए।

मसूरी **राहुल सांकृत्यायन**
४-६-१९५६ ई०

विषय-सूची

भाग १

प्रागैतिहासिक मानव (१ लाख वर्ष—३००० वर्ष पूर्व)

अध्याय १ . पुराकल्प ३–१०

१ पृथ्वी पर प्राणी : ३, २ प्राकृतिक भूगोल : ५; ३ जलवायु-परिवर्त्तन ७; ४ वनस्पति-क्षेत्र मे परिवर्त्तन ९; ५ हिमयुग : ९

अध्याय २ पुरा-पाषाणयुग : ११–१९

१ मानव-जातियाँ . ११, २. निम्न-पुरा-पाषाणयुग . १४, (क) जावा-मानव १४, (ख) पेकिंग-मानव · १६, (ग) हैडलवर्ग-मानव १७, (घ) मुस्तेर (नियण्डर्थल) . १७

अध्याय ३ . उपरि-पुरा-पाषाण और मध्य-पाषाणयुग २०–२७

१ ओरन्यक (१५००० वर्ष पूर्व) २०, (क) क्रोमेञ्यो : २०, (ख) ग्रिमाल्दी २०, (ग) सोलूत्रे : २२, (घ) मद्लेन (१३००० वर्ष पूर्व) २२, २ मध्य-पाषाणयुग २३; ३ मानवशरीर-लक्षण : २४, (क) शरीर-लक्षण : २४; (ख) जातियो का सम्मिश्रण : २५, (ग) रक्तभेद २६

अध्याय ४ : मध्यएसिया के आदिम मानव : २८–३७

१ मध्य-पुरा-पाषाणयुग २८, (क) तेशिकताश-मानव : २८; (ख) जीवन-चर्या : ३०; (ग) भाषा · ३३, २ मध्य-पाषाणयुग (१२००० वर्ष पूर्व) : ३५

अध्याय ५ नव-पाषाणयुग, अ-नव-पाषाणयुग : ३८–४८

१. नव-पाषाणयुग (५००० ई० पू०) · ३८, (क) कृषि : ३८; (ख) पशुपालन : ४१; (ग) मृत्पात्र ४१, (घ) पाषाणास्त्र ४२, (ङ) जलवायु ४३, (च) अनौ मे नव-पाषाण-युग : ४३; २ अ-नव-पाषाणयुग (३००० ई० पू०) ४५, ३ मानव-जाति ४६

भाग २

धातुयुग (३०००—७०० ई० पू०)

अध्याय १ ताम्रयुग (२५००–१५०० ई० पू०) ५१–५९

१ युग की विशेषता ५१, २ ताम्र-उद्योग ५२; ३ व्यापार ५३, ४ हथियार · ५४, ५ राज्य-व्यवस्था · ५५, ६-७ अनौ मे ताम्रयुग : ५६, ८ ख्वारेज्म मे ताम्रयुग . ५८, ९ लिपि : ५९

अध्याय २ . पित्तल-युग (१५००–७०० ई० पू०) ६०–६३

१ युग की विशेषता ६०, २ ख्वारेज्म मे पित्तल-युग ६१, ३ सप्तनद : ६१; ४ अनौ मे (पित्तल-युग) : ६२, ५ जातियाँ ६२

अध्याय ३ लौहयुग (७०० ई० पू०) ६४–७०

१ शकद्वीप ६४; २ दाक · ६७

भाग ३

उत्तरापथ (६०० ई० पू० से ७२० ई०)

अध्याय १ : शक (६००–१७४ ई० पू०) : ७३–७८

१. शक-जातियाँ · ७३, २ अल्ताई के शक . ७५

अध्याय २ : हूण (३०० ई० पू० से ३०० ई०) ७९–९७

१ प्राचीन हूण ७९; २ हूण-राजावलि ८१, (क) शासन ८३, (ख) नववर्षोत्सव : ८४, (ग) युद्ध · ८५; ३ पीछे के हूण-शासक . ८७; (क) वू-ती और हूण : ८९; (ख) हूण-पराभव . ९०, ४ उत्तरी और दक्षिणी शान्-यू ९३

अध्याय ३ · वू-सुन् (२००–१०० ई० पू०) अवार . ९८–१०७

१ वू-सुन् . ९८, (क) संस्कृति ९९, (ख) इतिहास ९९, (ग) वू-सुनो के पड़ोसी : १०१, (घ) वू-सुन्-राजा (सेन्-चू) , १०२, २. अवार (सन् ४००–५८२ ई०) · १०५

अध्याय ४ तुर्क (सन् ५४६–७०४ ई०) : १०८–१३२

१ तुर्क-साम्राज्य की स्थापना · १०८, (क) शव-क्रिया ११०; २ तुर्क-राजावलि : १११, तू-खान तू-मिन् : ११२, इस्-गी या इस-ते . ११२, मू-यू खान ११२, तोवा खान ११३, बौद्धधर्म का प्रवेश ११३, शे-तू शबोलियो ११५, दूलन खान . ११६, दा-तू बूगा खान ११७, मे-र्ची खान · ११८, तू-र्ची खान १२१, सि-बि-ली खान : १२१, चे-र्वी खान १२२, ३ अशिना-निशो १२३, गु-दु-लू कगान . १२४, मो-चा १२४, मो-गि-ल्यान् १२८

अध्याय ५ पश्चिमी तुर्क (सन् ५८०–७०४ ई०) : १३३–१४४

१ तुर्क-कगान १३३, दालोब्यान १३३, नी-र्ली १३४, चू-लो कगान : १३४, शे-गुइ १३५, तुन्-शे-खू १३५; क्यू-र्वी सि-बि खान १३८, सि-शे-खू १३९; नि-दु-नु खान · शबोलो खिलिश खान १३९, इर्वी दु-लु खान १३९, इर्वी शबोलो शे-खू १३९, अशिना-शिन् १४०, मोंगे १४०, सू-नू १४१, २ तुर्क-जातियाँ : १४२, उपसंहार १४३

भाग ४

दक्षिणापथ (ई० पू० ५५० से ६७३ ई०)

अध्याय १ अखामनी (ई० पू० ५५०–३२६) . १४७–१६१

कुरुष १४९, दारयवहु १५१, १ शासन-व्यवस्था १५३; २ धर्म . १५५; ३ अखामनी-राजा : १५६, अराशं १५६, दारयवहु-३ १५९, अलिकसुन्दर · १५९

अध्याय २ कश (ई० पू० ५ वीं शती–ई० प्रथम शती) १६२–१६७

१ तेल्ल-मीनार-संस्कृति १६२, २ नागायागराव-संस्कृति १६३, ३ नागामीराबाद-संस्कृति १६४, ४ आदिम कश १६४, ५ कश · १६५, कश-कुषाण १६५; ६ कुषाण-अर्नीव १६६, ७ अर्मीग-संस्कृति · १६७

अध्याय ३ ग्रीक-बाख्तरी (३३०–१३० ई० पू०) १६८–१९०

अलिकसुन्दर : १६८; सेल्युक (सेल्युकस)-१ . १७१, १. ग्रीक-बाख्तरी : १७२; तुलनात्मक बाख्तरी ग्रीक-वंश १७२, दिवोदोत प्रथम १७३, दिवोदोत द्वितीय १७४, एउथुदिम १७४, दिमित्रि १७७, २ भारत-विजय . १७८, एउक्रतिद . १८१; हेलियोकल : १८३; अन्तियलिकिद : १८४, ३. भारत मे १८४, मिनान्दर : १८४, स्त्रात-१ : १८५; स्त्रात-२ १८५; ४ राज्य-व्यवस्था : १८५; ५ धर्म · १८७; ६ कला : १८९

अध्याय ४ : शक (ईसा-पूर्व १३०-४२५ ई०) : १९१–२१५

१ यूची १९१, २ क्षहरात-वंश १९४, मोग १९४, पह्लव १९५, ३ तुलनात्मक शक-पह्लव-वंश १९९, ४ कुषाण . १९९; ५ कुषाण-राजा : २००, कुजुल कदफिस् : २००; विम कदफिस् . २०२; कनिष्क : २०३, वसिष्क . २११; कनिष्क-२ : २११, हुविष्क : २१२; वासुदेव : २१३; पिरो (चौथी शताब्दी का अन्त) : २१४

अध्याय ५ हेफताल (सन् ४२५–५५७ ई०) : २१६–२२१

१ राजा : २१६, २ तुलनात्मक हेफताल-अवार-वंश : २१७; ३. ईरानी और हेफताल : २१८

अध्याय ६ तुर्क (सन् ५५७–७०४ ई०) २२२–२३४

दालोब्यान २२२, चून्लो कगान . २२२; १. तुलनात्मक तुर्क-वंश, २२३, शे-गुइ . तुन्-शे-खू २२४; २ स्वेन-चाङ का देश-वर्णन · २२५; ३. अन्तिम तुर्क २३२, शेरेकिश्वर : सेकेजकेत : २३३; वेनदून : २३३; तुगशादे · २३३

भाग ५

उत्तरापथ (सन् ७६६–९४० ई०)

अध्याय १ आगूज उइगुर २३७–२५४

१ आगूज · २३७, २ उइगुर २३९ ;३ उइगुर-खाकान २४०, जिकेन या जिगिन २४०, ४ उइगुर-राजावलि · २४१; वोसत् २४२, तुमेत : २४२; वोरुन, वीरुत (पीली) और तु-खे-ली : २४२; वुल्तेवर : २४३, कुतुलुग विगा . २४३, मोइनचुरा : २४३; यितिकिन २४५; ड्रुरमोगो सयुक्त कुतुलुग २४६; तरस : २४८, आचो . २४८, कुतुलुग : २४९; काउ-साङ २४९, गुदुलुग जिगिन · २४९; ओ-के २५०; ओ-नेयन २५१, ५ अन्तिम उइगुर : २५१, आतुर्युक २५२

अध्याय २ करलुक (सन् ७३९–९४० ई०) २५५–२५८

१. करलुक (करलुग) जाति २५५, २ धर्म २५६, ३ करलुको के नगर . २५७

भाग ६

दक्षिणापथ (सन् ६७३–९०० ई०)

अध्याय १ . अरब (सन् ६७३–८१८ ई०) · २६१–२६९

१. पैगम्बर मुहम्मद २६१, २ नई आर्थिक व्याख्या · २६३; ३. आरम्भिक खलीफा : २६४; अबू बकर · २६५; उमर : २६६; उसमान . २६७, अली · २६८

अध्याय २ . उमैया-वंश (सन् ६६१–७४९ ई०) २७०–३०४

१ उमैया-वंश के खलीफा २७०, खलीफा म्याविया मेरवान २७०, २ तुलनात्मक अरब-वंश २७२, ३ अरब-विजय के समय · २७५, खलीफा यजीद मेरवान-पुत्र २७७; खलीफा म्याविया-२ २७८, खलीफा अब्दुल मलिक मेरवान-पुत्र २७८, खलीफा वलीद अब्दुल मलिक-पुत्र २७९, खलीफा सुलेमान : २८०, खलीफा उमर-२ अजीज-पुत्र २९३; खलीफा यजीद-२ अब्दुल मलिक-पुत्र २९३, खलीफा हिशाम २९५, शिया-आन्दोलन २९७, अबू-मुस्लिम ३०२

अध्याय ३ . अब्बासी (सन् ७४९–८१८ ई०) · ३०५–३२१

खलीफा सफ्फाह् अबुल-अब्बास ३०५, अब्बासी खलीफा और उनके राज्यपाल ३०५, खलीफा मंसूर ३०९, खलीफा मेहदी : ३१२; हादी ३१५, हारून रशीद ३१५, अमीन ३१६, मामून ३१७, अरबी-साहित्य · ३१८, सिक्के ३२०

अध्याय ४ ताहिरी (सन् ८१८–८८२ ई०) ३२२–३२६

ताहिर ३२२, १ तुलनात्मक ताहिरी-सफ्फारी सामानी-वंश . ३२२; तलहा ३२४, अली ३२५, अब्दुल्ला · ३२५, ताहिर-२ ३२५, मुहम्मद अब्दुल्ला-पुत्र ३२६

अध्याय ५ सफ्फारी (सन् ८६१–९३० ई०) ३२७–३३२

याकूब ३२७, वंश सफ्फार ३२८

भाग ७

उत्तरापथ (सन् ९४०–१२१२ ई०)

अध्याय १ करारवानी (सन् ९४०–११२५ ई०) : ३३५–३४४

१ उद्गम . ३३५, २ करारवानी-राजावलि ३३६, सातुक करारवान ३३८, बोगराखान : ३३८, इलिक नस्र · ३३९, तुगान ३३९, कादिर खान यूसुफ ३४०, अरसलन खान सुलेमान : ३४१, बोगराखान-२ ३४१, इब्राहीम ३४१, तुगरल करारवान यूसुफ ३४२, तुगरल तेगिन · ३४२, बोगराखान-३ हारून ३४२, कादिर खान जिब्रील · ३४३

अध्याय २ · करारवितार्इ (सन् ११२५–१२११ ई०) : ३४५–३७१

१ उद्गम · ३४५; २ खितन-सम्राट् . ३४६; अपांगी . ३४६, ताइ-चुङ ३४९, शी-चुङ ३५१, मू-चङ ३५२, चिङ-चुङ (शिङ-ची) ३५२; शेङ-चुङ ३५२, शिङ-चुङ (मू-यू-ट्) . ३५३, ताउ-चुङ · ३५५, ताङ-चुङ-नि (येलू-ती) ३५६, ते-चुङ . ३५७; ३. करारवितार्इयों की वंशावली ३५९, येलू दशी ३६०, गुरखान-पुत्री ३६२, येलू-उकू · ३६२; चेन्-यू-गू . ३६३, गुरखान ३६३; मुस्लिम-विद्रोह ३६४, कुचलुग ३६८, उस्मान खाँ से झगड़ा : ३६९, मंगोलों से संघर्ष ३७१

भाग ८

दक्षिणापथ (सन् ८९२–१२२६ ई०)

अध्याय १ : सामानी (सन् ८९२–९९९ ई०) ३७५–३९३

उद्गम ३७५ १ नस्र · ३७५, - इस्माइल अहमद-पुत्र ३७६; ३ अहमद

इस्माइल-पुत्र ३७८, ४ नस्र-२ (अहमद-पुत्र) : ३८०, ५ नूह-१ नस्र २-पुत्र : ३८०, ६ अब्दुल मलिक नूह-पुत्र ३८०, ७-८ मन्सूर-१ नूह-पुत्र ३८१, ९ नूह-२ मन्सूर-पुत्र ३८१; बू-अली सीना : ३८२, १० मन्सूर-२ नूह २-पुत्र : ३८४, ११. अब्दुल मलिक नूह २-पुत्र : ३८५, १२ मुन्तसिर सामानी ३८६, सामानी शासन-व्यवस्था : ३८७, शिल्प और व्यवसाय . ३९१

अध्याय २ कराखानी (सन् ९९३–११३१ ई०) : ३९४–४०६

१. उद्गम ३९४, २. खान ३९४, बु(वो)गराखान हारून : ३९४, १ इलिक नस्र . ३९५; २ इब्राहीम (बुरीतगिन) . ३९८, ३ इब्राहीम-२ इलिक-पुत्र : ३९८, शमशुलमुल्क : ४००; ५ खिजिर खान ४०१, ६. अहमद : ४०१, ७ मसऊद खान · ४०३, ८ कादिर ४०३, ९ महमूद तगिन ४०३, १० तमगाच बु(वो)गराखान इब्राहीम ४०५, ११ किलचि तमगाचखान ४०५, १२ रुकुनु (जलालु)द्दीन मुहम्मद ४०५, ३ सिक्के ४०५

अध्याय ३ गजनवी (सन् ९९८–१०५९ ई०) : ४०७–४३२

१ उद्गम ४०७, अलपतगिन : ४०८, तुलनात्मक गजनवी-सल्जूकी-गोरी-वंश ४१२, २. राजावलि : ४१३, सुबुकतगिन ४१३, महमूद : ४१४, ३ महमूद और ख्वारेज्मशाह ४१६, मामून-२ ४१६; अबुल हारिस : ४१८; अल्तूनताश ४१९, ४ मसऊद ४२५, हारून ख्वारेज्मशाह ४२६; ५ सल्जूकी तुर्कमान ४२८, बुरीतगिन ४३०, ६ मुहम्मद ४३२, ७. मौदूद : ४३२, ८ इब्राहीम . ४३२

अध्याय ४ सल्जूकी (सन् १०३६–११५७ ई०) ४३३–४५०

१ राजावलि ४३३; २ उद्भव ४३४, ३ सुलतान . ४३५; (१) तुगरल मिकाइल-पुत्र ४३५, (२) अल्पअरसलन ४३९, (३) मलिकशाह अरसलन-पुत्र ४४०, गजाली ४४०, ४ महमूद-१ मलिक-पुत्र ४४२, ५ बरकियारुक . ४४२, ६ मलिकशाह-२ बरकियारुक-पुत्र ४४२, ७ मुहम्मद मलिक-पुत्र : ४४३, ८. महमूद-२ मुहम्मद-पुत्र ४४३; ९ सिंजर मलिकशाह-पुत्र ४४३

अध्याय ५ गोरी (सन् ११५६–१२०७ ई०) ४५१–४५८

कराखिताई ४५१, गोरी ४५२, १ गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी : ४५३; २ शहाबुद्दीन ४५५, ३ गयासुद्दीन-२ महमूद . ४५७

अध्याय ६ ख्वारेज्मी (सन् १०७७–१२३१ ई०) ४५९–४७८

प्रवेशक : ४५९, सुलतान ४५९, १ अनोशतगिन . ४५९, २ कुतुबुद्दीन मुहम्मद ४६०, ३ अतिसज . ४६०, ४ इल्-अरसलन अतिसज-पुत्र ४६२, ५ महमूद ४६५, ६ तकाश अरसलन-पुत्र : ४६५, ७ मुहम्मद तकाश-पुत्र ४७०, शासन-व्यवस्था : ४७६, माँ से झगडा · ४७७

अध्याय ७ : चिंगिस खान (सन् १२१९–१२२९ ई०) ४७९–५२१

१. तैयारी ४८०, २ शासन और शिक्षा : ४८३, ३ ख्वारेज्मशाह से वैमनस्य ४८४; ४ अभियान ४८८, ५. अन्तर्वेद-विजय : ४८९, ६. जूची की सफलता : ४९२,

७. मुहम्मद का अन्त : ४९४; ८ जलालुद्दीन मुहम्मद-पुत्र : ४९७, ९. विद्याकेन्द्र ख्वारेज्म : ४९८; १०. ख्वारेज्म का पतन : ४९९; ११. भगोड़ा जलालुद्दीन : ५०२; १२. गजनी का झगड़ा : ५०३; १३. जलालुद्दीन की एक सफलता : ५०४; १४ पराजय . ५०५; १५. खुरासान मे विद्रोह-दमन : ५०७; १६. पश्चिम की विजय-यात्रा : ५०९; १७ मंगोल का युद्ध-साधन . ५१०; मंगोल-हथियार : ५१०; मंगोल-शिकार : ५११; १८ चिंगिस सम्राट् : ५१२; चाङ्चुन् की यात्रा : ५१२; चिंगिस का मंगोलिया लौटना . ५१४; जूची की मृत्यु : ५१६; चिंगिस की मृत्यु : ५१६; चिंगिस की समाधि ५१७; जलालुद्दीन का अवसान : ५१७; परिणाम : ५१८; यास्सा : ५१८

परिशिष्ट १ : सहायक पुस्तक-सूची ५२३–५२७

परिशिष्ट २ : नामानुक्रमणी : ५२८-५७०

●

मध्यएसिया का इतिहास

खण्ड १

भाग १

प्रागैतिहासिक मानव (१ लाख वर्ष—३००० ई० पू०)

अध्याय १

पुराकल्प

§१. पृथ्वी पर प्राणी

वैज्ञानिक खोजो से पता लगता है कि हमारी पृथ्वी का जन्म आज से दो या चार अरब वर्ष पहले हुआ था। लेकिन, उस समय अपनी उष्णता के अधिक होने और दूसरे साधनो के अभाव से कोई वनस्पति या प्राणी न पैदा हो सकता और न जी सकता था। मनुष्य तो पृथ्वी की आयु से मिलाने पर बिलकुल हाल मे आया हुआ प्राणी है। पन्द्रह लाख वर्ष पहले भी उसका बहुत मुश्किल से पता लगता है और एक तरह हम कह सकते हैं कि उसकी सत्ता का भान दस लाख वर्ष से पहले नही जाता। आगे हम देखेंगे कि इस दस लाख वर्ष मे भी साढे नौ लाख वर्ष तक वह मनुष्य कहलाने का पूरी तौर से अधिकारी नही हो सका था और जिसे हम मानवता कहते हैं, उसका आरम्भ तो आज से पन्द्रह हजार वर्ष से भी पीछे नही होता।

मध्यएसिया मे मानव का इतिहास लिखते समय मानव की पृष्ठभूमि पर भी एक सरसरी दृष्टि डाल देना अनावश्यक नही होगा। दो या चार अरब वर्ष की पृथ्वी की आयु में तीन-चौथाई अथवा १४२.५ करोड वर्ष तो अजीव-कल्प के हैं। इस सारे समय मे पृथ्वी पर किसी तरह का कोई जीवधारी नही था। ५७.५ करोड वर्ष पहले ही सर्वप्रथम हमे प्राणी के फॉसिल (पथराये शरीर) का पता लगता है। इसी समय से जीव-कल्प आरम्भ होता है, अर्थात् पृथ्वी पर प्रथम जीवधारी को आये अभी साढे सत्तावन करोड वर्ष हुए हैं। जीव-कल्प के पहले प्राक्-केम्ब्रियन चट्टाने एक लाख अस्सी हजार तथा पच्चीस हजार फुट मोटी मिलती हैं। जीव-कल्प भी पुरा-जीवक (पेलियोजोइक्), मध्य-जीवक (मेसो-ज़ोइक्) और नव-जीवक (किनोज़ोइक्), इन तीन कल्पो मे विभक्त हैं। पुरा-जीवक कल्प के छह भेद हैं, जिनके नाम फलक (१) से मालूम होगे। पुरा-जीवक कल्प मे हम अत्यारम्भिक तथा मीन प्राणी तक को ही देख पाते हैं, प्रथम मीन का अस्तित्व ३२ करोड वर्ष से पहले नही मिलता। पुरा-जीवक को आदिकल्प भी कह सकते हैं।

मध्य-जीवक (द्वितीय कल्प) मे विशालकाय शरटो (छिपकली मगर की जाति), दन्तधारी पक्षियो तथा प्रथम शुद्ध पक्षी तक के जीवन का विकास हो जाता है। शरट-युग को त्रियासिक युग कहते हैं और दन्तधारी पक्षी जुरासिक युग मे हुए थे। जहाँ पुरा-जीवकल्प ३० करोड वर्ष तक रहा, वहाँ मध्य-जीवक कल्प साढे १४ करोड वर्ष मे समाप्त हो गया। इसके बाद नवजीवक (किनोजोइक) कल्प आज से ६ करोड वर्ष पहले आरम्भ हुआ, जो अबतक चल रहा है। नवजीवक कल्प के तृतीयक और चतुर्थक दो युग-भेद हैं। यदि जीव-कल्प के आरम्भ से इस तरह के विभाजन को स्वीकार करें, तो पुरा-जीवक आदियुग हुआ, मध्य-जीवक

द्वितीयक युग, नवजीवक तृतीयक और चतुर्थक दो युगो मे विभक्त हुआ। नवजीवक के तृतीयक और चतुर्थक युग भी अनेक भागो मे विभक्त है। इसी युग मे प्राय पाँच करोड वर्ष पूर्व प्रथम स्तनधारी प्राणी का प्रादुर्भाव हुआ। इससे पहले के प्राणी (शुद्ध पक्षी, दन्तधारी पक्षी) अण्डज थे। अण्डज प्राणी का उत्पादन उतना सुरक्षित नहीं होता, क्योकि माता को अण्डे वाहर कही रख देने होते हैं, जहाँ पर उनके खानेवालो की संख्या कम नहीं होती। उनकी रक्षा मे मीन और शरट जैसे जल-थल उभयजीवी प्राणियो, विशेपकर अण्डे से वाहर निकलने के वाद पानी और भोज्य-पत्तियो के लिए वृक्ष सहायक होता है। स्तनधारी प्राणियो को सवसे वडी सुविधा यह है कि उनका अण्डा वाहर नहीं, वल्कि माँ के पेट के भीतर परिपुष्ट होता है और काफी शक्ति-सचय के वाद वाहर आता है। उस वक्त भी तुरन्त वह अपने पैर पर खडा होकर स्वावलम्वी नही हो जाता, किन्तु उसकी रक्षा के लिए जहाँ माँ की वच्चे के प्रति ममता सहायक होती है, वहाँ माता के स्तन से दूध निकलकर भोजन से उसे निश्चिन्त कर देता है। नवजीवक कल्प एक तरह स्तनधारियो का कल्प था।

जैसा कि अभी कहा, नवजीवक कल्प तृतीयक और चतुर्थक दो युगो मे विभक्त है। इस सारे नवजीवक को जीवन की उषा मानकर पाँच भागो मे विभक्त किया गया है, जिनमे उषा (एओसेन), लघुउषा (ओलिगोसेन), मध्यउषा (मिओसेन) और अतिउषा (प्लिओसेन) के चार युगो को तृतीय युग कहा जाता है। मध्यउषा-युग आज से साढे तीन करोड वर्ष पहले था और अतिउषा-युग पन्द्रह लाख वर्ष पहले। मियोसेन (मध्यउषा)-युग के अन्त के करीव प्राग्मानव का आरम्भ माना जाता है। इसे स्पष्ट करने के लिए यह समझ लेना आवश्यक है कि उषायुग मे ही लेमूर और नर-वानर-वश का अलग विभाजन हुआ था। लघुउषा-युग मे अभी नर-वानर-वश अलग नही हुआ था। यह मध्यउषा-युग ही था, जिसमे नर और वानर दोनो वश अलग होने लगे। अतिउषा-युग के सारे समय तक हम कल्पना से ही कह सकते हैं कि मानव का पूर्वज किसी रूप मे अवस्थित था। हमारे यहाँ शिवालिक मे इस जन्तु की फॉसिल हड्डियाँ मिली हैं। तो भी इसमे भारी सन्देह है कि मनुष्य जिधर वनने की ओर वढने मे सफल हुआ था, उधर वढ रहा था, इसमे तो सन्देह नहीं, क्योकि वनमानुषो से उसके शरीर और कपाल का विकास अधिक मानवोचित था।

तृतीय कल्प के अन्त मे चाहे मानव का प्रथम पूर्वज किसी रूप मे अस्तित्व मे आया हो, किन्तु उसका स्पष्ट पता हमे चतुर्थ युग या अतिउषा-युग मे ही मिलता है, जवकि उसे हम जावा-मानव, पेकिंग-मानव, हैडलवर्ग-मानव, नियण्डर्थल (मुस्तेर)-मानव आदि के रूप मे पाते हैं। तो भी हमारे वश (सपियन-मानव) का पता वहुत पीछे लगता है।

मानव और उससे सम्वन्ध रखनेवाले प्राणियो के विकास का परिचय यहाँ दिये फलको से अच्छी तरह हो जायगा। लेकिन, मध्यएसिया मे मानव-विकास को वहाँ प्राप्त सामग्री के आधार पर वतलाने के लिए यह जरूरी होता कि वहाँ के प्राकृतिक भूगोल और जलवायु के इतिहास पर भी कुछ कहा जाय, क्योकि मानव-विकास मे इनका भारी हाथ रहा है।

फलक १ : भूतत्वीय कल्प[1]

		युग	स्तर की मुटाई (फुट)	काल (वर्ष)	शरीर-विशेष
जीव-कल्प	नवजीविक	अधिउषा	४८००	१० लाख	मानव
		अतिउषा	१३०००	१५ "	मानव
		मध्यउषा	२१०००	३·५ करोड़	
		लघुउषा	१२०००		स्तनधारी
		उषा	२३०००	६ करोड	
	मध्यजीविक	क्रैतासस्	४६०००		शुद्ध पक्षी
		जुरासिक	२००००		दन्तधारी पक्षी
		त्रियासिक	२२०००		शरट
	पुरा-जीविक	पैमीरिन	१३०००		
		कार्वनभक्षीय	४००००	३० करोड	
		प्राचीन रक्त	३७०००		प्रथम मीन
		सिलूरियन	१५०००		
		ओर्दाविचियन	४००००		
		केम्ब्रियन	४००००	५७ ५ करोड	प्रथम फॉसिल
अजीव-कल्प		प्राक्-केम्ब्रियन	१८०००		
			२५०००	२ अरब	

२. प्राकृतिक भूगोल

तृतीय कल्प ऐसा समय था, जबकि पृथ्वी लगातार कॉप रही थी, भूकम्पो का तॉता लगा हुआ था। पृथ्वी की ऊपरी पपडी सिकुड रही थी, जिसके कारण एक विशाल पर्वत-श्रेणी पृथ्वी के भीतर से ऊपर की ओर उठने लगी। यह उठी पर्वत-श्रेणी यूरोप और एसिया (यूरेसिया महाद्वीप) को दो भागो मे विभक्त करती आज भी मौजूद है। इसी सुदीर्घ पर्वत-श्रेणी के अलग-अलग भाग हैं : पेरिनेस, काकेसस, हिमालय और उसके आगे मध्यचीन के पर्वत। यूरेसिया द्वीप का रूप आज की तरह पहले नही था। इसके भीतर एक बडा समुद्र लहरें मार रहा था, जो कि अतलान्तिक को भूमध्यसागर और कालासागर से मिलाते कॉस्पियन, अरालसमुद्र तथा वलकाश को लेते तियेनशान-पर्वतमाला तक फैला हुआ था। उत्तर से दक्षिण की ओर फैली अल्ताई और तियेनशान-पर्वतमाला इस महासमुद्र को और पूर्व बढने मे वाधक थी। इससे यह भी मालूम होगा कि मध्यएसिया के पूर्वी और पश्चिमी भागो में विभाजन कृत्रिम और राजनीतिक नही, वल्कि प्राकृतिक है। तियेनशान

---

१ Geology in the Life of Man (Duncan Leith, 1945), 39

और पामीर की पर्वतमालाएँ दक्षिण मे हिमालय-श्रेणी से मिलकर पश्चिमी मध्यएसिया को पूर्वी मध्यएसिया से अलग करती हैं।

यह अवस्था तृतीय कल्प के आरम्भ मे थी। तृतीय कल्प के मध्य मे पहुँचने तक यूरेसियन महासागर कई स्थानो मे छिन्न-भिन्न हो गया और उसके स्थान पर आस्ट्रिया से वल्काश सागर तक एक महासागर दिखाई पडने लगा। वल्कान से कालासागर, कॉस्पियन सागर, अराल और वल्काश तक को अपने पेट मे रखनेवाली इस जलनिधि को भूतत्त्व-विशारद सरमातिक सागर कहते हैं। लेकिन, भू-परिवर्त्तन का काम अभी समाप्त नहीं हुआ था, तृतीय कल्प के अन्त मे सरमातिक सागर भी कई स्थानो से विलुप्त हो गया और उसके स्थान पर कालासागर, कॉस्पियन सागर तथा अराल और वल्काश के महासरोवर बच रहे।

तृतीय कल्प का अन्त हो रहा था और चतुर्थ का आरम्भ, जवकि एक और प्राकृतिक परिस्थिति उपस्थित हुई। तियेननशान के पश्चिमवाले मध्यएसिया मे महासमुद्र के बहुत सूख जाने के कारण जलवायु मे सूखापन होना जरूरी था, उधर भूमध्य-रेखा के ऊपर जमी महाजलराशि से आशा हो सकती थी कि वह इस सूखी प्यासी भूमि के लिए बादल भेजकर सहायता करेगी। लेकिन, बादलो के रास्ते में हिमालय से काकेसस तक फैली अति उच्च पर्वतमाला वैसा करने नहीं देती थी, वल्कि वह समय-समय उचक-कर अभी और भी ऊपर उठती जा रही थी। आकाश मे सिर उठाकर वादलो का रास्ता रोकने के लिए तैयार इस महापर्वत-श्रेणी ने पश्चिमी मध्यएसिया की वर्षा को बहुत कम कर दिया। इसका परिणाम मध्यएसिया की भूमि पर यही हुआ कि वहाँ के बचे-खुचे समुद्र या महासरोवर और क्षीण होने लगे, नदियो की धाराएँ पतली हो चलीं, भूमि और शुष्क होने लगी। पानी और नमी के अभाव मे वनस्पतियो और उनपर अवलम्बित प्राणियो की स्थिति मे क्रान्ति होना आवश्यक था। कजाकिस्तान की प्यासी भूमि, उजवेकिस्तान तथा तुर्कमानिस्तान के काराकुम (कालमरु) एव किजिलकुम (लालमरु) उसी के परिणाम हैं। चतुर्थ कल्प के आरम्भ से आजतक मध्यएसिया की यह सूखी प्यासी भूमि इसी अवस्था मे चली आई है, बीच मे कभी-कभी सूखा और नमी के कारण जलवायु मे थोडा-सा अन्तर देखने मे आया। आज भी इस भूमि मे जाडो मे थोडी-सी हिमवर्षा हो जाती है और वर्षा के नाम पर गरमियो मे कभी-कभी कुछ छीटे पड जाते हैं। अत्यन्त ऊँचे पर्वत-शिखरो या पर्वत-पृष्ठो को छोडकर मध्यएसिया की सारी भूमि साल-भर प्यासी ही रहती है।

पूर्वी और पश्चिमी, दोनो मध्यएसिया को लेकर देखें, तो मालूम होगा कि मंचूरिया की पश्चिमी सीमा से कालासागर या अजोफसागर के पूर्वी छोर तक के दक्खिन की भूमि ऊँची धरती या पर्वतो से घिरी एक विशाल खलार है। यहाँ का पानी वासफोरस (तुर्की) के एक सँकरे से मार्ग को छोडकर महासागरो से कोई सम्वन्ध नहीं रखता। वल्कि कालासागर मध्यएसिया से वाहर होने के कारण हम कह सकते हैं कि उसके वर्षा या समुद्र के पानी का पृथ्वी के महासागरो से कोई सम्वन्ध नही है।

वासफोरस का जलमार्ग भी बहुत समय तक बन्द था और वह अन्तिम हिमयुग (प्राय: १००००० वर्ष पूर्व) के बल के कम होने पर पिघली अपार जलराशि के फूट निकलने के कारण ही खुला। मध्यएसिया की यह जलनिर्गमहीन खलार अल्ताई-तियेनशान की पर्वतश्रेणियो द्वारा दो भागो मे विभक्त है, जिसमे १ पूर्वी मध्यएसिया गोवी से तरिम-उपत्यका तक पश्चिम मे तियेनशान और दक्षिण मे क्वेलुन-पर्वतमाला से घिरा है। २. पश्चिमी मध्यएसिया पूर्व मे तियेनशान और पामीर, दक्षिण मे अफगानिस्तान और ईरान की पर्वतमाला तथा पश्चिम मे काकेशस-गिरिमेखला से घिरा है। इसका पश्चिमी भाग, अर्थात् कॉस्पियन समुद्र के पास की भूमि समुद्रतल से ६०० फुट नीची है। यदि कालासागर से कॉस्पियन सागर के बीच की पार्वत्य भूमि को तोडकर जलमार्ग बना दिया जाय, तो कालासागर का पानी बडे वेग से कॉस्पियन सागर मे गिरने लगेगा और कॉस्पियन तथा अरालसमुद्र मिलकर एक बहुत बडे सागर के रूप मे परिणत हो जायेंगे, जिसका प्रभाव मध्यएसिया की जलवायु पर भी बहुत भारी पड़ेगा। दूसरी ओर यदि तियेनशान-पामीर के हिमाच्छादित पहाडो से निकलनेवाली इली, चू, सिर, जरफशाँ और वक्षु (आमू) नदियाँ दक्षिण से मुर्गाब आदि, और पश्चिम (काकेशस)-गिरिमाला से किरा आदि छोटी-बड़ी नदियाँ पानी लाना बन्द कर दें, तो सारा पश्चिमी मध्यएसिया पूर्णतया रेगिस्तान हो जायगा।[1]
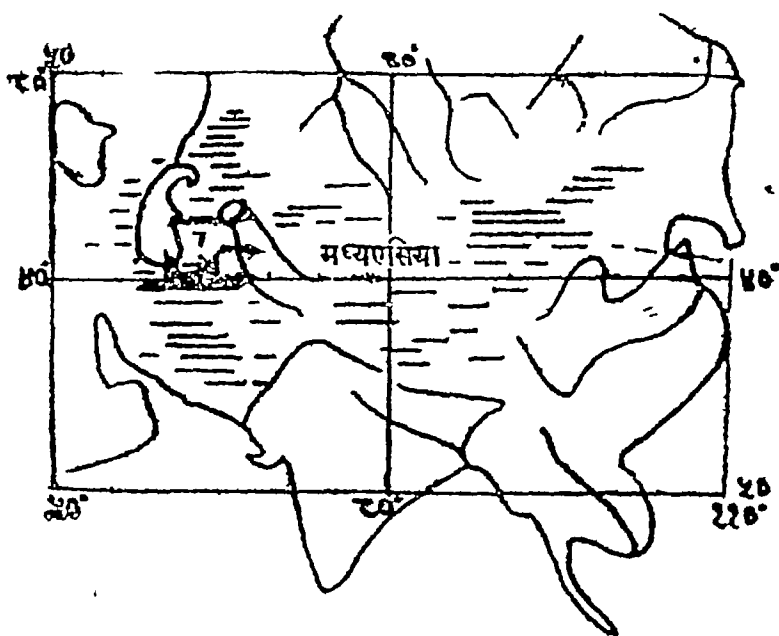
१. जलनिर्गमरहित

३. जलवायु-परिवर्त्तन[2]

यद्यपि मध्यएसिया के तीन तरफ खडे उन विशाल पर्वतो ने वर्षा को रोककर उसका बहुत अहित किया है, तथापि साथ ही इस भूमि को बिल्कुल प्यासा मरने भी नहीं दिया।

---

१ Exploration in Turkistan (R. Pumpelly, 1903) vol. I, pp 1-4

२ Expl in Turkistan, vol. I, pp. 2-8

इनसे निकलनेवाली नदियाँ कम या अधिक परिमाण मे हिमगलित पानी वरावर लाती रहीं। मानव का प्रादुर्भाव तृतीय कल्प के अन्त मे उपापाषाण-युग मे हुआ। उस समय मध्यएसिया मे मानव के अस्तित्व का कोई पता नही लगता और जैसा कि हम आगे वतलायेंगे, जावा नर-वानर की विचरण-भूमि मध्यएसिया से तीस डिग्री से भी अधिक दक्षिण मे है। मध्यएसिया मे वीस हजार वर्ष पहले चतुर्थ हिमयुग के समय मानव अवश्य मौजूद था। निर्मानव-काल से मानव-काल को लेते हुए आजतक मध्यएसिया की भूमि प्रकृति के निष्ठुर हाथो मे खेल रही थी, जिसके साथ मनुष्य भी अपनी वेवसी दिखलाने के सिवा कोई चारा नहीं रखता था। आज वहाँ मानव अपने भव्य मामाजिक उत्कर्ष मे पहुँचकर प्रकृति की वाधा को हटाने के लिए कटिवद्ध हुआ है। कॉस्पियन सागर को अजोफ-कालासागर से मिलाने के लिए वोल्गा-दोन की विशाल नहर तैयार हो गई है, जिसके द्वारा वम्वई से चला जहाज वाकू के तैलक्षेत्र मे आसानी से पहुँच सकता है। लेकिन, यह परिवर्त्तन उससे वहुत कम है, जो कि मध्यएसिया की तीन विशाल मरुभूमियो (प्यासी भूमि, काराकुम और किजिलकुम) को सस्यश्यामला भूमि मे परिणत करने के लिए किया जा रहा है। वक्षु (आमू दरिया) को एक विशाल नहर द्वारा किजिलकुम-मरुभूमि के भीतर ही कॉस्पियन समुद्र से मिलाने का काम वडे जोर-शोर से चल रहा है। इससे किजिलकुम की करोडो एकड वालुका-भूमि मेवे के वागो और गेहूँ के खेतो के रूप मे परिणत हो जायगी। इस नहर के कारण वम्वई का कपडा लालसागर, भूमध्यसागर, कालासागर, अजोफसागर, दोन नदी, दोन-वोल्गा नदी और कॉस्पियन सागर होते वक्षु नहर और वक्षु नदी द्वारा अफगानिस्तान पहुँच सकता है। लेकिन, इतने से हम पश्चिमी मध्यएसिया की जल-समस्या को पूरा हल हुई नहीं देखते। सिर, जरफशाँ और आमू दरिया के पानी से वनी अनेक महान् जलनिधियो तथा उनसे निकलनेवाली नहरो द्वारा सिंचित करोडो एकड़ भूमि रेगिस्तान के पेट से निकालकर जो हरे-भरे खेतो के रूप मे परिणत की जायगी, उसके कारण सूर्य-किरणें इस भूमि के जल को मनमानी तौर से सोखने नहीं पायगी और उससे जलवायु मे भी अनुकूल परिवर्त्तन होगा। लेकिन, सोवियत विज्ञानवेत्ता इतने से ही सन्तोष नही करना चाहते। वह सोच रहे हैं कि वैसे जिव्राल्टर और वासफोरस को जल-प्रणालियो द्वारा सम्वद्ध पृथ्वी के महासागरो को अजोफ और कॉस्पियन के कृत्रिम मार्ग द्वारा मिलाकर मध्यएसिया की जलराशि को वढाया जा सकता है। परमाणु-शक्ति और परमाणु-वम का आविष्कार कर मनुष्य का मस्तिष्क वैठ नहीं सकता, वह आशा रख रहा है कि एक दिन मध्यएसिया के जलाभाव को हम दूर करके छोडेंगे। सोवियत राष्ट्र ओव नदी के पानी के वहुत-से भाग को मध्यएसिया रेगिस्तान की ओर मोड़कर इसे करना चाहता है। प्रसंगवश, यह कह देना आवश्यक है कि हमारे यहाँ भी, जहाँ वर्षा करने में प्रकृति वहुत उदार है, अपने प्राकृतिक जलमार्गों मे अनुकूल परिवर्त्तन करने की वहुत सम्भावना है। कटक या उडीसा से हमें समुद्र द्वारा वम्वई या सूरत जाने की अनिवार्यता नही होगी, यदि महानदी और नर्मदा के ऊपरी भागो को कुछ ही मील लम्वी नहर द्वारा मिला दिया जाय।

§४. वनस्पति-क्षेत्र में परिवर्त्तन

तृतीय कल्प का अतिउषा-युग आया, जबकि जावा मे प्रथम मनुष्य का दर्शन होने लगा। उस समय पश्चिमी मध्यएसिया मे समुद्र के पास जहाँ-तहाँ थोडा-सा रेगिस्तान था, अर्थात् प्यासी भूमि, काराकुम और किजिलकुम का अभी शिलान्यास भर ही हो पाया था, बाकी भूमि या तो तृण-वनस्पति से आच्छादित मैदान अथवा भारी जगलो से आच्छादित पहाड और उसकी तराइयाँ थी। भूकम्प समय-समय आये, जिनसे ये पर्वत उचककर और ऊपर उठ गये, बादल का रास्ता और रुका, वर्षा की और कमी हुई, जिससे वनस्पति-क्षेत्र समुद्रो के तट से पहाडो की ओर सिकुडने लगा।

मध्यउषा-युग (साढ़े तीन करोड वर्ष पूर्व) के बाद महासागरो से सरमातिक सागर का सम्बन्ध टूट गया। उसका जल भाप बनकर उडता गया, समुद्र सूखता और उसका जल अधिक खारा होता गया। इसके अवशेष के रूप मे जिप्सम और लवण की राशि जमा होती गई, जो आज भी वहाँ मिलती है। प्रकृति ने सूर्य-किरणो द्वारा ही जल सुखाकर अपना काम समाप्त नही कर दिया, बल्कि यह युग भीषण आँधियो का भी था। आज वैसी प्रचण्ड आँधियो के न होने पर भी वायुदेवता अपने पूर्व पौरुष को रेगिस्तानो मे किसी जगह बालू के पहाडो को बनाकर और किसी जगह बिगाडकर दिखाते है। उस समय, जबकि वनस्पति-हीन[1] होते मैदान मे अभी बालू नही, साधारण मिट्टी की प्रधानता थी, इन प्रलयकर झझावातो ने मिट्टी के अतिसूक्ष्म रेणुओ (त्रसरेणुओ) को आकाश मे बहुत ऊपर उठा ले गया और उन्हे ऊँचे पर्वतो के मस्तक पर जमा करना शुरू किया। इन त्रसरेणुओ की भारी मोटी तह वनस्पतियो के लिए बडी ही उर्वर है, जिससे वायु ने मैदानो को वचित कर पहाडो का घर भरा।

५. हिमयुग[1]

सूर्य-किरणो और झझावातो का प्रभाव मध्यएसिया की भूमि मे बहुत पडा, किन्तु उससे कम प्रभाव चारो हिमयुगो का इस भूमि पर नही पडा। तृतीय कल्प के अतिउषा-युग के बाद ये हिमयुग आने शुरू हुए। एक-एक हिमयुग हजारो नही, लाखो वर्षो तक रहा। इनके समय मे मनुष्य पृथ्वी पर आ चुका था, यद्यपि अभी वह उसका एक दुर्लभ प्राणी था और पृथ्वी के कुछ ही स्थानो मे देखा जाता था। ये हिमयुग आज के परमाणु-बम से भी अधिक भयानक साबित हुए थे। मानव प्रकृतिमाता पर बहुत विश्वास करके बहुत-कुछ आलसी की जिन्दगी बिताने लगा था, न उसे तन ढकने की फिक्र थी, न छत ढूँढने की। हिमयुग उनसे कहने लगा, या तो हमारे प्रहार को सहन करने लायक बनो, नहीं तो पृथ्वी से लुप्त होने के लिए तैयार हो जाओ। आज भी यदि यूरोप का वार्षिक मध्यम तापमान पाँच ही डिग्री सेण्टीग्रेड नीचे गिर जाय, तो हिमयुग की अवस्था पैदा हो जायगी। सारे अतिउषा-काल मे तापमान गिरता गया, सरदी बढती गई, जिसके परिणामस्वरूप हिम-युगो का आरम्भ हुआ। चारो हिमयुगो मे यूरोप की भूमि पर इगलैण्ड से उरालपर्वत तक

१. General Anthropology (Franz Boas and others, New York, 1938), p 116, Expl Turk, pp. 1–4

हजारो फुट मोटी बरफ की तह जम गई थी। लेकिन, उराल से पूर्व, अर्थात् मध्यएसिया मे वैसा नही हुआ। बरफ की तह मोटी न होने पर भी जलवायु अत्यन्त भीषण रूप से शीतल हो गई थी। हिमयुगो की उग्र सरदी के कारण पशु-वनस्पति के क्षेत्र क्षीण होते गये। हर दो हिमयुगो के बीच के सन्धिकाल (हिमसन्धि) मे जलवायु की अवस्था कुछ नरम जरूर हो जाती और प्राणी-वनस्पति फिर अपनी खोई हुई भूमि को प्राप्त करने की कोशिश करते। यह स्मरण रखना चाहिए कि ये सन्धिकाल भी हजारो वर्ष के थे।

मान लें, हम आज से लाखो वर्ष पूर्व के प्रथम हिमयुग मे जाकर मध्यएसिया को देख रहे हैं। उस समय इसके पश्चिमोत्तर मे उराल से परे हजारो फुट मोटी वर्फ से ढकी रूस की भूमि है। मध्यएसिया की भूमि में एक अति विशाल समुद्र (सरमातिक) लहरें मार रहा है, जिसमे पूर्व, दक्षिण और पश्चिम के हिम-पर्वतो की हिमानियो से निकलकर बडी-बडी नदियाँ गिर रही हैं, जो अपने सागर-सगमो पर डेल्टा और कछारो मे मिट्टी के स्तर जमा करती जा रही हैं। हजारो वर्ष बाद प्रथम हिमयुग समाप्त हो गया। अब हिम-सन्धिकाल आ गया। पश्चिमोत्तर भाग मे दुरन्तव्यापी हिम-मालिका रूस से लुप्त हो गई। पूर्व, दक्षिण और पश्चिम के हिम-पर्वतो की दूर तक विस्तृत हिमानियाँ भी सकुचित होने लगी, इसके कारण नदियो की धाराएँ क्षीण होती गईं। सरमातिक समुद्र मे जल की आय कम और व्यय अधिक होने लगा—नदियो से जितना जल आता था, उससे कही अधिक धूप मे भाप होकर उडता जा रहा था। विशाल सरमातिक समुद्र और भी छिन्न-भिन्न होने लगा। सहस्राब्दियाँ बीत गई, नदियो की धाराएँ और भी कृश हो गईं। पानी की कमी और रेगिस्तान की वृद्धि के कारण चू, तलस, जरफशाँ और मुर्गाव की भाँति कितनी ही धाराएँ समुद्र मे पहुँचने से पूर्व ही अपने को मरुभूमि मे खोने लगी। झझावात नदियो की लाई मिट्टी के साथ खिलवाड करने लगा। मोटे कण, अर्थात् बालू एक जगह से दूसरी जगह टीलो के रूप मे बनते-बिगडते रहे और सूक्ष्म कण (त्रसरेणु) टिड्डी-दल की भाँति उडते-सुस्ताते, घास के मैदानो, तराई और पहाडो के जंगलो पर पडकर उन्हें ढकते जा रहे थे।

इस प्रकार, हिमयुगो और हिमसन्धियो ने मध्यएसिया के भूतल को बडी निर्दयता-पूर्वक दलित-मर्दित कर दूसरा ही रूप दे दिया। प्रकृति की इस निष्ठुर क्रीडा ने केवल धरातल के ही आकार-प्रकार मे परिवर्त्तन नही किये, बल्कि वनस्पतियो और प्राणियो की अवस्था मे भी भीषण उथल-पुथल मचाई।

●

स्रोतग्रन्थ :

१ पेर्वोबित्नोये ओब्श्चेस्त्वो (प० प० येफिमेको), लेनिनग्राद, सन् १९३८ ई०
२. Geology in the Life of Man (Duncan Leith, London, 1945)
३. Exploration in Turkistan (R. Pumpelly, 1903), vol I-II
४. General Anthropology (Franz Boas and others, New York, 1938)
५. Everyday Life in the Old Stone Age (Marjorie and C. H. B, Quennell, London, 1945)

अध्याय २

पुरा-पाषाणयुग[1]

§१. मानव-जातियाँ

चतुर्थ युग अधिउषा (प्लेस्तोसेन) और अतिउषा (होलोसेन), इन दो उपयुगो में विभक्त है। अधिउषा-युग हमारी सपियन-मानवजाति की प्रधानता का है, जिसमे नव-पाषाण-युग प्रथम है, जो आज से ७००० हजार वर्ष पहले शुरू हुआ था, यद्यपि उसका यह अर्थ नही कि वह पृथिवी पर सभी जगह एक ही समय आरम्भ हुआ। तस्मानिया के मूल निवासी, जो यूरोपीय लोभी नर-राक्षसो के कारण अब ससार से लुप्त हो चुके हैं, उन्नीसवी सदी तक पुरा-पाषाणयुग मे विचरण कर रहे थे। चतुर्थ युग के आदिम भाग पुरा-पाषाणयुग के आदिम या निम्न पुरा-पाषाणयुग मे और भी कितनी ही मानव-जातियाँ अस्तित्व मे आई थी, जिनमे नियण्डर्थल (मुस्तेर)-मानव का ही अभी तक मध्यएसिया मे पता लगा है। हो सकता है, इससे पहले की हैडलबर्ग और पेकिंग-मानव जैसी जातियो के भी अवशेष आगे मिलें। मानव-इतिहास को क्रमबद्ध करने के लिए यह आवश्यक है कि उजबेकिस्तान मे मिले मुस्तेर-मानव की कडी को पीछे से मिलाने के लिए दूसरे मानवो का भी कुछ वर्णन कर दिया जाय।

सभी मानव-जातियाँ उसी समय विद्यमान थी, जबकि पृथ्वी पर चार महान् हिमयुग आये थे। ये हिमयुग निम्नांकित प्रकार थे[2]

		मानव-जाति
पश्च-हिमयुग	१३००० वर्ष	ओरिन्यक
चतुर्थ हिमयुग (वर्म)	५०००० ,,	मुस्तेर
तृतीय हिमसन्धि	१ ५० लाख	अश्योल
तृतीय (रिस्)	२ ,,	प्राग्-अश्योल
द्वितीय हिमसन्धि	३ ,,	शेल (हैडलवर्ग)
द्वितीय हिमसन्धि (मिदेल)	४ ,,	पेकिंग
प्रथम हिमसन्धि	५ ,,	
प्रथम हिमसन्धि (गुज)	६ ,,	

उपरि-पुरा-पाषाणयुग चारो हिमयुगो के समाप्त होने के साथ आज से प्राय. १५ हजार वर्ष पूर्व आरम्भ होता है। कुछ विद्वान् पुरा-पाषाणयुग मे एक मध्य-पुरा-पाषाणयुग

१ Our Early Ancesters (M C Burkitt, 1929), pp 3-6, Prehistoric India (P. Mitra, Calcutta, 1928)

२. पेर्वोवित्नोये ओब्श्चेस्त्वो (प० प० येफिमेको), पृ० ३०, Everyday Life in the Old Stone Age (Marjorie and C. H B Quennell, 1945), p. 11, Progress and Archaeology (V. Gordon Childe), p. 9

को भी मानते हैं, जो ३५ से ५० हजार वर्ष पूर्व मौजूद था और इसी समय चतुर्थ हिमयुग के भीतर से मुस्तेर (नियण्डर्थल)-मानव जीवन-संघर्ष कर रहा था। उपरि-पुरा-पापाणयुग के ६ हजार वर्षों मे निम्नांकित प्राचीन जातियो का पता लगा है :

वर्ष पूर्व	जाति	उपजाति
१५०००	ओरिन्यक	ग्रिमाल्दी, क्रोम्योन
१४०००	सोलूत्रे	
१३०००	मद्लेन	
११०००	अजिल	

यहाँ जो काल दिया गया है, उसे एकदम निश्चित नही समझना चाहिए। उदाहरणार्थ, जहाँ मद्लेन-मानव को कोई-कोई विद्वान् १३००० हजार वर्ष पहले मानते हैं, वहाँ दूसरे उसे २५-२६ हजार वर्ष पहले स्वीकार करते हैं। इनको स्पष्ट करने के लिए यहाँ दिये हुए दूसरे, तीसरे और चौथे फलको को देखें। पाँचवें फलक से ताम्र और लौह-युग की सभ्यता भारतवर्ष मे किस रूप मे रही, इसका पता लगेगा।

फलक २ : नवजीवक-कल्प का विवरण

		युग			सभ्यता	काल		जलवायु
नवजीवक		इद्दउपा			लौह	१००० ई० पू०		नरम
					ताम्र	१५०० ई० पू०		
					नव-पापाण	५००० ई० पू०		आर्द्र
			पुरा-पाषाण	मध्य-पा०	अजिल	११००० ई० पू०	गुहावासी	ठण्डा-गरम
		अविउपा						
	चतुर्थ कल्प			उपरि-पुरा-पाषाण	मद्लेन	१३००० ई० पू०		
					सोलूत्रे	१४००० ,,		
					ओरिन्यक	१५००० ,,		पश्चाद्-हिम
								चतुर्थ हिम (वर्म)
				निम्न-मध्य-पु०	मुस्तेर	२०००० ई० पू०	जलतीरवासी	तृ० हिमसन्धि
								तृ० हिम (रिस्)
					अश्योल्	२०००० ,,		द्वि० हिमसन्धि
					प्राग्-अश्योल्	२६००० ,,		द्वि० हिम (मिन्देल)
					शेल			प्र० हिमसन्धि
					स्त्रेपी			प्र० हिमसन्धि (गुंज)
								नरम
	तृतीय कल्प	अतिउपा				६ लाख		उष्ण
		मध्यउपा						गरम
		लघुउपा						
		उपा						

फलक ३ : चतुर्थ युग[1]

युग		हिमयुग		पुरातत्त्वीय युग	मानव-जाति	समाज
चतुर्थ युग	इदउषा			लौह		
				पित्तल		
				ताम्र		
	अधिउषा		मध्य-पा०	नव-पाषाण		
				अजिल		
		वर्म	उपरि-पुरा-पा०	मद्लेन	सपियन	मातृसत्ताक
					क्रोमेञ्यो	
				सोलूत्रे	ग्रिमाल्दी	
				ओरिन्यक		
		रिस्		मुस्तेर	नेयण्डर्थल	सगोत्र विवाह
		मिन्देल	निम्न-पुरा-पा०	अश्योल्		
		प्रागहिम		शेल		
					हैडलबर्ग	आदिम साम्यवाद

—प० प० एफिमेको 'पेर्वोबित्नोये ओब्श्चेस्त्वो', पृ० ९९

फलक ४ : मानव-जातियाँ[2]

	मानव-जातियाँ	वर्ष	हिमयुग	उद्योग	आविष्कार (मिश्र)
		१५०० ई० पू०			लौह
		२००० ,,			पित्तल
		३००० ,,			इतिहासारम्भ
		४००० ,,			लौह-उपयोग
		५५०० ,,			ताम्र
		६५०० ,,			
पुरा-पाषाण	क्रोमेञ्यो	८५०० ,,			
	ग्रिमाल्दी	१३५०० ,,			
	मुस्तेर	७५०० ,,	रिस् उतार प्राचीन	मुस्तेर	आग, धनुष
	हैडलबर्ग		मिन्देल	अश्योल्	
	पेकिंग		गुंज सन्धि	शेल	
	जावा	५०००० ,,			
		१० लाख	अधिउषा		

---

१. पे० ओब्०, पृ० ११२

२. उपरिवत्, पृ० ९९; General Anthropology (Franz Boas and others, 1938), pp 174-75

फलक ५ : भारत मे इदउषा-युग

काल	वर्ष
इस्लाम	१००० ई०
गुप्त	४०० ,,
शक	०
मौर्य	३०० ई० पू०
बुद्ध	५०० ,,
उपनिषद्	७०० ,,
ऋग्वेद	१२०० ,,
सिन्धु-सभ्यता	३००० ,,

§२. निम्न-पुरा-पाषाणयुग[1]

१. जावा-मानव[2] :

अभी तक जितने मानव-अवशेषो का पता लगा है, उनमे जावा-मानव[3] सबसे पुराना है। इसे त्रिनील मानव या पिथक-अन्थ्राप भी कहते हैं। सन् १८९१ ई० मे डच-विद्वान

२. पुरापाषाणयुग का मानव

प्रोफेसर ई० दुब्वा को मध्यजावा की सोलो नदी के किनारे त्रिनील स्थान मे इस मानव-खोपड़ी का ऊपरी भाग, दाढ के दो दाँतो और जाँघ की एक हड्डी के साथ प्राप्त हुआ।

१. काल एक लाख वर्ष से पूर्व, Gen Anth , p 227

२. पेर्वोवित्नोये ओब्श्चेस्त्वो (प० प० येफिमेको, सन् १९३८ ई०, पृ० २७)

३. Pithecanthropus, इसके समकालीन मानव नर्मदा-उपत्यका (होशगावाद और जवलपुर के जिले) मे मिले हैं।—Prehistoric India (Stuart Piggot, 1950), p 29

यह फॉसिल जिस स्तर में मिली थी, उससे वह अतिउषा-काल की मालूम होती थी। इसी स्तर मे सूअर, जलीय अश्व, हिरन तथा विलुप्त स्टेगोडन गज जैसे प्राणियो की फॉसिलायित हड्डियाँ मिली थी, जिससे मालूम होता है कि जावा-मानव को भोजन के लिए इन जानवरो को मारना पड़ता था। जावा-मानव का कपाल-क्षेत्र ९४० घन सेन्तीमीतर है, जो सभी वनमानुषो से अधिक है, क्योकि उनका कपाल-क्षेत्र ६५५ घन सेन्तीमीतर से अधिक नही होता। लेकिन, यह आधुनिक मानव के कपाल-क्षेत्र १६०० घन सेन्तीमीतर का दो-तिहाई है, अथवा उतना ही, जितना कि आधुनिक मानव के अत्यल्प विकसित वेद्दा (लंका) लोगों का कपाल-क्षेत्र होता है। जावा-मानव वाहर से दीर्घकपाल (७१ २), किन्तु खोपडी के भीतर वह आयतकपाल (८०) था। इलियट स्मिथ के मत से वह नि सन्देह मानव-वंश का था और कुछ थोडी-सी वाणी (भाषा) की शक्ति भी रखता था, किन्तु वह खाँसने जैसी ध्वनि से अधिक विकसित नही थी। खडा होकर चलने मे वह वहुत कुछ मनुष्य जैसा था, किन्तु दाँत वनमानुष से अधिक समानता रखते थे। ऊँचाई मे वह ५ फुट ६ या ७ इंच था, अर्थात् वहुत कुछ आजकल के साधारण मनुष्य जितना लम्बा था। भय उपस्थित होने पर वह आसानी से वृक्षो पर चढ जाता था और शायद रहने के लिए वही घास-फूस के नीड जैसी झोपडी भी वना लेता था। जावा-मानव[१] उसी समय जावा के

३ जावा मानव

सदाहरित जगलो मे निवास करता था, जवकि यूरोप प्रथम हिमयुग से गुजर रहा था। उस समय सुमात्रा और मलाया से मिला हुआ जावा, एसिया का एक अभिन्न अग था।]

१ विशेष के लिए पठनीय General Anthropology, History of Anthropology (A C Haddon), 56-57, Man the Verdict of Science (G N. Ridley, 1946), p. 41, Progress and Archaeology.

जावा-मानव के काल के विषय मे मतभेद होना स्वाभाविक है। कोई-कोई उसे हैडलवर्गीय मानव का समकालीन मानते हैं और कोई उसे पेकिंग-मानव से पीछे का।[1]

२. पेकिंग-मानव :

प्रोफेसर ओसबोर्न तथा दूसरे कितने ही नृतत्त्वविशारदो का मत है कि मानव-जाति का उद्गम एसिया ही मे कही होना चाहिए। जावा-मानव एसिया मे मिला। पेकिंग-मानव भी एसिया मे ही प्राप्त हुआ। चीन और मगोलिया मे पुरा-पाषाणयुग के बहुत-से पुराने पाषाणनिर्मित हथियार मिले हैं, किन्तु उनके साथ मानव-अवशेष नहीं मिले, जिससे मानव की आकृति आदि के बारे मे कुछ कहना मुश्किल है। वर्त्तमान शती के शुरू मे फॉसिल के रूप मे कुछ मानव-दन्त भी मिले थे। लेकिन, सबसे महत्त्वपूर्ण प्राप्ति सन् १९२६ ई० मे हुई थी, जबकि चीन की राजधानी पेकिंग से ३७ मील दक्षिण-पश्चिम चूकूतीयान की एक गुहा मे अधिउपा (प्लेस्तोसेन) के दो मानव-दन्त प्राप्त हुए। सन् १९२७ ई० मे एक और दाँत तथा निचली दाढ का फॉसिल मिला, जो कि किसी तरुण का बिना घिसा हुआ दाँत था। यह जावा-मानव से अधिक विकसित रहा होगा। २ दिसम्बर, १९२९ ई०, को सभी सन्देहो को दूर करनेवाली प्राप्ति एक तरुण चीनी विद्वान् को हुई। यह खोपडी प्राय पूरी है और इसका कपाल-क्षेत्र जावा-मानव से कुछ अधिक बडा है। इसका काल प्राय ५ लाख वर्ष पूर्व बतलाया जाता है। बडा होने पर भी पेकिंग-मानव का कपाल जावा-मानव से बहुत समानता रखता है खोपडी अधिक चिपटी, सँकरी और पीछे की ओर नीचे होती, ललाट तथा आँखो के ऊपर उभरी हुई हड्डी दोनो मे एक-सी है। किन्तु, पेकिंग-मानव की अपेक्षा जावा-मानव का ललाट अधिक ऊँचा है, इसलिए कितने ही विद्वान् उसे नेयण्डर्थल (मुस्तेर)-के पास खीच लाना चाहते हैं। इसका कपाल-क्षेत्र ९०० घन सेन्तीमीतर तक, अर्थात्
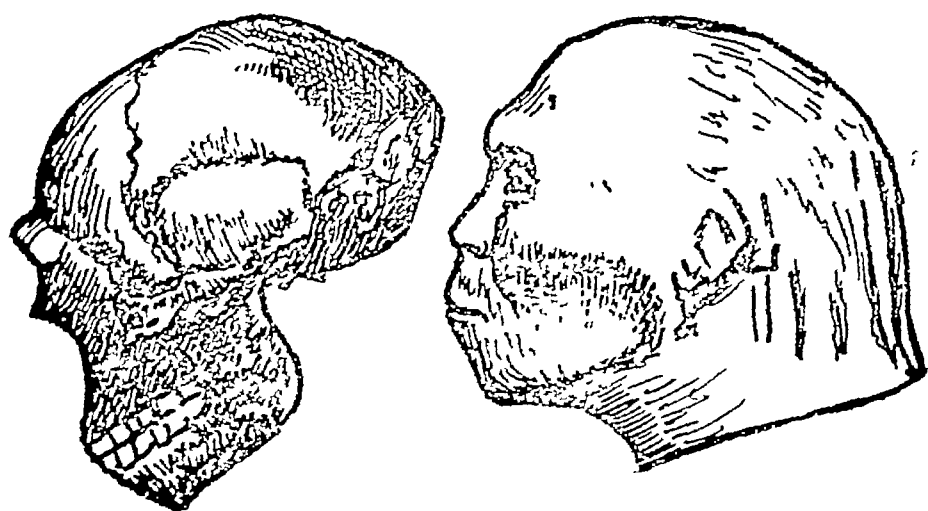
पेकिंग-मानव

जावा-मानव से ४० सेन्तीमीतर ही कम है। जून, १९३० ई० मे उसी गुहा से एक और खोपडी मिली, जिसका कपाल-क्षेत्र प्रथम से अधिक तथा आकृति मुस्तेर-मानव से बहुत

[1] History of Anthropology (A. C. Haddon), p. 53

समानता रखती है। नवम्बर, १९३६ ई० मे, उसी गुफा मे तीन और खोपडियाँ मिली, जिनमे दो १२०० और ११०० घन सेन्तीमीतरवाली दो पुरुषो की थीं और तीसरी १०५० घन सेन्तीमीतर की एक स्त्री की थी। स्टाइहाइम को मिली नियण्डर्थल स्त्री की खोपडी ११०० घन सेन्तीमीतर की थी। इन पिछली खोपडियो के साथ गाल की हड्डियाँ भी मिली, जिनसे पता लगता है कि पेकिंग-मानव गाल और नाक की हड्डियो मे आधुनिक मगोलायित जातियों से समानता रखता था, यह समानता उसके दाँतो मे भी थी। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि यह मगोलीय जातियो का पूर्वज था। प्रोफेसर ब्लैक का कहना है : "पेकिग-मानव के दाँतो की विशेषता बतलाती है कि वह उस मानवित (होमोनिद) से बहुत अन्तर नही रखता था, जिससे कि पीछे नियण्डर्थल (मुस्तेर) और सपियन-मानव-जातियों का विकास हुआ।" पेकिग-मानव अग्नि का उपयोग करता था, यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि वह अग्नि बना भी सकता था। उसके हथियार पत्थर और हिरन के सीग के होते थे, लकडी के भी होगे।

३. हैडलबर्ग-मानव[1]

आज से डेढ लाख वर्ष पहले प्रथम या द्वितीय हिमसन्धि मे एक मानव रहता था, जिसे हैडलबर्ग-मानव कहा जाता है। सन् १९०७ ई० मे जर्मनी के हैडलबर्ग नगर के समीप मावर मे इस मानव का सबसे पहले जबडा मिला था। स्थान के कारण इस मानव-जाति का नाम हैडलबर्ग पड गया। इससे पहले जावा और पेकिग-मानव यद्यपि मौजूद थे, तथापि उनपर अब भी नर या वनमानुष के बीच मे होने का सन्देह हो सकता था। हैडलबर्ग-मानव पहला असन्दिग्ध मानव है। इसका वह जबडा आज के धरातल से ७९ फुट नीचे एक प्राचीन नदी की बालुका मे चिपका हुआ मिला था। उसी स्तर मे अधिउपा-युग के स्तनधारियो की हड्डियाँ भी मिली थी, जिनमे सरलदन्त गज, सिह और लोमधारी गैंडा भी थे। हैडलबर्ग-मानव के ये ही खाद्य थे और इन्ही से उसका सघर्ष था। उस समय हिमसन्धि के कारण जलवायु अधिक ठण्डी नही थी, जिससे उसे गुहा मे रहने की आवश्यकता नही थी। इस मानव का जबडा बहुत बडा और भारी, और उसकी ठुड्डी का एक तरह अभाव था। वह आजकल के कितने ही आधुनिक मानवो से अधिक बडा नही था। कितने ही शरीर-शास्त्रियोने कहा है कि जबडा यद्यपि वनमानुष जैसा भारी है, किन्तु कुछ दूसरे शरीर-लक्षण आगे आनेवाली मुस्तेर-जाति जैसे हैं। इसलिए, कितने ही विद्वान् इसे मुस्तेर (नियण्डर्थल) का पूर्वज मानते हैं। शायद इसके हथियार शेल-कालीन हथियारो जैसे थे। यह भी अनुमान किया जाता है कि अपने सास्कृतिक विकास मे हैडलबर्ग-मानव पेकिग-मानव जैसा ही था।

४. मुस्तेर (नियण्डर्थल)[2]

वर्तमान सपियन-मानववश से भिन्न जिन पुरातन मानव-वशो के चिह्न प्राप्त हुए हैं, उनमे सबसे अधिक इसी मानव के हैं। सर्वप्रथम सन् १८४५ ई० मे जिब्राल्टर मे

---

१. Man : The Verdict of Science (G. N. Ridley), p 41

२. काल ५०००० वर्ष (V. Gordon Childe : Progress and Archeology, p. 79), ५००००–३०००० वर्ष (Gen. Anth.)

इसकी एक खोपडी मिली थी, किन्तु उस समय विद्वानो का ध्यान उसकी ओर नही गया। उससे आठ वर्ष वाद डुसेल्डोर्फ (जर्मनी) के पास नियण्डर्थल की घाटी की एक गुहा मे खुदाई करते समय मजदूरो को एक खण्डित ककाल मिला, जिसमे ऊपरी कपाल, बाँह, पैर एवं कन्धे और कूल्हे की हड्डियाँ थी। खोपडी अधिक चिपटी तथा बाँहो की हड्डी अधिक उभरी हुई थी, जो कि आगे चलकर इस जाति का विशेष शरीर-लक्षण माना गया, इसी कारण इसका नाम नियण्डर्थल-मानव पडा। लेकिन, नियण्डर्थल के अतिरिक्त इसका दूसरा अधिक प्रसिद्ध नाम मुस्तेर है। सन् १९०८ ई० मे फ्रास के दोरदोएँ इलाके के मुस्तेर स्थान मे एक नियण्डर्थल-ककाल प्राप्त हुआ था, जिसके नाम पर यह मानव और उसकी संस्कृति मुस्तेर के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस मानव की हड्डियाँ वेल्जियम, इग्लिश चेनल के द्वीपसमूह (सन् १८४८ ई०), युगोस्लाविया (सन् १८९९ ई०), क्रिमिया (सन् १९२३ ई०), फिलस्तीन (सन् १९२५ ई०), इताली (सन् १९२९ ई०), क्रिमिया, दोनेत्स उपत्यका[1]; उजवेकिस्तान (सन् १९३८ ई०) आदि वहुत जगहो मे मिली है। यह मानव तृतीय हिमयुग (रिस्) के वाद की तृतीय हिमसन्धि मे मौजूद था, जिसका काल एक लाख से २५ हजार वर्ष पूर्व तक आंका गया है। मुस्तेरीय सस्कृति के हथियार मगोलिया और चीन (शेन्सी) तक मिले हैं, किन्तु शरीर-अवशेष न मिलने से यह कहना मुश्किल है कि वे मुस्तेर-मानव के हैं।

मुस्तेर (नियण्डर्थल मानव)

मुस्तेर की गुहा मे प्राप्त हड्डी १५ वर्ष के एक वालक की थी, जो ५ फुट से कम लम्बी थी। आम तौर से यह जाति छोटे कद के लोगो की थी, जिनकी लम्बाई ५ फुट २ इंच

१ पेर्वो० ओव्०, पृ० २९०, २९६ और २२०, ३०० मे भी।

से ५ फुट ४ इच तक पाई जाती है। जिब्राल्तर की स्त्री-खोपडी का कपालक-क्षेत्र १२८० घन सेन्तीमीतर था और शापेल-ओ-सेन्त की खोपडी १६०० घन सेन्तीमीतर। मुस्तेर-मानव दीर्घकपाल (७० और ७६ के वीच) था। वाँहो की हड्डी का उभरा होना इसकी अपनी विशेषता थी, यह हम वतला आये हैं। इसका चेहरा वहुत लम्वोतरा और नाक अधिक चौड़ी होती थी। चौड़ी होने का यह अर्थ नही कि नाक चिपटी होती थी। इसकी ठुड्डी नहीं के वरावर थी। नियण्डर्थल-मानव के पैर आजकल के वच्चो जैसे थे, जिससे जान पड़ता है कि उसकी घुट्ठी के जोड़ ऐसे थे कि वह पैरो पर अधिक चक्कर काट सकता था। कन्धे पर सिर कुछ आगे को निकला रहता था।[1]

मुस्तेर-मानव तेशिकताश (मध्यएसिया) मे भी मिला है, इसे हम आगे वतलायेंगे। इसका मूलस्थान एसिया माना जाता है।[2]

चतुर्थ हिमयुग का उतार आरम्भ होने के वाद कुछ सहस्राब्दियो (२५ हजार वर्ष पूर्व) तक मुस्तेर मौजूद रहा। आज से २५-३० हजार वर्ष पूर्व सपियन (उत्तम)-मानव की पुरातन शाखा क्रोमेन्यो आ मौजूद हुई। कितने ही नृतत्त्वविशारद मानते हैं कि विशेष परिस्थितियो के कारण मुस्तेर-मानव का ही सपियन-मानव के रूप मे जाति-परिवर्त्तन हुआ।[3] दूसरो का कहना है कि सपियन-विजेताओ ने मुस्तेर को पराजित कर उन्हे अपने मे हजम कर लिया। अन्तिम उपरि-पुरा-पाषाणयुग के क्रोमेन्यो, ग्रिमाल्दी और मद्लेन मानव सपियन-जाति के थे। आज से २५-३० हजार वर्ष पहले मुस्तेर-मानवजाति लुप्त हो गई। सवसे पुरातन अवशेष मुस्तेर-जाति का ही मध्यएसिया मे मिला है, इसलिए उसके वारे मे और विस्तार के साथ हम आगे लिखेंगे। यहाँ मानव-विकास की कडी को स्पष्ट करने के लिए सपियन-मानव की कुछ पुरानी जातियो का वर्णन कर देना उचित है।

●

---

१. आग का उपयोग यह जानता था (General Anthropology, p 239); विशेष के लिए Le' Humanite Prehistorique (G) acques de Morgan, Paris (924)

२ 10 Hist of Anth, p. 58

३. Gen Anth, p. 78

स्रोतग्रन्थ .

१ पेर्वो० ओव्०

२. Our Early Ancesters (M. H Burkitt, Cambridge, 1929)

३. Prehistoric India (Paggot)

४ Prehistoric India (P. Mitra, Cal., 1924)

५. General Anthropology

६ History of Anthropology (A C Haddon, London, 1945)

७ Man : The Verdict of Science (G N. Ridley, London, 1946)

८ Progress and Archaeology (V G Childe, London, 1944)

९. Stone Age in India (P. T. S. Ayyangar)

अध्याय ३

उपरि-पुरा-पाषाण और मध्य-पाषाणयुग

§१. ओरन्यक (१५००० वर्ष पूर्व)

तूलूज् (फ्रांस) से ४० मील दक्षिण-पश्चिम ओरन्यक नामक स्थान है। यहीं पर इस मानव के शरीर-अवशेष मिले थे, जिसके कारण इस जाति तथा इसकी शाखाओं का नाम ओरन्यक पड़ा। इसी जाति के अन्तर्गत क्रोमेञ्यो, सोलूत्रे, मद्लेन और अजिल-जातियाँ हैं, जो आज से १५ हजार वर्ष पूर्व तक मौजूद थीं। मुस्तेर-मानव के साथ पुरा-पाषाणयुग का निम्न स्तर खतम हो जाता है और ओरन्यक से हम उपरि-पुरा-पाषाणयुग में पहुँचते हैं।

१. क्रोमेञो[1]

फ्रांस की वेजेर नदी की उपत्यका में, जहाँ कि पूर्वोक्त मुस्तेर-गुहा है, एक दूसरी लटकी हुई चट्टान है, जिसे क्रोमेञ्यो कहते हैं। सन् १८६८ ई० में क्रोमेञ्यो की शैल-गुहा में पाँच मानव-कंकाल मिले, जिनका नाम प्राप्तिस्थान के कारण क्रोमेञ्यो पड़ गया। उपरि-पुरा-पाषाणयुग में यूरोप का सबसे अधिक प्रसिद्ध मानव यही था। मुस्तेर-मानव जहाँ खर्वकाय था, वहाँ क्रोमेञ्यो अधिकतर ६ फुट का कद्दावर मनुष्य था। यह दीर्घ-कपाल था और इसका कपाल-क्षेत्र १५९० से १७१५ घन सेन्तीमीतर तक होता था। चेहरा शरीर की अपेक्षा छोटा और चौड़ा था। क्रोमेञ्यो-स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक नाटी होती थीं। इस मानव का शरीर-लक्षण कितनी ही बातों में आधुनिक एस्किमो—विशेषकर ग्रीनलैण्डवालों—से इतनी समानता रखता है कि कितने ही विद्वान् मानते हैं कि मध्यएसिया से नव-पाषाणयुग के मानव के आने पर क्रोमेञ्यो उत्तर की ओर हटते दूर चले गये, वही आजकल एस्किमो हैं। इस बात में तो सभी सहमत हैं कि यह मानव-वंश मुस्तेर की भाँति उच्छिन्न नहीं हो गया, बल्कि उसकी सन्तान या रक्त आधुनिक मानव में मौजूद है।[2]

२. ग्रिमाल्दी[3]

भूमध्यसागर के तट पर फ्रांस के मोने प्रदेश में ग्रिमाल्दी नाम की नौ गुफाएँ हैं, जिनमें अधिकांश ध्वस्त हो चुकी हैं। इन्हीं में एक शिशु-गुहा में सन् १९०१ ई० में माँ और बेटे

---

१ पेर्वो० ओर्व०, पृ० ४३; Gen. Anth., pp 78-82

२. Gen Anth , pp 76, 78

३ Everyday Life in the Old Stone Age, p 73

के दो सम्पूर्ण कंकाल मिले। स्त्री प्रौढा रही होगी और पुत्र १४ वर्ष के करीब का। स्त्री का कद ५ फुट ३-इंच था और लडके का ५ फुट से थोडा ही अधिक। दोनो कंकाल ओरन्यक-काल के हैं, यद्यपि इनका सम्बन्ध उनसे नही है। नृतत्त्वविशारद इसे निग्रोयित जाति का बतलाते है। इसकी खोपडी दीर्घकपाल, ठुड्डी थोडी-सी विकसित, दाँत बहुत बड़े और नाक की हड्डियाँ चिपटी थी। बड़े नथुने विशेष तौर से निग्रो जैसे थे। इसके निग्रो-सम्बन्ध को अपेक्षाकृत लम्बी टाँगें तथा बाहु के ऊपरी भाग भी बतलाते हैं। ग्रिमाल्दी कंकाल अफ्रीका के श्मेस लोगो से अधिक समानता रखते हैं। यद्यपि यह प्रश्न जटिल है कि निग्रोयित आकार के ये लोग यूरोप मे कैसे पहुँचे। कुछ विद्वानो का कहना है कि ग्रिमाल्दी-मानव क्रोमेन्यो-मानव का पूर्वज था। प्रोफेसर इलियट स्मिथ का मत है कि ग्रिमाल्दी-जाति का शरीर-लक्षण, निग्रो की अपेक्षा आस्ट्रेलायित मानव से ज्यादा मिलता है।

क्रोमञों मानव

ग्रिमाल्दी-मानव यद्यपि ओरन्यक-काल मे था, तथापि उस जाति मे इसे सम्मिलित करने के लिए अधिकाश विद्वान् तैयार नही हैं।

ओरन्यक-मानव सास्कृतिक विकास मे मुस्तेर-मानव से आगे बढा था। उसके चकमक पत्थर के हथियार अधिक सुधरे तथा कार्यकारी थे। उसके हथियारो के भेद भी अधिक थे। यद्यपि हथियार पत्थर के अतिरिक्त कुछ हड्डी के भी थे, लेकिन इसमे सन्देह नहीं कि उसके हथियारो मे बहुत-से लकडी के भी रहे होंगे, जो १०-१५ हजार वर्षों तक सुरक्षित नही रह सकते थे। अपने पत्थर के हथियारो से वह बारहसिंगे के सींगो को काटकर बाण और भाले के फल बनाता था। हड्डी के हथियारो का बनाना शायद इसी मानव ने पहले-पहल आरम्भ किया। हड्डी की सूइयो से वह चमड़े की सिलाई भी करने लगा था, यद्यपि इस सुई से मोची की सुई की तरह सूत खींचा जाता था। ओरन्यक-मानव धनुष और बाण का इस्तेमाल जानता था। इसने हड्डियो पर अपनी कलाभिरुचि का प्रदर्शन किया है,

साथ ही गुफाओ मे उसके हाथ के चित्र भी मिलते हैं। स्पेन के अल्तमीरा गुफा की छत और दीवारो पर उसके हाथ के बनाये हुए कितने ही बैल, विसौन, हिरन और घोडे के अत्यन्त सजीव चित्र हैं। अल्तमीरा की गुफा वहुत अँधेरी है। यह २८० मीतर लम्बी है (एक मीतर ३ फुट पौने ४ इच का होता है)। गुफा के भीतर रोशनी विलकुल नही जा सकती और चित्र भीतर की दीवार मे सव जगह वने हुए हैं। आज भी प्रकाश के विना उन्हे देखा नही जा सकता, इसलिए चित्रकारो ने अवश्य दिये की सहायता ली होगी। ओरन्यक-मानव ४-५ इच की मिट्टी की मूर्त्तियाँ भी वना लेता था, जो काफी अच्छी थी।

३. सोलूत्रे[1] (१४००० वर्ष पूर्व)

फ्रास मे मासो के पास सोलूत्रे नामक स्थान है, जहाँ उपरि-पुरा-पाषाणयुग के मानव के शरीरावशेष मिले हैं, जिसके कारण उसका नाम सोलूत्रे पडा। इस मानव के अवशेष इंगलैण्ड, उत्तरी स्पेन और मध्य यूरोप तक मिले हैं। वह घोडो का शिकारी था और हिमयुग के समाप्त होने के वाद यूरोप मे जो घास के मैदान मौजूद हुए थे, उनमे घूमा करता था। चकमक पत्थर के वने हुए सुन्दर फल वह अपने भालो और वाणो मे लगाता था, जो शिकार के लिए ही भयकर हथियार नही थे, वल्कि उनके वनाने मे कला और सुरुचि का भी भारी परिचय दिया गया था। सोलूत्रे-मानव की दस्तकारी के रूप मे चकमक पत्थर की छिलाई और सफाई अपने जिस उच्चतम विकास पर पहुँची थी, उसका मुकाविला नव-पाषाणयुग के पहलेवाले नही कर पाये। इन्होने हड्डी की सच्ची सूई वनाई, इससे पहले मोचियो की तरह ही सिलाई होती थी। इस मानव की सूई के लिए सूत का काम अँतडियो के रेशे या नसें करती रही होगी। इस समय मानव ने अपने चमडे के परिधान और जूता आदि के वनाने मे वहुत तरक्की की होगी, इसमे सन्देह नहीं। इस मानव के रहने के समय यूरोप की जलवायु वैसी गरम नही थी, जैसी ओरन्यक-मानव के समय मे। वह कुछ अधिक सरद था। इस समय यूरोप मे मम्मथगज भी मौजूद थे।

४. मद्लेन[2] (१३००० वर्ष पूर्व)

सोलूत्रे-मानव की दो सहस्राब्दियो के वाद मद्लेन-मानव का पता लगता है। फ्रास की वेजेर नदी की उपत्यका मे मद्लेन कैसल (गढ) के करीव ही इस मानव का अवशेष मिला था। अपने पत्थर के हथियारो मे यह सोलूत्रे-मानव का मुकाविला नही कर सकता था। हड्डी और हाथी-दाँत के हथियारो को यह ज्यादा पसन्द करता था और चकमक को वहुत कठोर हथियारो[3] के तौर पर ही इस्तेमाल करता था। ओरन्यक-वंश का इसे नालायक उत्तराधिकारी कह सकते हैं। यह फ्रास ही नहीं, स्पेन, जर्मनी, वेल्जियम और इंगलैण्ड मे भी रहता था। इसके समय शायद हिमयुग की स्मृति भी लुप्त हो चुकी थी। मद्लेन-मानव

१. पेर्वो० ओव्० , पृ० ३५०–६३

२ Gen Anth , p. 242

३ पेर्वो० ओव्०, पृ० ४६९–८३, Gen. Anth., pp. 77, 143

अपने भालो और वाणो के फल हाथी-दाँत तथा हरिन की सीगो का वनाता था। इन फलो मे कुछ काँटेदार भी होते थे, जिनसे आगे मछली मारने की वशी का विकास हुआ। हड्डी के अपने हथियारो पर यह चित्रकारी भी करना जानता था। मद्लेन-मानव के चित्रो मे सील और सामोन मछली की आकृतियाँ काफी मिलती है। एस्किमो से उनके शरीर-लक्षणो मे भारी समानता है। एस्किमो लोग भी हड्डी और लकडी पर कारुकार्य करने मे बहुत दक्ष होते हैं। हो सकता है, मद्लेन-मानव लकडी के वोटो को चमडे से बाँधकर एक तरह की नाव बनाता था। वह धनुही के सहारे वरमा द्वारा लकडी और हड्डी मे गोल छेद कर सकता था। वह जाडे के दिनो मे गुफाओ या चट्टानो की छाया के नीचे शरण लेता और गरमियो मे फूस या चमडे की झोपडी मे। आधुनिक एस्किमो लोगो से आकृति और हस्त-शिल्प मे ही वह भारी समानता नही रखता था, वल्कि दीपक से प्रकाश और खाना पकाने का भी शायद काम लेता था। चित्रकला के विकास मे, प्रागैतिहासिक मानवो मे इसे सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। उसके चित्रो मे मम्मथगज का सजीव चित्रण यदि कही देखा जाता है, तो कही विसौन और सिंह का आकार, कही लाल और दूसरे हिरनो का शिकार अंकित मिलता है। वह लाल, भूरे, काले और पीले रगो को इतनी सुन्दरता के साथ इस्तेमाल करता था कि चित्र बहुत सजीव और भावपूर्ण हो जाता था। उसके चित्रो मे कितने ही पूर्ण आकार के हैं। वह ब्रुश का अवश्य इस्तेमाल करता था। रगो को शायद हिरन के सीगो की बनी नलियो मे रखता था।[1]

§२. मध्य-पाषाणयुग

अजिल, अश्योल्[2] (११००० वर्ष पूर्व)

मद्लेन से दो सहस्राव्दी बाद इस मानव का पता लगता है, जो कि पुराण मानव-जातियो का अन्तिम प्रतिनिधि था, और अपनी विशेषताओ के कारण इसे पुरा-पाषाण और नव-पाषाण के बीचवाले मध्य-पाषाणयुग का मानव कहते हैं। दक्षिणी फ्रास मे लूद के समीप मा-द-अजिल की गुफा मे उसके हाथ की चीजें मिली थी। इंगलैण्ड मे भी उसका पता लगता है। अजिल-मानव की एक विशेषता यह थी कि वह मुरदे की बहुत सी खोपडियो को अलग करके अण्डे की तरह एक जगह गाडा जाता था। ववेरिया मे नोर्दलिगेन के पास ओफनेत गुहा मे एक ही जगह १७ खोपडियाँ गाडी मिली थी, जिनके साथ गेरू के टुकडे भी थे, जिससे मालूम होता है कि वह गेरू से रँगकर शरीर का शृगार किया करता था। उन खोपड़ियो मे एक छोटे बच्चे की भी थी, जिसके पास बहुत से घोघे आदि रखे हुए थे, जो मरने पर भी लडके को खेलने के लिए थे। जान पडता है, शरीर के वाकी भाग को वे लोग जला दिया करते थे। पीछे जव शरीर का जलाना आम हो गया, तव

---

१. दक्षिण भारत मे कुर्नूल के पास एक गुहा मे इस जैसे हथियार सन् १८८१ ई० मे मिले थे।—Prehistoric India (Paggot, p 35)

२ पेर्वो० ओय्०, पृ० १९०; Gen Anth, p 45

भस्म को मिट्टी के बरतन मे रखकर गाड दिया जाता था, लेकिन यह नव-पाषाणयुग की बात हैं। हिमयुग के बीते बहुत दिन हो गये थे, यूरोप की जलवायु इस वक्त नरम थी। मद्लेन के समय घासवाले मैदानो का स्थान घने जगलों ने ले लिया था। अजिल-मानव अच्छे मछुए थे, साथ ही शिकार भी उनकी जीविका का बड़ा साधन था। पालतू पशु का पहले-पहल इन्ही के समय पता लगता है, जो कि कुत्ता था। अभी कृषि का कही पता नही था। अजिल-मानव को मछली या जानवर के शिकार पर गुजारा करना पडता था। कुत्ते की घ्राणशक्ति का उपयोग करके वह शिकार के जानवरो का अच्छी तरह पीछा कर सकता था और शायद कुत्ते जानवर को घेरने में भी सहायता करते थे। अभी फल जमा करने और शिकार से प्राप्त मांस के सिवाय आहार का कोई दूसरा साधन मानव को प्राप्त नहीं हुआ था।

§३. मानवशरीर-लक्षण

प्राचीन मानवों का फॉसिल-भूत हड्डियो के सिवा और कोई शरीरावशेष नहीं मिला, इसलिए उनके केशों की बनावट कैसी थी, चमड़े, आंख और केश का रंग कैसा था, रुधिर किस वर्ग का था, इत्यादि बातों के जानने का हमारे पास साधन नहीं है। आजकल की मानव-जाति के मुख्यत चार भेद हैं: आस्ट्रेलायित, निग्रोयित, मंगोलायित और श्वेतांग। रगों का अन्तर दिखलाई पड़ते भी मंगोलायित और श्वेताग जातियो के शिशुओं की नासाकृति मे पहले अन्तर नही रहता, नासा-सेतु (बांसा) का विकास वयस्कता के साथ होता है।

१, शरीर-लक्षण[१]

केश की बनावट, चमड़े का वर्ण और नासाकृति को देखकर आज हम मानव-जातियो के भिन्न-भिन्न भेद को समझ लेते हैं। निग्रोयित जातियो के चमड़े का रंग काला, बाल काले तथा ऊन जैसे फूले होते हैं। आस्ट्रेलायित लोगो का चमड़ा काला और बाल काले तथा लहरदार होते हैं। मगोलायित, जिसमें अमेरिकन इण्डियन भी शामिल हैं, हल्का रंग, सीधे बाल तथा उन्नत-नासा-सेतु के होते हैं। श्वेताग बहुत हल्का रंग, पतली नाक तथा भिन्न-भिन्न वर्ण और बनावट के केशोंवाले होते हैं। नेत्र की आकृति में भी भेद देखा जाता है, किन्तु वह अधिक स्थिर लक्षण नहीं है। श्वेतागो और निग्रोयितों की आंखें अधिक विस्फारित होती हैं, जबकि मगोलायितों की ऊपरी पपनी मे एक भारी परत पडी रहती है, जिसके कारण वह पूरे तौर से खुल नहीं सकती। निग्रोयितों और आस्ट्रेलायितो के ओठ बहुत मोटे होते हैं, मंगोलायितों के उनसे कम और श्वेतागों के ओठ बहुत पतले होते हैं। कभी-कभी शरीराकृति में भिन्न प्रकार के विकास भी देखे जाते हैं। अमेरिकन इण्डियन नियमित-रूपेण काले बालों और आंखो तथा हल्के रंगवाले होते हैं, किन्तु अलास्का और ब्रिटिश-कोलम्बिया के विशालतम मस्तिष्क और अल्पतम रोमवाले लिगित और हैदा एस्किमो इसके अपवाद हैं। इनका चमड़ा बहुत सफेद, केश लाल और आंखें हल्की भूरी होती है, जिनके कारण इन्हें कपिल (ब्लोण्ड) एस्किमो कहा जाता है। आजकल भी देखा जाता है,

१. Gen Anth., p. 102

भिन्न-भिन्न जाति के लोग प्राय अपनी ही जाति मे विवाह या सन्तानोत्पत्ति करते है, जिसके कारण उनकी शरीराकृति मे आनुवंशिकता कायम हो जाती है। अर्थात्, एक जाति मे एक ही रूपरग के व्यक्ति पैदा होते हैं। मानव-आकृति और रग के परिवर्त्तन मे जलवायु भी कारण होती है। अधिक गरम देशो मे रहनेवाले लोगो का रग श्याम होने लगता है, चाहे उनके माता-पिता श्वेताग ही हो, तो भी जलवायु का प्रभाव उतना अधिक और शीघ्रता से नही देखा जाता, जितना कि जोडा-निर्वाचन या एस्किमो की भाँति अज्ञात कारणो द्वारा देखा जाता है।

भिन्न-भिन्न मानव-जातियो मे वर्ण-भेद और रूप-भेद किस तरह हुआ, इसके बारे मे विद्वानो ने बहुत-सी कल्पनाएँ दौड़ाई है। ऑर्थर कीथ के मतानुसार वर्ण-भेद का कारण मनुष्य-शरीर के भीतर की निष्प्रणालिक ग्रन्थियो का हारमोन (जीवन-रस) है। मस्तिष्क के ललाट की बगल मे अवस्थित 'पिट्युइटरी'-ग्रन्थि अधिक बढी हो, तो उससे हारमोन का भी अधिक स्राव होगा, जिसके कारण नाक[1], चिबुक (ठुड्डी), हाथ और पैर अधिक लम्बे हो जायेंगे। शरीर की वृद्धि पर 'थाइराइड'-ग्रन्थि नियन्त्रण करती है। यदि इसका हारमोन कम निकले, तो नासा और केश बहुत कम विकसित हो पाते हैं और चेहरा चिपटा हो जाता है। इस हारमोन की कमी से निग्रो जाति के लोगो के शरीर पर बाल की कमी है। जल मे आइडिन का अभाव होने से थाइराइड-ग्रन्थि हारमोन-स्राव के लिए अधिक प्रयत्न करके स्वय बढकर घेघे का रूप धारण कर लेती है। बचपन से वैसा होना बकलोल भी बना देता है। इसका अर्थ यह हुआ कि बाहरी प्रकृति (जल मे आइडिन का अभाव) भी मनुष्य की भीतरी निष्प्रणालिक ग्रन्थियो पर प्रभाव डालती है और उसके द्वारा (अर्थात्, प्राकृतिक वातावरण के कारण) शरीर-लक्षणो मे परिवर्त्तन होता है। केवल रग आदि मे ही नही, बल्कि शरीर के ढाँचे पर भी इस तरह के प्रभाव देखे जाते है, जिससे मालूम होता है कि शरीर-लक्षण कोई स्थिर चीज नही है। पूर्वी यूरोप से अमेरिका आये हुए यहूदियो की कपालभित्ति ८३ सें० मी० होती है, किन्तु उनके पुत्र-पुत्रियो की ८१ ४ और पौत्र-पौत्रियो की ७८.७ सें० मी० बन जाती है। शरीर-दीर्घता की बात तो यह है कि हार्वर्ड-विश्वविद्यालय के छात्र अपने माता-पिता से ३ ४ सेन्तीमीतर अधिक ऊँचे हो जाते है।

२. जातियों का सम्मिश्रण

प्राचीन मानव-जातियो मे भी जाति-सम्मिश्रण हुआ, क्योकि मानव सदा से घुमन्तू रहा है—कृषियुग से पहले तो घुमन्तू छोडकर और कुछ था ही नही। हम आज की मानव-जाति के इतिहास मे भी ऐसे बहुत-से उदाहरण पाते हैं, जिनमे दो-चार व्यक्ति नही, बल्कि जातियो का सम्मिश्रण हुआ। ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी के अन्त मे ग्रीक लोग आक्रमण कर भूमध्यसागर के तट पर बस गये। थ्रेस (बल्कान)-वासी क्षुद्र-एसिया मे चले गये, इसी तरह केल्ट भी इताली तक फैलते क्षुद्र-एसिया मे पहुँच गये। रोमन औपनिवेशिक यूरोप के बहुत-से

---

१ Gen. Anth., p. 102 शैशव के बाद नाक स्पष्ट होती है, Gen Anth , p 101, तत्रैव और p 106

की अधिकता का कारण वहाँ के लोगो का यूरेसियाई (स्लाव) लोगो के साथ अधिक सम्मिश्रण है। रक्त का वर्गीकरण चिकित्साशास्त्र से वाहर नृतत्त्वीय अनुसन्धान मे भी उपयोगी हो चला है, किन्तु उससे हम प्राचीनतम मानव-जातियो के वारे मे वहुत अधिक नही वतला सकते। हाँ, मुस्तेर, क्रोमेन्यो आदि कितनी ही प्राचीन जातियो की मगोलायित आकृति शायद उन्हे ए. वर्ग का वतलाती है।

●

स्रोतग्रन्थ :

१. History of Anthropology, pp. 36-37
२ Le' Humanite Prehistorique (J. de Morgan)
३. General Anthropology (Boas)
४ Our Early Ancestors (M C. Burkitt)
५. Progress and Archaeology (V. G. Childe)
६. Anthropology, I, II (E. B. Taylor, London, 1946)
७ In the Beginning (G Elliot Smith, London, 1946)
८ Geology in the life of man (Duncan Leith, London, 1945)
९ Man the Verdict of Science (G. N. Ridley, London, 1946)
१० History of Anthropology (A C. Haddon)

अध्याय ४

मध्यएसिया के आदिम मानव

मध्यएसिया की अपार वालुका-राशि (प्यासी भूमि, काराकुम, किजिलकुम तकला-मकान और गोवी) का पूरी तौर से अनुसन्धान अभी ही शुरू हुआ है, जबकि ये रेगिस्तान कम्युनिस्त शासन मे आये। नृतत्त्वविशारदो को बहुत आशा है कि मानव के आरम्भिक इतिहास की कुंजी शायद इन्ही रेगिस्तानो से मिले, जो कि किसी समय हरे-भरे घास के मैदान अथवा वृक्ष-वनस्पति से आच्छादित वनखण्ड थे। पश्चिमी मध्यएसिया मे सबसे प्राचीन मानव मुस्तेर के अवशेष दो जगह मिले हैं। इरतिस के तट पर कुरदाइ मे मध्य-पुरा-पाषाणयुग का मानव रहता था, लेकिन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है दक्षिणी उजवेकिस्तान मे तेशिकताश का गुहा-मानव।

१. मध्य-पुरा-पाषाणयुग

१ तेशिकताश-मानव

पामीर का ही पश्चिम की ओर बढा हुआ पर्वतीय भाग उजवेकिस्तान-गणराज्य मे समरकन्द से तिरमिज के उत्तर तक फैला हुआ है। इसी पर्वतमाला के दक्षिणी भाग मे दरवन्द का प्रसिद्ध गिरिद्वार है, जो स्वेनचाग की यात्रा के समय (सन् ६३० ई०) देश की प्रतिरक्षा का बहुत जबरदस्त साधन समझा जाता था। इस सँकरे गलियारे मे लोहे का फाटक लगा हुआ था। अब उसका वह सैनिक महत्त्व नही रह गया है, और न समरकन्द बुखारा से आनेवाले यात्री के लिए दरवन्द से गुजरना आवश्यक है। लेकिन, दरवन्द होकर जानेवाली शीरावाद की छोटी नदी अपना एक दूसरा महत्त्व रखती है। दरवन्द से कुछ मील उत्तर इसी नदी के दाहिने किनारे पर कत्ताकुर्गन का विशाल गाँव है, जिससे कुछ और ऊपर जाने पर नदी के बाँयें तटपर अमीर-तैमूर स्थान है। शायद अमीर-तैमूर यहाँ आया हो, किन्तु अमीर-तैमूर के आने से पचासो हजार वर्ष पहले एक दूसरी ही मानव-जाति का यहाँ डेरा था, जो तैमूर से कही ज्यादा खूनखार थी। अमीर-तैमूर के बिलकुल पास की पहाडी मे तेशिकताश की गुहा है। यही मुस्तेर-मानव के अवशेष जून, १९३८ ई० मे मिले।[१] यह स्थान उजवेकिस्तान के वाइसून जिले मे है। अमीर-तैमूर मे भी मध्य-पुरा-पाषाणयुग के अस्त्र मिले हैं, किन्तु वहाँ मानव-शरीरावशेष नहीं मिले। एसिया मे यहाँ से पूरब मुस्तेर-मानव का अवशेष और कहीं नहीं मिला है। यह गुफा १५-१६ सौ मीतर लम्बी और १५ से २० मीतर चौडी है। सोवियत-पुरातत्त्ववेत्ताओ ने इसकी सुव्यवस्थित रीति से खुदाई करके बहुत-सी ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त की है, जिनमे पाषाण-अस्त्र (नुकलेयस, छुरे) तथा बहुत प्रकार के जानवरो की हड्डियाँ हैं। जंगली बकरियो के विशाल सींग काफी परिमाण मे प्राप्त

१ त्रुदी उजवेकिस्तान्स्कओ अकदमी नाउक (ताशकन्द, सन् १९४० ई०, पृ० ५४२-४)

हुए हैं। इस गुफा के वर्त्तमान धरातल के नीचे दस स्तरो का पता लगा है। ऊपर से तीसरे तल मे ५० मीतर लम्बा एक चबूतरा-सा मिला, जिसपर बहुतेरे बड़े-बड़े पत्थर पड़े हुए थे। यहाँ बकरी के सीग तथा पत्थर के हथियार बनाने के साधन प्राप्त हुए। नवें स्तर के तीसरे, चौथे तथा दसवें स्तर के भी तीसरे-चौथे चतुष्कोणो मे सबसे अधिक सामग्री मिली,
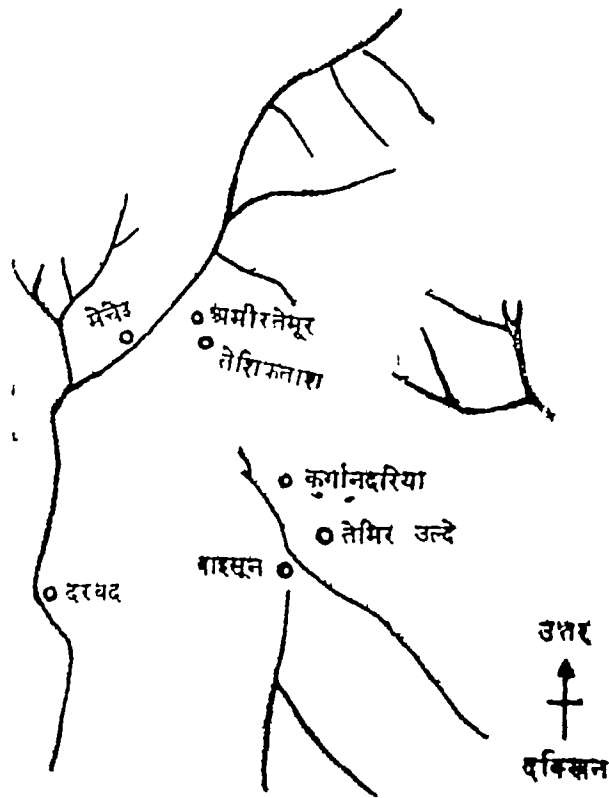
७. तेशिकताश-गुहा

जिसमे पाषाण-अस्त्रो के साथ दो बकरी के सीग तथा बहुत-से जगली जानवरो की हड्डिया मिली। मालूम होता है, पत्थर के हथियारो का मिस्त्रीखाना यही पर था। सबसे महत्त्व की चीज जो यहाँ मिली, वह थी आदमी की हड्डी, खोपड़ी, जिसमे नेयण्डर्थल या मुस्तेर-मानव के शरीर-लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। खोपडी बहुत मोटी थी, इसका ललाट नीचा था, भौं की हड्डी उभरी हुई थी, दाँतो मे कुकुरदन्त छोटा था, यद्यपि और दाँत बहुत बडे थे। मुँह बहुत बडा था, पर ठुड्डी का अभाव था।

तेशिकताश की गुफा मे मिली हड्डियो के देखने से पता चलता है कि वहाँ सबसे ज्यादा सिवेरीय बकरी का इस्तेमाल होता था, जिसकी ६४९ संख्या का पता लगा है। इसके अतिरिक्त ५ पक्षी, २ घोडे, २ सूअर, १ पार्दसिंग तथा पाँच-सात और जानवरो का पता लगा है। हड्डियो से मालूम होता है कि तेशिकताश-मानव का सबसे प्रधान खाद्य सिवेरीय बकरी थी, उसी का शिकार उसकी प्रधान जीविका थी।

इस खोपडी का कपालक-क्षेत्र १४९० घन सेन्तीमीतर था, जबकि आजकल के शिशु का ११५० से १५०५ घन सेन्तीमीतर होता है (चिम्पाजी का कपालक-क्षेत्र ३५०, ओराङ-

ऊतान का ३८० और गुरिल्ला का ४०० घन सेन्तीमीतर होता है)। यह खोपडी १५-१६ साल के लडके की थी। गुहा मे वहुत सारे पाषाणास्त्र और हड्डियाँ मिली, इसलिए आशा हो सकती थी कि वहाँ और भी खोपडियाँ या शरीरावशेष होंगे। किन्तु, मुस्तेर-मानव
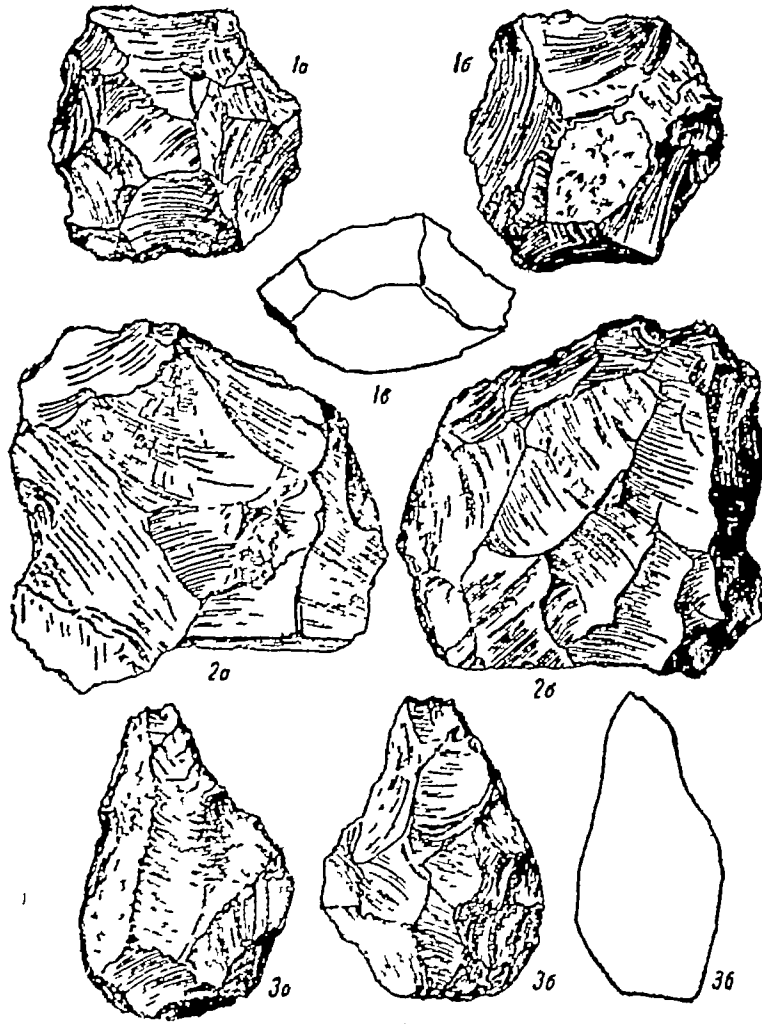
८ तेषिकताष मानवके पाषाणास्त्र p १८

के अवशेष उतने सुलभ कही भी नही हैं। नृतत्त्वविशारदो का कहना है कि तेशिकताश-मानव पेकिंग-मानव और आधुनिक मानव के वीच का था।

१. जीवन-चर्या

आज से २५-३० हजार वर्ष पहले चतुर्थ हिमयुग के अन्त मे लुप्त इस मुस्तेर-मानव की जीवन-यात्रा कैसी थी, इसका कुछ पता उसकी गुफा मे मिली हड्डियाँ वतलाती है और कुछ का अनुमान हम तस्मानिया के मूल निवासियो की जीवन-यात्रा से कर सकते हैं। तस्मानिया के लोग दक्षिणी उजवेकिस्तान के वरावर ही शीतोष्ण (प्राय ४० डिग्री अक्षांश)

में रहते थे, यद्यपि एक-दूसरे से भिन्न (दक्षिणी और उत्तरी गोलार्द्ध) मे होने के कारण उनकी ऋतु एक दूसरे से उलटे काल मे पडती थी। तेशिकताश-मानव को जहाँ हिमयुग की कठोर सरदी मे जीवन-सघर्ष करना पड रहा था, वहाँ पिछली शताब्दी मे अँगरेजो की कृपा से जीवन से मुक्त हो जानेवाले तस्मानियन लोगो को उतनी सरदी का मुकाबिला नही करना पडता था, तो भी वह ऐसी जगह पर थे, जहाँ कभी-कभी जाडो मे बरफ पड जाती थी। आबेल तस्मन ने सन् १६४२ ई० मे अस्ट्रेलिया के दक्षिण मे अवस्थित इस द्वीप का पता लगाया था, जिसके नाम पर ही उसका नाम तस्मानिया[1] पडा। सन् १७७७ ई० मे कप्तान कूक जब तस्मानिया पहुँचा, तब उसने वहाँ के लोगो को पुरा-पाषाणयुग मे पाया। जान पडता है, तस्मानियन लोग एसिया से मलाया-जावा होते अस्ट्रेलिया पहुँचे थे। उस समय अस्ट्रेलिया शायद एसिया से स्थल द्वारा मिला हुआ था। प्रबल मानव-शत्रुओ के भय से तस्मानियन लोग भागते-भागते इस द्वीप मे पहुँच हजारो वर्षों से अपना सरल जीवन बिता रहे थे। दूसरे बर्बर मानव-शत्रुओ ने उन्हे भागकर जान बचाने का अवसर दिया था, किन्तु सभ्य अँगरेज उतनी दया दिखलाने के लिए तैयार नही थे। अस्तु, तस्मानिया द्वीप मे पहुँचकर ये मानव-सम्पर्क से वचित हो अपना पुराना जीवन बिता रहे थे, जबकि श्वेताग नई भूमियो की खोज करते उनके पास पहुँचे। उस समय वह लोहा या किसी धातु का हथियार इस्तेमाल नही करते थे। पुरा-पाषाणयुगीन मानव की तरह उनके हथियार छिले चकमक पत्थर के होते थे। पाषाण-युग के मानव कुठार भी बनाना नही जानते थे, जिसे कि शेल-मानव बना सकता था। वे आम तौर से नगे रहा करते थे, किन्तु कभी-कभी चमडे भी पहनते थे। काँगरू के चमडे से बिछौने का काम लेते थे। वर्षा और गरमी से उनके स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नही पडता था। उनका घर खाली शाखाओ और घासो की बनाई हुई आड होता था, जिसके ऊपर छत डालने की आवश्यकता नही समझी जाती थी। अँगरेजो ने धीरे-धीरे तस्मानिया के सुन्दर द्वीप को निगलकर अधिकाश निवासियो को अकाल ही काल-कवलित कर दिया। बचे हुए निवासियो को सन् १८३१ ई० मे पास के फिलण्डर द्वीप मे निर्वासित कर दया दिखाते हुए झोपडियो मे रख दिया गया। खुली जगह मे वर्षा मे भीगते और जाडे मे काँपते उन्हे कोई रोग नही हुआ था, किन्तु अब उन्हे सरदी और जुकाम होने लगा। अपनी प्राकृतिक अवस्था मे ये लोग शरीर पर चरबी और गेरू पोता करते थे, जिससे शायद सरदी-गरमी का बुरा प्रभाव नही पडता था।

तस्मानियन लोगो के जीवन से हमे पता लगता है कि आज से ५० हजार वर्ष पहले मध्यएसिया के प्राचीन निवासी कैसे रहते थे। तस्मानीय लोग घोघे-कौडी आदि की माला के बडे शौकीन थे और तेज चकमक पत्थर से काटकर गोदना भी गोदाते थे। आहार की खोज मे वह बराबर एक जगह से दूसरी जगह घूमते रहते थे। कितनी ही बार बच्चों को भी आहार की कमी के कारण भूखो मरने के लिए छोड दिया जाता था, वही बात वियन्गों और अधिक बूढे आदमियो की भी थी। कडी लकडी के बने हुए सीधे-सादे भाले से वह काँगरू का शिकार करते थे। लकडी को काटकर उसे चकमक से छील लेते थे। यदि लकडी

[1] Everyday Life in the Old Stone Age, pp 40-44

टेढी होती, तो उसे आग से गरमाकर सीधा करते थे। एक छोर को आग से जला लेते थे, फिर उसे छीलकर तेज बना लेते। यह छोर उसी ओर होता था, जिधर लकडी ज्यादा मोटी, अतएव भारी होती थी। उनके भाले ११-१२ फुट लम्बे होते थे। एक ओर भारी होने की वजह से उस ओर सामने करके फेंका हुआ भाला लक्ष्य पर सीधे जाता था। तस्मानीय शिकारी ४०-५० गज के फासले से कांगरू को मार सकता था। वह जिस तरह चिर अभ्यास के कारण भाले का ठीक निशाना लगा सकता था, वैसे ही ढाई फुट लम्बे मोटे डण्डे या पत्थरों को भी फेंककर शिकार कर सकता था। उनकी आंख, कान और घ्राण की शक्ति बडी तीव्र थी, जिससे वे अपने शिकार का अच्छी तरह पीछा कर सकते थे। जो भी पशु-पक्षी उनके हाथ मे आता, उसे लकडी की आग मे डाल अधपका करके वालो और पखो को झुलसाकर चकमक के चाकू से काटकर टुकडे-टुकडे कर देते। नमक का काम थोडी-सी लकडी की सफेद राख देती थी। वह केवल भुना हुआ मास खाते थे, उबालने के लिए उनके पास कोई बरतन नही था।

भोजन के बारे मे तेशिकताश-मानव की भी यही अवस्था रही होगी। तेशिकताश-मानव गरमियो मे अपनी गुफा से बहुत दूर-दूर तक भटकता रहा होगा। उसको ऐसी नदी और जलाशय भी मिलते होंगे, जिनमे मछलियाँ रहती थीं। शायद उनकी स्त्रियाँ भी तस्मानीय स्त्रियो की भाँति पानी मे गोता लगाकर या वैसे ही मछलियाँ पकड़ती रही होंगी। वशी या जाल का पता तस्मानीय लोगो को नही था। पुरुषो का काम शिकार खेलना था। तस्मानीय स्त्रियाँ दूसरा काम करती थीं। वह अपने पुरुषो के पास खाते वक्त बैठ जातीं, वह अपनी आज्ञाकारिणी स्त्रियो को अपने खाद्य मास मे से काटकर एक टुकडा थमा दिया करते थे। तस्मानीय पुरुष लकड़ी के बोटो को नाव की तरह इस्तेमाल करते थे। तीन-चार आदमी उसपर बैठकर लकडी के भालो से मछली मारते थे। यही भाले नाव की लग्गी का भी काम देते थे।

वह व्यापार या चीजो की अदला-बदली का ज्ञान नही रखते थे, न कृषि जानते थे और न पशुओ का पालन ही। उनके यहाँ न कोई सामन्त-राजा था, न कानून और न ही कोई नियमित सरकार। अगर बीमारी होती, तो थोडा-सा खून निकालकर चिकित्सा कर लेते थे। मुरदो को कभी-कभी वह गाड देते थे और कभी-कभी किसी पेड के कोटर मे रख देते थे। यदि जलाते, तो अवशेष को गाड देते, लेकिन खोपडी को या तो सस्मारक के तौर पर रख लिया जाता या पीछे से कही अलग गाड दिया जाता था। उनका विश्वास था कि मनुष्य मरने के बाद अपने पितरो के साथ एक आनन्दमय द्वीप मे रहता है। झगड़ा खडा होने पर उनके न्याय तरीका बड़ा विचित्र था, "दोनो पक्षवाले पास आकर आमने-सामने से छाती के ऊपर अपने दोनो हाथो को रखे अपने सिर को एक-दूसरे के चेहरे पर हिलाते बहुत क्रोधपूर्ण चीखने की आवाज तबतक करते रहते, जबतक कि उनमे से एक थक नहीं जाता या उसका क्रोध शान्त नही हो जाता था।" शायद सहस्राब्दियो के तजर्बे के बाद उन्हें युद्ध की जगह यह तरीका पसन्द आया। तस्मानीय जाति का अन्तिम पुरुष तृगनिनि सन् १८७७ ई० मे मरा, जिसके साथ पुरा-पाषाणयुग की इस प्राचीन जाति का खातमा हो गया।

२. भाषा[1]

प्राचीन मानव ने अपने पत्थर के हथियारो या हड्डियो के रूप मे जो अवशेष छोडे है, उनसे उनके इतिहास पर सबसे अधिक प्रकाश पडा है। पर, भाषा द्वारा मानव के प्रागैतिहासिक काल पर उससे भी अधिक प्रकाश पड़ा है, जितना कि शरीर के ढाँचे या हथियारो के अध्ययन से। शरीर के ढाँचे, मे भिन्न-भिन्न जातियो के सभी व्यक्तियो मे वह भिन्नता नही देखी जाती, जो कि भाषा के अध्ययन से स्पष्ट दिखाई पडती है। भाषा ने एक-दूसरे से बहुत दूर निवास करनेवाली जातियो के पुराने सम्बन्ध का पता दिया। अफ्रीका के पास के मदगास्कर द्वीप के निवासियो का सम्बन्ध मलय लोगो से है, इसका किसको पता लगता, यदि भाषा ने इसकी सूचना न दी होती। भारतीय आर्यों का, अँगरेजो, जर्मनो और रूसियो से वंश-सम्बन्ध है, इसका पता नही लग सकता था, यदि भाषा ने इसका सकेत न किया होता। लेकिन जिह्वा, तालु और ओठ के अतिरिक्त स्वरयन्त्र के काफी विकास होने पर ही मानव ठीक से वर्ण-उच्चारण कर सकता है। स्वरयन्त्र के विकास का पता मस्तिष्क के भीतर के उस क्षेत्र के विकास से लगता है, जहाँ से भाषण-यन्त्र पर नियन्त्रण होता है। निम्न-पुरा-पाषाणयुग के मानव—जावा पेंकिंग और हैडलवर्ग—के स्वरयन्त्र का विकास इतना नही हुआ था कि वह वर्णों का अच्छी तरह उच्चारण कर सकते। मुस्तेर-मानव इस विषय मे कुछ आगे बढा हुआ था, किन्तु वर्त्तमान भाषा-वशो मे से किसी का उसके साथ सम्बन्ध जोडना बहुत कठिन है। भाषा भावो के सकेत का साधन है। शब्द, स्पर्श और गति (अग-परिचालन) द्वारा प्राणी एक-दूसरे को अपने भावो से अवगत कराते हैं। कुत्ता अपने स्पर्श और भिन्न-भिन्न प्रकार की अग-गति से ही अपने भावो को नही व्यक्त करता, बल्कि उसके शब्दो मे भी दुख, रुवाँसे होने, प्रार्थना, आग्रह, खतरा या आक्रमण के भावो को प्रकट करनेवाले भिन्न-भिन्न स्वर होते हैं। तो भी, वनमानुष जैसे बहुत ही विकसित प्राणियो मे भी किसी प्रकार की भाषा का पता नही लगता। मनुष्य अन्य प्राणियो की तरह सकेत द्वारा भी अपने भावो को व्यक्त करता है और वचन द्वारा भी। यह कहना कठिन है कि इन दोनो मे पहले किसका विकास हुआ। आज भी एक-दूसरे की भाषा से अपरिचित व्यक्ति अथवा गूँगे-बहरे सकेत द्वारा अपने भावो को प्रकट करते हैं। भाषा के विकास के लिए स्वरयन्त्रो का अधिक विकसित होना आवश्यक है। लेकिन, स्वरयन्त्र के भी विकसित होने पर भाषा का विकास तबतक नही हो सकता या भाषा तबतक नही फूट निकल सकती, जबतक कि मस्तिष्क मे उसका नियन्त्रक यन्त्र भी विकसित न हो चुका होता। तोता-मैना इसके उदाहरण हैं। अपने स्वरयन्त्रो के विकास के कारण वे मनुष्य-जैसी भाषा बोल तो सकते हैं, किन्तु नियन्त्रक स्थान के अभाव के कारण केवल मनुष्य के स्वरो की नकल-भर है। धीरे-धीरे बोलता आदमी ० ०७ ($\frac{7}{100}$) सेकेण्ड मे एक स्वर बोल सकता है, जल्दी बोलने मे और भी कम समय लगता है। इतनी जल्दी और बारीकी से शब्द को निकालना मनुष्य के उपर्युक्त यन्त्र की करामात है।[2]

१. Gen. Anth , pp 135-40

२ Language its Nature, Development and Origin (O Jasperson, 1923)

भापा का लिपिवद्ध होना वहुत पीछे हुआ। मिस्र और असीरिया की भापाएँ आज से ४-५ हजार वर्ष पहले लिपिवद्ध हुई। मिस्र मे अक्षर-सकेत न होकर अर्थ-सकेत रहने के कारण उच्चारण का पता नही लग सकता। उच्चारण का पता तो आज की हमारी लिपिवद्ध भापाओ की पुस्तको द्वारा भी पूरा नही हो सकता। एक-एक स्वर के उच्चारण मे जहाँ व्यक्ति मे अन्तर देखा जाता है, वहाँ स्वरो के उतार-चढाव आदि के सम्वन्ध मे तो आज भी हमारी लिपियो मे कोई विशेप सकेत नही है। देश और काल मे दूरस्थ एक वश की भापाओ के तुलनात्मक अध्ययन से हमे उनका सम्वन्ध मालूम होता है, तथा यह भी कि उनमे कितना परिवर्त्तन हुआ है। भापाओ का इतिहास यह स्पष्ट वतलाता है कि उनका उच्चारण, अर्थ और व्याकरण-नियम सभी परिवर्त्तनशील हैं। सास्कृतिक स्तर में जव भारी परिवर्त्तन आता है, तव इस परिवर्त्तन की गति भी तीव्र हो जाती है। सास्कृतिक विकास जव एक तल पर रुक-सा जाता है, तव भापा मे परिवर्त्तन भी वहुत कम होता है। हिन्दी-यूरोपीय भापा-वश की स्लाव-जैसी भापाओ का सश्लिप्ट (सेन्थेटिक) रूप अवतक मौजूद रहना यही वतलाता है कि काफी समय तक वह उसी सास्कृतिक स्तर पर रह गई। हम जानते हैं कि स्लाव जातियो के पूर्वज (शक) वहुत पीछे तक घुमन्तू पशुपाल रहे और अपने दक्षिण के पडोसियो के लौह-युग मे चले जाने के वाद भी कुछ शताव्दियो तक पित्तल-युग मे ही रहे। भिन्न-भिन्न भापा वोलनेवाले लोगो के साथ घनिष्ठ सम्पर्क होने पर भी भाषा मे तेजी से परिवर्त्तन होता है। यह गलत धारणा है कि लिपिवद्ध भापा मे ही परिवर्त्तन की गति मन्द होती है। ग्रीनलैण्ड और मेकेंजी नदी के एस्किमो लोग अत्यन्त प्राचीन समय से एक दूसरे से अलग हो गये, किन्तु उनकी आजकल की वोलियो मे वहुत कम अन्तर पाया जाता है। अफ्रीका की वन्तू-वोलियाँ भी देश और काल के भारी अन्तर के वाद भी वहुत कम परिवर्त्तित हुई। यह भी इसी तत्त्व को वतलाती हैं कि सास्कृतिक विकास की गति मन्द होने पर भापा मे परिवर्त्तन की गति भी धीमी हो जाती है। दूसरी तरफ हम हिन्दी-यूरोपीय भापाओ को देखते हैं कि यूरोप से एसिया तक की उनकी भिन्न-भिन्न भापाओ और वोलियो मे कितनी तेजी के साथ परिवर्त्तन हुआ।

परिवर्त्तन मे स्वर सवसे आगे रहती हैं, लेकिन व्यजन भी कम परिवर्त्तित नही होते। भापा के यह वाहरी कलेवर ही तेजी से परिवर्त्तित नही होते, वल्कि उनके अर्थों मे भी भेद हो जाता है और कभी-कभी तो वह विलकुल उल्टा अर्थ देने लगते है। हिन्दी और वँगला मे उपन्यास से हम 'कथाग्रन्थ' का अर्थ लेते हैं, किन्तु दक्षिण भारत की वोलियो मे उसका अर्थ है 'भापण'।

जिस तरह यह कल्पना अवैज्ञानिक है कि एक ही जोडे से दुनिया की सभी मानव-जातियाँ पैदा हुईं, उसी तरह एक भापा से दुनिया की भापाओ का विकास मानना भी गलत है। यद्यपि आज चार पाँच भापा-वश ही पृथ्वी के अधिकाश देशों और लोगो में वोले जाते हैं यूरोप, अमेरिका और एसिया के भी वडे भाग मे हिन्दी-यूरोपीय भापा वश की वोलियाँ चलती हैं। तुर्की-चीनी तुर्किस्तान से तुर्की तक में वोली जाती है। चीनी भापा भी एसिया के वहुत वड़े भूखण्ड मे वोली जाती है। मलय-भापावश फिलिपाइन से

मदगास्कर तक फैला हुआ है। अफ्रिका के बहुत बडे भाग मे बन्तू-भाषावश का राज्य है। लेकिन, एक-एक भाषा का इतना विस्तार नव-पाषाणयुग ही नही, बल्कि और पीछे की घटना है। यूरोप के बहुत-से भागो तथा भूमध्यसागर के निकटवर्त्ती देशो मे बहुत पीछे तक अ-हिन्दी-यूरोपीय भाषाएँ बोली जाती थी। दक्षिण अफ्रिका मे बन्तू-भाषा का प्रचार हाल के समय मे हुआ है। तुर्की-भाषावश पाँचवी सदी ई० मे पश्चिमी मध्यएसिया मे जरा-जरा फैलने लगा और आधुनिक तुर्की, विशेषकर उसके यूरोपीय भाग मे तो, पन्द्रहवी सदी मे उसका प्रवेश हुआ। अरबी का मिस्र और मराको की भाषा होना पैगम्बर मुहम्मद (मृत्यु सन् ६२२ ई०) के बाद की बात है। अनुसन्धान से पता लगता है कि प्राचीन काल मे भाषाओ का बहुत अधिक विकेन्द्रीकरण था और आज से कही अधिक भाषाएँ उस समय बोली जाती थी। उनमे कुछ सदा के लिए लुप्त होकर किसी एक भाषा के अधिक फैलने मे सहायक हुई। सास्कृतिक इतिहास हमें बतलाता है कि उच्च सस्कृतियाँ अल्पविकसित सस्कृतियो को अपने जैसा बनाने मे सफल होती है। उच्च सस्कृति पर जल्दी पहुँचने के लिए अल्पविकसित लोगो को जो परिवर्त्तन करना पडता है, उसमे पराई भाषा का स्वीकार भी शामिल है। भाषा वस्तुत सास्कृतिक अवस्था के विकास का दर्पण है। सास्कृतिक विकास के साथ भाषा का विकास अनिवार्य है, और इसी परिवर्त्तन मे जातियो की तरह कितनी ही भाषाओ का नामशेष हो जाना भी आवश्यक है। भाषा-वश बतलाता है कि उसकी भाषाओ को बोलनेवाले खास मानव-वश रहे होगे, अर्थात् एक मानव-वश की एक भाषा रही होगी, किन्तु भाषा रक्त के सम्बन्ध को सर्वदा निश्चित नही बतलाती। कितनी ही जातियाँ अपनी भाषा छोड दूसरी भाषा स्वीकार कर लेती हैं। अमेरिका के निग्रो अपनी भाषा भूल गये हैं, और वे अब अँगरेजी बोलते हैं। पूर्वी जर्मनी के अधिकाश निवासी स्लाव-जाति के है, लेकिन अब वे जर्मन-भाषा बोलते हैं।

§२. मध्य-पाषाणयुग (१२००० वर्ष पूर्व)

पहले युगो की अपेक्षा इस युग के मानव के अवशेष पश्चिमी मध्यएसिया मे बहुत जगहो पर मिले हैं। निम्न सिरदरिया मे, तुर्किस्तान शहर मे इसका पता लगा है। कराताउ और म्यूकम (जंबुलिजिला), बेतपक् दला (अल्माअता) भी मध्य-पाषाणयुग के अवशेषो के लिए मशहूर हैं। अरालसमुद्र के पास भी इस युग के मानव के अवशेष पाये गये हैं। किजिलकुम और काराकुम की विशाल मरुभूमियाँ आज सोवियत पुरातत्त्ववेत्ताओ की आखेट-भूमि बन गई हैं। कोई आश्चर्य नही, यदि वहाँ ऐसे मध्य-पाषाणयुगीन मानव के अवशेष और भी मिल जायँ, जिनसे उस युग के इतिहास पर काफी प्रकाश पडे। यह तो हमे मालूम है कि आज से १०-१२ हजार वर्ष पहले से ही, जिस समय मध्य-पाषाणयुग का मानव मध्यएसिया मे रहता था, उस समय की जलवायु वहाँ के मानव के लिए अत्यन्त प्रतिकूल सिद्ध हो रही थी। हिमयुग के पश्चात् समुद्र और नदियो के सूखते जाने से यहाँ की भूमि अत्यन्त सूखी होती। जगलो और घास के मैदानो को विकराल रेगिस्तान अपने पेट मे हजम करते गये। मध्यएसिया के मानवो के लिए यह सत्यानाश की घडी थी। उनके लिए दो

भाषा का लिपिवद्ध होना बहुत पीछे हुआ। मिस्र और असीरिया की भाषाएँ आज से ४-५ हजार वर्ष पहले लिपिवद्ध हुई। मिस्र मे अक्षर-सकेत न होकर अर्थ-सकेत रहने के कारण उच्चारण का पता नही लग सकता। उच्चारण का पता तो आज की हमारी लिपिवद्ध भाषाओ की पुस्तको द्वारा भी पूरा नही हो सकता। एक-एक स्वर के उच्चारण मे जहाँ व्यक्ति मे अन्तर देखा जाता है, वहाँ स्वरो के उतार-चढाव आदि के सम्बन्ध मे तो आज भी हमारी लिपियो मे कोई विशेष सकेत नहीं है। देश और काल मे दूरस्थ एक वश की भाषाओ के तुलनात्मक अध्ययन से हमे उनका सम्बन्ध मालूम होता है, तथा यह भी कि उनमे कितना परिवर्त्तन हुआ है। भाषाओ का इतिहास यह स्पष्ट वतलाता है कि उनका उच्चारण, अर्थ और व्याकरण-नियम सभी परिवर्त्तनशील हैं। सास्कृतिक स्तर मे जव भारी परिवर्त्तन आता है, तव इस परिवर्त्तन की गति भी तीव्र हो जाती है। सास्कृतिक विकास जव एक तल पर रुक-सा जाता है, तव भाषा मे परिवर्त्तन भी वहुत कम होता है। हिन्दी-यूरोपीय भाषा-वश की स्लाव-जैसी भाषाओ का सश्लिष्ट (सिन्थेटिक) रूप अवतक मौजूद रहना यही वतलाता है कि काफी समय तक वह उसी सास्कृतिक स्तर पर रह गई। हम जानते हैं कि स्लाव जातियो के पूर्वज (शक) वहुत पीछे तक घुमन्तू पशुपाल रहे और अपने दक्षिण के पडोसियो के लौह-युग मे चले जाने के वाद भी कुछ शताव्दियो तक पित्तल-युग मे ही रहे। भिन्न-भिन्न भाषा वोलनेवाले लोगो के साथ घनिष्ठ सम्पर्क होने पर भी भाषा में तेजी से परिवर्त्तन होता है। यह गलत धारणा है कि लिपिवद्ध भाषा मे ही परिवर्त्तन की गति मन्द होती है। ग्रीनलैण्ड और मेकेंजी नदी के एस्किमो लोग अत्यन्त प्राचीन समय से एक दूसरे से अलग हो गये, किन्तु उनकी आजकल की वोलियो मे वहुत कम अन्तर पाया जाता है। अफ्रीका की वन्तू-वोलियाँ भी देश और काल के भारी अन्तर के वाद भी वहुत कम परिवर्त्तित हुई। यह भी इसी तत्त्व को वतलाती हैं कि सास्कृतिक विकास की गति मन्द होने पर भाषा मे परिवर्त्तन की गति भी धीमी हो जाती है। दूसरी तरफ हम हिन्दी-यूरोपीय भाषाओ को देखते हैं कि यूरोप से एसिया तक की उनकी भिन्न-भिन्न भाषाओ और वोलियो मे कितनी तेजी के साथ परिवर्त्तन हुआ।

परिवर्त्तन मे स्वर सवसे आगे रहती है, लेकिन व्यजन भी कम परिवर्त्तित नहीं होते। भाषा के यह वाहरी कलेवर ही तेजी से परिवर्त्तित नही होते, वल्कि उनके अर्थो मे भी भेद हो जाता है और कभी-कभी तो वह विलकुल उल्टा अर्थ देने लगते हैं। हिन्दी और वँगला मे उपन्यास से हम 'कथाग्रन्थ' का अर्थ लेते हैं, किन्तु दक्षिण भारत की वोलियो मे उसका अर्थ है 'भाषण'।

जिस तरह यह कल्पना अवैज्ञानिक है कि एक ही जोडे से दुनिया की सभी मानव-जातियाँ पैदा हुईं, उसी तरह एक भाषा से दुनिया की भाषाओ का विकास मानना भी गलत है। यद्यपि आज चार पाँच भाषा-वश ही पृथ्वी के अधिकाश देशो और लोगो मे वोले जाते हैं यूरोप, अमेरिका और एसिया के भी वडे भाग मे हिन्दी-यूरोपीय भाषा वश की वोलियाँ चलती हैं। तुर्की-चीनी तुर्किस्तान से तुर्की तक मे वोली जाती है। चीनी भाषा भी एसिया के वहुत वडे भूखण्ड मे वोली जाती है। मलय-भाषावश फिलिपाइन से

मदगास्कर तक फैला हुआ है। अफ्रिका के बहुत बडे भाग मे वन्तू-भाषावश का राज्य है। लेकिन, एक-एक भाषा का इतना विस्तार नव-पाषाणयुग ही नही, बल्कि और पीछे की घटना है। यूरोप के बहुत-से भागो तथा भूमध्यसागर के निकटवर्त्ती देशो मे वहुत पीछे तक अ-हिन्दी-यूरोपीय भाषाएँ बोली जाती थी। दक्षिण अफ्रिका मे वन्तू-भाषा का प्रचार हाल के समय मे हुआ है। तुर्की-भाषावश पाँचवी सदी ई० मे पश्चिमी मध्यएसिया मे जरा-जरा फैलने लगा और आधुनिक तुर्की, विशेषकर उसके यूरोपीय भाग मे तो, पन्द्रहवी सदी मे उसका प्रवेश हुआ। अरबी का मिस्र और मराको की भाषा होना पैगम्बर मुहम्मद (मृत्यु सन् ६२२ ई०) के बाद की बात है। अनुसन्धान से पता लगता है कि प्राचीन काल मे भाषाओ का बहुत अधिक विकेन्द्रीकरण था और आज से कही अधिक भाषाएँ उस समय बोली जाती थी। उनमे कुछ सदा के लिए लुप्त होकर किसी एक भाषा के अधिक फैलने मे सहायक हुई। सास्कृतिक इतिहास हमें बतलाता है कि उच्च सस्कृतियाँ अल्पविकसित सस्कृतियो को अपने जैसा बनाने मे सफल होती हैं। उच्च सस्कृति पर जल्दी पहुँचने के लिए अल्पविकसित लोगो को जो परिवर्त्तन करना पडता है, उसमे पराई भाषा का स्वीकार भी शामिल है। भाषा वस्तुत सास्कृतिक अवस्था के विकास का दर्पण है। सास्कृतिक विकास के साथ भाषा का विकास अनिवार्य है, और इसी परिवर्त्तन मे जातियो की तरह कितनी ही भाषाओ का नामशेष हो जाना भी आवश्यक है। भाषा-वश बतलाता है कि उसकी भाषाओ को बोलनेवाले खास मानव-वंश रहे होगे, अर्थात् एक मानव-वश की एक भाषा रही होगी; किन्तु भाषा रक्त के सम्बन्ध को सर्वदा निश्चित नही बतलाती। कितनी ही जातियाँ अपनी भाषा छोड दूसरी भाषा स्वीकार कर लेती हैं। अमेरिका के निग्रो अपनी भाषा भूल गये हैं, और वे अब अँगरेजी बोलते हैं। पूर्वी जर्मनी के अधिकाश निवासी स्लाव-जाति के हैं, लेकिन अब वे जर्मन-भाषा बोलते हैं।

§२. मध्य-पाषाणयुग (१२००० वर्ष पूर्व)

पहले युगो की अपेक्षा इस युग के मानव के अवशेष पश्चिमी मध्यएसिया मे बहुत जगहो पर मिले हैं। निम्न सिरदरिया मे, तुर्किस्तान शहर मे इसका पता लगा है। कराताउ और म्यूकम (जंबुलिजिला), बेत्पक् दला (अल्माअता) भी मध्य-पाषाणयुग के अवशेषो के लिए मशहूर हैं। अरालसमुद्र के पास भी इस युग के मानव के अवशेष पाये गये हैं। किजिलकुम और काराकुम की विशाल मरुभूमियाँ आज सोवियत पुरातत्त्वेत्ताओ की आखेट-भूमि बन गई हैं। कोई आश्चर्य नही, यदि वहाँ ऐसे मध्य-पाषाणयुगीन मानव के अवशेष और भी मिल जायें, जिनसे उस युग के इतिहास पर काफी प्रकाश पडे। यह तो हमे मालूम है कि आज से १०-१२ हजार वर्ष पहले से ही, जिस समय मध्य-पाषाणयुग का मानव मध्यएसिया मे रहता था, उस समय की जलवायु वहाँ के मानव के लिए अत्यन्त प्रतिकूल सिद्ध हो रही थी। हिमयुग के पश्चात् समुद्र और नदियो के सूखते जाने से यहाँ की भूमि अत्यन्त सूखी होती। जगलो और घास के मैदानो को विकराल रेगिस्तान अपने पेट मे हजम करते गये। मध्यएसिया के मानवो के लिए यह सत्यानाश की घडी थी। उसके लिए दो

ही रास्ते थे, या तो वहाँ रहकर लुप्त हो जायँ अथवा अन्यत्र चले जायँ। यूरोप की अवस्था इस वक्त बडी अनुकूल थी, इसलिए उनका उधर जाना स्वाभाविक था। भारत मे इस युग के अवशेष ऊपरी गगा के कच्छ तक मिले हैं।[१]

जैसा कि नाम से ही पता लगता है, मध्य-पाषाणयुग पुरा-पाषाण और नव-पाषाण के बीच का समय है। यह मानव-प्रगति मे बहुत शिथिल-सा समय था। इस समय प्रवाह रुक-सा गया था, उसका खुलना नव-पाषाणयुग ही मे देखा जाता है (यह वही समय था, जबकि यूरोप मे अजिल-मानव रहता था) मध्य-पाषाणयुगीन मानव की जीविका का साधन फलसचय तथा पशु और मछली का शिकार था। अभी केवल कुत्ता मनुष्य का पालतू साथी बन सका था। ग्राम्य पशुओ मे यही वह जानवर था, जो मनुष्य के घनिष्ठ सम्पर्क मे सबसे पहले आया और आज भी उसकी स्वामिभक्ति वैसी ही देखी जाती है।

मध्य-पाषाणयुगीन मानव उस समय के प्रतिकूल वातावरण मे बेत्पकदला (अल्माअता) से अराल और कॉस्पियन तट तक किसी तरह अपना जीवन व्यतीत करता रहा। प्रकृति की निष्ठुरता के कारण उसके लिए जीवन-सघर्ष बहुत कठिन था, जिसके कारण वह यूरोप की अनुकूल भूमि की ओर गया। हिमयुग के अवसान हुए देर होने के कारण बहुत-से पहाड हिममुक्त हो गये थे, जिसके कारण यातायात का बहुत सुभीता था। मध्य-पाषाणयुग के बाद मध्यएसिया के अनौ जैसे कितने भागो मे, हम जिस मानव को पाते हैं, उसका सम्बन्ध यदि खोपड़ी मे अल्पाइन जाति से मिलता है, तो सस्कृति मे उसकी मसोपोतामिया और सिन्धु-उपत्यका से अधिक घनिष्ठता दिखाई पडती है। ऐसी अवस्था मे यह कहना कठिन है कि यहाँ रहनेवाली जाति मध्य-पाषाणयुगीन मानवो की सन्तान थी, अथवा पश्चिमी मध्य-एसिया के दक्षिणी भाग को अधिक अनुकूल पाकर भूमध्य-जातीय मेसोपोतामिया और सिन्धु उपत्यका के लोगो का यह स्थायी प्रवेश हो गया। सिन्धु-उपत्यका या मसोपोतामिया से अनौ या अरालतट तक भूमध्यजातीय लोगो और उनकी संस्कृति के अवशेष मिलते हैं। हो सकता है, मध्य-पाषाणयुग मे पश्चिमी मध्यएसिया के पुराने निवासी यूरोप की ओर प्रवास कर गये हो और पीछे उनकी जगह भूमध्यीय लोग अपनी नवीन संस्कृति के साथ आ गये हो। यदि पहले के निवासियो मे कुछ रह गये हो, तो वह भी धीरे-धीरे भूमध्यीय जाति के भीतर मिल गये।

●

१ Gen Anth. p 252 Le' Humenite Prehistorique, p 594, Our Early Ancestors, pp 10, 75, Prehistroic India (S Paggot), p 36

स्रोतग्रन्थ .

१ तुदी उजबेकिस्तान्स्कओ अकदमी नाउक (ताशकन्द, सन् १९४० ई०)
२. Everyday Life in the Old Stone Age (Quinnell)
३. General Anthropology (Boas)
४. Language its Nature, Development and Origin (O. Jasperson, 1923)
५. Le' Humenite Prehistorique (J. De Morgan)
६. Prehistoric India (S. Paggot)
७ Prehistoric India (P Mitra)
८ Language (L. Bloomfield, 1933)
९. Les Langues du Monde (A Meillet and M Cohen, Paris, 1924)
१० Researches to the Early History of Mankind (E. B Taylor, London, 1878)

अध्याय ५

नव-पाषाणयुग, अ-नव-पाषाणयुग

मध्यएसिया मे मानव पाषाण-युग से नव-पाषाणयुग मे ईसा-पूर्व ५०००, अर्थात् आज से ७००० वर्ष पूर्व आया। सिरदरिया की उपत्यका, सोग्द (जरफशाँ-उपत्यका), तुषार (मध्यवक्षु-उपत्यका), ख्वारेज्म (निम्न वक्षु-उपत्यका) और अराल, मेर्व (मुर्गाव-उपत्यका) आदि बहुत-से स्थानो मे नव-पाषाणयुग के अवशेष मिले हैं।

§१. नव-पाषाणयुग (५००० ई० पू०)

मध्य-पाषाणयुग मे जलवायु के अत्यन्त सूखे होने के कारण यहाँ के मानव को बहुत कष्ट हुआ। नव-पाषाणयुग मे उसमे थोड़ा परिवर्त्तन अवश्य हुआ था, जिसके कारण प्रगति का अवरुद्ध मार्ग फिर से खुला। नव-पाषाणयुग की विशेषता है १. कृषि, २. पशुपालन, ३ मृत्पात्र-निर्माण और ४. पीस-घिसकर बने पाषाणास्त्र। कृषि और पशुरक्षा के कारण अब मानव निरा घुमन्तू नहीं रह सकता था। उसे अब एक जगह बसने की आवश्यकता हुई—इसी समय पहले-पहल ग्राम आबाद हुए। मनुष्य सामाजिक जीवन की उस अवस्था मे पहुँचा, जबकि वह एक जगह रहते हुए सामूहिक काम कर सकता था और सामूहिक तौर से अपने शत्रुओ से रक्षा भी कर सकता था। अब शिकार और फल-संचय ही जीविका के साधन नहीं रह गये थे। कृषि और पशुपालन मे स्त्री का अब प्रधान भाग नही रह गया था, इसलिए सारे पुरा-पाषाणयुग मे चली आई मातृसत्ता का लोप हुआ और उसकी जगह पुरुष-प्रधानता या पितृसत्ता की स्थापना हुई। शिकार (चाहे मछली का हो या प्राणियो का) ही मध्यएसिया के मानव की पिछले युग मे प्रधान जीविका थी। पहाड़ो में जंगल था और वहाँ आज जैसे तब भी जगली सेव, नासपाती, अगूर आदि फल होते थे। मानव को फल-सचय का भी अधिक सुभीता था, किन्तु जिन जगहो पर नव-पाषाणयुग के मानव के अवशेष मिले हैं, वहाँ फल-सचय का सुभीता कम ही रहा।

१. कृषि[1]

गेहूँ और जौ मध्यएसिया के पहाड़ो मे जगली अवस्था मे मौजूद थे। आज भी लाहुल की सीमा के पार लद्दाख के रास्ते मे नदी के कछारो के पास जगली गेहूँ और चने मिलते हैं और लद्दाख जानेवाले अपने घोड़े-खच्चरो को वहाँ दो-चार दिन ठहरकर चराना आवश्यक समझते हैं। गद्दी लोग तो हर साल वहाँ अपनी भेड़ो को मोटी करने के लिए ले जाते हैं। कोई आश्चर्य नहीं, यदि कृषि के लिए नव-पाषाणयुग के मानव ने गेहूँ और जौ को स्वीकार किया। आरम्भिक गेहूँ-जौ जगली गेहूँ-जौ की तरह ही पतले होते रहे होंगे।

१. Gen Anth, pp 90-99

जंगली अवस्था मे पशु, जलवायु अनुकूल होने पर अधिक मोटे होते है, किन्तु पालतू वनने के बाद उनकी हड्डियाँ पतली तथा उनके कण सूक्ष्म हो गये। पर, अनाज और फल मनुष्य के हाथो मे पडकर अधिक बडे और स्वादु वने।

कृषि का आविष्कार कैसे हुआ, इसके बारे मे विद्वान् कहते है शिकारी आदमी ने घास के अभाव मे शिकार के पशुओ को दूसरी जगह जाने से रोकने के लिए पहले घास के तौर पर अनाज वोना शुरू किया, जिसके खाद्य होने का परिचय उसे पीछे मिला। सूखे फल यद्यपि देर तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं, तथापि जैसा कि पहले वताया, मध्यएसिया मे उसकी सुलभता बहुत कम जगहो पर थी। शिकार के मास को जाडो मे भले ही कुछ महीनो तक रखा जा सके, नही तो जल्दी न खतम करने पर उसके सडकर खराव हो जाने का डर रहता है। उस समय के मानव को मास की दुर्गन्ध आज की जितनी नापसन्द नही थी, तो भी मास सडाकर खाना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है, इसका पता तो उसको था ही। अनाज ऐसी चीज थी, जिसको वहुत समय तक रखा जा सकता था। करतल-भिक्षा तरुतल-वास बिलकुल अनिश्चिन्तता का जीवन है। कृषि ने मानव को इसके वारे मे वहुत कुछ निश्चिन्त कर दिया। चाहे मास के बरावर स्वाद और शक्ति अनाज मे भी हो, किन्तु उसके द्वारा महीनो के लिए आहार की चिन्ता का दूर हो जाना मानव-प्रगति के लिए वहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। शिकारी मानव को प्राय रोज शिकार की चिन्ता मे दौडते रहना पडता था। अपने पत्थर के हथियारो द्वारा शिकार करने मे सफल होना रोज-रोज नही हो सकता था। कितनी ही वार उसे सपरिवार भूखे रहना पडता था।

खेती करने के लिए अव उसे विशेष हथियारो की आवश्यकता हुई, जो सभी हथियार पत्थर के होते थे। पुरा-पाषाणयुग के मानव अपने पत्थर के हथियारो से पेडो को काट लेते थे, डालियो को काट-छीलकर लकडी के भाले या डण्डे वना लेते थे। मई, १९५१ ई० मे (परमाणु-युग के भीतर) मुझे निम्न-पुरा-पाषाणयुग के शिल्प का परिचय मिला। केदार-नाथ चार मील के करीव रह गया था। मेरे भारवाहक तरुण नेपाली वलवहादुर ने पहिले डण्डा रखने की आवश्यकता नही समझी थी, लेकिन जव ९००० फुट से ऊपर की चढाई मे साँस फूलने लगी, तव उसे डण्डे की आवश्यकता मालूम हुई। वृक्षो के क्षेत्र मे हमलोग ऊपर थे, किन्तु झाडियाँ अभी खतम नही हुई थी। झाडियो मे डेढ-दो इच मोटे डण्डे का मिलना आसान था, किन्तु हमारे पास फल खाने के छोटे-से चाकू के अतिरिक्त यदि कोई दूसरा हथियार था, तो रिवाल्वर, जिससे डण्डा नही काटा जा सकता था। वलवहादुर अपने पूर्वजो की तरह चौवीस घण्टे खुकुरी वाँधना धर्म नही समझता था। लेकिन, डण्डे की भारी आवश्यकता थी। पुरा-पाषाण-मानव का चकमक का पाम मे किसी तरह का छिना हथियार भी नही था। उसने नाले मे पडे वहुत-से पाषाण-खण्डो मे से एक धारदार पत्थर उठा लिया, और कुछ ही मिनटो मे झाडी मे से एक अच्छा लामा मोटा डण्डा काट लाया। उसी पाषाणास्त्र से उसने डण्डे की कमचियाँ काटकर गाँठो को भी चिकना कर दिया, फिर छाल को छीलने लगा। मुझे डर लगा, कही वह उसमे अपनी कला न दिखाने लगे। मैं केदारनाथ जल्दी पहुँचना चाहता था। आकाश का कोई ठिकाना नही था, न जाने कव धूप छिप जाय

और मैं फोटो लेने से वञ्चित हो जाऊँ। उसने ऊपर के थोडे-से भाग को छीलकर अपना काम खत्म कर दिया और हम वहाँ से चल पडे। मैं अपने पूर्वजो के इस युग से परिचित था, किन्तु वलवहादुर को इतिहास से क्या काम था, उसे तो काला अक्षर भैंस बराबर था। आवश्यकता आविष्कार की माँ होती है, इसका ही यहाँ पता नही लगा, वल्कि यह भी मालूम हुआ कि पापाण-युग के सिद्धहस्त मानव ने और भी अच्छी तरह से काटने, फाडने, छीलने आदि कामो को अपने पत्थर के हथियारो से किया होगा। कृपि-युग के लिए आवश्यक हल को उसने पहले ही बना लिया होगा, इससे सन्देह है, किन्तु वर्षा से भीगी धरती को पत्थर की कुदाल से वह खोद सकता था। आगे चलकर उसने लकडी के किसी तरह के हल में चकमक पत्थर का फाल लगाया होगा। फसल काटने के लिए उसका पत्थर का हँसिया मध्य-एसिया और दूसरी जगहो मे बहुत मिला है। टेढी लकडी मे दाँत की तरह तेज धारवाले छोटे-छोटे पत्थरो को जड दिया जाता था, यही उस समय का हँसिया था। डण्ठल काटने के कारण पत्थर के दाँत धीरे-धीरे अधिक चिकने हो जाते हैं, ऐसे दाँत बहुत-से मिले हैं। कृपि के साथ तीसरा आवश्यक हथियार था, आटा पीसने का ओखल-मूसल। आजकल ओखल-मूसल अधिकतर चावल कूटने या अनाज के छिलके को छुडाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। मैदान मे लकडी और पत्थर दोनो के ओखल होते हैं, किन्तु मूसल लकडी का ही होता है। पहाड मे पत्थर का ही ओखल होता है, जो प्राय किसी चट्टान मे गढा खोदकर बनाया जाता है। आटा पीसने का साधन उस समय ओखल-मूसल नही, वल्कि खरल से अधिक समानता रखता था। ११वी शताब्दी मे भी तिब्बत के घुमन्तू लोग किसानो से बदल के लाये अपने अनाज को पत्थर की बडी कुण्डी मे मोटे लोढे से पीसा करते थे। भारतीय विद्वान् स्मृतिज्ञानकीर्ति (सन् १०४० ई०) भेस बदलकर किसी पशुपाल के यहाँ चाकरी करते थे। एक दिन बडी रात तक मालकिन के हुक्म से आटा पीसते हुए उनको झपकी लग गई, और शिर लोढे से जाकर टकरा गया। सत्तू के लिए भूना जौ कुछ बिखर गया, जिसके लिए मालकिन ने गालियाँ देना जितना आवश्यक समझा, उतना बेचारे स्मृति के शिर मे लगी चोट के लिए सान्त्वना देना जरूरी नही समझा। नव-पापाणयुग मे अभी न हाथ की चक्की का पता था, न पनचक्की का। उस समय यही पत्थर का कुण्डी-लोढा या ओखल-मूसल का काम देता था। आज भी तिब्बत आदि देशो मे सत्तू खाने का रिवाज है। इससे आदमी रोटी बनाने के झझट से ही नहीं बच जाता, वल्कि जहाँ रोटी बनाने के लिए रोज-रोज लकडी जमा करने और चूल्हा फूँकने की तरद्दुत है, वहाँ एक दिन भूनकर सत्तू पीस लेने पर महीनो के लिए छुट्टी हो जाती है। भारतीय आर्य ईसा से डेढ हजार वर्ष पहले भारत पहुँचे। उनके प्राचीनतम ग्रन्थ 'ऋग्वेद' मे ही नहीं, वल्कि पीछे के भी पुराने सस्कृत-ग्रन्थो मे रोटी का पता बहुत कम लगता है। सत्तू (सक्तु) और छलनी तो वैदिक काल मे दृष्टान्त-रूप मे मशहूर हो गये थे। अनौ की खुदाई मे[१] तन्दूर का भी पता लगा है, जिससे मालूम होता है कि मध्यएसिया के नव-पापाणयुगीन मानव तन्दूरी रोटी से अपरिचित नही थे। शायद मिट्टी या पत्थर के तवो पर भी वे रोटी बना लेते थे।

---

१ Exploration in Turkistan, pp 16–27

२. पशुपालन

तिब्बत के ऊँचे पथारो मे गदहे की जाति का एक जानवर (क्याङ) पाया जाता है, जो खच्चर के जितना बडा होता है। तिब्बती लोगो ने क्याङ को पालतू बनाने की बहुत कोशिश की, किन्तु वह उसमे सफल नही हुए। पालतू बनाने का मतलब केवल साथ रहना ही नही, बल्कि जानवर से काम लेना भी है। साक्या के लामा के खच्चरो के साथ मैंने एक क्याङ को देखा था। क्याङ का छोटा बच्चा कही से मिल गया था, जिसे अपने खच्चरो के साथ लामा ने पाल लिया और अब वह बडा होने पर भी खच्चरो के साथ रहता था। लेकिन, उसपर भला कौन बोझ लाद सकता था? वह प्राण देने के लिए तैयार हो जाता, यदि कोई पीठ पर कुछ बाँधने की कोशिश करता। नव-पाषाणयुग मे ही नही, बल्कि उससे पहले भी मनुष्य के पास किसी जगली जानवरो के बच्चे का पल जाना मुश्किल नही था, और ऐसे हिरन, कुत्ते, भेड या दूसरी जाति के छोटे बच्चे को कभी किसी ने पाल लिया हो, तो कोई आश्चर्य नही। लेकिन, असली पशुपालन तब कहते हैं, जबकि मनुष्य अपने घर मे नर-मादा पशुओ को रखकर उनकी सन्तान बढाता है। मध्य-पाषाणयुग मे कुत्ता पालतू हो गया था, यह हम बता आये हैं। विस्तार के साथ पशुपालन का व्यवस्थित प्रबन्ध नव-पाषाणयुग मे ही हुआ। यह बतला चुके हैं कि पालतू जानवरो की हड्डियाँ पतली और सूक्ष्म होती हैं, जब कि हम उसी जाति के जगली प्राणियो मे उससे उल्टा पाते हैं। यदि भूमि अत्यन्त हरी-भरी हो, तो जगली जानवर बडे कद्दावर होते हैं। बारहसिंगे तो वनस्पति की कमी के कारण जहाँ शरीर मे छोटे होते जाते हैं, वहाँ उनके सीग छोटे तथा शाखाएँ कम होती जाती हैं, तो भी उनकी हड्डियो की बनावट पालतू जानवरो-जैसी नही होती। भेड, गाय और सूअर मध्यएसिया मे इस समय पालतू बनाये गये। घोडे के पालतू बनने मे कुछ सन्देह है। मध्यएसिया मे ही पालतू बनाई गई भेडें, यहाँ से गये लोगो के साथ यूरोप गई। यद्यपि जगली गदहा मध्यएसिया मे भी रहा होगा, तथापि गदहे और बिल्ली को सबसे पहले पालतू बनाया मिस्रियो ने। मध्यएसिया का ऊँट दो कोहानो का होता है, जब कि अरब और दूसरी जगह के ऊँटो के पीठ पर एक ही कोहान होता है। ऊँट नव-पाषाणयुग के पीछे मध्यएसिया मे पालतू बनाया गया।

३. मृत्पात्र

मिट्टी के बरतन बनाना भी नव-पाषाणयुग की एक विशेषता है। आग का पता निम्न-पुरा-पाषाणयुग मे ही लग गया था। उसी समय (युग के पिछले भाग मे) लकडी या पत्थर से घिसकर आग पैदा करना भी आदमी को मालूम हो गया था। वह मास को आग पर भूनकर खाना जानता था। अनाज की उत्पत्ति से उसे मिट्टी के बरतनो की अधिक आवश्यकता मालूम हुई, इसीलिए उस समय मृत्पात्रो के बनने और उनके उपयोग का विशेष प्रचार हुआ। कई-कई प्रकार और रग के मिट्टी के बरतन बनने लगे—पानी रखने के बरतन, पानी पीने के बरतन, पकाने के बरतन आदि नाना प्रकार के भेद उसी समय प्रकट हुए। अभी कुम्हार का चक्का नही बन पाया था। श्रम का विभाजन भी उतना नहीं हुआ था

और एक ही आदमी या परिवार पीर-ववरची-भिश्ती-खर सवका काम देता था। तिब्वत मे आज भी कुम्हार की अलग जाति या पेशा नही है, लोग स्वय मिट्टी के वरतन वना लेते हैं। कितने ही वरतन वहाँ आज भी कुम्हार के चक्के की सहायता से नहीं वनते। चाय रखने की खोटी (टोंटीवाली हैण्डलदार सैंकी) तो वहुधा हाथ से वनाई जाती, और कितने ही हाथ उसमे अद्भुत कला का चमत्कार दिखलाते। नव-पापाणयुग के मानव भी अपने हाथो से ही मिट्टी के वरतन वनाया करते थे। गोलाई लाने के लिए वह मिट्टी की गोल-गोल मेखलाएँ वनाकर एक के ऊपर एक रख देते और फिर गीले हाथो से भीतर-वाहर उन्हें चिकना कर देते। यदि मिट्टी के वरतनो को खुले आँवे मे पकाया जाय, तो हवा का प्रवेश निर्वाध हो जाता है। मिट्टी मे लौहकण मौजूद रहते हैं, पकते वक्त हवा के साथ उनके सीधे सम्वन्ध से वरतन लाल हो जाते हैं। यदि वन्द हवा के साथ भट्ठी के भीतर वरतन को पकाया जाय, तो हवा के सम्पर्क से वहुत-कुछ वचित रहने के कारण वरतन लाल न हो, भूरा या राख के रंग का हो जाता है। यदि मिट्टी मे कुछ कोयला पीसकर मिला दिया जाय, तो वरतन का रंग काला हो जाता है। ये वातें नव-पापाणयुग के मानव को मालूम थीं ?

४. पाषाणास्त्र[१]

पुरा-पापाणयुग के मानव के हथियार वहुत कुछ फिलण्ट (चकमक) पत्थर के होते थे, जो मामूली पत्थर से ज्यादा कडा होता है, इसीलिए उसकी माँग वहुत अधिक थी और वह हर जगह सुलभ नही था। खडिया की खानो मे, खडिया के स्तर मे ईंट्टी की तरह ये मिला करते हैं। नव-पापाणयुग का मानव अपने पत्थर के हथियार से खोदकर कुआँ-सा बनाते हुए चकमक के स्तर पर पहुँचता था। कभी-कभी इसके लिए उसे वीस-वीस फुट गहरी खुदाई करनी पडती थी। चकमक को निकाल लेने के वाद कुएँ फिर उसी गड्ढे मे कभी-कभी ढह जाते थे। वेल्जियम मे स्पीनेस की चकमक खान मे पुरा-पापाणयुग के दो पिता-पुत्र खनक खान के नीचे उतरकर अपना काम कर रहे थे, उसी समय उनपर छत गिर गई और दोनो दवकर मर गये। आज भी उनका शरीर ब्रूसेल्स के राष्ट्रीय म्यूजियम मे रखा हुआ है। चकमक पत्थर की दुर्लभता ही कारण थी, जिसने कि नई तरह के हथियारो के वनाने का दिशा-निर्देश किया। खतरा शायद कभी-ही-कभी होता था। खडिया की खानो मे चकमक की रीढ ढूँढना और निकालना इतना समय और श्रमसाध्य था कि आदमी ने उसकी जगह साधारण पत्थरो का भी इस्तेमाल किया। उसने देखा कि रगडकर पॉलिश करने से दूसरे पत्थरो मे भी धार आ जाती है। रगडकर पॉलिश करके पत्थर के हथियार वनाना नव-पापाणयुग के मानव के हथियार की सवसे वडी विशेपता थी। सन् १८६९ ई० मे डेनमार्क के कुछ प्रागैतिहासिकों ने नव-पापाणयुग की कुल्हाडी की परीक्षा ली। उन्हें मालूम हुआ कि केवल इन्ही हथियारों से जगल के कैल और दयार जैसे दरख्तो को काटा जा सकता है और इनके सहारे पेड के तने को खोदकर नाव वनाई जा सकती है। नव-पापाणयुग के मानव ने घिसे, पॉलिश किये हथियारो के वनाने के साथ-साथ पुराने ढग के चकमकवाले पापाणास्त्रो

१. Gen Anth, pp 152-62

को, जो कि छांट और चैली निकालकर वनाये जाते थे, छोडा नही। पापाणास्त्रो के अतिरिक्त, उस समय लकड़ी और सीग के हथियार भी इस्तेमाल किये जाते थे।

५. जलवायु

पुरा-पाषाणयुग के मानव के लिए तापमान की अनुकूलता-प्रतिकूलता सवसे अधिक ध्यान देने की वात थी। तापमान गिरने से सरदी बढती, जिसके कारण शिकार के जानवर दक्षिण की ओर अधिक गरम जगहो मे चले जाते। इसलिए, शिकारी को भी दक्षिणाभिमुख यात्रा करनी पड़ती। इसके अतिरिक्त, अपने शरीर के लिए भी उसे अधिक चमडा पहनने की अवश्यकता होती। नव-पाषाणयुग का मानव अव कृषिजीवी भी था। कृषि के तापमान से भी अधिक नमी अथवा वर्षा के न्यूनाधिक होने पर ध्यान देना पड़ता। मध्यएसिया मे जहाँ मध्य-पाषाणयुग वर्षा और जल के अभाव का समय था, वहाँ नव-पाषाणयुग अपेक्षाकृत अधिक आर्द्र था। इसके कारण मानव वहाँ वर्षा के भरोसे खेती कर सकता था। अभी नहरों द्वारा सिंचाई करने का समय नही आया था। इस नमी के कारण मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा असर पडता था। जहाँ यह वनस्पति के लिए अधिक लाभदायक सिद्ध होती थी, वहाँ उसके कारण मक्खियो और मच्छरो को भी बहुत सुभीता था, जिनकी भरमार से तरह-तरह की वीमारियाँ होती थी। मृत्यु का तुलनात्मक अध्ययन भी हमे इसी परिणाम पर पहुँचाता है। भिन्न-भिन्न युगो के, भिन्न-भिन्न आयु के लोगो मे प्रतिशत मृत्यु-सख्या निम्नांकित थी[१].

युग आयु.	०–१४	१५–२०	२१–४०	४१–६०	६० से ऊपर
मध्य-पुरा-पाषाण	४०	१५	४०	५	
उपरि-पुरा-पाषाण	२४.५	९.८	५३ ९	११.८	
मध्य-पाषाण	३० ८	६ २	५८ ५	३	१ ५
नव-पाषाण	,,	,,	,,	,,	,,
प्राचीन-पित्तल (आस्ट्रिया)	७ ९	१७.२	३९ ९	२८ ६	७.३
१९वी सदी (,,)	५० ७	३ ३	१२.१	१२ ८	२१
२०वी सदी (,,)	१५ ४	२ ७	११.९	२२ ६	४७ ४

यद्यपि यह विवरण मध्यएसिया नही, मध्ययूरोप (आस्ट्रिया) का है, तथापि हम मध्यएसिया के नव-पाषाणयुग के बारे मे भी कह सकते हैं कि उसके अधिकाश मानव २१ से ४४ वर्ष की उम्र मे मर जाते थे, उसके वाद १४ वर्ष से नीचे के लडके ज्यादा मरते थे। ४० वर्ष से ऊपर जीनेवाले बहुत थोडे ही आदमी होते थे।

६. अनौ में नव-पाषाणयुग[२]

पश्चिमी मध्यएसिया के दक्षिण-पश्चिम कोण पर तुर्कमानिया सोवियत-गणराज्य की राजधानी अश्कावाद से थोड़ी दूर पश्चिम अनौ के प्राचीन ध्वंसावशेष है, जिनकी खुदाई

१. Progress and Archaeology, p 111

२. Exploration in Turkistan, vol. I, p. 16

सन् १९०३ ई० मे अमेरिकन पुरातत्त्ववेत्ता रॉफेल पम्पेली ने की थी। यह स्थान ईरान और सोवियत की सीमा पर अवस्थित कोपेतदाग-पर्वतमाला से थोडा उत्तर मे है। पम्पेली ने यहाँ ध्वसावशेषो की खुदाई के अतिरिक्त अश्काबाद के एक पाताल-कूप के भिन्न-भिन्न स्तरो की भूस्थिति का भी परिचय दिया है। इस कुएँ मे बाईस सौ फुट तक नल धँसाया गया था, तो भी चट्टान का पता नही लगा था। इक्कीस सौ फुट पर भूरे रग की चिकनी मिट्टी मिली थी। उसके ऊपर कभी पत्थर के ढोके, कभी भूरी मिट्टी, अट्ठारह सौ फुट पर बालू, सत्रह सौ फुट पर गोल-गोल पत्थर, इसी तरह आगे इन्ही चीजो को पाया गया। ६०० से ८०० फुट की गहराई मे हिमयुग का प्रभाव दिखाई पडा। इन स्तरो से पता लगा कि मध्यएसिया की जलवायु मे समय-समय परिवर्त्तन होता रहा। अनौ मे खुदाई तीन जगहो पर हुई थी, जिसमे उत्तरी कुर्गान (उत्तरी डीह) की खुदाई वर्त्तमान तल से बीस फुट नीचे तक की गई। यह कुर्गान आसपास के धरातल से बीस फुट ऊँचा है। उत्तरी कुर्गान मे नव-पाषाणयुग और अ-नव-पाषाणयुग के अवशेष मिले थे। अनौ के नव-पाषाणयुगीन लोग कच्ची ईंटो के आयताकार मकानों मे रहते थे। घरो की छतें आज की तरह मिट्टी की नहीं, बल्कि फूस की होती थीं। आजकल वर्षा के अत्यन्त कम होने के कारण सारे मध्यएसिया मे मिट्टी की छते होती हैं। ये मिट्टी की छतें कौशाम्बी और रायबरेली से पच्छिम उराल-पर्वतमाला तक चली जाती हैं। पूरब मे मिट्टी की छतो का स्थान फूस की झोपडियाँ या खपडैल के मकान लेते हैं। यही अवस्था प्रागैतिहासिक काल से चली आ रही है। पूरब मे मिट्टी की छतो का रिवाज नही है, उसका कारण मिट्टी का कमजोर होना नही, बल्कि वर्षा का आधिक्य है। अनौ मे फूस की झोपडियाँ यही बतलाती हैं कि छह हजार वर्ष पूर्व वहाँ आज की अपेक्षा वर्षा अधिक होती थी। तो भी वह बहुत अधिक नही होती थी, नही तो कच्ची ईंटो का स्थान मिट्टी की रद्देवाली दीवारें लेती। पक्की ईंटो का बनाना तभी सुकर था, जबकि आसपास मे जंगल काफी होता। करीब-करीब उसी समय से थोड़ा पीछे मोहनजोदडो मे पक्की ईंटो का उपयोग होता था।

अनौ के मानव हाथ से मिट्टी के बरतन भी बनाते थे, जो पतले, किन्तु देखने मे भद्दे होते थे। अपने बरतनो पर वे भिन्न-भिन्न ज्यामितीय आकृतियाँ बनाते थे। मिट्टी की तकली पर वह ऊन कातते थे, लोढे और कुण्डी से अनाज पीसते थे। उनकी खेती गेहूँ और जौ की थी, जिसकी भूसी को मोटे बरतनो के बनाने की मिट्टी मे सान लेते थे। उनके शिकार के जन्तुओ मे सूअर, लोमडी, भेडिया, हिरन आदि थे। सीने के लिए हड्डी का सूआ इस्तेमाल करते थे। उनके हथियार छिले हुए चकमक पत्थर के होते थे। लकडी के डण्डे और पत्थर की मुण्डी की गदा उनके युद्ध के हथियार थे। तीर और भाले के फल या गोफन (ढेलवाँस) के पत्थर का भी उपयोग उन्हें मालूम नहीं था। उनके शिकार किये हुए पशु ऐसी आयु और आकार के थे, जिन्हें आसानी से मारा जा सकता। घर के भीतर मिट्टी के फर्श के नीचे वे अपने बच्चों को दफना देते थे, साधारण मुरदे को बाहर फर्श के नीचे दबाते थे। शव के साथ गुरिया, अन्य उपभोग की चीजें और खान-पान की वस्तुएँ भी दफनाते थे। शायद बच्चे देवता को प्रसन्न करने के लिए घर की फर्श के भीतर बलि-रूप मे

दबाये जाते हो। अन्दमन के आदिनिवासी भी बच्चो को घर के भीतर और बडो को बाहर दफनाते हैं। दाँत न निकले बच्चे रोएँ मे भी दफनाये जाते थे, जबकि सयानो को आग मे जलाना होता था। भारत के हिन्दुओं मे यह प्रथा आज भी देखी जाती है। सबसे नीचे दस फुट मोटाईवाले प्राचीनतम स्तर मे पालतू पशुओ का पता नही लगता, बल्कि हाँ, शिकार किये हुए जगली पशुओ की हड्डियाँ मिलती हैं। पम्पेली ने नव-पाषाणयुगीन स्तर मे निम्नाकित चीजो का भाव और अभाव उल्लिखित किया है[1]।

भाव	अभाव
हस्तनिर्मित रेखा-रजित मृत्पात्र	पॉलिश किया गया पात्र या गुरिया
गेहूँ-जौ की खेती	पक्की ईंटें
कच्ची ईंट के आयताकार गृह	बरतन की मुठिया
हड्डी का सूआ	उत्कीर्ण पात्र
चकमक के सीधी धारवाले हथियार	सोना-रूपा
मिट्टी की तकली	राँगा
ताँबे-सीसे का हलका-सा ज्ञान	लोहा
पीसने का पत्थर	धातु के फल
फीरोजे की मणियाँ	पशु, मनुष्य या वृक्ष के चित्र
दीर्घशृंग गाय, सूअर, घोडे	कुत्ता
घर मे सिकुडे शिशु की समाधि	ऊँट
गौ, भेड, हिरन, बारहसिंगा, घोडा, भेडिया और सूअर का शिकार	बकरी

इस स्तर मे जिन चीजो का अभाव था, उनमे कितनी ही ऊपर के स्तरो मे मिली।

§२. अ-नव-पाषाणयुग[2] (३००० ई० पू०)

जैसा कि नाम से प्रकट है, यह एक अवान्तर युग था, जबकि पाषाण-युग का अन्त हुआ, किन्तु धातुयुग का आरम्भ नही हो पाया। अनौ की खुदाई मे हम देख आये हैं कि इससे पहले के युग मे भी ताँबे-सीसे का हलका-सा परिचय था, किन्तु असली धातुयुग के आरम्भ होने के लिए आवश्यक है कि आदमी धून (धातुपाषाण) को गलाकर धातु बना सके। यह भी याद रखना चाहिए कि पाषाण-युग का अन्त दुनिया के सभी देशो मे एक समय नही हुआ। जहाँ मेसोपोतामिया मे पाषाण-युग का अन्त सन् ३५०० ई० पू० मे होता है, वहाँ डेनमार्क मे १६०० ई० पू० मे और न्यूजीलैण्ड मे उसका अन्त सन् १८०० ई० मे ही जाकर होता है, जबकि वहाँ के आदिम निवासियो का यूरोपियन जाति से सम्पर्क होता है। अनौ मे इस स्तर को पम्पेली ने द्वितीय सस्कृति कहा है, जो कि ऊपर के तल से पच्चीस फुट नीचे है। पम्पेली ने इसका काल ६०००–५००० ई० पू० माना है, लेकिन

१ Exploration in Turkistan, p 60
२. Le' Humanite Prihistorique, pp 590–95

अधिकाश विद्वानो के मत से यह समय ४००० ई० पू० से अधिक पुराना नही हो सकता। उस काल मे निम्नाकित वस्तुओ का भाव और अभाव देखा जाता है

भाव	अभाव
मृत्पात्र पूर्ववत्	कुम्हार का चक्का
तन्दूर-पात्र	पक्की ईटें
घर पूर्ववत्	बरतन मुठिया
चकमक का हँसिया, सूआ, गदा और गोफन	उत्कीर्ण पात्र
मिट्टी की तकली	सोना-रूपा
ताँबे और सीसे का थोडा-सा ज्ञान	राँगा-पीतल
पीसने का पत्थर	लोहा
छोटे-बडे सीगवाली गायें, सूअर, घोडे,	धातु के फल
बकरी, ऊँट, कुत्ता और मुण्डिया भेड	पशु और मनुष्य के चित्र
घर मे शिशु-समाधि	—

अ-नव-पाषाणयुग मे खेती के अतिरिक्त पशुओ को पालतू बनाने का भी प्रयास देखा जाता है, यद्यपि हथियारो मे अभी कोई परिवर्त्तन नही हुआ था। हत्थे के बिना मिट्टी के बरतन अब भी बनते थे, लेकिन उनको लाल और दूसरे रग की रेखाओ से अलकृत किया जाता था। ताँबे के छुरे का होना सन्दिग्ध-सा मालूम होता है। कुत्ता, बकरी, ऊँट और बिना सीग की भेड को इस समय पालतू बना लिया गया था। अनौ मे इससे पहले के स्तर मे भी फीरोजे की मणियाँ मिली हैं। तरह-तरह के आभूषणो से शरीर को सजाना और पहले से चला आता था। फीरोजा की खानें अनौ से थोडा ही दक्खिन ईरान के भीतर मिलती हैं। ऊँट शायद पूरब से लाकर पालतू किये गये।

§३. मानव-जाति

मुस्तेर-मानव आज के सपियन-मानव से बहुत भेद रखता था। उसको आज की किसी जाति से मिलाना सम्भव नही है। यद्यपि प्रकृति के और स्थानो की तरह प्राणियो मे भी विकास सर्प की गति से ही नहीं होता, बल्कि कभी-कभी मेढक-कुदान की तरह एकाएक जाति-परिवर्त्तन भी हो जाता है। इस नियम के अनुसार हजारो वर्षों मे एक मानव-जाति से विलक्षण शरीर-लक्षणवाली दूसरी मानव-जाति पैदा हो सकती है। इस प्रकार, तेशिकताश-मानव ३०-३५ हजार वर्ष बाद मध्य-पाषाणयुग के मानव के रूप मे परिणत हो सकता है, किन्तु तो भी इसका कोई ठोस प्रमाण नही मिलता। मध्य-पाषाणयुग के अन्त मे जो मानव अपने पालतू कुत्तो के साथ मध्यएसिया से पहले-पहल यूरोप की ओर गया, वह हिन्दू-यूरोपीय जातियों का पूर्वज था। इसका यह अर्थ नहीं समझना चाहिए कि हिन्दू-यूरोपीय जातियों के निर्माण में किसी और रक्त का सम्मिश्रण नहीं हुआ है। अनौ मे मिली नव-पाषाणयुग की खोपडियाँ दीर्घकपाल थी। विशेषज्ञ बतलाते है कि इन खोपडियों मे वे ही सारे लक्षण मिलते हैं, जिन्हें कि भूमध्यीय जाति की विशेषता माना जाता है। उनमे मगोलायित खोपडी से कोई

समानता नहीं है। ये खोपड़ियाँ बतलाती है : 'भूमध्यीय मानव-जाति की एक शाखा मध्य-एसिया के भीतर घुस गई थी।'

मध्यएसिया के भिन्न-भिन्न भागो मे जिन जातियो के अवशेष मिले हैं, उनपर एक विहगम दृष्टि डालने से मालूम होगा कि अन्तिम हिमयुग के बीच तथा उसके कई सहस्राब्दियो पीछे तक मुस्तेर (नियण्डर्थल)-मानव यहाँ रहता था। जीवन-निर्वाह का जबतक स्थायी साधन नहीं प्राप्त हो और जबतक प्रकृति और प्राणिशत्रुओ से अपनी रक्षा करने मे सफल नही हो जाय, तबतक प्रजनन की अपार क्षमता रहने पर भी मानव-वंश तेजी से नही बढ़ सकता। अपने घातक शत्रुओ पर कुछ हद तक विजय करके ही मानव फल-फूल सकता है। गुहाओ मे रहनेवाला मुस्तेर-मानव मध्यएसिया मे बहुत ही कम सख्या मे रहा होगा, यद्यपि इसका यह अर्थ नही कि उसके अवशेष अभी जिन दो-चार जगहो मे मिले हैं, उन्हे छोड और स्थानो मे वे नही मिल सकते। मध्य-पाषाणयुगीन मानव भी बहुसंख्य नही हो पाया होगा, तो भी मुस्तेर से उसकी सख्या अवश्य बडी होगी। मध्य-पाषाणयुग का मानव आधुनिक सपियन-मानववश से सम्बन्ध रखता था और वही शायद हिन्दू-यूरोपीय जातियो का पूर्वज था। यह भी बतलाया जा चुका है कि इसी मानव ने नव-पाषाणयुगीन संस्कृति को अपने साथ ले जाकर यूरोप मे इसकी नीव डाली। यूरोप मे जो खोजें हुई है, उनसे यह बात मान ली गई है कि मध्यएसिया से आया यही मानव यूरोप की पुरानी जातियो को अपनी सस्कृति और शस्त्र से पराजित करने मे सफल हुआ, जिसके परिणामस्वरूप पुराने निवासियो मे कितने ही या तो मर-हर गये, या अपने पुराने निवासस्थान को छोडकर एस्किमो लोगों के रूप मे दूर किनारो पर भाग गये, अथवा विजेताओ मे घुल-मिल गये। मध्यएसिया मे मध्य-पाषाणयुगीन मानवो (हिन्दू-यूरोपीय जातियो के पूर्वजो) के कुछ भाग रह गये या नही ? अभी तक जो अनुसन्धान हुआ है, उनसे यही पता लगता है कि अगले नव-पाषाणयुग में अनौ या ख्वारेज्म के नव-पाषाणयुगीन ध्वसावशेषो से जिस मानव का पता लगता है, वह भूमध्यीय जाति का था। साथ ही, यह भी स्वीकार किया जाता है कि मध्यएसिया से जाने-वाले हिन्दू-यूरोपीय जाति के पूर्वज यूरोप मे जाकर नव-पाषाणयुगीन संस्कृति का प्रचार करते हैं, अर्थात् नव-पाषाणास्त्रो के साथ जौ-गेहूँ की खेती और गाय-भेड के पालन करने का काम इन्ही के द्वारा वहाँ आरम्भ होता है। इससे सिद्ध होता है कि नव पाषाणयुग मे पुरातन हिन्दू-यूरोपीय मानव का सम्बन्ध मध्यएसिया से था। भूमध्यीय जाति का ख्वारेज्म तक घुस जाना क्या यह नही बतलाता कि पुरातन हिन्दू-यूरोपीय लोग केवल जलवायु की प्रतिकूलता के कारण ही पश्चिम की ओर भागने के लिए मजबूर नही हुए, बल्कि भूमध्यीय जाति के ये मानव-शत्रु भी उनके पीछे पडे हुए थे ?

मुस्तेर, प्राग्-हिन्दू-यूरोपीय और दीर्घकपाल भूमध्यीय इन्ही तीन जातियो का इस समय तक मध्यएसिया मे होना सिद्ध होता है। इन तीनो का सम्बन्ध किस तरह का रहा, यह अभी अन्धकार मे है। नव-पाषाणयुग से भी पहले से मध्यएसिया की भूमि की अपनी विशेषता चली आती है, जिसके कारण उसके गर्भ से ऐसे प्रकाश के निकलने की सम्भावना है, जो मानव के भूले हुए इतिहास को अँधेरे से उजाले में ला दें। अतीत काल मे प्यासी भूमि,

किजिलकुम और काराकुम के विशाल रेगिस्तान मानव के लिए सबसे बडे शत्रु रहे। इन रेगिस्तानो के भीतर भूलकर हजारो ने अपने प्राण गँवाये। इतना ही नही, रेगिस्तान हमेशा मानव की भूमि पर आक्रमण करता रहा, साल-साल वह खेती की भूमि ही नही, गाँव और नगरो को उदरसात् करता रहा। आज केवल ख्वारेज्म के रेगिस्तानो मे ही २०० नगरो और बस्तियो के ध्वसावशेषो का पता लगा है। सोवियत-इतिहासज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता इन ध्वसाविशेषो के महत्त्व को समझते हैं। वे जानते हैं कि जिस तरह बालू ने अपनी ध्वसलीला दिखाने मे कोई कसर उठा नही रखी, उसी तरह उसने बहुत-सी अनमोल ऐतिहासिक सामग्री को अपने नीचे सुरक्षित रखा है। सोवियत-सरकार दूसरे सास्कृतिक कार्यों की तरह पुरातत्त्व के अनुसन्धानो पर भी बडी उदारता से पैसे खर्च करती है। पिछले १४-१५ वर्षों से ख्वारेज्म के रेगिस्तान मे यह अनुसन्धान जारी है। सन् १९४९ ई० मे इसके लिए हवाई जहाजो ने दस हजार मीलो की उडान की। मोटरो और लारियो का बडे व्यापक रूप मे उपयोग किया गया। उस साल सात दर्जन के करीब चर्मपत्र पर लिखे अभिलेख इस मरुभूमि ने दिये। यह अभिलेख उस भाषा मे लिखे हुए है, जो लुप्त हो चुके हैं। १७०० वर्ष पुरानी भाषा का नमूना प्राप्त करना पुरातत्त्ववेत्ताओ के लिए कम प्रसन्नता की बात नही है। पुरातात्त्विक अभियानो के अतिरिक्त रेगिस्तान की भूमि मे करोडो एकड जमीन को खेत और बगीचे के रूप मे परिणत करने के लिए वक्षु नदी को कॉस्पियन सागर से मिलानेवाली महानहर की खुदाई हो रही है। इससे जहाँ निर्जन मरुभूमि पर मानव-बस्तियाँ बसेंगी, वहाँ पुराने ध्वसावशेषो के भीतर से मानव-इतिहास के रहस्य को ढूँढ निकालना आसान होगा।

अ-नव-पाषाणयुग के बाद हम धातुयुग मे प्रवेश करते हैं। कृषि और धातुशिल्प मिलकर ग्रामो और नगरो को स्थायित्व प्रदान करते है, किन्तु मध्यएसिया मे घुमन्तू जीवन का सर्वथा उच्छेद हाल तक नहीं हो पाया था। नव-पाषाणयुग मे भी घुमन्तू और स्थायी निवासियो का सघर्ष रहा, जो सघर्ष सोवियत-क्रान्ति के बाद ही खतम हुआ। बीच का सारा मध्यएसिया का इतिहास घुमन्तुओ और अ-घुमन्तुओ के सघर्ष का इतिहास है। अ-घुमन्तू दासता और अर्धदासता से होते सामन्तवाद तक पहुँच गये थे, जबकि घुमन्तू जातियाँ बहुत-कुछ जनयुग अथवा जनसामन्त-युग तक ही अपने जीवन को सीमित रखती रही।●

स्रोतग्रन्थ ·

१ General Anthropology (Boas)
२ Exploration in Turkistan (R Pumpelly), vols 1, 11
३ Progress and Archaeology (V G Childe)
४ Le' Humanite Prehistorique (J de Morgan)
५ Our Early Ancestors (M C Burkitt)
६ Geology in the Life of Man (Duncan Leith)
७ The Evolution of Man (G Elliot Smith, London, 1927)
८ The Skeletan Remain of Early Man (G. E Smith)
९ Antiquity of Man, 2 vols (Arthur Keith, 1925)
१० New Discovery relating to the Antiquity of Man (A. Keith, 1931)

भाग २

धातुयुग (२०००-७०० ई० पू०)

अध्याय १

ताम्रयुग (२५००-१५०० ई० पू०)

१. युग की विशेषता

पाषाण-युग मानव का प्रथम युग है, जो भिन्न-भिन्न विद्वानो के मतानुसार तीन लाख या एक लाख वर्ष तक रहा। ताम्रयुग के साथ मानव धातुयुग मे प्रवेश करता है, जो आज से पहले ७००० से ४५०० वर्ष तक भिन्न-भिन्न देशो मे चला आया। सभी देशो मे ताम्रयुग एक साथ नही शुरू हुआ। मिस्र और मेसोपोतामिया मे उसका आरम्भ सबसे पहले (३५०० ई० पू०) हुआ। हो सकता है, भूमध्यीय जाति के मध्यएसिया मे घुस आने के समय हिन्दू-यूरोपीय-पूर्वजो ने धातु की कला सीखी। किसी देश मे ताम्रयुग और पित्तल-युग मे अन्तर रहा है, जैसा कि मध्यएसिया मे २५०० से १५०० ई० पू० तक ताम्रयुग रहा और १५०० से ७०० ई० पू० तक पित्तल-युग, परन्तु कई देशो मे दोनो का अन्तर इतना कम रहा कि पाषाण-युग से सीधे पित्तल-युग मे मानव का प्रवेश माना जा सकता है।[1] पाषाण-युग के अन्त मे कही-कही प्राकृतिक रूप मे तांबे के कठोर डले (ओहायो-भांति) आदमी को मिल जाते थे, जिन्हे बिना आग मे गरम किये वह ठोक-पीटकर तेज बना लेता था, किन्तु ऐसे बनाये हुए हथियारो के कारण इसे हम ताम्रयुग नही मानते। ताम्रयुग तब शुरू होता है, जब आदमी तांबे की धून (धातु-पाषाण) को लेकर उसे कोयले की आग मे पिघले द्रव्य को अपने भिन्न-भिन्न उपयोग के हथियारो के रूप मे ढालने लगा। यह विद्या आदमी को बहुत पीछे मालूम हुई। प्राचीन मानव धधकते लकडी के कोयले को एक गढे की पेंदी मे रख देता, और उसके ऊपर एक तह धून और एक तह कोयले को रखकर ऊपर तक भर देता। फिर फूंकने की फोफियां लगाकर कई आदमी हवा देने लगते, जैसा कि आज भी कही-कही सोनार करते देखे जाते हैं। पीछे आदमी को मालूम हुआ कि मुंह से फूंकने की जगह चमडे की भाथी से हवा देना ज्यादा अच्छा है। इस प्रक्रिया से वह धून से धातु अलग करने लगा। उन्नीसवी शती के मध्य तक कुमाऊँ-गढवाल और मध्यप्रदेश मे आज भी कही-कही जनजातियो ने धून से धातु निकालने की यही विधि अपना रखी है। भाथी मे अवश्य इन लोगो ने कुछ विकास किया, और कही-कही आदमी हाथ की जगह पैर से चलने-वाली बडी-बडी भाथियो का इस्तेमाल करने लगे।[2]

---

१ किसी-किसी का कहना है कि भारत मे नव-पाषाण के बाद सीधे लौहयुग आया। (Gen Anth , pp 199, 201) पर, तांबे के हथियार मोहनजोदडो और बहादुराबाद (हरद्वार) मे मिले हैं।

२ Our Early Ancestors, pp 185–94

२. ताम्र-उद्योग

ताँवा वनाना पत्थर, हड्डी या लकडी को छीलकर हथियार वनाने जैसा नही था। ताँवे की धून मे ओपिद, सलफिद और सिलिकेत (कार्वोनित) मिला रहता है। उनसे वहुत तेज तापमान मे पिघलाकर ही ताँवे को अलग किया जा सकता है। ताँवा पिघलाने के लिए भारी गरमी की आवश्यकता होती है। १०८३° सेण्टीग्रेट के तापमान मे ताँवा पिघलकर पानी हो जाता है और अपने अन्य साथियो की अपेक्षा अधिक भारी होने के कारण उसका पानी नीचे चला जाता है, जिसे नीचे के छेद से अलग करते हुए भिन्न-भिन्न प्रकार के साँचो मे ढाल लिया जाता है। ताँवे के इस प्रकार के निर्माण के साथ-साथ मानव पाषाण-युग से धातुयुग मे ही नही आया, वल्कि वह अव वैज्ञानिक-युग का मानव वन गया। ताँवा वनाना रसायनशास्त्र का वाकायदा प्रयोग है। इसके साथ मानव के शिल्प मे विशेष परिवर्त्तन हुआ। सस्कृत और पालि के पुराने ग्रन्थो मे लोह का अर्थ ताँवा होता है। सिंहलद्वीप (लका) मे अशोक के पुत्र भिक्षु महेन्द्र के लिए जो महाविहार वनाया गया था, उसमे एक निवास का लोह-महाप्रासाद (लोहे का महल) नाम इसलिए पडा था कि उसकी छतें ताँवें की थीं। इससे पता लगता है कि आज से २१-२२ सौ वर्ष पहले भी ताँवे के लिए लोह शब्द प्रयुक्त होता था। आजकल लोहार लोहे के काम करनेवाले को कहा जाता है। पहाड मे ताँवे के वरतन वनानेवालो को तमोटा या टमटा कहते हैं। नीचे मैदान मे ताम्रकार नाम की कोई जाति नही मिलती। उसके स्थान पर वहाँ कसेरे हैं, जो काँसे-पीतल के वरतनो को वनाते हैं। ताम्रयुग मे लोहार या लौहकार जैसे शब्द का प्रयोग ताम्रकार के लिए होता था।[१]

इस प्राचीनतम धातु के लिए भारतीय आर्यों की भाषा मे अयस् शब्द का भी प्रयोग होता था, जो कि पीछे केवल लोहे के लिए वरता जाने लगा। फिर, ताँवे और लोहे मे भेद करने के लिए ताँवे को लोह-अयस् और ताम्र-अयस् तथा लोहे के लिए कृष्णायस् (काला अयस्) शब्द का प्रयोग होने लगा। भारत मे आने के कई शताब्दियो वाद हिन्दी-आर्य असली लोहे से परिचित हुए।

ताम्र के आविष्कार के साथ-साथ हम एक नये उद्योग को स्वतन्त्र रूप से स्थापित होते देखते हैं। पत्थर, लकडी या हड्डी के हथियार के लिए कच्चे माल को विशेष प्रयत्न से तैयार करने की आवश्यकता नही होती, उनको छील-घिसकर किसी हथियार का रूप देना, उस युग का हर एक आदमी थोडा-वहुत जानता था। हाँ, अधिक कुशल और अभ्यस्त शिल्पी की वनाई चीजें अधिक सुन्दर और उपयोगी होती थी। इसके कारण भले ही लोग उसकी खुशामद करते रहे हो। लेकिन, वह ऐसी स्थिति मे नहीं था कि शिकार और पीछे कृषि और पशुपालन की जीविका को छोडकर पत्थर छीलने का ही व्यवसाय करने लगता। यह भी स्मरण रखने की वात है कि जिस तक्ष (छेदने, छीलने)-धातु का प्रयोग

१ ४००० और ३००० ई० पू० के वीच नियरएसिया मे ताँवा पिघलाकर ढालने का आविष्कार हुआ। (Progress and Archaeology, p 32)

सस्कृत मे केवल लकडी के छीलने-छेदने के लिए ही होता है, वह रूसी-भाषा मे केवल पत्थर छीलने-छेदने के लिए इस्तेमाल होता है। आरम्भिक ताम्रयुग मे हिन्दू-यूरोपीय जाति की वह शाखा पूर्वी-यूरोप से मध्यएसिया मे लौट आई थी, जिसके वंशज आज आर्य और शक के नाम से प्रसिद्ध हुए, यह सन्दिग्ध-सा है। किन्तु, ताम्रयुग के मध्य या पित्तल-युग के आरम्भ मे (२००० ई० पू० के करीव) वह अवश्य वहाँ पहुँच गये थे।

३. व्यापार[१]

ताम्रयुग के साथ लोहारो का स्वतन्त्र पैशा स्थापित हुआ। गाँवो मे अलग लोहार-शाला कायम हुई और कुछ आदमी नियमित रूप से ताम्र-उत्पादन के व्यवसाय मे लग गये। इसके साथ ही ताँवे की माँग वहुत वढ गई। पत्थर के हथियारो के सामने ताँवे के हथियार उतने ही शक्तिशाली थे, जितने तलवार के सामने वारूद से चलनेवाले हथियार। ताँवे के हथियार केवल युद्ध और शिकार के लिए ही उपयोगी नही थे, वल्कि कृपि मे भी उनका अधिकाधिक उपयोग होने लगा। जगलो और झाडियो को साफ करके खेत वनाना पाषाण-युग मे मुश्किल काम था, लेकिन ताँवे के कुल्हाडे उसको वहुत आसानी से कर सकते थे। यदि मनुष्य को आवश्यकता होती, तो जगलो और झाडियो के लिए उस समय खैरियत नही थी। हल के फाल और हँसिये मे भी ताँवे का उपयोग अधिक होने लगा। इतनी माँग होने के कारण अगर ताँवे ने व्यापार का स्थायी रास्ता निकाला, तो इसमे आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं। ताँवा उस वक्त की वहुत दुर्लभ चीज थी, और उसके वनाने की विद्या तथा आवश्यक कच्चे माल सव जगह सुलभ नही थे। ऐसे महँगे उद्योग का सब जगह जल्दी फैलना आसान काम नही था। इसीलिए, दुनिया के भिन्न-भिन्न भागो मे ताम्रयुग के फैलने मे २५०० ई० पू० से १८०० ई० पू० तक का समय लगा। इससे पहले खाने-पीने की चीजो का आदान-प्रदान भले ही होता रहा हो, किन्तु वह वाकायदा व्यापार नही था। शिकारी-अवस्था मे जहाँ आदमी को कभी कभी शिकार के न प्राप्त होने के कारण भूखे रहना पडता, वहाँ शिकार मिल जाने पर मास को खतम करने की जल्दी भी पड़ जाती थी, जिसमे कि वह सडने न पाये। कनौर (किन्नर) तथा कितने ही दूसरे प्रदेशो मे आज भी यह प्रथा देखी जाती है : शिकार को मार लेने पर शिकारी जोर से चिल्लाकर पुकारता—'है कोई यहाँ, तो आकर अपना हिस्सा ले।' आज यद्यपि शिकारी अपनी पलीते-वाली वन्दूक का इस्तेमाल करते हुए वैयक्तिक रूप से शिकार करता है, तथापि उसके पुराने संस्कार उसे सामूहिक शिकार के युग का स्मरण दिलाते हैं, इसलिए वह आसपास मे खडे किसी आदमी को भी उसमें भागीदार वनाना चाहता है। शिकारी समझता था कि यदि उसका शिकार बडा जानवर है, तो वह और उसका परिवार अकेले जल्दी मास को खा नही सकता, वह सड जायगा। ऐसे मास के साथ क्रय-विक्रय क्या, अदला-वदली करने का भी कहाँ सुभीता हो सकता था ? इसीलिए, व्यापार करने की जगह पर, हमारी पुरानी विवाह आदि प्रथाओ के अवसरो पर न्यौता के रूप मे चीजो के भेजने जैसा रिवाज था, जिसका यही

१ Progress and Archaeology, p 59

अर्थ था कि इस वक्त आपके कार्य-प्रयोजन मे हम सहायता करते हैं, हमारे कार्य-प्रयोजन मे, यदि क्षमता हो, तो आप भी इसी तरह सहायता करें।

कृषि-युग और पशुपालन के साथ वैयक्तिक सम्पत्ति की स्थापना हुई। सम्पत्ति भी रोज-रोज के खाने से अधिक जमा होने लगी, इसीलिए उधार देने या अदला-बदली करने का रिवाज चला। लेकिन, अदला-बदली से, विशेषकर जबकि उतनी ही चीजे मिलती हो, बाकायदा व्यापार-प्रथा स्थापित नही हो सकती और न सारे समय व्यापार करनेवाला वणिग्वर्ग स्थापित हो सकता था। ताम्रयुग ने व्यापार के लिए सबसे अधिक सुभीता प्रदान किया, क्योंकि तॉबे के हथियार केवल विलास की चीज नही थे। वह युद्ध और जीविका, दोनो के सबसे उपयोगी साधन थे, उनकी हर जगह माँग थी और माँग के अनुसार ही उनका मूल्य भी अधिक था। अब अनाज, मास या पशुओ का मूल्याकन तॉबे के टुकडो या हथियारों में किया जाने लगा और बराबर के भार के खाद्य को ढोने की जगह छोटे-से तॉबे के टुकडे का विनिमय कर बहुत-सी खाद्य-सामग्री लाई जा सकती थी। ताम्रयुग ने देशो की छोटी-छोटी सीमाओ को व्यापार के लिए तोड़ दिया। व्यापार के लिए अब यातायात का सुभीता ढूँढा जाने लगा। मानव-मस्तिष्क सोचने लगा कि कैसे थोडे समय मे अधिक-से-अधिक चीजों को दूर-से-दूर जगहो मे पहुँचाया जा सकता है। इसी का परिणाम हुआ, नदियो और समुद्रो मे नौका-सचालन और धरती पर गाडी या रथ का सचार।

४. हथियार

तॉबे के हथियारो के बनने के पहले पाषाण-युग मे भी बहुत तरह के पत्थर, हड्डी या लकडी के हथियार बनने लगे थे। काटने के लिए जहाँ कुल्हाडे बनते थे, वहाँ मास काटने या छीलने आदि के लिए पत्थर की छुरियाँ भी बनती थी। तीर और भाले के फल भी बहुत बना करते थे। तॉबे के हाथ मे आने पर आदमी पाषाण-युग के हथियारो की नकल करने लगा। तॉबे के कुठारो की शक्ल वही थी, जो कि पत्थर के कुल्हाडो की। हाँ, समय बीतने के साथ उसमे और कितने ही भेद शुरू किये गये। भाले और तीर के फल भी पाषाण-युग की नकल पर ही बने। पत्थर का हथियार छुरे या कटारी बनाने के लिए नमूना हो सकता था, लेकिन तॉबे के हथियार को काफी लम्बा बनाया जा सकता था, इसलिए इसी युग मे पहले-पहल लम्बी-सीधी तलवारें बनने लगी। पाषाण-युग के मानव को अस्तुरे की आवश्यकता नहीं थी। उसको अपनी दाढी-मूँछ बढाने मे कोई शौक का ख्याल नहीं था, बल्कि वह उसे सहजात समझकर बुरा नही समझता था। लेकिन, ताम्रयुग मे आकर अब इच्छानुसार दाढी-मूँछ बनाने के लिए अस्तुरा भी आ उपस्थित हुआ। हँसिया फरसा, दोहरा फरसा, बसूला आदि बहुत तरह के हथियार बनने लगे।

मानव को आदिकाल से ही शरीर को सजाने का शौक था। वह पहले फूलो-पत्तो, दाँतो, कौडियो, हड्डियों आदि से शृगार किया करता था। नव-पाषाणयुग मे मध्यएसिया का मानव फीरोजा और दूसरे कितने ही तरह के रंग-बिरगे पत्थरो के आभूषण बनाता था। ताम्रयुग मे अब तॉबे के बहुत तरह के आभूषण बनने लगे। लौहयुग मे लोहे के आभूषण

उतने नही बने, जितने कि ताम्रयुग मे ताँबे और पित्तल-युग मे काँसे-पीतल के। इसमे एक कारण यह भी था कि ताँबा लोहे की तरह मोर्चा खानेवाली धातु नही थी। ताम्रयुग के बहुत तरह के ककण, कुडल, हँसली आदि आभूषण मिले हैं।

५. राजव्यवस्था

लाखो वर्षों से मनुष्य प्रकृति का स्वतन्त्र पुत्र था। उसका सामाजिक सगठन पहले परिवार के रूप मे हुआ। परिवार जहाँ अपने व्यक्तियो के आहार एकत्रित करने के लिए मिलकर प्रयत्न करता रहा, वहाँ उनके झगडो को भी शान्त करता था, साथ ही बाहर से आक्रमण होने पर सारे नर-नारी अपनी रक्षा के लिए लडने जाते थे। उसी युग मे मानव मातृसत्ता के आदिम साम्यवाद से निकलकर जनयुग मे पहुँचा, जबकि सामाजिक सगठन कई परिवारो से मिलकर बने जन के रूप मे हुआ। नव-पाषाणयुग मे कृषि और पशुपालन ने मातृसत्ता हटाकर पुरुषसत्ता स्थापित करते हुए जन के प्रधान नेता महापितर की सृष्टि की। यद्यपि वह आगे आनेवाले राजा का अकुर था, तथापि वह अभी उनसे ऊपर नही समझा जाता था, और उसकी प्रतिष्ठा इसीलिए अधिक थी कि वह योग्य सैनिक, नेता और जन के भीतर शान्ति रखनेवाला योग्य पच था। ताम्रयुग मे अब महत्त्वाकाक्षी व्यक्तियो को आगे बढकर सर्वेसर्वा बनने का अच्छा मौका मिला। कृषि और पशुपालन द्वारा कुछ व्यक्तियो के पास अधिक सम्पत्ति जमा होने लगी। इन्ही व्यक्तियो ने आरम्भिक जनयुग के दासताहीन समाज मे दासता का आरम्भ किया। पहले यदि जनो मे युद्ध होता, तो वह बहुत क्रूर होता था (क्रूरता तो आज भी पूँजीवादी युद्ध की एक विशेपता है, कोरिया मे सैनिको से अधिक गाँव के निरीह नर-नारी, बच्चे-बूढे अमेरिकन बमो के शिकार हो रहे हैं)। आदिम जनो के युद्ध मे हारे हुए जन को या तो नि शेष नष्ट हो जाना पडता, या अपनी शिकार-भूमि को छोड बचे-खुचे आदमियो को लेकर दूर भाग जाना पडता था। उस वक्त पराजित को दास बनाने की प्रथा नही थी, बहुत हुआ, तो उनकी कितनी ही स्त्रियो को पकडकर अपनी स्त्री बना लिया। मातृसत्ता-युग मे विवाह की प्रथा नही थी, इसलिए पिता का पता लगना आसान नही था, पर माता को पहचानने मे कोई कठिनाई नही थी। इससे भी माता का नाम और शासन चल पडा, यद्यपि शरीर मे उस वक्त की स्त्री पुरुष से अधिक बलवान् नही होती थी। आदिम जनयुग मे भी विवाह की प्रथा यही तक पहुँच सकी थी कि पुरुषो का एक झुण्ड पति माना जाय और स्त्रियो का एक झुण्ड पत्नी। कृषि और पशुपालन के साथ सम्पत्ति का उत्पादन बढ चला। अधिक हाथो के होने पर अधिक काम तथा उससे अधिक सम्पत्ति के उत्पादन का रास्ता निकल आया था, इसलिए वैयक्तिक सम्पत्ति के उत्पादन और स्वामित्व के बल पर जहाँ पुरुष समाज का नेता बन गया, वहाँ इस पितृसत्ता-युग के युद्धो मे पकडे गये शत्रुओ को मारने की जगह दास बनाकर जीवित रहने का अधिकार दिया गया। युद्ध की पहले की क्रूरता मे इसके द्वारा कुछ कमी हुई, इसमे सन्देह नही। दासो का श्रम अधिक धन उत्पादन करने लगा।

ताम्रयुग मे दासता-प्रथा ज्यादा बढ चली—दासो की संख्या अधिक बढने लगी; क्योकि खेती और दूसरे व्यवसायो मे उनके श्रम की बड़ी माग थी। दास वही लोग रखा

सकते थे, जिनके पास काफी सम्पत्ति थी, जिनके पास काफी काम था। युद्ध रोज-रोज नहीं हुआ करता कि दास बिना मूल्य के मिलते रहें। इसलिए, फुसला-बहका या डरा-धमकाकर और प्रलोभन देकर दास-दासी बनाये जाने लगे। दासो के श्रम ने धनिको के हाथ मे और भी सम्पत्ति एकत्रित कर दी। वे धन के बल पर और भी लोगो को हाथ मे करने लगे। इस प्रकार, ताम्रयुग के साथ एक और बडी सामाजिक क्रान्ति यह हुई कि जनयुग के स्वतन्त्र मानव-समाज के स्थान पर सामन्त-युग की घोर विषमता का समाज स्थापित हुआ। ताँबे के हथियार, उस समय ऐसे ही महँगे थे, जैसे कि आजकल के लडाई के बारूदी हथियार। जहाँ सामन्त अपनी सम्पत्ति से महँगे हथियारो को खरीद या बनवाकर, उनके चलानेवाले आदमियो को भाडे पर रखकर शक्तिशाली हो सकता था, वहाँ साधारण आदमी इसकी क्षमता नही रखता था। ताम्रयुग के सामन्तो के सामने उनके पिछडे हुए स्वच्छन्द जन (कबीले) टिक नहीं सकते थे, क्योंकि उनके हथियार निकम्मे थे, चाहे लडने मे वह अधिक वीर थे। शस्त्रबल के अतिरिक्त संख्याबल भी सामन्तो के पक्ष मे था, क्योंकि उनके पास सम्पत्ति-बल अधिक था।

ताम्रयुग ने व्यापार के लिए छोटी-छोटी जन-सीमाओ को तोड फेंका और अपने क्षेत्र को व्यापक बनाया। मिस्र कहाँ, मेसोपोतामिया कहाँ, सिन्धु-उपत्यका कहाँ, अनौ और ख्वारेज्म कहाँ? आजकल नक्शे मे देखने से भले ही वह नजदीक-नजदीक मालूम हो, और विमान द्वारा पहुँचने मे भी दूर न मालूम होते हो, लेकिन आज से साढे चार हजार वर्ष पहले ये दुनिया के छोर पर अवस्थित थे। लेकिन, ताम्रयुग मे हम एक जगह की बनी हुई चीजों को समुद्रो, पहाडो और रेगिस्तानो को पारकर दूसरी जगह पहुँचते देखते हैं। व्यापारिक एकता की तरह देशो के एकीकरण मे भी इस युग ने बडा काम किया। अपने ताम्र के हथियारो के बल पर सामन्त दूसरो को अपने अधीन करने, जन-सीमाओ को मिटाकर राज्यों और महाराज्यों की स्थापना करने मे सफल हुए। ताम्रयुग ने मनुष्य को बतला दिया कि अब छोटे-छोटे जन अपनी रक्षा नही कर सकते। मध्यएसिया का दक्षिणापथ इस समय नव-पाषाणयुग से ताम्रयुग मे आकर ग्राम-नगरो मे बसे स्थायी निवासियो का देश था, किन्तु इसका उत्तरापथ वर्तमान (कजाकस्तान) अब भी पूर्णतया घुमन्तुओ की विहार-भूमि था। जैसे पिछली शताब्दियों मे हम उत्तरापथिक घुमन्तुओ का दक्षिणापथिक निवासियो के साथ बराबर संघर्ष देखेंगे, यही अवस्था ताम्रयुग मे भी थी। उत्तर के घुमन्तू जन (कबीले) अपने सरदारो के नेतृत्व मे दक्षिण के समृद्ध नगरो और ग्रामो को लूटने के लिए आते, और पीछे उनमे से कितने ही वहीं बसकर शासन करते और जातियो के सम्मिश्रण और संस्कृतियो के आदान-प्रदान का काम करते थे।

६. अनौ में

ऐतिहासिक काल मे पश्चिमी मध्यएसिया का दक्षिणापथ और उत्तरापथ इन दो भागो मे विभक्त देखा जाता है। दक्षिणापथ से हमारा मतलब है, सिर्दरिया और अराल-समुद्र से दक्षिण का भाग जिसमें आजकल तुर्कमानिस्तान, उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान

के गणराज्य मौजूद हैं। उत्तरापथ मे किरगिजिस्तान का कुछ भाग और कजाकस्तान सम्मिलित हैं। दक्षिणापथ मे काराकुम और किजिलकुम जैसे दो महान् रेगिस्तान है, जिनमे किजिलकुम पुरानी सस्कृतियो की सुरक्षित समाधि-सा है। उत्तरापथ मे प्यासी भूमि का भारी रेगिस्तान है। यही पश्चिम मे तलस नदी से पूरब मे इली नदी तक, फैला सप्तनद भू-भाग है, जो उत्तरापथ का सबसे अधिक आबाद तथा ऐतिहासिक महत्त्व की भूमि है।

११. मध्य-एसिया (उत्तर, दक्षिण पथ)
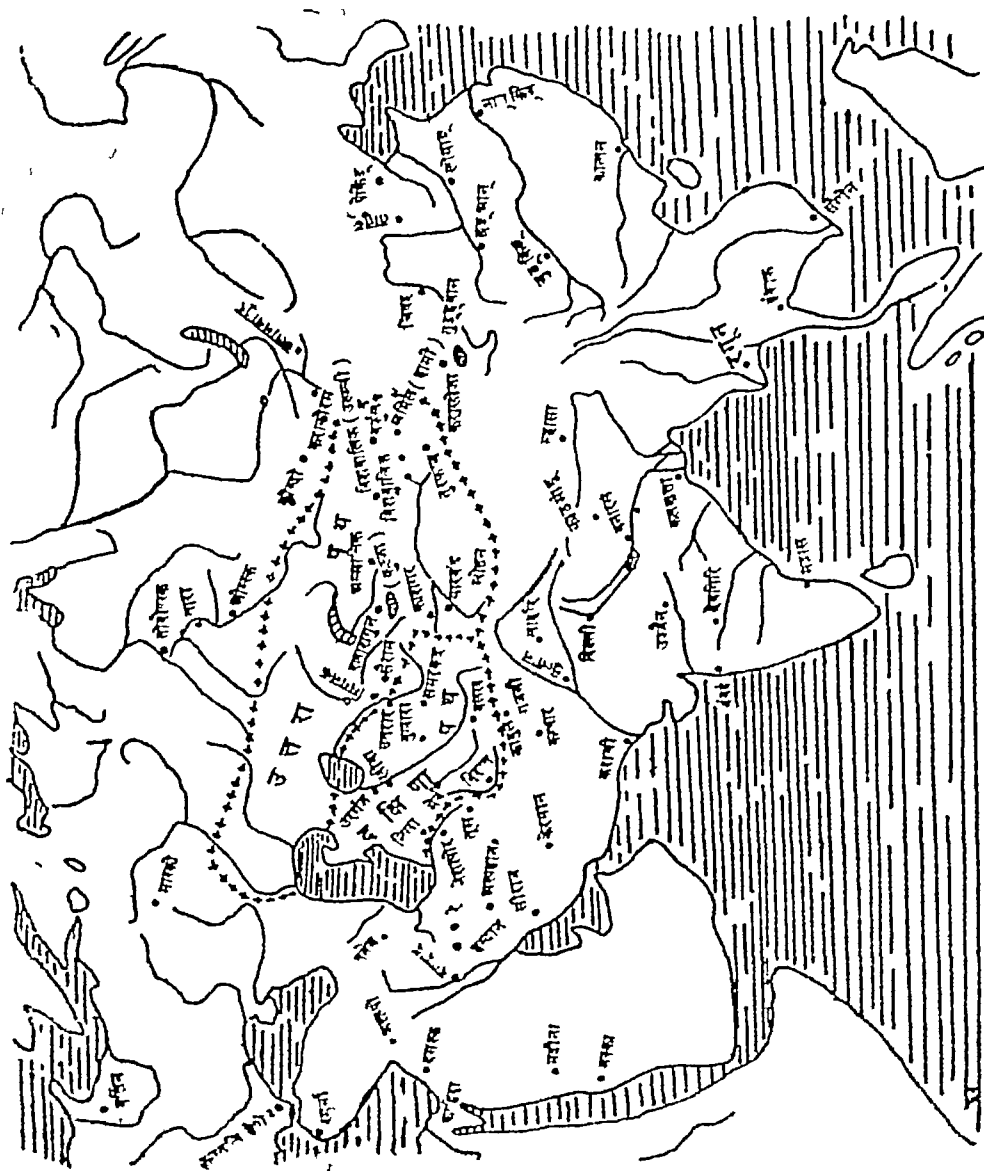
इसिककुल और बलकाश के दो महासरोवर भी इसी मे हैं। तियेनशान तथा अल्ताई की पर्वतमालाएँ इसके दक्षिण-पूर्वी तथा पूर्वी छोर पर हैं। सप्तनद उत्तरापथ का एक छोटा भाग है। तियेनशान-पर्वतमाला ही इली नदी मे टूटकर उत्तर मे अल्ताई का रूप ले लेती हैं, जो कि अपने ताँबे और सोने की खानो के लिए सदा से प्रसिद्ध है। एक समय सारा एसिया इसी के सोने के ऊपर निर्भर करता था—तुर्की और मगोल-भाषा का अल्ताई-नाम 'सुवर्णगिरि' यथार्थ ही है।

७. अनौ में ताम्रयुग[1]

दक्षिणी कुर्गान की स्थापना के साथ ईसा-पूर्व तृतीय सहस्राब्दी के मध्य मे यहाँ ताम्रयुग की स्थापना होती देखी जाती है। यह समय मध्यएसिया के लिए जलवायु के अनुकूल था। अनौ के दक्षिण खुरासान में तांबा मौजूद था, पामीर तथा अल्ताई तो अपने तांबे की महान् निधियों के लिए प्रसिद्ध हैं ही। अनौ में इस युग मे कुम्हार के चक्के का उपयोग दिखाई देता है। मृत्पात्र भी नाना रूप के बनने लगे थे। पात्रो पर मनुष्य, प्राणी और वृक्ष-लता आदि के चित्र होते थे। यद्यपि, आभूषणो मे बहुत भेद नहीं हुआ, तथापि अब वह अधिक सुन्दर बनते थे। बहुमूल्य पत्थरो का उपयोग बड़ी कलात्मकता के साथ किया जाता था। पता लगता है, उस युग मे अनौवालो का सिन्धु-उपत्यका और मेसोपोतामिया से सम्बन्ध था। काल्दिया, असीरिया और सिन्धु-उपत्यका मे बहुपूजित मातामाई का सम्मान यहाँ भी अधिक था। घर के भीतर अब भी मृत शिशुओ को दफनाया जाता था। इस युग मे निम्नांकित चीजो का भाव और अभाव देखा जाता है :

भाव	अभाव
कुम्हार का चक्का	कलईवाला मृत्पात्र
तांबा और मामूली चित्र	पक्की ईंटें
घर (पूर्ववत्)	बरतन की मुठिया
किवाड़ की चूल के नीचे पथरी (पूर्ववत्)	धातु या पाषाण का कुल्हाड़ा
गाय, बैल और देवी की मृण्मूर्त्तियाँ	लोहा
हड्डी के शर-फल	धातु मे सीसा का मिश्रण
तांबे का हँसिया, माला और बाण के फल	लेख
आकस्मात् तांबे में सीसे की मिलावट	—
करवट घर-समाधि	—

८. खारेज्म में ताम्रयुग

खारेज्म की, किजिलकुम की मरुभूमि मे नव-पाषाणयुग से बारहवीं-तेरहवीं सदी ईसवी तक के बहुत-से ध्वंसावशेष मिलते हैं, जिनमे ई० पू० चौथी सहस्राब्दी से तीसरी सहस्राब्दी के आरम्भ तक केल्त-मीनार-संस्कृति का अस्तित्व पाया जाता है। यह संस्कृति मुख्यतया मत्स्यजीवी तथा शिकारी मानवो की थी। इसके अतिरिक्त, ये लोग खेती भी किया करते थे। कई बातों मे ये अनौ के नव-पाषाणयुग से समानता रखते थे। ईसा-पूर्व तृतीय सहस्राब्दी के मध्य मे खारेज्म ताम्रयुग मे अथवा स्थानीय पित्तल-युग मे चला गया। वस्तुतः सारे मध्यएसिया मे ताम्रयुग और पित्तल-युग का भेद स्पष्ट नहीं पाया जाता।

खारेज्म मे पित्तल-युग का परिचय ताजाबागयाब (ई० पू० दूसरी सहस्राब्दी) और अमीराबाद (१०००-८०० ई० पू०) की संस्कृतियो मे मिलता है।[2]

---

१ Exploration in Turkistan, pp. 18-19

२ सोवेत्स्काया आर्खेओलोगिया, vol. 13, pp. 46–50, देखें आगे ४।२

अनौ और ख्वारेज्म के रहनेवाले एक ही जाति के मालूम होते है, जो उस समय अराल से सिङकियाङ (पूर्वी तुर्किस्तान) तक फैली हुई थी। रूसी विद्वान् स० प० ताल्मतोफ का मत है कि यह जाति मुण्डा-द्रविड-जाति से सम्बन्ध रखती थी। ख्वारेज्म की इस सस्कृति का सिन्धु-उपत्यका (मोहनजोदडो) की सस्कृति से इतना सादृश्य है कि दोनो को आकस्मिक न समझ एक मानना ही अधिक युक्तियुक्त है।

९. लिपि

ताम्रयुग सभी देशो मे लिपि के प्रचार का युग है। व्यापार और राज्य के विस्तार के कारण लिखित सकेतो द्वारा सूचना देना अत्यावश्यक था। हम मोहनजोदडो मे इस युग मे लिपि का उपयोग देखते है, यद्यपि वह अभी तक पढी नही जा सकी है। मेसोपोतामिया और मिस्र मे तो हजारो अभिलेख मिले हैं। ख्वारेज्म मे भी कुछ चिह्न मिले हैं, लेकिन कहा नही जा सकता कि वह लिपि है या शिल्पियो के संकेत-मात्र। कुछ भी हो, धातुयुग मे प्रवेश करने के बाद किसी तरह की लिपि का होना आवश्यक हो जाता है। उसके साथ ही गणित और नाप-तौल भी राज्य और व्यापार के संचालन के लिए आवश्यक होते हैं, इसी लिए यह कल्पना करना गलत नहीं होगा कि ताम्र-पित्तलयुग मे मध्यएसिया मे इन चीजो का उपयोग होने लगा था।

●

स्रोतग्रन्थ :

१ General Anthropology (Franz Boas)
२ Our Early Ancestors (M C. Burkitt)
३ Exploration in Turkistan, 2 vols (R. Pumpelly)
४. क्रत्किये सोओब्श्चेनिया, vol. XIII (लेनिनग्राद)
५. अर्खेओलोगिचेस्किये रस्कोप्कि व् त्रिअलोति (गुर्जी, त्विलिसि, सन् १९४१ ई०)
६ The Most Ancient East (V G. Childe, London, 1928)
७ The Primitive Society (R. H Lowie, 1920)

अध्याय २

पित्तल-युग (७०० ई० पू०)

१. युग की विशेषता[1]

तांबे मे दशांश रांगा (टिन) मिला देने से पीतल बन जाता है। ईसा-पूर्व २००० मे मानव को यह सूत्र मालूम हो गया था। रांगा मिला देने से जहां धातु का रंग बदल जाता है, वहां वह अधिक कड़ी भी हो जाती है। तांबे मे रांगा सम्भवत अकस्मात् ही मिला। आजकल टिन पैदा करनेवाले देश मलाया, दक्षिणी अफ्रीका, खुरासान (ईरान), टस्कनी (जर्मनी) चेकोस्लोवाकिया, स्पेन दक्षिणी फ्रास, कार्नवाल (इँगलैण्ड) आदि हैं। काकेशस और स्याम मे भी रांगा मिलता है। काकेशस, चेकोस्लोवाकिया, स्पेन और कार्नवाल मे पास ही-पास रांगे और तांबे, दोनो की खानें है। जान पडता है, ताम्रकारो ने कभी गलती से रांगे की धून भी ताम्रधून के साथ मिला दी, जिससे चमत्कारपूर्ण एक नई धातु तैयार हो गई और फिर काफी तजुर्बे के बाद मालूम हुआ कि दशांश रांगा मिलने से अच्छा पीतल बनता है। शायद रांगे का सुलभ न होना ही मिस्र और मेसोपोतामिया मे ताम्रयुग के देर तक रहने का कारण हुआ। सिन्धु-उपत्यका और सुमेरिया (मेसोपोतामिया) मे जो तांबे की चीजें मिली हैं, उनमे निकल का भी अश है। उसे जान-बूझकर मिलाया नहीं जा सकता, बल्कि उसका कारण इन देशो मे उम्मां की ताम्रधूनो का उपयोग होना था, जिसमे काफी निकल होता है।

पीतल के आविष्कार के साथ धातुविज्ञान और आगे बढा। यह उस महान् धातुयुग का आरम्भ था, जिसका विकास आधुनिक धातुयुग मे हजारो तरह की मिश्रित धातुओ के रूप मे देखा जा रहा है। काकेशस दक्षिणापथ से कास्पियन समुद्र के परले पार है, जहां पहुंचने के लिए उसके दक्षिण से सुगम स्थल-मार्ग भी था। काकेशस मे पीतल बनाने के लिए [illegible] की जगह सुरमे का इस्तेमाल होता था। सुमेरियन लोग सीसा मिलाकर पीतल बनाते थे। यह स्मरण रखना चाहिए कि जस्ता (जिंक) और तांबे के मिश्रण मे तैयार हुआ कांसा बहुत पीछे बनने लगा, जबकि मानव लोहयुग मे पहुंच चुका था। नव-पाषाणयुग और ताम्र-पित्तलयुग की बस्तियो मे एक और महत्त्वपूर्ण भेद देखा जाता था: नव-पाषाणयुगीन बस्तियां इस बात मे स्वावलम्बी देखी जाती थी, किन्तु ताम्र-पित्तलयुग के आरम्भ [illegible] यह स्वावलम्ब खतम हो गया, क्योंकि अब धातुओं के हथियारो या उसके [illegible] लिए दूसरे देशो पर निर्भर रहना पडता था।

---

१. The Bronze Age (V G Childe), p 2 (मिस्र, मेसोपोतामिया और सिन्धु-उपत्यकाएँ ३६००–६००० ई० पू० तक)

२. ख्वारेज्म मे पित्तल-युग[1]

ताजाबागयाव-सस्कृति पित्तल-युग की संस्कृति मानी जाती है, जो कि ईसा-पूर्व दूसरी सहस्राब्दी मे मौजूद थी। अकका-कला, तेशिक-कला आदि के ध्वंसावशेष इस सस्कृति से सम्बन्ध रखते हैं। इस युग का मानव कृषक और पशुपाल था। उसका समाज मातृसत्ताक जन था। गाँव किस तरह के होते थे, इसका अच्छी तरह पता नहीं लगा, जिसका कारण निर्माण-सामग्री का स्थायित्व-हीन होना हो सकता है। इस समय के मृत्पात्र विना मुठिया के होते थे, लेकिन काले-लाल रगो के सजाने के अतिरिक्त कच्चे वरतन पर खोदकर भी उन्हें अलंकृत किया जाता था।

इसी युग मे अमीरावाद की सस्कृति (ई० पू० प्रथम सहस्राब्दी का पूर्वार्द्ध) भी है, जिसे प्राग्लौह-सस्कृति भी कहा जाता है। यह मानव भी मातृसत्ताक जनसमाज मे पहुँचा था। कृपि और पशुपालन इसकी मुख्य जीविका थी। जानवास-कला आदि के ध्वसावशेष इसी के हैं।

३. सप्तनद

ईसा-पूर्व द्वितीय सहस्राब्दी के अन्त मे उत्तरापथ का सप्तनद-प्रदेश भी पित्तल-युग मे पहुँचा। तलस्, चू, इली आदि सात नदियो के कारण इस प्रदेश का यह नाम पडा। हो सकता है, सप्तसिन्धु जैसा ही कोई इसका मूल नाम रहा हो, जिसे कि तुर्की और मगोल-भाषाओ से रूसी मे अनूदित होकर आजकल सेमि-रेच्ये (सात नदी) कहा जाता है। इस प्रदेश को यह भी वडा लाभ था कि अल्ताई की तांवे की खानें इसके पास थी। आजकल भी वल्काश सरोवर के उत्तर मे अवस्थित करागन्दा के कारखाने सोवियत-रूस के तांवा वनाने के सवसे वडे कारखाने हैं। हाल मे सप्तनद के कितने ही पुराने नगरो के ध्वसावशेषो की खुदाई हुई है, जिनमे तरज (जम्वूल), सरिग वालासगून (दोनो किरगिजिस्तान की चू-उपत्यका मे) तथा कोइलूक (इली-उपत्यका) खास महत्त्व रखते हैं। सन् १९४१ ई० मे महा-चू नहर तैयार हुई, जो प्राचीन काल की परित्यक्त वस्तियो के भीतर होकर गुजरी। यहाँ खोदते समय हजारो पुरातत्त्व-सामग्री प्राप्त हुई। चू और इली के द्वावे मे पित्तल-युग का केन्द्र था। यहाँ के लोग कृषि, मछुवाई और शिकारी का जीवन विताते थे।

१. अन्द्रोनीय पित्तल-युग मे उत्तरापथ मे अन्द्रोनी, करासुक और मिनूसून लोगो की जिन सस्कृतियो का पता लगा है, वह भी शिकारी, मछुवाई और कृषि से जीविका करते थे। अन्द्रोनीय-सस्कृति का समय १७००–१२०० ई० पू० माना जाता है। यह उत्तरापथ के उत्तरी भाग मे येनेसेइ नदी से उराल तक फैली थी। उस्त-एरवा के पास अन्द्रोनीय संस्कृति से सम्बन्ध रखनेवाली कितनी ही चीजें मिली हैं। इसके मृत्पात्रो मे ज्यामितीय आकृतियो का अलंकरण देखा जाता है।

---

१. क्रतिकये सोओब्श्चेनिया, XII, 110-18

२ करासुक ई० पू० १२००-८०० मे उत्तरापथ मे हम करासुक-संस्कृति का पता पाते हैं। अल्ताई-पर्वतमाला के पश्चिमोत्तर मे इसकी कितनी ही कब्रें मिली हैं, जिनकी चीजें अन्द्रोनीय जैसी हैं।

३ मिनूसून पित्तल-युग मे उत्तरापथ मे एक और सस्कृति का पता लगा है, जिसे मिनूसून कहते हैं। इसकी भी बहुत-सी कब्रे मिली हैं, जिनमे मुरदो के साथ पीतल के आभूषण, छूरे, तलवार, कुल्हाडे आदि रखे प्राप्त हुए हैं। येनेसेइ नदी के किनारे तक इसका पता लगता है। शायद इस जाति का केन्द्र उत्तरापथ के पूर्वोत्तर था और बेकाल के पास तक फैले खकासी लोगो के साथ इनका सम्बन्ध था।[1]

उत्तरापथ की उपर्युक्त तीन सस्कृतियाँ जिस समय समाप्त होती हैं, उसके अनन्तर ही शक लोगो का उत्तरापथ मे स्पष्ट पता लगता है। इससे अनुमान होता है कि यही शको के पूर्वज थे। नव-पाषाणयुग और अ-नव-पाषाणयुग मे दक्षिणापथ ही नही, उत्तरापथ और सिङक्याङ (तरिम-उपत्यका) तक मे हम मुण्डा-द्रविडजाति का पता पाते हैं। ईसा-पूर्व ७वीं और ८वीं शताब्दी से हम देखते हैं कि सारे मध्यएसिया मे हिन्दू-यूरोपीय वश की शक-आर्य-शाखा का ही प्राधान्य है। पर कोई आश्चर्य नही, मुण्डा-द्रविड और हिन्दू-यूरोपीय काल के बीच मे उत्तरापथ मे रहनेवाली पित्तल-युग की उक्त तीनों जातियाँ वही हो, जिन्होंने मध्यएसिया से मुण्डा-द्रविडवश के प्राधान्य को खतम किया, और स्वय उनका स्थान लेकर आगे उत्तरापथ और सिङक्याङ मे शक और दक्षिणापथ मे आर्य के रूप मे अपने को प्रकट किया। इससे यह भी मालूम होता है कि मध्यएसिया मे हिन्दू-यूरोपीय जन ईसा-पूर्व तीसरी सहस्राब्दी के मध्य से पहले नही थे। ऐसा होने पर उनकी एक शाखा हिन्दू-आर्यों का ईसा-पूर्व दूसरी सहस्राब्दी के मध्य मे भारत मे पहुँचना अधिक युक्तियुक्त मालूम होता है।

४ अनौ मे[2]

अनौ मे दक्षिणी कुर्गान ताम्र-पित्तलयुग का अवशेष है, तो भी इस स्तर मे हम पित्तल की जगह ताम्र की ही प्रधानता देखते है। लोगो के बारे मे भी हम निश्चित नही बतला सकते कि वह नव-पाषाणयुग की तरह मुण्डा-द्रविडजाति थे अथवा हिन्दू-यूरोपीय आर्य।

५. जातियाँ

मध्य-पाषाणयुग से पित्तल-युग के अन्त तक हमे मध्यएसिया मे चार मानव-जातियो का पता लगता है। मध्य-पुरा-पाषाणयुग मे उत्तरापथ की प्यासी भूमि और अल्ताई मे मुस्तेर-मानव के अवशेष मिले हैं, इसी तरह दक्षिणापथ मे सोग्द और तुखार (मध्यवक्षु-उपत्यका) मे भी मुस्तेर-मानव का पता लगता है। बारह हजार वर्ष पूर्व मध्य-पाषाणयुगीन मानव के अवशेष उत्तरापथ मे किपचक (प्यासी भूमि) और सप्तनद मे तथा दक्षिणापथ मे सिर-उपत्यका, सोग्द और ख्वारेज्म मे मिलते है।

१ 'नेकतोरिये इतगी आर्खेआलोगिचेस्किख रबोत् व् सेमिरेच्ये' (अन० बेर्नश्तम), 'क्रत्किये सोओब०', XIII, 110–18

२ Expl in Turk, p 18-19

ताम्रयुग मे अनौ और ख्वारेज्म से सप्तनद तक मुण्डा-द्रविडजाति की प्रधानता थी। पित्तल-युग मे आर्यों और शको के पूर्वज सारे उत्तरापथ और दक्षिणापथ मे फैले। मुस्तेर और मध्य-पाषाणयुगीन मानव के सम्बन्ध मे हम निश्चयपूर्वक कुछ नही कह सकते। मध्य-पाषाणयुगीन मानव, हो सकता है, नव-पाषाणयुग के मुण्डा-द्रविड के ही पूर्वज हो, और यह भी हो सकता है कि वे ही, उन हिन्दू-यूरोपीयो के पूर्वज हो, जो कि नव-पाषाणयुग के आरम्भ में यूरोप की ओर भागने के लिए मजबूर हुए। ऐसी अवस्था मे मुण्डा-द्रविडवश के लोग भूमध्यीय वश के होने के कारण दक्षिण या दक्षिण-पूर्व से मध्यएसिया मे घुसे होंगे। पित्तल-युग मे मध्यएसिया खाली करके जानेवाले हिन्दू-यूरोपीय वश की एक शाखा को फिर हम उनके पूर्वजो की भूमि मे लौटते देखते हैं। ये ही शको और आर्यों के जनक थे। इनके आने के बाद मुण्डा-द्रविड लोगो का क्या हुआ, शायद वहाँ भी वही इतिहास पहले ही दोहरा दिया गया, जो कि भारत मे पीछे हुआ, अर्थात् कुछ मुण्डा-द्रविड पराधीन होकर वही रह गये और धीरे-धीरे विजेताओ ने उन्हे आत्मसात् कर लिया, कुछ लोग पराधीनता न स्वीकार कर खाली पडी हुई भूमि मे आगे खिसक गये। अल्ताई से सिङ्क्याङ तक फैले मुण्डा-द्रविड-जातियो के इन्ही भागे हुए अवशेषो को हम आज वोल्गा के उत्तर के वनखण्डो मे रहनेवाली कोमी और वाल्तिक के पूर्वी तट पर वसनेवाली एस्तोनी और फिनलैण्ड मे वसनेवाली फिन-जाति के रूप मे पाते हैं। किसी समय मास्को और लेनिनग्राद का सारा भू-भाग उसी जाति का था, जिसकी शाखाएँ वर्तमान कोमी, एस्तोनी और फिन हैं। फिन-भाषा का द्रविड-भाषा से सम्बन्ध भी इसी वात की पुष्टि करता है कि शकार्यों और द्रविडो के सघर्ष के ही परिणामस्वरूप उनका एक भाग जो उत्तर की ओर भागा, वही फिन जाति है। इस प्रकार, मुण्डा-द्रविड कहने की जगह हम नव-पाषाणयुग की मध्यएसियाई प्राचीन जाति को फिनो-द्रविड कह सकते हैं। उत्तर की उक्त तीनो जातियो मे कोमी दूसरो के सम्पर्क मे सबसे कम आई। यद्यपि, आज इन फिनो-द्रविड-जातियो का रग यूरोपियनो जैसा गोरा ही नही होता, वल्कि इनके बाल पिंगल होते हैं—काले केशो का तो उनमे कही पता नही लगता। लेकिन, यदि कोमी-नरनारियो का फोटो देखें, तो मालूम होता है कि हम दक्षिण के किसी शुद्ध द्रविड व्यक्ति का फोटो देख रहे हैं। कद मे भी ये लोग नाटे और इकहरे शरीर के होते हैं।

फिनो-द्रविड नृतत्त्व के अध्ययन के लिए उपयोगी सामग्री भारत मे ही नही, सोवियत-रूस मे भी बहुत है, जिसकी ओर हमारे देश के विद्वानो का ध्यान जाना चाहिए।

स्रोतग्रन्थ :

१ The Bronze Age (V G Childe, Cambridge, 1930)
२ क्रत्किये सोओव्श्चेनिया, vol XIIII (लेनिनग्राड), 1946
३ Exploration in Turkistan (R Pumpelly)
४ General Anthropology (F Boas)
५ In the Beginning (G Elliot Smith, London, 1946)
६ Le' Humanite Prehistorique (J de Morgan)

अध्याय ३

लौहयुग (७०० ई० पू०)

ईसा-पूर्व द्वितीय सहस्राब्दी मे पित्तल-युग मे पहुँचने पर भौगोलिक तौर से हमे शको और आर्यों का भेद स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इस समय शक यक्सर्त नदी (सिरदरिया) और अरालसमुद्र से उत्तर रहते थे। उनके दक्षिण मे आर्यों का निवास था। सुग्ध (जरफशाँ-उपत्यका), ख्वारेज्म (ख्वारेज्म) से लेकर पहले हिन्दूकुश और खुरासान के पर्वतो तक और थोड़े ही समय बाद फारस की खाडी और सिन्धु तथा गगा के कछारो तक आर्य पहुँच गये। ग्रीक-इतिहासकारो के अनुसार, हम यह भी जानते हैं कि दुनाई (डेन्यूब) से तियेनशान तक फैली घुमन्तू जाति को शक, स्कुथ अथवा सिथ कहते थे।[1] ग्रीक और उसका अनुसरण करनेवाली अँगरेजी-भाषा मे उसका चाहे कितना ही बुरा अर्थ हो, किन्तु शक शब्द मे ऐसा कोई बुरा भाव नहीं है। ग्रीक-लेखको के अनुसार, शक लोग अपने को स्कोल या सकोल कहते थे। दारयोश ने अपने बहिस्तून के अभिलेख मे उन्हें शक नाम से पुकारा है। भारत भी ईरान की इस राय से सहमत है। बहुत-से लेखक कालासागर के उत्तर मे रहनेवाले सिथियो और सिरदरिया के उत्तर मे घूमनेवाले शको मे अन्तर करना चाहते हैं। इतने दूर तक फैले हुए घुमन्तू जन मे कुछ स्थानीय भेद हो सकता है, लेकिन इससे उन्हे हम अलग नहीं मान सकते। ग्रीक-इतिहासकार ई० पू० ५वीं शताब्दी मे भी यह मानने के लिए तैयार थे कि कालासागर से सिरदरिया तक के घुमन्तुओ मे रीति-रिवाज, खान-पान और वस्त्र-भूषा मे अन्तर नहीं था। उनके हथियार भी एक तरह के होते थे। दोन नदी को पूर्वी और पश्चिमी शको की सीमा माना जाता था।

१. शकद्वीप

यूरेसिया द्वीप मे एक समय दुनाइ (डेन्यूब) से तियेनशान-अल्ताई (पर्वत-श्रेणी) तक फैली शकजाति की भूमि को हम पित्तल-युग के आरम्भ मे भारतीय परिभाषा के अनुसार, शकद्वीप कह सकते हैं, पुराने ईरानी शब्दानुसार शकानवेइजा या पीछे की भाषा के अनुसार शकस्तान भी कह सकते हैं। लेकिन, ई० पू० द्वितीय शताब्दी मे शको के बस जाने के कारण ईरान के पूर्वी भाग को शकस्तान या सीस्तान कहा जाने लगा। इस भाग को हम आदि-शकस्तान कह सकते हैं, इसी परिभाषा के अनुसार हम अराल और सिरदरिया के दक्षिण की भूमि को आर्यद्वीप, आर्यानवेइजा या आर्यस्थान कह सकते हैं। पीछे अवेस्ता मे

---

१ 'अल्ताई व् स्किफस्कोये व्रेमिया' (स० व० किसेलेफ), वेस्तिक द्रेव्नेइ इस्तोरिइ, सन् १९४७ ई०, पृ० १५७–७२, क्रत्किये सोओब्श्चेनिया, XIII, p 112 मे बेर्नश्तम का लेख भी उसी विषय पर। इसका समर्थन पुन बेर्नश्तम ने किया है . 'इस्तोरिको-कुल्तुर्नोये प्रोश्लोये सेवेर्नोइ किर्गिजिइ पो मतेरिलियाम् बोल्शवो चुइस्कवो कनाला' में (फ्रुन्जे, सन् १९४३ ई०)

आर्यानवेइजा एक छोटा-सा प्रदेश था, जिसे आधुनिक इतिहासकार कभी खुरासान, कभी वाह्लीक (वाख्तर), आजुर्वाइजान या कभी ख्वारेज्म मानते है। इसलिए, भ्रम से बचने के लिए हम इसे आर्यद्वीप ही कहे, तो अच्छा।

शकद्वीप और आर्यद्वीप का यह भेद बहुत दिनो तक नही चला। हूणो के प्रहार से १७४ ई० पू० से ही शक पूरब के शकद्वीप को छोडने के लिए मजबूर हुए और अगली पौने छह शताब्दियो मे शको को छिन्न-भिन्न करते हुए हूण और उनके वशज डेन्यूब के तट तक पहुँच गये। उनके इस महाभियान के कारण ईसा की चौथी शताब्दी मे पूर्वी शकद्वीप हूणद्वीप के रूप मे परिणत हो गया, और दोन नदी से पश्चिम के शकद्वीप मे भी काला-सागर के करीब बसनेवाली गाथ और सरमात (शक-वशज)-जातियो को अपने पुराने स्थानो को छोडकर उत्तर या पश्चिम मे भागना पडा। हम यह भी जानते हैं कि पूर्वी शकद्वीप को पूर्णतया खाली करने का ही परिणाम हुआ—ग्रीक-वाख्तर-राज्य का ध्वस, भारत मे ग्रीक (यवन)-राज्य का विनाश और भारत के राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन पर शको की स्थायी छाप।

शको और आर्यो का भेद आपस मे चाहे कितना ही हो, किन्तु विशाल हिन्दू-यूरोपीय वश पर विचार करने से वह भेद बहुत नगण्य-सा है। मध्य-पाषाणयुग के अन्त अथवा नव-

पाषाणयुग के आरम्भ मे, जब प्रकृति के प्रकोप तथा फिनो-द्रविड (मोहनजोदडो) जाति के प्रहार के कारण हिन्दू-यूरोपीय जनगण मध्यएसिया छोडकर यूरोप की ओर जाने के लिए मजबूर हुआ, उस समय अभी उनके भीतर केन्तम् और शतम् वाला भाषा-भेद हुआ था

और न शकार्य तथा पश्चिमी हिन्दू-यूरोपीय का ही भेद। ग्रीक, रोमक, गाथ, केल्ट आदि के सम्मिलित जनगण का कोई एक नाम निश्चित न होने से हम उसे पश्चिमी हिन्दू-यूरोपीय जनगण कहते हैं। मध्यएसिया से हिन्दू-यूरोपीय जनो का यूरोप मे जाना सभी स्वीकार करते है, और इसमे भी सहमत हैं कि वह नव-पापाणयुग मे हुआ। नव-पापाणयुग की एक विशेपता है कृपि, लेकिन कृपि के हथियारो और धान्यो के लिए एक प्रकार की शब्दावली हम केन्तम् और शतम् भापाओ मे नही पाते। केन्तम् की वात तो दूर, शतम्-भाषाओ मे भी कृपि-सम्वन्धी एक तरह के शब्द नही मिलते। इससे यह कहना उचित नही जँचता कि नव-पापाणयुग मे हिन्दू-यूरोपीय मध्यएसिया से पश्चिम मे गये, शतम् और केन्तम् का भेद हुआ तथा शक और आर्य दो स्वतन्त्र जनो मे विभक्त हुए। यदि हम नव-पाषाणयुग से पहले इन विभाजनो को मानें, तो भापाशास्त्र के अनुसार इसमे कोई हरज नही पडता, किन्तु काल के अनुसार वहुत लम्वा समय भापाओ के परिवर्त्तन के लिए देना पडता है। इस शतम्-केन्तम् और शक-आर्यभेद के समय को निर्धारित करने के लिए शायद मध्यएसिया की मरुभूमि इतिहासवेत्ताओ की सहायता करे।

उपर्युक्त आर्यद्वीप मे भूमध्यीय जाति चली आई, यह अनौ (दक्षिणी तुर्कमानिया) और ख्वारेज्म की पुरातात्त्विक खोजो से सिद्ध है, किन्तु शकद्वीप मे भूमध्यीय जाति का कोई इस तरह का हस्तक्षेप नही दिखाई पडता। मध्य-पापाणयुग हो या नव-पापाणयुग, इसी समय पश्चिम की ओर भागे हिन्दू-यूरोपीय जनगण की शाखा शकार्य मध्यएसिया मे पहुँचकर फिर से अपना द्वीप कायम करने मे सफल हुई। यहाँ आर्यों का सम्पर्क उसी भूमध्यीय जाति से हुआ, जिसकी समुन्नत सस्कृति के अवशेप सिन्धु-उपत्यका और मेसोपोतामिया मे मिलते हैं। इस सम्पर्क के कारण आगे वढने मे वहुत सहायता मिली और आर्य जल्दी-जल्दी पित्तल-युग को पार कर लौहयुग मे पहुँच गये। एक सम्पर्क के अभाव के कारण शकद्वीप के शक सामाजिक विकास मे उतने नही वढ सके। ई० पू० छठी-पाँचवी शताव्दी मे, जवकि आर्यों के स्थान मे लोहे का खूव प्रचार था, शकलोग अभी पीतल की ही तलवारो, वाण और भाले के फलो को इस्तेमाल करते थे। दारयोश की सेना मे सम्मिलित ग्रीक लोगो से लडते इन शक-सैनिको के वारे मे लिखते हुए ग्रीक-इतिहासकार कहते हैं कि उनके देश मे चांदी और लोहा नहीं होता, इसलिए इन धातुओ का प्रचार उनमे नही है, साथ ही सोने और तांवे की वहुतायत है, इसीलिए वह हथियारो के लिए पीतल और सौन्दर्य के लिए सोने का मुक्तहस्त ही उपयोग करते हैं। इस समय के पीछे तथा हूणो के प्रहार से पहले ही काल्सागर के तट पर रहनेवाले शक भी पशुपाल घुमन्तू जीवन को पूर्णतया या अंशत. छोडकर कृपिजीवी ग्रामवासी वन गये। शकद्वीप का सारा पूर्वी भाग तवतक अपने पशुपाल-घुमन्तू जीवन को छोडने के लिए तैयार नही हुआ, जवतक कि हूण शको को इस भूमि से भागने मे समर्थ नही हुए। ई० पू० १२८ मे चीनी सैनिक-पर्यटक चाडक्यान् जव उनके केन्द्र वाख्तर मे पहुँचा, तव एक विशाल वैभवशाली राज्य के स्वामी होने के वाद भी अभी शको को उसने तम्वुओं मे रहते और अपने घोडो और भेडो को जगह-जगह चराते-घूमते देखा, अर्थात् अव भी वह अपने पुराने जीवन से चिपके रहना चाहते थे। स्थायी निवासियो को

लडाकू घुमन्तू जातियाँ आम तौर से डरपोक कहकर घृणा की दृष्टि से देखती है। डरपोक न होने देने के लिए तैमूर विश्वविजेता बनने के बाद तथा नवीन समरकन्द जैसी बडे-बडे प्रासादो की नगरी का सस्थापक होते हुए भी घुमन्तू जीवन का अभिनय करता था। यह अभिनय बिलकुल बेकार की चीज नही थी। वस्तुत, घुमन्तू जीवन युद्ध के लिए सदा तैयार सैनिक जीवन जैसा है। अन्तर इतना ही है कि सैनिक जहाँ घूमने के लिए स्वतन्त्र होने पर भी स्त्री और बाल-बच्चो के सम्बन्ध से वचित रहता है, वहाँ घुमन्तू का सारा परिवार (नर-नरियो और बच्चे-बूढो सहित सारा जन) सेना का अभिन्न अग होता है। वह जैसे आक्रमण के लिए एक क्षण की सूचना मे तैयार हो सकता है, वैसे ही सैनिक आवश्यकता पडने पर भागने के लिए भी तैयार हो सकता है। घुमन्तू विजेता को जहाँ शत्रु के समस्त नगर और गाँव लूटपाट के लिए खुले मिलते है, वहाँ उनपर विजय प्राप्त करनेवाले नागरिको को कुछ भी हाथ नही आता। यही कारण है कि घुमन्तू लोग सहस्राब्दियो तक अजेय साबित हुए। चीन ने हूणो को बार-बार मार भगाते जब सफलता नही पाई, तब अपनी प्रतिरक्षा के लिए महादीवार खडी की। कुरव महान् मसागेत घुमन्तुओ के साथ लडते-लडते मारा गया। उसके उत्तराधिकारी दारयोश को भी ५१३ ई० पू० मे पश्चिमी शको पर आक्रमण करके पछताना पडा। ग्रीक-लोगो का तजुर्बा इससे बेहतर नही था।

२. शक

घुमन्तू जीवन मे जहाँ सैनिक और राजनीतिक दृष्टि से कितने ही सुभीते है, वहाँ सामाजिक और सास्कृतिक दृष्टि से यह घाटे का सौदा है। दूसरी जातियो के लौहयुग मे चले जाने के बाद भी शको का पित्तल-युग मे पडा रहना सामाजिक गतिरोध ही था। हम जानते हैं, सामाजिक विकास के अनुसार भाषा का विकास होता है। शक-भाषा के बहुत कम ही नमूने हमारे पास तक पहुँचे हैं, और जो पहुँचे भी हैं, ईसवी-सन् के आरम्भ होने के बाद के हैं। लेकिन, शको के उत्तराधिकारियो की भाषा देखने से मालूम होता है कि उनकी भाषा जो विश्लेषात्मक न होकर सश्लेषात्मक ही रह गई, उसका कारण पूर्वजो का सामाजिक गतिरोध था। भारतीय आर्यो की भाषा मे परिवर्त्तन भारत मे आते ही होने लगा, जबकि अपने सारे शतम्-वश मे अपरिचित टवर्ग का 'ऋग्वेद' तक मे प्रयोग होने लगा। हमारी भाषा मे मौलिक परिवर्त्तन (सश्लेषात्मक से विश्लेषात्मक होना) जहाँ ईसा की छठीं-सातवी शताब्दी मे हो चुका, वहाँ शको के आधुनिक वशज स्लावो (रूसी आदिजातियो) की भाषा आज भी सश्लेषात्मक है। उसमे क्रिया तथा शब्द के रूपो मे प्रत्यय संस्कृत की भाँति अभिन्न अग के तौर पर प्रयुक्त होते हैं और सहायक क्रियाओ का उपयोग आज भी नही देखा जाता। इससे उनमे यह विशेषता देखी जाती है कि भाषा के ढाँचे की दृष्टि से स्लाव-भाषाएँ सस्कृत से जितनी नजदीक है, उतनी हमारे यहा की कोई भी जीवित भाषा नही है।

दारयोश एक आर्यराजा था। उसने ५१३ ई० पू० मे यूरोप के भीतर से काला-सागर के किनारे-किनारे उत्तर मे बर्बर शको के ऊपर असफल आक्रमण किया था। ग्रीक-

इतिहासकारो द्वारा उद्धृत शक-परम्परा के अनुसार इस आक्रमण से १००० वर्ष पूर्व वह शको का प्रथम राजा हुआ था। इसमे सन्देह है कि जबतक शको की भूमि मे शक रहे, तबतक कोई उनका वास्तविक राजा हुआ होगा। शक घुमन्तुओ के सरदार या नेताओ को भी दूसरो की देखादेखी राजा माना गया होगा। शको मे स्त्रियो का विशेष स्थान था, बल्कि ई० पू० चौथी-पाँचवीं शताब्दी मे दोन से पूर्व रहनेवाले शक जनगण का नाम सरमात या सर्वमात इसलिए पडा था कि उनमे माता (स्त्री) सर्वेसर्वा होती थी। स्त्रियाँ मृत जन— पति का स्थानापन्न ही नही होती थी, बल्कि वह सेना-सचालन भी करती थी।

इतिहास के आरम्भ मे शको मे, जो रीति-रिवाज, वेष-भूषा देखी जाती थी, वह बहुत पुराने काल से चली आई थी। चीनी और ग्रीक दोनो लेखक इस बात मे सहमत है कि शको का मुख्य भोजन मास और मुख्य पान दूध था। मास के साथ ताजा खून पीना भी उनमे प्रचलित रहा होगा, तभी तो युद्ध मे प्रथम गिरे शत्रु का गरम-गरम खून वह पाण्डव-भीम की तरह पीते थे, शत्रु-सरदार की खोपडी का कटोरा बनाकर बडी सावधानी से रखते थे। ये दोनो प्रथाएँ हूणा मे भी देखी जाती है, यद्यपि वह मगोलायित थे। चगेज खान के मगोल-सैनिको के इतने सफल होने मे एक कारण उनका घोडा था, जिसपर चढकर बाण चलाते हुए वह जहाँ युद्ध कर सकते थे, वहाँ आवश्यकता पडने पर घोडे की नस मे छेदकर उसके खून से भूख को शान्त कर फिर लडने के लिए ताजा हो जाते थे। विवाह-प्रथा शको मे बहुत प्रारम्भिक रूप मे थी। कई भाइयो की एक स्त्री हो सकती थी और स्त्रियो के एक समूह का पुरुषो का एक समूह पति समझा जाता था, अर्थात् यूथ-विवाह उनमे प्रचलित था। किसी सरदार के मरने पर उसकी एक पत्नी को अवश्य कब्र मे अपने पति का साथ देना पडता था। मिस्री सामन्तो की तरह शको मे भी शवक्रिया बडी शान से सम्पन्न होती थी। मृत सरदार के साथ उन सभी चीजो को कब्र मे रख दिया जाता था, जिनकी उसे जीवन मे जरूरत पडती थी। सभी तरह के हथियार, आभूषण, खान-पान की चीजें और घोडो को ही कब्र मे नही रखा जाता था, बल्कि दास-दासियो को भी स्वामी के साथ जाना पडता था। पुराने शको मे मुरदे (विशेष कर सामन्त के मुरदे) को दफनाने का रिवाज था। उनकी कब्रें काकेशस के उत्तर मे मिली हैं, और अल्ताई भी उनसे खाली नहीं है। साधारण कब्रो मे भी खानपान-सहित बरतनो का रखा जाना आवश्यक समझा जाता था। यह प्रथा शक की एक शाखा खसो मे ईसवी-सन् के आरम्भ से पीछे तक भी पाई जाती थी, यह लद्दाख से कुमाऊँ तक मिलनेवाली खस-समाधियो से सिद्ध है। दफनाने के अतिरिक्त शक मुरदे को पेड के ऊपर टाँग देते थे, जिसमे पक्षी मास खा जायें। उसके बाद हड्डी को इकट्ठा करके गाड दिया जाता था। पारसियो में अब भी इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता है, और वृक्ष की जगह दख्मा मे शव को गिद्धो द्वारा खाने के लिए छोड दिया जाता है। यूनानी लेखको से यह भी मालूम होता है कि पक्षियो के लिए छोड देने की जगह कभी-कभी मनुष्य अपने हाथो से मृतक के मास को हड्डी से अलग कर देता और इस तरह बिना चिर प्रतीक्षा के ही हड्डी को दफनाने का मौका मिल जाता था। मुरदा दफनाने के साथ-साथ शको मे मुरदा जलाने का भी रिवाज था। उस समय पत्नी को साथ भेजने के

लिए जिन्दा जलाने की जरूरत पडती थी। आठवी और नवी शताब्दी मे, जबकि रूसी लोग अभी ईसाई नही हुए थे, उनमे सती-प्रथा मौजूद थी, जिसे एक अरब पर्यटक ने अपनी आँखो देखा था। भारत मे सती-प्रथा का रिवाज शको के आने के साथ हुआ।

शको की पोशाक सारे यूरेसिया द्वीप मे एक-सी थी। उनके सिर पर एक नुकीली टोपी होती थी, जो शक-सिक्को से मथुरा और अमरावती की दूसरी-तीसरी शताब्दियो तक की मूर्त्तियो मे भी पाई जाती है। पैरो मे पायजामा और देह पर लम्बा चोला, साथ ही घुटने या उसके पास तक पहुँचनेवाला चमडे या नम्दे का बूट उनकी विशेष पोशाक थी। कमर में कमरबन्द के साथ सीधी लम्बी तलवार लटका करती थी। उनकी लम्बी नाक और भूरे बालो का चीनी लेखकों ने विशेष तौर से उल्लेख किया है। सस्कृत के लेखको ने शको, यवनो, पह्लवो और बाह्लीको को रक्तमुख कहा है। शक-सुन्दरियाँ अपने सौन्दर्य के लिए भारत मे अधिक विख्यात थी। हमारे वैद्यो ने उनके सौन्दर्य का कारण प्याज अधिक खाना बतलाया है। वाग्भट ने अपने 'अष्टागहृदय' (उत्तरतन्त्र) मे लिखा है

'यस्योपयोगेन शकाङ्गनाना लावण्यसाराविविनिर्मितानाम्।'

शको के परम देवता सूर्य थे, इसका पता ग्रीक-पुस्तको से ही नही मिलता, बल्कि भारत मे शको जैसी बूटधारी सूर्य-प्रतिमाओ का व्यापक प्रसार तथा ईसाई-धर्म स्वीकार करने

से पहले रूसियो की सूर्य मे एकान्त भक्ति भी इसी बात को बतलाती है। सूर्य के अतिरिक्त, 'दिवु' शको का पूज्य देवता था, जो कि वैदिक 'द्यौ' और ग्रीक 'जेउस' है। 'अपिया' (आप्या) के नाम से पृथ्वीमाता पूजी जाती थी। सूर्य को वह 'स्वर्गिवु' कहते थे, जिसमे

र के स्थान मे ल के साथ शको के अत्यन्त प्रेम को हटा देने पर 'सूर्य' शब्द साफ दिखाई पडेगा। स्वलियु देवता दिवु पिता और अपिया माता का (द्यावापृथिवी) पुत्र था। 'पक' भी एक प्रधान देवता था, जो वेद मे भग, ईरानी मे 'वग' (वगदाद=भगदत्त) और रूसी मे 'बोग' के रूप मे मौजूद है। राजा या वडे सरदार को शकलोग 'पकपूर' कहते थे, जोकि 'भगपूर' (भगपुत्र) का ही रूपान्तर है। फारसी और अरवी मे चीन के सम्राट् को 'फगफूर' कहा जाता है, जो कि इसी 'पकपूर' से निकला है। चीनी-सम्राट् देवपुत्र (स्वर्गपुत्र) कहे जाते थे, यह हमे मालूम ही है। चन्द्रमा देवता को शकलोग 'अरतिम्पत' (अर्थी पति) कहते थे। 'वृन्दू' भी उनकी एक देवी थी और 'थमी-मसद' तथा 'विरोपत' (वीरपति) उनके देवता थे। शक-भाषा के पुराने नमूने बहुत ही कम मिले हैं। उनमे से कुछ इस प्रकार हैं[1]

तविती=अग्नि	स्वलियु=सूर्य
शक=शक	पर्थ=पृथक्कृत
जरिना=हरिना	कनग=राजा (रूसी कन्याग)
महकनग=महाराजा	तवितवरू=जनपाल
तमूरी=समुद्रीय (रानी)	स्परोत्र=स्वरएथ्

●

१ Les Scythes, p 539

स्रोतग्रन्थ :

१ Les Scythes (F G Bergmann, Halles, 1860)
२. वेस्लिक द्रेव्नेइ इस्तोरिइ, सन् १९४७ ई०
३ क्रत्कि० सोओव्०, XIII

भाग ३

उत्तरापथ (६०० ई० पू० से ७०० ई०)

अध्याय १

शक (६००-१७४ ई० पू०)

§१. शक-जातियाँ[1]

हम देख चुके है, ई० पू० तीसरी सहस्राब्दी से प्रथम सहस्राब्दी के प्राय मध्य तक सप्तनद और अल्ताई मे क्रमश अफनास (२५००–१७०० ई० पू०), अन्द्रोन (१७००–१२०० ई० पू०), करासुक (१७००–८०० ई० पू०) और अन्तिम के समकालीन मिनिसुन जातियाँ रहती थी। कोई प्रमाण नही है कि ये लोग शको के पूर्वज छोड किसी दूसरी जाति के थे। ईसा-पूर्व सातवी शताब्दी मे हम उत्तरी मध्यएसिया मे शक-जातियो का प्रसार यथानिर्दिष्ट रूप मे पाते हैं १ दोन से पूरब कॉस्पियन के उत्तर होते अरालसमुद्र और यक्सर्त (सिरदरिया) के मध्य तक मसागित-जाति का विस्तार था, अरालसमुद्र के पास यह जाति निम्न वक्षु-उपत्यका मे, अर्थात् ख्वारेज्म मे भी फैली हुई थी। इसके दक्षिण मे कॉस्पियन के किनारे दहा घुमन्तू शक-जाति थी, जिसने पीछे पार्थ-जाति को जन्म दिया। मसागित से पूरब यक्सर्त की ऊपरी उपत्यका के उत्तरी भाग, तरिम नदी और इस्सिकुल तक शकरौका (प्राग्-सइवङ) जाति रहती थी। सइवङ-जन पीछे इसी से निकला। अल्ताई मे उस समय प्राग्-वूसून जाति थी, जिसके पीछे वूसून-जन पैदा हुआ। इससे पूरब ह्वाङ-हो नदी के पास कान्सु तक यूची-जन के पूर्वज रहते थे। तरिम-उपत्यका या सिङकियाङ मे शको की ही एक शाखा खश रहते थे, जो ई० पू० सातवी सदी से पहिले ही कराकुरम-गिरिमाला को पार कर गिल्गित और कश्मीर मे फैल गये थे। फिर, आगे चलकर उन्होने नेपाल तक सारे हिमालय को खशभूमि बना दिया। ये सारी शक-खश जातियाँ ई० पू० ५वी सदी तक पित्तल-युग मे थी। दारयोश के अभिलेख मे तिग्राखौदा, हौमवर्क और त्याई नाम के तीन शकजनो का पता लगता है, किन्तु उनके स्थान के बारे मे कुछ कहना मुश्किल है। मसागित के पूरब मे शकरौका का विचरण-स्थान सप्तनद का पश्चिमी भाग था। ये जातियाँ अभी प्रागैतिहासिक काल मे विचर रही थी। इनके बारे मे ग्रीक और ईरानी लोगो ने जो कुछ वर्णन किया है, उसके अतिरिक्त और पता नही लगता। इनमे से कुछ जातियो के बारे मे निम्नांकित बातें मालूम होती हैं

१. मसागित[2]. मसागित शब्द मसाग या महाशक से निकला है। सचमुच ही, उस समय यह शकजनो मे सबमे बडा जन था। दोन से यक्सर्त नदी के मध्य तक तथा खवारेज्म मे फैले ये महाजन महाशक कहे जाने के अधिकारी थे। इनका सबसे प्रिय हथियार कुल्हाडा था। दूसरे शको की तरह ये घोडे पर चढकर तीर का निशाना लगा सकते थे।

१. Les Scythes

२ उपरिवत्, पृ० ५४०

तीर और भाले के फल ही नही, इनके कुल्हाडे और लम्बी सीधी तलवारे भी पीतल की होती थी। पशुओ का मास और दूध इनका मुख्य भोजन था। तम्बू के डेरो को छोडकर कोई इनका स्थायी निवास नही होता था। ये पक्के यायावर थे। इनकी स्त्रियाँ पुरुषो की भाँति युद्ध मे लडती थी और कितनी ही वार सेना का नेतृत्व भी करती थी। यद्यपि, महा-शक पुरुष अलग-अलग विवाह करते थे, किन्तु तो भी दूसरी स्त्रियो के साथ सम्बन्ध रखने की स्वतन्त्रता थी। इससे मालूम होता है कि अभी ये यूथ-विवाह से आगे नही वढे थे। वृद्ध-वृद्धाओ को मार डालने की प्रथा इनमे प्रचलित थी। एस्किमो लोगो मे अभी हाल तक वृद्धावस्था मे पहुँचने पर वुजुर्गों को मार डालने का आम रिवाज था, जिसका कारण उनका परिवार के ऊपर भारस्वरूप होना था। मसागित या महाशक जन के साथ अखामनशी (ईरानी) शासको का वरावर सघर्ष रहा, जिसके वारे मे हम आगे कहेगे। मसागित के पश्चिमी कवीलो को सरमात भी कहते थे। वल्कि कभी-कभी इस सारे कवीले का नाम मसागित-सरमात वतलाया जाता है। हम यह वतला चुके है कि स्त्रियो की प्रधानता के कारण ही इस कवीले का सरमात या सर्वमात नाम पडा। शायद यह यूनानियो का दिया हुआ नाम हो।

२ शकरौका महाशक जन से पूरव, किन्तु यक्सर्त नदी के उत्तर-उत्तर सप्तनद-भूमि के पश्चिमी भाग मे यह घुमन्तू जन पशुचारण करता था। शकरौका वस्तुत शक-ओक (शकस्थान) का ही परिचायक है। इनकी भूमि सोग्द के उत्तर मे थी। ये एक समय दारयोश प्रथम की प्रजा थे। इनके दक्षिण मे सोग्द लोग सोग्द (जरफशाँ) नदी से वक्षु नदी तक रहते थे। इनकी टोपी लम्बी नुकीली होती थी। कुछ विद्वानो का मत है कि शकरौका और शक-हौमवर्क एक ही थे। दारयोश के समय यह यक्सर्त नदी के दाहिने किनारे पर वसते थे, किन्तु ई० पू० द्वितीय सदी मे इनके ओर्दू खोजन्द की पश्चिमी पहाडियो मे रहते थे। यह भी सन्देह किया जाता है कि चीनियो ने जिन्हे सइवाङ लिखा है, वह वस्तुत यही शकरौका थे।

३ दाहे : ये सम्भवतः शकरौका और महाशक के वीच मे यक्सर्त नदी की पहाडियो के निवासी थे, जो पीछे कॉस्पियन के किनारे ईरान की सीमा तक पहुँच गये। चीनियो ने इनका नाम 'अनसी' वतलाया है। ये अच्छे घुडसवार धनुर्धर होते थे। इन्ही के एक कवीले पार्थी ने २४८-४७ ई० पू० मे मामूली राज्य स्थापित करके अन्त मे ईरानी ग्रीको के सारे राज्य को अपने कब्जे मे कर लिया।

४ खस : इस जन का ग्रीक या ईरानी स्रोतो से पता नही लगता। तालमी और दूसरे लेखको ने हिमालय के खसो का वर्णन किया है और हमारे लिए आज भी यह एक जीवित जाति है। गिल्गित-चित्राल मे कमकर, कश्मीर मे कश, काशगर मे ख़शगिरि और कश्मीर से पूरब नेपाल तक खस या खसिया जाति तथा नेपाली-भाषा का दूसरा नाम खसकुरा (खस-भाषा) यही वतलाते हैं। पित्तल-युग मे तरिम-उपत्यका इनका निवास थी। हूणो से भगाये जाने के वाद जवतक कि लघु-यूची इनकी भूमि मे छा न गये, तवतक सारी तरिम-उपत्यका खसभूमि थी।

५-६ वूसुन : यूची : इन दोनो शक-जातियो को आगे हम तियेनशान से ह्वाङ-हो तक देखेगे। जिस समय के बारे मे हम यहाँ लिख रहे हैं, उस समय चाहे जिस नाम से हो, इन्हीं के पूर्वज इस भूमि के स्वामी थे।

सारे उत्तरापथ के शक घुमन्तू पशुपाल थे, इसीलिए उनके अवशेषो मे गाँवो, गढों और मकानो का पता मिलना सम्भव नही है। लेकिन, घुमन्तू होने पर भी शक-सरदारो की कब्रें बहुत शान-शौकत से बनाई जाती थीं, जिनमे उनके उपयोग की कितनी ही सामग्री दफना दी जाती थी। ऐसी कब्रों से उनके बारे मे बतलानेवाली कितनी ही समाग्री प्राप्त हो सकती है।

§२. अल्ताई के शक[1]

सोवियत-पुरातत्त्ववेत्ताओ की खोजो से अल्ताई के शको के इतिहास पर पर्याप्त रोशनी पडती है। क० मोइसेवा ने अपने एक लेख मे लिखा है :

"साफ-सुथरी और बल खाती हुई सडक अधिकाधिक ऊँचाई पर चढती चली गई है। चट्टानी कगारों को पार कर मोटरो का एक दल इस सडक पर से आगे बढ रहा है। सोवियत-सघ की विज्ञान-अकादमी और देश के एक सबसे बडे म्यूजियम लेनिनग्राद एर्मीतिज ने पाजीरिक घाटी मे पुरातत्त्व-सम्बन्धी खोज का सगठन किया है। पश्चिमी साइबेरिया में अल्ताई पहाडो के बीच स्थित यह स्तपीय घाटी चालू पथो और बस्तियो से बहुत दूर है।

ऐसा मालूम होता है, मानो अल्ताई-पहाडो का सारा सौन्दर्य पाजीरिक घाटी के इस रास्ते मे केन्द्रित हो गया है। सदा मौजूद रहनेवाली बरफ से ढकी पहाडी चोटियाँ नीले आसमान की पृष्ठभूमि मे बहुत भली लगती हैं। निस्तब्ध जगलो के बाद चरागाहो की ताजा हरियाली आँखो के सामने आती है। कातूना नदी का हरा पानी धीमी गति से घाटी से बहता पहाड के कगार पर पहुँचता है। वहाँ से वह जब नीचे गिरता है, तब फुहारो के सिवा और कुछ नही दिखाई देता। नदी के किनारे भेडो के रेवड, ढोर तथा घोडो के दल चरते रहते हैं।

यह एक समृद्ध और सुन्दर प्रदेश है।

मोटरें इस समय चिवित दर्रे से गुजर रही हैं, फिर पाजीरिक घाटी से जानेवाली घूमती हुई सडक पर मुड जाती हैं। शोध-दल के मुखिया प्रोफेसर रुदेन्को और उनके सभी साथी खुदाई-स्थल पर पहुँचने और अपना काम शुरू करने के लिए उत्सुक हैं। उन्हे पाँच बडे पाजीरिक टीलो की खुदाई का काम पूरा करना है। दो की खुदाई और पुरातत्त्वविदो द्वारा उनका अध्ययन हो चुका है। प्राचीन शको के जीवन और रीति-रिवाजों के बारे में यहाँ से अत्यधिक मूल्यवान् सामग्री मिली है।

आखिर, महाउलगान नदी के पानी पर सूरज की किरणो की चमक दिखाई देती है। इसके एक बाजू भीमाकार कगारो के समूह से घिरी एक तलहटी है। यहीं पाजीरिक

१. 'सोवियत-भूमि' (दिल्ली, सन् १९५८ ई०)

घाटी है। इसके रहस्यमय दिखाई पडने का कारण शायद यह है कि यहाँ कोई नही रहता। यहाँ इसलिए कोई नही रहता कि घाटी मे पानी का एकदम अभाव है। यहाँ पानी कई किलोमीतर दूर से लाना पडता है।

पुरातत्त्वविदो के कैम्प के साथ निस्तब्ध घाटी मे मानवीय आवाजो तथा हथौडियों, कुदालों और लट्ठो की ध्वनियाँ गूँजने लगती हैं। टीलो की बगल मे तम्बू लग जाते हैं और अलावों का धुआँ उठने लगता है। खनक मुरदों के प्राचीन टीलो पर से पत्थरो को हटाने लगते हैं।

टीलो पर छाई मिट्टी और लट्ठो के साफ हो जाने पर सामने बडी चतुराई से बने लकडी के तहखाने का दृश्य आ जाता है। यह तहखाना एक बडे घर के समान मालूम होता है, सिवा इसके कि उसमे दरवाजे या खिडकियाँ नहीं हैं।

तहखाने को खोला जाता है, लेकिन कुछ दिखाई नही देता। हर चीज पर बरफ की मोटी तह जमी है। टीले पर से कुछ भी हटाना कठिन है। चिर-आच्छादक बरफ ने तहखाने और उसके भीतर की चीजो को हजारो सालो से सुरक्षित रखा है।

क्यो टीलो की प्रत्येक चीज बरफ-बन्द दिखाई देती है? विद्वान् एक मुद्दत से इस सवाल मे दिलचस्पी ले रहे है। अल्ताई पहाडो की भूमि सदा बरफ से जमी नही रहती। फिर भी, चट्टानी टीलो के नीचे उसे अक्सर वैसा देखा गया है। पूरी खोजबीन के बाद विद्वान् इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि टीलो मे बरफ का चिर-जमाव कृत्रिम रूप से पैदा किया गया है। उनका कहना है कि टीलो का पतझड मे निर्माण किया गया होगा, ताकि नमी और पाला टीलो मे प्रवेश कर प्रत्येक चीज को बरफ से ढक दे। गरमी के दिनो मे तहखानो पर स्थित चट्टानो के कारण धूप उनमे प्रवेश नही कर पाती और बरफ के पिघलने की नौबत नही आती। इस प्रकार, बरफ दीर्घकालीन युगों तक—पुरातत्त्वविदो द्वारा टीलो की निस्तब्धता के भग होने तक—जैसी-की-तैसी बनी रही।

अब समस्या यह थी कि टीलो से चीजो को कैसे हटाया जाय। इसका एक ही तरीका था कि बरफ को गरम पानी से धीरे-धीरे पिघलाया जाय। बरफ के पिघलने पर पुरातत्त्वविदो की आँखो मे चमक दौड गई। कितनी अप्रत्याशित निधि यहाँ जमा थी? कारु-कार्य युक्त चमडे की चीजें, रेशम और फर से बने महिलाओ के समूचे कपडे और प्राचीन योद्धाओ के सिर पर पहनने के कवच। शोध-दल की कलाकार वेरा सुन्त्सोवा ने तुरन्त इन चीजों के चित्र बनाने शुरू कर दिये, ताकि चमडे, फर और फैल्ट से बनी इन चीजो के सजीव रगों का रिकार्ड रह सके। बरफ के चिर-जमाव ने अबतक उन्हे अपने असली रूप मे पूर्णतया सुरक्षित रखा था। लेकिन, कौन जाने अब, प्रकाश मे आने के बाद भी, उनकी पहलेवाली शोभा बाकी रह सकेगी?

पुरातत्त्व के इतिहास मे ऐसी एक भी मिसाल नही मिलती, जहाँ हजारों साल पुरानी, चमडे, फर, कपडे या फैल्ट की चीजें सही-सलामत अवस्था मे उपलब्ध हुई हो। मिस्र के राजो के समाधि-स्थानो मे अनेक सुन्दर चीजे मिली थी। लेकिन, वहाँ के महीन कपडो और

चमडे तथा लकडी की चीजो को जैसे ही वाहर निकाला गया, वे पुरातत्त्वविदो के हाथ का स्पर्श पाते ही राख का ढेर हो गई और उनके चित्र तक नही लिये जा सके। लेकिन, यहाँ सभी चीजें इतने अच्छे ढग से सुरक्षित थी कि वे आज भी उतनी ही मजवूत और सुन्दर दिखती थी, जितनी कि पहले,—लगता था, जैसे उन्हे अभी-अभी वनाया गया है।

दृढ देवदार से वनी शव-पेटिका इतनी भारी थी कि उसे विना अलग-अलग किये बाहर निकालना असम्भव था। सबसे पहले मजवूती से फिट किये हुए ऊपर के ढक्कन को हटाया गया। पुरातत्त्वविदो की नजर अल्ताई के प्राचीन निवासियो के शरीरो पर टिक गई। वे इतनी अच्छी हालत मे थे कि लगता था, मानो उन्हे अभी कुछ ही दिन पहले शव-पेटिका मे रखा गया हो। उनकी सख्या दो थी—एक शक-सैनिक का शरीर, दूसरा उसकी पत्नी। सैनिक का रँग साँवला था और गालो पर हड्डियाँ अपेक्षाकृत ऊँची थी। स्त्री का चेहरा सफेद और छोटा तथा हाथ कमनीय था। दोनो शरीर मसाले से सुरक्षित थे।

पुरुष की छाती और कन्धो पर गोदना गुदा हुआ था, इसकी ओर ध्यान गया। विल्ली की भाँति मालूम होता परदार गिद्ध और एक हिरन वाज जैसी चोचवाला और विल्ली की एक लम्बी दुम का चित्र गुदा हुआ था। यह कल्पनातीत पेचीदा डिजाइन साँवली चमडी पर साफ नजर आता था। प्राचीन शको का ख्याल था कि इस तरह के गोदने क्रूर पिशाचो से उनकी रक्षा करते है और साहस तथा ऊँचे वश के सूचक है।

उपलब्ध चीजो की पूर्णतया जाँच करने, उनका वर्णन करने तथा चित्र वनाने मे कई दिन लग गये। इस वीच तहखाने मे भी काम होता रहा। प्रतिदिन अधिकाधिक आश्चर्यकर चीजो का पता लगता था। फैल्ट का एक वहुत वडा कालीन मिला। इसपर सम्पन्नता और समृद्धि की देवी का रगीन चित्र वना था, जो अपने हाथो मे जीवन का वृक्ष लिये थी। उसके सामने काले घुँघराले वालो से युक्त एक घुडसवार खडा था। कालीन के चारो ओर तेज रग के फूलो की किनारी थी। प्राचीन प्रथा के अनुसार घर की सवसे वढिया चीजो को भी मृत व्यक्ति के साथ दफना दिया जाता था।

नम्दे के वरावर मे ही एक मखमली कालीन भी मिला, जो वहुत ही मूल्यवान् सिद्ध हुआ। इसपर घुडसवारो, शेर के शरीर और वाज की चोचवाले विचित्र जन्तुओं और हिरन के चित्र वने थे। कालीन के डिजाइन से पुरातत्त्वविदो को शकयोद्धा के दफनाने की तिथि का पता लगाने मे मदद मिली। अल्ताई के मखमली कालीन पर अकित घुडसवार की छवि ईरान की प्राचीन राजधानी के खण्डहरो से मिली छवियो और मुहरो के डिजाइन से मिलती है। यह खण्डहर ईसवी-सन् से पूर्व छठी या पाँचवी शती के हैं, अर्थात् आज से २४०० या २५०० साल पुराने है।

टीलो मे चीनी कपडे भी निकले। एक प्राचीन चीनी आइना तथा अन्य कितनी ही चीजे मिलीं, जिनसे पता चलता है कि टीलो के निर्माण करनेवाले अल्ताई के प्राचीन लोग ईसा से पहले पाँचवी शती के निवासी थे।

अवतक हुई खुदाई से पुरातत्त्वविदो को यह मालूम हो गया कि कब्र की दीवार के पीछे उन्हे घोडे मिलेंगे। सचमुच, उन्होंने एक लकडी की दीवार देखी, जिसके पीछे चौदह

सुन्दर घोडे दफनाये हुए थे। ये सब-के-सब, अपने शानदार साज-सामान के साथ बहुत बढिया स्थिति मे सुरक्षित थे। लकडी पर नक्काशी के काम और सोने के पत्तर से सुसज्जित जीन, विविध रंगो से युक्त घोडे के लबादे और चीनी रेशम की बनी ओहारें—सभी बहुत सुन्दर थी।

घोडो के विशेषज्ञो को ऐसा मौका शायद ही मिलता है, जबकि उन्हें दो हजार साल से भी ज्यादा पहले मारे गये घोडो के सुनहरे ताम-झाम को अपने हाथ से स्पर्श करने का सौभाग्य प्राप्त हो। हाँ, मारे गये, क्योंकि ये घोडे युद्ध या किसी दुर्घटना मे पडकर नही, बल्कि योद्धा की कब्र मे दफनाने के लिए मरे थे।

पाजीरिक टीलो की अन्तिम निधियो को बक्सो मे पैक करने के बाद शोध-दल घाटी से विदा हो गया। प्राचीन शकों के मृत शरीरो को लेनिनग्राद के एर्मीतेज म्यूजियम के लिए रवाना कर दिया गया।

सोवियत-विज्ञान ने अल्ताई के टीलो के रहस्यो का उद्घाटन कर लिया। सुदूर अतीत को उन्होंने फिर से हमारे लिए मूर्त्त कर दिया। पाजीरिक घाटी से मिली चीजें उन लोगो के जीवन, धार्मिक विश्वासो और कला की कहानी हमे बताती हैं, जो किसी जमाने मे अल्ताई पहाडो मे रहते थे। इन्हें देखने से पता चलता है कि ये लोग चिरकाल से ही सस्कृति मे हीन तथा अविकसित नही थे। इन चीजो से पता चलता है कि शक-जाति के लोगो की सस्कृति ऊँची थी। ये चीजें प्राचीन शको के इतिहास मे एक नया पृष्ठ जोडने मे मदद देती हैं।"

●

स्रोतग्रन्थ .

१ Les Scythes (F G Bergmann)

२ 'आर्खेआलेगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिजिइ' (अ० न० बेर्नश्तम, फ्रु जे, सन् १९४१ ई०)

३ 'इस्तोरिको-कुल्तुर्नोये प्रोश्लोये सेवेर्नोइ किर्गिजिइ पो मतेरियलाम् बोल्शवो चुइस्कओ कनाला' (बेर्नश्तम, फ्रु जे, सन् १९४३ ई०)

४ 'अल्ताई व् स्किफस्कोये व्रेमिया' (म० व० किसेलेफ), 'वेस्निक् द्रेव्नेइ इस्तोरिइ', 1947, II, pp 157–72

५ ऋन्क० सोओव्०, XIII, p 112

६ 'सोवियत-भूमि' (दिल्ली, सन् १९५३ ई०)

अध्याय २

हूण (३०० ई० पू० से ३०० ई०)

शको के उनके मूलस्थान से निकालकर उस समय अपना अधिकार जमाना हूणो का काम था। यही नही, बल्कि मध्यएसिया के उत्तरापथ और दक्षिणापथ दोनो मे जो आज सभी जगह मगोलायित चेहरे देखे जाते हैं, यह भी हूणो का ही देन है। तुर्क हूणो से ही निकले और मगोल भी हूणो की ही सन्तान है।

१. प्राचीन हूण

शको की तरह हूण भी घुमन्तू पशुपाल थे। मध्यएसिया मे दोनो एक दूसरे के पडोसी थे। यूची के निकाले जाने से पहिले शकभूमि तियेनशान और अल्ताई से पूरव हूणो की गोचर-भूमि से मिल जाती थी। इसलिए, अन्तिम सघर्ष के पहिले भी इनका कभी-कभी आपस मे युद्ध या वस्तु-विनिमय के लिए सम्बन्ध हो जाया करता था। चीन के इतिहास से पता लगता है कि वहाँ पर भी धातुयुगीन सांस्कृतिक विकास मे पश्चिम से जानेवाली जाति का विशेष हाथ रहा। यह जाति शको से सम्बन्ध रखनेवाली थी, इसमे सन्देह नही। चीनियो के उत्तर मे रहनेवाले हूणो का भी यदि शको के साथ सम्बन्ध रहा और उनके द्वारा वह धातुयुग मे आये, तो कोई आश्चर्य नहीं। तातार और तुर्क ये दोनो शब्द हूणो के वशजो के लिए इस्तेमाल हुए हैं, लेकिन चीनी इस्तेमाल मे ईसा की दूसरी सदी के पूर्व 'तातार' शब्द का पता नही है, और पांचवी सदी के पहिले 'तुर्क' शब्द भी उनके लिए अज्ञात था। ग्रीक और ईरानी स्रोत जिस समय सूखने लगते है, उसी समय से चीनी स्रोत हमारे लिए खुल जाते हैं। शको के बारे मे चीनी इतिहासकारो ने बहुत कुछ लिखा है। लेकिन, अभी तक उसमे से थोडा ही यूरोप की भाषाओ मे आ सका है। रूसी विद्वानो का इस सामग्री को प्रकाश मे लाने तथा व्यवस्थित रूप से छानबीन करने का काम बहुत सराहनीय है। किन्तु, वह रूसी-भाषा मे बद्ध होने से हमारे लिए बहुत उपयोगी नही हुआ। नवीन चीन और सोवियत-रूस आज सारी शकभूमि के स्वामी हैं। वहाँ इतिहास के अनुसन्धान में जितनी दिलचस्पी दिखाई जाती है, उससे आशा है कि उनके बारे मे पुरातत्त्व-सामग्री तथा लिखित सामग्री से बहुत-सी बातें मालूम होगी। तियेनशान (किरगिजिया) मे नरीन् की खुदाई मे शको के विशेष तरह के बाण के फन तथा मिट्टी के गोल कटोरे और दूसरी चीजें भी मिली हैं। इस्सिकुल सरोवर के किनारे त्यूप स्थान मे भी इस काल की कुछ चीजें मिली हैं, जो कि मास्को के राजकीय ऐतिहासिक म्यूजियम मे रखी हुई हैं। कजाक-गण-राज्य के बेरकारिन स्थान मे निकली कब्र मे भी कुछ चीजें मिली है, जो पांचवीं-चौथी सदी ई० पू० की मानी जाती हैं। वहीं कराचोको (इली-उपत्यका) मे खुदाई करने पर शकों के पीतल के बाणफल मिले। ये मिनिसुन और उनके उत्तराधिकारियो से सम्बन्ध रखनेवाले हैं। शकजनो के पीतल के हथियार पूर्वी यूरोप (चेरतोम लिक) से बेकाल और मचूरिया की

सीमा तक प्राप्त है। इनकी गोचर-भूमि समय-समय बहुत दूर तक फैली हुई थी। डॉक्टर बेर्नश्तम तथा सप्तनद, अल्ताई और तियेनशान के प्राचीन इतिहास और पुरातत्त्व के विशेषज्ञ विद्वानो का कहना है कि ई० पू० छठी शताब्दी मे इस सारे इलाके मे घुमन्तू शकजनो का निवास था। यह भी पता लगा है कि शको ने कुछ खेती का भी काम सीखा था, तब भी वह प्रधानतया पशुपाल थे।[१]

चीन मे भी अपने इतिहास को बहुत अधिक प्राचीन दिखलाने का आग्रह रहा है, किन्तु चीन का यथार्थ इतिहास ई० पू० छठी सदी से शुरू होता है। उसके पहिले की सारी बातें पौराणिक जनश्रुतियो से अधिक महत्त्व नही रखती। चीन का प्रथम ऐतिहासिक राजवंश चिन (२५५–२०६ ई० पू०) है। इस वंश के संस्थापक चिन-शी-ह्वाङ-ती (२५५–२५० ई० पू०) ने बहुत-सी छोटी-छोटी सामन्तियो मे बँटे चीन को एक राज्य मे संगठित किया। इससे पहिले उत्तर के घुमन्तू हूण चीन को अपनी लूटपाट का क्षेत्र बनाये हुए थे। ये अश्वारूढ, मासभक्षक, कूमिशपायी लडाके बराबर अपने दक्षिण के चीनी गांवो और नगरो पर आक्रमण किया करते थे। इनकी सम्पत्ति घोडा, ढोर और भेडें थी, और कभी-कभी ऊँट, गदहे, खच्चर भी इनके पास देखे जाते थे। वर्त्तमान मगोलिया, मचूरिया तथा इनके उत्तर के साइबेरिया के भू-भाग इनकी चरभूमि थे। हूण कबीलो को चीनी ह्यूङ-नू कहते थे। तुर्क, किरगिज, मगयार (हुगर) आदि पीछे इनके ही उत्तराधिकारी हुए। ह्यूङ-नू के अतिरिक्त चीनी-इतिहास एक और भी घुमन्तू मगोलायित जन का पता देता है, जिन्हे तुङ-हू कहते थे। इन्ही के उत्तराधिकारी पीछे खित्तन (खताई), मचू आदि हुए। विशाल हूणजन के बहुत छोटे-छोटे उपजन थे, जिनके अपने-अपने सरदार हुआ करते थे। हमारे यहाँ तथा दूसरे देशो मे भी 'ओर्दू' (उर्दू) शब्द सेना का पर्याय माना जाता है। इन घुमन्तुओ मे एक पूरे जन—जिसमे उसके सभी नरनारी, बालवृद्ध सम्मिलित थे—को ओर्दू कहा जाता था। इनका शासन जनतान्त्रिक था, और सरदार को जन के ऊपर अपना स्वतन्त्र दरजा कायम करने का अधिकार नही था। हूण बच्चे जहाँ बचपन से ही पशुओ का चराना सीखते थे, वहाँ उसमे भी पहिले वह छोटी-छोटी धनुही से पहिले चूहे का शिकार करते, फिर सियार और खरगोश का। घोडे की नगी पीठ पर घुड़सवारी करना भी बचपन से ही इन्हें सिखाया जाता था और अधिक क्षमता प्राप्त करने पर वे घोडे पर बैठे-बैठे धनुष चलाने लगते थे। दूध और मास का भोजन तथा चमडे की पोशाक के लिए इन्हे अपने पशुओ के ऊपर निर्भर करना पडता था। ऊन के नम्दे भी ये बना लेते थे। जवानो, अर्थात् योद्धाओ का इनके यहाँ बहुत मान था, और खानपान मे सबसे पहिले उनकी ओर ध्यान दिया जाता था। बूढे और निर्बल सिर्फ जूठ-काँठ पाने के अधिकारी थे। मरे पिता की रखी या छोडी हुई स्त्रियो के पति बेटे हुआ करते थे। छोटे भाई की विधवा भी दूसरे भाई की पत्नी बनती थी। शको या इनकी स्थिति मे रहनेवाले दूसरे जनों की तरह लडाई मे पीठ दिखाकर भागना इनके यहाँ बुरा नही समझा जाता था, बल्कि वह युद्ध-कौशल का एक अग था। दया-माया

१ आर्खें० ओचेर्क०, पृ० २४-२५

की इनके यहाँ कम गुजाइश थी। इनके हथियार धनुष-वाण, तलवार और छुरे थे। साल मे तीन बार इनकी जनसभा होती थी, जबकि सारा ओर्दू एकत्रित होकर जहाँ धार्मिक और सामाजिक कृत्यो को पूरा करता, वहाँ साथ ही राजनीतिक और दूसरे झगडे भी मिटाता। वहुत-से सरदारो के ऊपर निर्वाचित राजा को शान्-यू कहा जाता था।

अन्दाज लगाया जाता है कि १४००–२०० ई० पू० तक चीन मे उत्तर के इन घुमन्तुओ की लूटपाट बराबर होती रहती थी। ईसा-पूर्व तीसरी शताब्दी मे शान्-शी, शेन्-शी, ची-ह्ली मे इनके ओर्दू विचरा करते थे। इसी समय ह्वाङ-हो नदी के मुडाव पर भी इनका ओर्दू रहा करता था, जिसके कारण आज भी उस प्रदेश को ओर्दुस् कहते हैं। चिन-शी-ह्वाङ-ती (२५५–२०६ ई० पू०) ने चीन के वडे भाग को एक राज्य मे परिणत कर सोचा कि हूणो की लूटमार से कैसे चीन की रक्षा की जाय। इसके लिए उसने चीन की महान् दीवार के कितने ही भाग को एक रक्षा-प्राकार के तौर पर निर्मित कराया और ओर्दू तथा शान्-शी आदि प्रदेशो मे घुस आये हूणो को निकालकर उत्तर की ओर भगा दिया। समुद्रतट से पश्चिम मे लन्चाउ तक की इस दीवार को वनाने मे पाँच लाख आदमी मर-मरकर वर्षो तक कोडो के नीचे काम करते रहे। निर्माण-काल से हजार वर्षों तक उत्तर के घुमन्तुओ और चीन का जो खूनी संघर्ष होता रहा, उसके प्रमाणस्वरूप लाखो खोपडियाँ दीवार के किनारे जमा होती गईं। चीन के उत्तर मे जहाँ हूणो से मुकाविला करना पडता था, वहाँ पश्चिम मे यूची-पूर्वज शक भी कम खून-खराबी नही करते थे।

२. हूण-राजावलि

१	तूमन शान्-यू	२५० ई० पू०
२.	माउदून, तत्पुत्र	१८३ ,,
३	ची-यू, तत्पुत्र	१७२ ,,
४	चू-चेन्, तत्पुत्र	१७२–१२७ ,,
५	इचिसे, तद्भ्राता	१२७–११७ ,,
६.	अच्वी	११७–१०७ ,,
७	चान्-सीलू	१०७–१०४ ,,
८.	शूली-हू	१०४–१०३ ,,
९	शूती-हू	१०३–९८ ,,
१०	हू-लू-हू	९८–८७ ,,

१ तूमन शान्-यू (२५० ई० पू०)[१] जिस समय चिन-वश के नेतृत्व मे चीन एकतावद्ध हो रहा था, उसी समय (२५० ई० पू०) हूणो मे भी एकता उत्पन्न हुई। चीन-सम्राट् की मृत्यु के वाद जो अराजकता पैदा हुई, उससे हूणो के प्रथम तूमन शान्-यू ने लाभ उठाया और डेढ हजार वरस पीछे होनेवाले अपने योग्य उत्तराधिकारी चिंगिज खान् की तरह ओर्दू तथा दूसरे प्रदेशो मे लूटमार की और ओर्दूम् को फिर से अपने जन की गोचर-

१. A thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai, 1895)

भूमि बना लिया। उत्तर से हूण आकर अब फिर पश्चिमी कान्-सू के निवासी यूचियो के पडोसी बन गये। तूमन का प्रभाव अपने जन पर बहुत था, किन्तु हूणो का सबसे बडा शान् यू, उसका पुत्र माउदून हुआ। बुढापे मे पिता ने अपनी तरुणी पत्नी के फेर मे पडकर ज्येष्ठ पुत्र माउदून को राज्य से वंचित करके छोटे पुत्र को राज्य देना चाहा। माउदून को रास्ते से अलग करने के लिए उसने अपने पश्चिमी पडोसी (यूची लोगो के) पास अमानत रखा और फिर उनपर आक्रमण कर दिया। जिसका अर्थ यही था कि यूची माउदून को मार डालें। लेकिन, माउदून एक तेज घोडे पर चढकर भाग निकला। पिता ने प्रसन्नता प्रकट करने के लिए उसे दसहजारी सरदार बना दिया, किन्तु माउदून अपने पिता की करनी को भूलनेवाला नही था। कहते हैं, माउदून ने मिङ-ली (गानेवाले बाण) का आविष्कार किया। वह शब्दवेधी बाण मे अभ्यस्त था। एक दिन उसने बूढे पिता को बाण का लक्ष्य बनाकर बदला लिया।

१ माउदून (१८३ ई० पू०)[1] शान्-यू बनते ही माउदून ने अपने पिता के परिवार को कत्ल कर डाला और केवल पिता की एक स्त्री को अपने लिए जीवित रहने दिया। इस समय तक चीन और यूची ही नही, बल्कि पुराने तुगुस (तुङ-हू, ह्वान) भी अपने जन का एक बडा सगठन कर चुके थे। हूणो की उनके साथ भी लडाई होने लगी। गोबी की बालुका-भूमि के बीच मे दोनो जनो का एक भीषण सघर्ष हुआ। वे माउदून का मुकाबला कर बुरी तरह से हारे। बहुत-से तुगुसो को हूणो ने अपना दास बनाया। उनमे से कुछ भागकर मगोलिया के उत्तर-पूर्व मे जाने मे सफल हुए, जो आगे धीरे-धीरे शक्ति-सचय करके फिर हूणो के प्रतिद्वन्द्वी बन गये। माउदून एक चतुर सेनानायक था। जन के सगठन और शासन मे भी उसने वैसी ही प्रतिभा दिखलाई। उसने अपने तीन प्रतिद्वन्द्वी जनो को परास्त कर हूणो की शक्ति को बढाया। उसे कोरोस, दारयोश और सिकन्दर की श्रेणी का विजेता माना जा सकता है। उसने तुगुसो को परास्त करके उत्तर से अपने को सुरक्षित कर पश्चिमी पडोसी यूचियो की खबर लेने की ठानी। यूची भी बडे वीर योद्धा थे, हूणो की तरह ही वह घुमन्तू पशुपाल थे तथा घुडसवारी के साथ धनुष चलाना जानते थे। यह बहुत सम्भव है, हथियार और युद्ध की शिक्षा मे हूणो के गुरु इन्ही शको के पूर्वज हो। यूची माउदून की सेना से कितने ही समय तक मुकाबिला करते रहे, किन्तु अन्त मे (१७६ या १७४ ई० पू०) उन्हें हूणो के सामने पराजय स्वीकार कर कोकोनोर और लोबनोर की अपनी पितृभूमि को छोडने के लिए मजबूर होना पडा। माउदून ने चीन-सम्राट् वेन्-ती (१६९-५६ ई० पू०) को लिखा था "जितनी जातियाँ (तातार) घोडे पर चढे धनुष को झुका सकती हैं, उन्हे एकताबद्ध कर मैंने एक राज्य कायम कर लिया। यूचियो और तरबगताइयो को भी मैंने नष्ट कर दिया। लोबनोर तथा आसपास के छब्बीस राज्य अब मेरे हाथ मे हैं। अगर तुम नही चाहते कि ह्युङ नू महादीवार को पार करे, तो तुम्हे चीनियो को महादीवार के पास हरगिज नही आने देना चाहिए। साथ ही, मेरे दूत को नजरबन्द न कर तुरन्त मेरे पास लौटा देना चाहिए।"

---

१ A thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai, 1895), p. 347, बेर्नश्तम (आर्खे० ओचेर्क०, पृ० ४२)

(क) शासन :

माउदून का राज्य पूरब मे कोरिया से पश्चिम मे वल्काश तक और उत्तर मे वैकाल से दक्षिण मे क्विनलन-पर्वतमाला तक फैला हुआ था। उसके पिता के समय हूण-राज्य केवल अपने कबीले तक सीमित था और दक्षिण मे चीन के भीतर हूण जब-तब लूटमार-भर कर लिया करते थे। इतने बडे राज्य के सचालन के लिए पुरानी व्यवस्था उपयुक्त नही हो सकती थी, इसीलिए माउदून को नई व्यवस्था कायम करनी पडी। यह स्मरण रहना चाहिए कि हूणो का समाज पितृसत्ताक था, अभी वहाँ सामन्तशाही नही फैली थी। चीन मे किसान अर्धदास और दास जैसे थे। उनके बाल-बच्चे सामन्तो की चल सम्पत्ति थे। हूण-शासनयन्त्र निम्नांकित प्रकार का था :
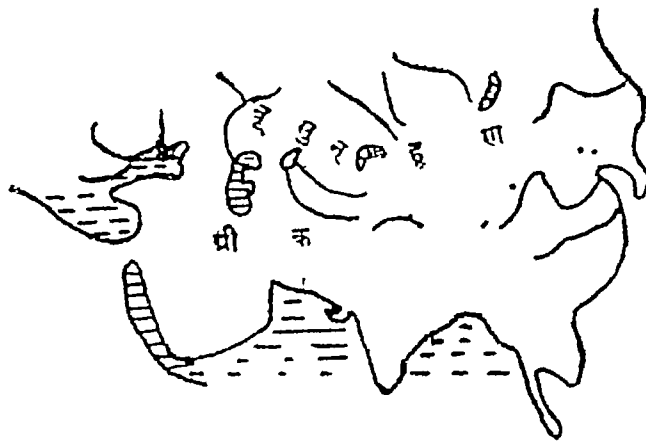
५२. माउदूनका हूणसाम्राज्य (१८३ ई०)

१. शान्-यू राजावाची चीनी शब्द शान्-यू का हूण-भाषा का रूप 'जेंगी' कहा जाता है। शायद इसी का रूपान्तर 'चगीज' हुआ। राजा की पूरी उपाधि थी 'तेंग्री-कुटू शान् यू' (देव-पुत्र महान्)। आज भी मगोल और तुर्की-भाषाओ मे देवता का वाचक 'तेंग्री' शब्द मौजूद है। शान्-यू प्रभावशाली योद्धा और नेता होता था, लेकिन उसके ऊपर हूण-ओर्दू का नियन्त्रण रहता था।

२. दूगी इसका अर्थ है धर्मात्मा या न्यायी। शान्-यू के नीचे दो दूगी हुआ करते थे, जिनमे एक को पूर्व-दूगी और दूसरे को पश्चिम-दूगी कहते थे। पूर्व-दूगी का दरजा ऊँचा समझा जाता था, और आम तौर से वह युवराज माना जाता था। हूण-साम्राज्य के पूर्वभाग पर पूर्व-दूगी का शासन था और पश्चिम पर पश्चिम-दूगी का। राज्य के मध्य-भाग, अर्थात् हूण-जनक्षेत्र पर स्वय शान्-यू सीधे शासन करता था।

३. दक-ले (कुनलू) यह भी दक्षिण और वाम दो होते थे, जिनमे वाम का दरजा ऊँचा था।

४ इनके नीचे वाम और दक्षिण के दो सेनापति थे।

५ इनके नीचे वाम और दक्षिण के दो दीवान होते थे। आगे भी दो वाम-दक्षिण कुनलू जैसे दसहजारी और हजारी तक से चौबीस सैनिक अधिकारी होते थे। हूण-शासन मे सैनिक-असैनिक अधिकार का भेद नही था।

इनके अतिरिक्त हूण-शासको की उपाधि, शृगो से समझी जाती थी, जो शायद समय-समय पर उनके शृगार होते हो। दोनो टूगी और दोनो रुक-ले चतु शृग कहे जाते थे। उनके नीचे षट्शृग अधिकारी थे। दोनो कुनलू शासन-प्रवन्ध को देखते थे। टूगी आदि चौबीस श्रेष्ठ अधिकारियो के अपने क्षेत्र थे, जिनके भीतर ही वह अपने ओर्दू तथा पशुओ को लेकर विचरण कर सकते थे। उनको अपने हजारी, शतिक, दशिक आदि अफसरो को नियुक्त करने का अधिकार था।

शान्-यू की रानी की पदवी इन्-ची (येङ-ची) थी। हूणो के तीन-चार ऊँचे कुलो मे से उसे लिया जाता था। शान्-यू का अपना कुल वहुत ही सम्मानित समझा जाता था। हूणो ने जो श्रेणियाँ और पदवियाँ स्थापित की थी, वह तुर्कों और मगोलो के समय तक मानी जाती रही। तैमूर ने भी हजारी, पचहजारी और दसहजारी दरजे स्वीकार किये थे, जो उसके वशज बाबर के साथ पीछे भारत मे आये।

(ख) नववर्षोत्सव .

यह उत्सव हूणो का सबसे बडा राष्ट्रीय मेला था, जिसे शान्-यू बडी शान-शौकत से मनाता था। पितरो, तिङ्री (देव), पृथिवी और भूत-प्रेतो के लिए बलि इसी समय दी जाती थी। शरद् मे दूसरा महोत्सव मनाया जाता था, जिसमे ओर्दू की जनगणना तथा सम्पत्ति और पशुओं पर कर लगाने का काम किया जाता था। हूण-जनो मे अपराध कम था और उनके लिए दण्ड देने मे देर नही की जाती थी। वह दोनो महोत्सवो के समय किया जाता था। महोत्सव मे घुडदौड, ऊँटो की लडाई तथा दूसरे कितने ही सैनिक और नागरिक मनोरजन के खेल होते थे। उनके अपराध-दण्ड मे मृत्युदण्ड तथा घुटना तोड़ देना भी शामिल था। सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध का दण्ड था—सारे परिवार को दास बना दिया जाना।

नववर्षोत्सव और शरदुत्सव दोनो सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक महा-सम्मेलन थे। इसके अतिरिक्त भी शान्-यू को कुछ धार्मिक कृत्य रोज करने पडते थे। दिन मे शान्-यू सूर्य को नमस्कार करता और सन्ध्या को चन्द्रमा की पूजा और नमस्कार। चीनियो की भाँति हूण भी पूर्व और वाम दिशा को श्रेष्ठ मानते थे। शान्-यू सभा मे उत्तर की ओर मुँह करके बैठता, जबकि चीन-सम्राट् का बैठना दक्षिणाभिमुख होता था। चान्द्रमास की तिथियो को प्रधानता दी जाती थी। सेना-अभियान के लिए शुक्लपक्ष और अभियान से लौटने के लिए कृष्णपक्ष प्रशस्त माना जाता था। लूट मे सम्पत्ति और वन्दी हुए दासो का स्वामी वही होता था, जो दुश्मन से उन्हे छीनता था। दुश्मन का सिर काट लेना, वहुत बडी वीरता मानी जाती थी।

जान पडता है, शको का प्रभाव हूणो पर भी पडा था। शको की भाँति ही हूणो मे भी मृत सरदार की बहुत-सी मूल्यवान् सम्पत्ति कब्र मे गाड दी जाती थी। समाधि के ऊपर कोई स्तूप या वृक्ष आदि चिह्न नहीं लगाये जाते थे और न मरे के लिए बहुत रोना-धोना किया जाता था।

(ग) युद्ध :

हूण पशुजीवी ही नही, आयुधजीवी भी थे। लूटमार उनका पेशा था। उनकी लडाई की एक बडी चाल थी, दुश्मन के सामने पराजित होने का अभिनय करके भाग पडना। जब दुश्मन उनका पीछा करते कुछ दूर निकल जाता, तो सुशिक्षित-सुसगठित जहाँ-तहाँ छिपे हूण-दस्ते शत्रु की पीठ पर आक्रमण कर देते। माउदून ने चीन के युद्ध मे एक बार इस तरह तीन लाख बीस हजार चीनी-सैनिको को अपने जाल मे फँसा लिया था। चीन-सम्राट् अपनी सेना के साथ आधुनिक ता-तुङ-फू (शेनसी) से एक मील दूर एक दृढ दुर्गबद्ध स्थान पर पहुँच चुका था, लेकिन उसकी अधिकाश सेना पीछे रह गई थी। माउदून अपने तीन लाख चुने हुए सैनिको के साथ चीनियो पर टूट पडा और सम्राट् को घेर लिया। सेना सात दिनो तक घिरी रही। बडी मुश्किल से चीनी अपने सम्राट् को घेरे से निकाल पाये। समझौते मे उन्हें कितनी ही अपमानजनक बाते करनी पडी। माउदून के घेरे का एक कोना ढीला था। इसी निर्बल कोने से सम्राट् सेना के साथ भागने मे समर्थ हुआ। माउदून ने पीछा नही किया। चीन को अपनी एक राजकुमारी, रेशम तथा बहुमूल्य धातु, रत्न, चावल, अगूरी शराब तथा बहुत तरह के खाद्य की भेट देने के लिए मजबूर होना पडा। इस तरह चीनी-राजकुमारियो का शक्तिशाली घुमन्तू राजाओ से विवाह करने की प्रथा चली। समझा गया, राजकुमारी का लडका मातृकुल का पक्षपाती होगा।

चीन-सम्राट् हुङ-ती के मरने के बाद उसकी विधवा रानी कौ-ठू अपने पुत्र (वेन्-ती) को गद्दी पर बैठाकर बारह साल (१८७–७९ ई० पू०) तक स्वय राज्य करती रही। हूणो मे पितृसत्ताक समाज होने के कारण कुछ सुभीता था, जिसके कारण कितने ही चीनी भागकर उनके राज्य मे चले जाते थे। ऐसे ही किसी दरबारी की बात मे पडकर माउदून ने रानी को सन्देश-पत्र भेजकर अपने हाथ और हृदय को देने का प्रस्ताव किया। दरबारियो ने युद्ध की आग भडकाने की कोशिश की, लेकिन किसी समझदार ने रानी को समझाया 'अब भी लडके हमारी सडको पर सम्राट् के भागने की गीत गाते फिरते हैं।' रानी ने बहुत नरम-सा पत्र लिखा—'मेरे दाँत और केश परमभट्टारक (आप) के प्रेम को प्राप्त करने के योग्य नही हैं।' साथ ही, उसने दो राजकीय रथ, बहुत-से अच्छे-अच्छे घोडे तथा दूसरी भेटें भेजी। माउदून इससे कुछ लज्जित-सा हुआ और उसने बहुत-से हूणी घोडे भेजकर क्षमा माँगी। माउदून ने बहुत लम्बे काल (छत्तीस साल) तक राज्य किया।

ची-यू[1] (कूयुक् १६२ ई० पू०) यह माउदून का पुत्र था, जिसे चीनी-लेखक लाऊ-शान् शान्-यू (महान् वृद्ध जेङ-गी) के नाम से याद करते हैं। सम्राट् ने शान्-यू के लिए नई राजकुमारी भेजी, जिसके साथ वहाँ से एक हिजडा (ख्वाजासरा) भी आया, जो जल्दी ही शान्-यू का विश्वासपात्र बन गया। चीनी-भेंटो और राजकुमारियो के प्रभाव मे आकर हूण ज्यादा विलासी होते जा रहे थे। ख्वाजासरा इसे पसन्द नही करता था। उसने हूणों को समझाया "तुम्हारे ओर्दू की सारी जनसख्या मुश्किल से चीन के कुछ परगनो के बराबर

१ A thousand years of Tatars, p. 348

होगी, किन्तु तब भी तुम चीन को दबाने मे समर्थ होते रहे। इसका रहस्य है, तुम्हारा अपनी वास्तविक आवश्यकताओं के लिए चीन मे स्वतन्त्र होना। मैं देखता हूँ कि तुम दिन-पर-दिन अधिक और अधिक चीनी चीजो के प्रेमी बनते जा रहे हो। सोच लो, चीनी सम्पत्ति का पाँचवाँ भाग तुम्हारे सारे लोगो को पूरे तौर से खरीद लेने के लिए काफी है। तुम्हारी भूमि के कठोर जीवन के लिए रेशम और साटन उतने उपयुक्त नही हैं, जितना की ऊनी नम्दा। चीन के तुरन्त नष्ट हो जानेवाले व्यजन उतने उपयोगी नही हो सकते, जितनी तुम्हारी कूमिश और पनीर।" इस तरह वह बराबर हूणो को सजग करता रहा। चीन के जवाब मे शान्-यू की ओर से जो चिट्ठी उसने लिखवाई थी, वह चर्मपत्र की लम्बाई-चौडाई मे ही अधिक बडी नहीं थी, बल्कि उसमे शान्-यू की अधिक लम्बी उपाधि भी लिखी गई थी 'हूणो के महान् शान्-यू जेंगी, और पृथिवी के पुत्र, सूर्य-चन्द्र-समान' आदि-आदि।

चीनी राजदूत ने एक बार 'हूणो मे वृद्धो का सम्मान नही होता', कहकर ताना मारा था, इसपर उसने जवाब दिया 'जब चीनी सेना लडाई के लिए निकलती है, तब मैं नहीं देखता कि उनके सम्बन्धी अपनी सेना के लिए कितनी ही अच्छी चीजो से अपने को वचित न करते हो। हूणो का व्यवसाय है युद्ध। बूढे और निर्बल युद्ध नही कर सकते, इसीलिए सबसे अच्छा आहार लडनेवालो को दिया जाता है।' 'लेकिन, पिता और पुत्र एक ही तम्बू को इस्तेमाल करते हैं, पुत्र अपनी सौतेली माँ से विवाह करता है। भाई अपनी भ्रातृबन्धुओ के साथ कोई विशेष विचार नही रखता।' यह कहने पर उसने कहा . "हूणो का रिवाज है, अपनी भेडो और ढोरो के मांस को खाना और उनके दूध को पीना। वे ऋतु के अनुसार अपने पशुओ को लेकर भिन्न-भिन्न चरभूमियो में घूमा करते हैं। हर एक हूणपुरुष दक्ष धनुर्धर होता है, शान्ति के समय भी उसका जीवन सरल और सुखी होता है। उनके शासन के नियम बिलकुल सरल हैं। शासक और जनता का सम्बन्ध उचित और चिर-स्थायी है। यद्यपि, पुत्र या भाई अपने पिता या भाइयो की स्त्रियो को रख लेते हैं, किन्तु इसका कारण यही है कि वे अपने खानदान को सुरक्षित रख सके। चीनी विचार के अनुसार यह पाप हो सकता है, लेकिन इसमे कुल और वश की रक्षा होती है।" यह कहते हुए यह भी कहा 'लेकिन चीन मे दिखावे के लिए चाहे पुत्र या भाई ऐसे पाप के भागी न होते हो, किन्तु इसका परिणाम होता है विद्रोह, शत्रुता और परिवार का ध्वस। तुम्हारे यहाँ आचार और अधिकार की ऐसी गन्दी व्यवस्था है, जिसने एक वर्ग को दूसरे वर्ग के खिलाफ खडा कर दिया है, एक आदमी दूसरे आदमी के विलास के लिए दास बनने के लिए मजबूर है। आहार और कपडा केवल खेत के जोतने और रेशम-कीट पालने से मिलता है। वैयक्तिक सुरक्षा के लिए प्राकारबद्ध नगर बनाना पडता है। सकट के समय तुम्हारे यहाँ कोई नहीं जानता कि कैसे लडना चाहिए और शान्ति के समय तुम्हारा हर एक आदमी एँडी से चोटी तक खून-पसीने को एक करते जीता है। अपने ढकोसलो की बढ-बढकर बात मेरे सामने मत करो।" फिर उसने कहा . "चीनी दूत, तुम्हें बोलना कम चाहिए और अपने को इतने तक ही सीमित रखना चाहिए, जिसमे अच्छी किस्म और अच्छी नाप का रेशम, चावल, शराब आदि हमारी वार्षिक भेंटें भेजी जायें। यदि भेंट की चीजें सन्तोषजनक हो, तो बात करना

बेकार है। हमलोग बात बिलकुल नही करेंगे। यदि हमे सन्तुष्ट नही करोगे, तो हम तुम्हारी सीमाओ पर आक्रमण करेंगे।"

सात साल राज्य करने के बाद ची-यू को चीन पर आक्रमण करने की आवश्यकता पडी। वह एक लाख चालीस हजार हूण-सेना के साथ लूटपाट करता वर्त्तमान सियान्-फू तक चला आया और बडी भारी सख्या मे लोगो, पशुओ और धन-सम्पत्ति को अपने साथ ले गया। चीनी बडी तैयारी करने मे लगे थे, किन्तु तबतक ची-यू अपना काम करके लौट चुका था। कई साल तक यह आतंक छाया रहा, फिर इस बात पर सुलह हुई—'महा-दीवार से उत्तर की सारी भूमि धनुर्धरो (हूणो) की है और उससे दक्षिण की भूमि टोपी और कमरबन्दवालो की।'

यूची-पलायन ची-यू की सबसे बडी विजय थी, कान्-सू से यूची शको को भगाना। माउदून उन्हे सिर्फ परास्त-भर कर पाया था। उस समय लोबनोर से ह्वाङ-हो के मुडाव तक यूचियो की विचरण-भूमि थी। लोबनोर से उत्तर-पूरब साइवाङ (शक) रहते थे। ची-यू ने अपनी सुसगठित सेना से यूचियो पर लगातार ऐसे जबरदस्त आक्रमण किये, जिसके कारण यूचियो की भारी क्षति हुई और १७६ या १७४ ई० पू० मे वह अपनी भूमि छोडकर पश्चिम की ओर भागने के लिए मजबूर हुए। साइवाङ की भूमि मे थोडी दूर जाने के बाद उनका एक भाग तरिम-उपत्यका की ओर चला गया और दूसरा इली-उपत्यका के रास्ते आगे बढा। पहले भाग को लघु-यूची कहते हैं और दूसरे को महायूची। लघु-यूचियो के आने से पहले तरिम-उपत्यका उन्ही खसो (कशो) की थी, जो उस समय भी कश्मीर और पश्चिमी हिमालय तक फैले हुए थे। अब कुछ शताब्दियो के लिए तरिम-उपत्यका लघु-यूचियो की हो गई। महायूचियो ने साइवाङ को खदेडकर उनकी जगह अपने हाथ मे ले ली। साइवाङ अपने पश्चिमी पडोसी तथा तियेनशान और सप्तनद के निवासी वूसून (वू-सुन्) पर पडे। महायूचियो को हूणो ने यहाँ भी चैन से नही रहने दिया और वह बराबर पश्चिम की ओर बढते हुए सिरदरिया और अरालसमुद्र तक फैल गये। फिर, वहाँ से दक्षिण की ओर घूमे। कुछ समय तक उनका केन्द्र वक्षुनदी के उत्तर मे था। इसी समय ग्रीको-बाख्त्री राजा हेलियोक मरा था। कॉस्पियन-तटवासी पार्थिया और सोग्द-उपत्यका मे पहुँचे यूचियो ने उसके राज्य को आपस मे बाँटकर इस यवन-राजवश को खतम कर दिया। आगे १२८ ई० पू० मे, जिस समय चाङ-क्यान् बाख्तर पहुँचा, उस समय तक वह यूचियो का केन्द्र बन चुका था। आगे हम बतलायेगे कि कैसे यूची अपनी शक्ति को आगे बढाते हुए भारत तक पहुँचे।

§२ पीछे के हूण-शासक

चू-चेन = ची-यू (१७२-१२७ ई० पू०) अपने पिता के स्थान पर शान्-यू राजा बना। चीनी हिजडा अब भी प्रभावशाली मन्त्री था। ची-यू के पास भी चीन से नई राजकुमारी आई। तत्कालीन चीन-सम्राट् वू-ती ने उसे धोखे से पकडना चाहा। भारी युद्ध हुआ, अन्त मे शान्-यू जाल मे एक बार आकर भी निकल भागने मे समर्थ हुआ। अब चीन और हूणो के निरन्तर संघर्ष होने लगे और चीनी सीमान्त हूणो की आक्रमण-भूमि बना रहा।

इचिसे[1] (१२७-११७ ई० पू०) : यह पाँचवाँ शान्-यू चौथे का भाई था। इसने भी चीन के सीमान्त पर लूटमार जारी रखी, लेकिन वह बहुत दिनो तक नही चल सकी। वू-ती बडा शक्तिशाली सम्राट् था। उसने हूणो का बल तोडने के लिए बहुत भारी तैयारी की। इसकी बडी-बडी सेनाओ ने एक के बाद एक हूणभूमि पर लगातार आक्रमण किये, लाखो हूणो को बेदर्दी से मारा और उनकी भेडो को बडी संख्या मे पकड लिया। इस प्रकार, हूण उत्तर की ओर भगाये जाते रहे। यूचियो की भूमि (कान्-सू) हूणो से खाली करा ली गई। कान्-सू मे ही एक नगर चाङ-ये था, जहाँ कोई हूण-सरदार रहता था। इस नगर की विजय के समय चीनी सेना को एक सोने की मूर्त्ति मिली, जिसकी पूजा हूण किया करते थे। अन्दाज लगाया जाता है कि यह 'सुवर्णपुरुष' बुद्ध की प्रतिमा थी। तरिम-उपत्यका मे बुद्धधर्म अशोक के समय मे पहुँचा बतलाया जाता है। हो सकता है, वहाँ से यूचियो मे होते हुए वह हूणो मे पहुँचा हो। यूचियो की पुरानी भूमि की विजय के बाद चीन को भारत का परिचय वहाँ प्रचलित बौद्धधर्म के कारण ही मिला। लेकिन, चीन मे बौद्धधर्म पहुँचने का प्रमाण अभी और पीछे मिलता है।

यद्यपि चीनी सेना हूणो को उत्तर मे ढकेलने मे सफल हुई थी, तथापि वह उसे सदा की विजय नही समझती थी। इसलिए, सम्राट् वू-ती ने अपने सेनापति चाङ-क्यान् को अपने शत्रु हूणो के शत्रु यूचियो के पास भेजा कि पश्चिम से यूची भी उनके ऊपर आक्रमण करें। सम्राट् ने यूचियो को उनकी पुरानी भूमि मे आकर बसने का निमन्त्रण दिया। चाङ-क्यान् ई० पू० १३८ मे अपनी यात्रा पर चला। यह चीन का प्रथम महान् यात्री है, जिसका यात्रा-विवरण बडा ज्ञानवर्द्धक है। चाङ-क्यान् दस साल हूणो का बन्दी रहा। जब वूसूनो ने अपने को हूणो से स्वतन्त्र कर लिया, तब वह हूणो की नजरबन्दी से भागकर वूसून-भूमि मे होते हुए खोकन्द पहुँचा। वहाँ के निवासी घुमन्तू नही, बल्कि नगरो और ग्रामो के निवासी थे। वहाँ से समरकन्द होते वह यूचियो के केन्द्र बाख्तर मे पहुँचा। चाङ-क्यान् ने यूचियो को बहुत समझाने की कोशिश की कि सम्राट् वू-ती ने तुम्हारी जन्मभूमि खाली करा ली है, वह चाहते हैं कि तुम लौटकर उसे सँभाल लो। लेकिन, यूची भली भाँति जानते थे कि घुमन्तुओ का जीतना वैसा ही अचिरस्थायी है, जैसा कि ढेला फेंकने पर काई का फटना। वह बाख्तर के विशाल राज्य के स्वामी होकर आनन्द से जीवन बिता रहे थे। इसलिए, हूणो से झगडा मोल लेने के लिए तैयार नही थे। चाङ-क्यान् को बदख्शाँ, पामीर और सिङ-क्याङ होकर लौटना था, जहाँ वह हूणो की पहुँच से बाहर नही रह सकता था। उसे फिर उनकी कैद मे रहना पडा और बारह वर्ष (१३८–१२६ ई० पू०) के बाद चीन लौटने का मौका मिला। ई० पू० ११५ मे फिर उसे वूसूनो के पास भेजा गया, जो इस्सिकुल महासरोवर के पास तियेनशान मे रहा करते थे। चीन पश्चिम जानेवाले रेशम-पथ को सुरक्षित तौर से अपने हाथ मे रखना चाहता था, इसलिए चाङ-क्यान् को दूसरी बार भेजा गया था। उसने पार्थिया आदि दूसरे देशो मे पता लगाने के लिए अपने दूत भेजे। लौटकर उसने सम्राट् को पश्चिमी देशो के बारे मे रिपोर्ट दी। मूल रिपोर्ट प्राप्य नही है, लेकिन

१ A Thousand years of Tatar, p 349

सूमा-च्याङ ने ९९ ई० पू० मे अपनी पुस्तक 'शी-की' और पाङ-की ने सन् ९२ ई० मे 'च्यान्-शान्-शू-की' मे (अपूर्ण पुस्तक, जिसे पीछे उसकी बहिन ने पूरा किया) उपयोग किया है। पिछली पुस्तक मे २०६ ई० पू० से सन् २४ ई० तक का वर्णन है। चाङ-क्यान् पश्चिम से लौटने के बाद ११४ ई० पू० मे मर गया। उसके विवरण के जो अश मिलते है, उससे बहुत-सी बातो का पता लगता है। पार्थियन लोग चर्मपत्र पर आडी लाइन मे लिखते थे। फर्गाना से पार्थिया तक शक-भाषा बोली जाती थी।

इशी-ज्या (१२७–११७ ई० पू०), अच्वी (११७–१०७ ई० पू०), चान्-सी-लू (१०७–१०४ ई० पू०), शू-ली-हू (१०४–१०३ ई० पू०), शू-ती-हू (१०३–९८ ई० पू०), हू-लू-हू (९८–८७ ई० पू०) ये सभी हूणो के पाँचवें के बाद के शान्-यू हैं, जिनका समकालीन हानवंशी-सम्राट् वू-ती (१४०–८६ ई० पू०) था। चिन-वश ने हूणो की शक्ति को तोडने के लिए जो प्रयत्न किया था, उसकी समाप्ति हान-वश ने की।

(क) वू-ती और हूण :

वू-ती का ५४ वर्ष का शासन हूणो की पराजय, चीन की शक्ति के चरम उत्कर्ष और रेशम-पथ को सुरक्षित करने के लिए बहुत महत्त्व रखता है। १२९ ई० पू०, ११९ ई० पू० और ९९ ई० पू० मे चीन ने हूणो के ऊपर तीन जबरदस्त आक्रमण करके उनके उर्दू को छिन्न-भिन्न कर दिया। जेनरल वेइ-सिन् के आक्रमण १२९ और ११९ ई० पू० मे हुए थे। इन आक्रमणो के फलस्वरूप हूणो की सैनिक शक्ति ही नही तोड दी गई, बल्कि तीन सालो के भीतर चीन को क्रमश १९ हजार, ७० हजार और १० हजार हूण बन्दी मिल गये, जिन्होने दास बनकर चीन के आर्थिक विकास मे भारी काम किया। इधर फर्गाना तक का वणिक्-पथ भी चीन के हाथ मे आ गया, इसलिए रोम के साथ खूब व्यापार होने लगा। इससे पहले ही अल्ताई के उत्तर-पूरब के घुमन्तू तिङ-ली और सप्तनद तथा तियेनशान के वू-सुन्-हूणो के अधीन थे। वे समय पडने पर सैनिक सहायता भी देते थे।

वू-ती की सफलता का एक कारण यह भी था कि धीरे-धीरे हूण-सरदार विलासी होते जाते थे और उनमे शक्ति हथियाने के लिए आपस मे घोर वैमनस्य था। ची-यू ने १७६ या १७४ ई० पू० मे यूचियो को देश छोडने के लिए मजबूर किया। यह हूण-शक्ति के चरम उत्कर्ष का समय था। अब जब कि वू-ती की शक्ति से मुकाबिला करना था, तो हूणो का सगठन बहुत खोखला था। चीन के भीतर घुमकर लूटपाट करना हूणो की आजीविका का एक प्रधान साधन था और इसी वजह से कितने ही समय भिन्न-भिन्न सामन्तो के ओर्दू एक हो जाया करते थे। यह एकता स्थायी नही होती थी। इसी से लाभ उठाकर ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी के अन्त तक फर्गाना तक का सारा मध्यएसिया चीन के हाथ मे चला गया। दसवें शान्-यू हू-लू-हू (९८–८७ ई० पू०) के समय इस वैमनस्य ने हूणो मे गृहयुद्ध का रूप ले लिया। ९० ई० पू० मे चीन ने हूणो पर एक बहुत बडा सैनिक अभियान भेजा। इस समय सिङ-क्याङ के कराखोजा और पीजाग के इलाके चीनियो के हाथ मे थे। इतिहास के आरम्भ से ही तरिम-उपत्यका मे कराशहर से काशगर और काशगर से खोतन तक बहुत-से

समृद्ध नगर बसे हुए थे, जिनमे खस और शकजातीय लोग रहा करते थे। चीनियो ने हूणो को बहुत दूर उत्तर भगा दिया था, किन्तु इतने पर भी हूणो की शक्ति बिलकुल खतम नहीं हुई थी। यह उस जवाब से मालूम होता है, जिसे कि सन्धि करने के लिए भेजे गये दूत को उन्होंने दिया था "दक्षिण हान के महान् वंश का है और उत्तर हूणो का। हूण प्रकृति के स्वच्छन्द पुत्र हैं। वह कठिनाइयो तथा छोटी-मोटी बातों की परवाह नही करते। चीन-के साथ एक बडे पैमाने पर सीमान्ती व्यापार करने के लिए हमारा प्रस्ताव है कि एक चीन-राजकुमारी विवाह करने के लिए आये, प्रतिवर्ष दस हजार समूरी चमडे, उच्च श्रेणी के रेशम के दस हजार थान और इनके अतिरिक्त पहले सन्धि-पत्रो से मिलनेवाली भेंट भी, हमारे पास भेजी जाय। यदि यह कर दिया जाय, तो हम फिर सीमान्त पर लूटपाट नही करेंगे।"

शान्-यू की माँ बीमार थी। शकुनशास्त्रियो ने बतलाया कि देवता बलि चाहते हैं। खोकन्द के विजेता तथा चीन का सर्वश्रेष्ठ सेनापति स्यन्-बी दरबारी षड्यन्त्र के कारण भागकर हूणो की शरण मे चला आया था, उसी की बलि देवता को दी गई। जान पडता है, देवता उससे और रुष्ट हो गये। कई महीने तक लगातार हिम-वर्षा हुई। पशु और उनके बच्चे मर गये, लोगों मे महामारी फैल गई। अन्न की फसल जहाँ होती थी, वहाँ पकने न पाई। इसके साथ युद्ध-क्षेत्र मे भारी पराजय हुई, जिसमे बडे-बडे सेनापति मारे गये। इससे हूणो की कमर क्यो न टूट जाती ?

(ख) हूण-पराभव .

खू-खन्, हू-हान्-ये या खू-गन्-जा (५९-३१ ई० पू०) चौदहवाँ शान्-यू था। इस समय मचूरिया से इस्सिकुल तक की हूणभूमि मे प्रचण्ड गृहकलह चल रहा था। एक नही, पाँच-पाच शान्-यू बन गये थे, जिनमे हू-हान्-ये का अपना बडा भाई ची-ची उसका जबरदस्त प्रतिद्वन्द्वी था। आपसी संघर्ष तथा चीन के प्रहार के कारण कितने ही हूण-सरदार चीन की अधीनता स्वीकार करने मे ही कल्याण समझते थे। कराकोरम (मगोलिया) प्रदेश मे हू-हान्-ये ने ची-ची को जबरदस्त हार दी। हू हान्-ये का दूसरा प्रतिद्वन्द्वी वो-यान था, जिस पर उसने पचास हजार सेना के साथ आक्रमण किया। अन्त मे, वो-यान को निराश होकर आत्महत्या कर लेनी पडी। हू-हान्-ये का शासन बहुत मजबूत हो चला। इतने प्रति-द्वन्द्वियो के खिलाफ हू-हान्-ये की विजय का एक कारण यह भी था कि सरदारो के प्रभाव के बढने के बाद भी हूणो मे अभी सामरिक जनतन्त्रता का लोप नही हुआ था और वह जन-निर्वाचित था। किन्तु, भोग और सम्पत्ति ने हूणो मे भेद अवश्य प्रकट कर दिया था।

हू-हान्-ये ने परिषद् के सामने चीन की अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा। बहुत-से सरदारो ने असहमति प्रकट की। उनका कहना था "हमारा प्राकृतिक जीवन है केवल पशुबल और क्रियापरायणता। अपमानपूर्ण अधीनता तथा सुखी जीवन हमारे लिए उपयुक्त नहीं है, बल्कि उसके प्रति हम घृणा करते हैं। घोडे की पीठ पर चढकर लडना यही हमारी राजनीतिक शक्ति का मूल मन्त्र है। यही वह चीज है, जिससे कि हम सदा बर्बर जातियो मे अपनी प्रधानता कायम रखते आये हैं। युद्ध मे मरना हमारे हर एक वीर योद्धा

लग्गं च दक्खिणायविसुवे सुवि अस्स उत्तरं अयणे ।
लग्ग साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे ॥

अर्थात्--अस्स यानी अश्विनी और साई—स्वाति ये नक्षत्र विपुवके लग्न वताये गये है । यहाँ विशिष्ट अवस्थाकी राशिके समान विशिष्ट अवस्थाके नक्षत्रोको लग्न माना है।

इस ग्रन्थमे कृत्तिकादि, धनिष्ठादि, भरण्यादि, श्रवणादि, एव अभिजितादि नक्षत्र गणनाओकी समालोचना की गयी है ।

कल्प, सूत्र, निरुक्त और व्याकरणमे ज्योतिषचर्चा

आश्वलायन सूत्र, पारस्कर सूत्र, हिरण्यकेशी सूत्र, आपस्तम्ब सूत्र आदि सूत्र ग्रन्थोमें फुटकल रूपसे ज्योतिपचर्चा मिलती है। आश्वलायन सूत्रमे **"श्रावण्यां पौर्णमास्या श्रावणकर्म," "सीमन्तोन्नयन' यदा पुसा नक्षत्रेण चन्द्रमा युक्त. स्यात्"** इत्यादि अनेक वाक्य विभिन्न कार्योके विभिन्न मूहूर्त्तोके लिए आये है । पारस्कर सूत्रमें विवाहके नक्षत्रोका वर्णन करते हुए लिखा है—**"त्रिषु त्रिषु उत्तरादिपु स्वातौ मृगशिरसि रोहिण्या ।"** अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी विवाह नक्षत्र बताये गये है । इन सूत्र ग्रन्थोमें विभिन्न कार्योके विधेय नक्षत्रोका वर्णन मिलता है । वौघायन सूत्रमें—**"मीनमेषयोर्मेषवृषमयोर्वसन्त."** इस प्रकार लिखा मिलता है । इससे सिद्ध है कि सूत्र ग्रन्थोके समयमे राशियोका प्रचार भारतमें हो गया था ।

निरुक्तमे दिन-रात्रि, शुक्ल-कृष्ण पक्ष, उत्तरायण-दक्षिणायनका कई स्थानोपर चामत्कारिक वर्णन आया है । इसमें युगपद्धतिकी पूर्व मध्यकालीन ज्योतिष ग्रन्थोके समान सुन्दर मीमासा मिलती है ।

पाणिनीय व्याकरणमें सवत्सर, हायन, चैत्रादि मास, दिवस विभागात्मक मुहूर्त्त शव्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदि नक्षत्रोकी व्युत्पत्ति की गयी है । **"विभाषा ग्रहः"** ३। १। १४३ में ग्रह शब्दसे नवग्रहोका अनुमान

करना भी असगत नही कहा जा सकेगा ।

स्मृति एवं महाभारतकी ज्योतिषचर्चा

मनुस्मृतिमे सैद्धान्तिक ग्रन्थोके समान युग और कल्पनाका वर्णन मिलता है। याज्ञवल्क्य स्मृतिमे नवग्रहोका स्पष्ट कथन है—

सूर्य सोमो महीपुत्र. सोमपुत्रो बृहस्पति ।
शुक्र शनैश्चरो राहु' केतुश्चैते ग्रहा स्मृता ॥

—आचाराध्याय

इस श्लोकपर-से सातो वारोका अनुमान भी सहजमे किया जा सकता है। याज्ञवल्क्य स्मृतिमें क्रान्तिवृत्तके १२ भागोका भी कथन है, जिससे मेषादि १२ राशियोकी सिद्धि हो जाती है। श्राद्धकाल अध्यायमे वृद्धियोग-का भी कथन है, इससे ज्योतिष शास्त्रके २७ योगोका समर्थन होता है। वास्तविक योग शब्दके अर्थमें व्यवहृत योग सर्वप्रथम अथर्व ज्योतिषमे ही मिलता है।

याज्ञवल्क्य स्मृतिके प्रायश्चित्त अध्यायमे "ग्रहसयोगजै फलै" इत्यादि वाक्यो-द्वारा ग्रहोंके सयोगजन्य फलोका भी कथन किया गया है। इस स्मृतिमें अमुक नक्षत्रमे अमुक कार्य विधेय है इसका कथन बहुत अच्छी तरहसे किया है।

महाभारतमे ज्योतिषशास्त्रकी अनेक बातोका वर्णन मिलता है। इसमे युगपद्धति मनुस्मृति-जैसी ही है। सतयुगादिके नाम, उनमे विधेय कृत्य कई जगह आये है। कल्पकालका निरूपण शान्तिपर्वके १८३वें अध्यायमे विस्तारसे किया गया है। पचवर्षात्मक युगका भी कथन उपलब्ध होता है। सवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर एव इद्वत्सर इन ५ युगसम्बन्धी ५ वर्षोमे क्रमश पाण्डव उत्पन्न हुए थे—

अनुसवत्सर जाता अपि ते कुरुसत्तमा ।
पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पञ्चसवत्सरा इव ॥

—आ० प०, अ० १२४-२४

पाण्डवोको वनवास जानेके वाद कितना समय हुआ, इसके सम्बन्धमे भीष्म दुर्योधनसे कहते हैं—

> तेषा कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात् ।
> पञ्चमे पञ्चमे वर्षे द्वौ मासावुपजायत. ॥
> एषामभ्यधिका मासा· पञ्च च द्वादश क्षपा ।
> त्रयोदशानां वर्षाणामिति मे वर्तते मति. ॥
>
> —वि० प०, अ० ५२-३-४

पाँच वर्षमे दो अधिमास यह वेदाग-ज्योतिप पद्धति है और अधिमास आदिकी कल्पना भी वेदाग-ज्योतिषके अनुसार ही महाभारतमे है ।

महाभारतके अनुशासन पर्वके ६४वें अध्यायमे समस्त नक्षत्रोकी सूची देकर वतलाया गया है कि किस नक्षत्रमे दान देनेसे किस प्रकारका पुण्य होता है। महाभारतकालमें प्रत्येक मुहूर्त्तका नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्त्तका सम्वन्ध भिन्न-भिन्न धार्मिक कार्योसे शुभाशुभके रूपमे माना जाता था। २७ नक्षत्रोके देवताओंके स्वभावानुसार विधेय नक्षत्रसे भावी शुभ एव अशुभका निर्णय किया गया है। शुभ नक्षत्रोमें ही विवाह, युद्ध एव यात्रा करनेकी पद्धति थी। युधिष्ठिरके जन्म-समयका वर्णन करते हुए वताया गया है कि—

> ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मुहूर्त्तेऽभिजिदष्टमे ।
> दिवो मध्यगते सूर्ये तिथौ पूर्णेति पूजिते ॥

अर्थात्—आश्विन सुदी पचमीके दोपहरको अष्टम अभिजित् मुहूर्त्तमे सोमवारके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें जन्म हुआ। महाभारतमे कुछ ग्रह अधिक अनिष्टकारक वताये गये है, विशेषत शनि और मगलको अधिक दुष्ट माना है। मगल लाल रगका समस्त प्राणियोको अशान्ति देनेवाला और रक्तपात करनेवाला समझा जाता था। केवल गुरु ही शुभ और समस्त प्राणियोको सुख-शान्ति देनेवाला वताया गया है। ग्रहोका शुभ नक्षत्रोके साथ योग होना प्राणियोके लिए कल्याणदायक माना जाता था। उद्योग पर्वके

१४३वें अध्यायके अन्तमें ग्रह और नक्षत्रोंके अशुभ योगोका विस्तारसे वर्णन किया गया है। श्रीकृष्णने जब कर्णसे भेंट की, तब कर्णने इस प्रकार ग्रह-स्थितिका वर्णन किया है—"शनैश्चर, रोहिणी नक्षत्रमे मगलको पीडा दे रहा है, ज्येष्ठा नक्षत्रमें मगल वक्री होकर अनुराधा नामक नक्षत्रसे योग कर रहा है। महापात सज्ञक ग्रह चित्रा नक्षत्रको पीडा दे रहा है। चन्द्रमाके चिह्न विपरीत दिखलाई पडते हैं और राहु सूर्यको ग्रसित करना चाहता है।" शल्य-वधके समय प्रात कालका वर्णन निम्न प्रकार किया है—

भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ ॥ —श० प०, अ० ११.१८

अर्थात्—शुक्र और मगल इन दोनोंका योग बुधके साथ अत्यन्त अशुभ-कारक बताया गया है। आज भी बुध और शनिका योग अशुभ माना जाता है। महाभारतमें १३ दिनका पक्ष अत्यन्त अशुभ बताया गया है—

चतुर्दशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वां तु षोडशीम्।
इमां तु नाभिजानेऽहममावास्यां त्रयोदशीम् ॥
चन्द्रसूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमासीं त्रयोदशीम् ॥

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहोंकी स्थितिका वर्णन करते हुए कहते हैं कि १४, १५ एव १६ दिनोंके पक्ष होते थे, पर १३ दिनोका पक्ष इसी समय आया है तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मासमे सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणका होना है और यह ग्रहण योग भी त्रयोदशीके दिन पड रहा है, अत समस्त प्राणियोके लिए भयोत्पादक है। महाभारतसे यह भी सिद्ध होता है कि उस समय व्यक्तिके सुख-दु ख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रोंकी गतिसे सम्बद्ध माने जाते थे।

उपर्युक्त ज्योतिष-चर्चाके अतिरिक्त ई० १०० के लगभग स्वतन्त्र ज्योतिषके ग्रन्थ भी लिखे गये, जो रचयिताके नामपर उन सिद्धान्तोंके नामसे ख्यात हुए। वराहमिहिराचार्यने अपने पचसिद्धान्तिका नामक सग्रह ग्रन्थमें पितामह सिद्धान्त, वसिष्ठ सिद्धान्त, रोमक सिद्धान्त, पौलिश

सिद्धान्त और सूर्य सिद्धान्त इन ५ सिद्धान्तोका सग्रह किया। डॉक्टर थीवो साहवने पंचसिद्धान्तिकाकी अँगरेजी भूमिकामे पितामह सिद्धान्तको सूर्यप्रज्ञप्ति और ऋक्ज्योतिपके समान प्राचीन बताया है, लेकिन परीक्षण करनेपर इसकी इतनी प्राचीनता मालूम नही पडती है। ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्यने पितामह सिद्धान्तको ही आधार माना है। पितामह सिद्धान्त-मे सूर्य और चन्द्रमाके अतिरिक्त अन्य ग्रहोका गणित नही आया है।

वसिष्ठ सिद्धान्त—पितामह सिद्धान्तकी अपेक्षा यह सशोधित और परिवर्द्धित रूपमे है। इसमे सिर्फ १२ श्लोक हैं, सूर्य और चन्द्रके सिवा अन्य ग्रहोका गणित इसमे भी नही हैं। ब्रह्मगुप्तके कथनसे ज्ञात होता है कि पचसिद्धान्तिकामे सग्रहीत वसिष्ठ सिद्धान्तके कर्ता कोई विष्णुचन्द्र नामके व्यक्ति थे। डॉ० थीवो साहवने वतलाया है कि विष्णुचन्द्र इसके निर्माता नही, वल्कि सशोधक है। श्री शकर वालकृष्ण दीक्षितने ब्रह्मगुप्तके समयमे ही दो प्रकारका वासिष्ठ वतलाया है, एक मूल, दूसरा विष्णुचन्द्र-का। वर्तमानमे लघुवसिष्ठ सिद्धान्त नामक ग्रन्थ मिलता है जिसमे ९४ श्लोक है। इसका गणित पचसिद्धान्तिकाके वसिष्ठ सिद्धान्तकी अपेक्षा परि-मार्जित और विकसित है।

रोमक सिद्धान्त—इसके व्याख्याता लाटदेव है। इसकी रचना-शैलीसे मालूम पडता है कि यह किसी ग्रीक सिद्धान्तके आधारपर लिखा गया है। कुछ विद्वानोका अनुमान है कि अलकजेण्ड्रियाके प्रसिद्ध ज्योतिषी टालमीके सिद्धान्तोके आधारपर सस्कृतमे रोमक सिद्धान्त लिखा गया है, इसका प्रमाण वे यवनपुरके मध्याह्नकालीन सिद्ध किये गये अहर्गणको रखते है। ब्रह्मगुप्त, लाट, वसिष्ठ, विजयनन्दी और आर्यभट्टके ग्रन्थोके आधारपर कुछ अन्य विद्वान् इसे श्रीपेण-द्वारा लिखा गया वतलाते है। डॉ० थीवो साहव श्रीपेण-को मूल ग्रन्थका रचयिता नही मानते है, वल्कि उसका उसे वह सशोधक वतलाते हैं। इसका गणित पूर्वके दो सिद्धान्तोकी अपेक्षा अधिक विकसित है। इसमे सैद्धान्तिक विपयोका निम्न वर्णन गणित-सहित किया है—

महायुगान्त (४३२०००० वर्षोका),		युगान्त (२८५० वर्षोका)।
नक्षत्र भ्रम	१५८२२८५६००	१०४३८०३
रवि भ्रम	४३२००००	२८५०
सावन दिवस	१५७७८६५६४०	१०४०९५३
चन्द्र भगण	५७७५१५७८$\frac{१}{१}\frac{८}{९}$	३८१००
चन्द्रोच्च भगण	४८८२५८$\frac{१३}{५७}\frac{७}{५}\frac{०}{८}\frac{८}{६}$	३२२$\frac{२}{३}\frac{२}{०}\frac{८}{३९}$
चन्द्रपात भगण	२३२१६५$\frac{१}{१}\frac{०}{६}\frac{९}{३}\frac{०}{१}\frac{८}{१}\frac{५}{१}$	१५३$\frac{२}{१}\frac{६}{६}\frac{८}{३}\frac{८}{१}\frac{९}{१}$
सौर मास	५१८४००००	३४२००
अधिमास	१५९१५७८$\frac{१}{१}\frac{८}{६}$	१०५०
चन्द्रमास	५३४३१५७८$\frac{१}{१}\frac{८}{९}$	३५२५०
तिथि	१६०२९४७३६८$\frac{८}{१०}$	१०५७५००
तिथिक्षय	२५०८१७६८$\frac{५}{१९}$	१६५४७

ब्रह्मगुप्तने इस सिद्धान्तकी खूब खिल्ली उडायी है। वास्तवमे इसका गणित अत्यन्त स्थूल है। कुछ विद्वानोने इसका रचनाकाल ई० १००-२०० के मध्यमें माना है। इसके विपयको देखनेसे उपर्युक्त रचनाकाल युक्तियुक्त भी जँचता है।

पौलिश सिद्धान्त—इसका ग्रहगणित भी अकों-द्वारा स्थूल रीतिसे निकाला गया है। एलवेरुनीका मत है कि अलकजेण्ड्रियावासी पौलिशके यूनानी सिद्धान्तोके आधारपर इसकी रचना हुई है। डॉ० कर्न साहबने इस मतका खण्डन किया है। उनका कहना है कि प्राचीन भारतीयोको 'यवनपुर' ज्ञात था, तथा वे वहाँके अक्षाश, देशान्तर आदिमे पूर्ण परिचित थे। वर्तमानमे वराह और भट्टोत्पलका पृथक्-पृथक् सग्रहीत पौलिश सिद्धान्त मिलता है, लेकिन दोनोमे कोई समानता नही है। वराहमिहिर-द्वारा संग्रहीत पौलिश सिद्धान्तोमे चर निकालनेके लिए निम्न श्लोक आया है—

यवनाच्चरजा नाड्य सप्तावन्त्यास्त्रिभागसयुक्ता ।
वाराणस्या त्रिकृति साधनमन्यत्र वक्ष्यामि ॥

अर्थात्—उज्जैनीमे चर ७ घटी २० पल और बनारसमे ९ घटी है, अन्य स्थानोके चरका साधन गणित-द्वारा किया गया है। डॉ० थीबो साहबने इस सिद्धान्तका विवेचन करते हुए बताया है कि प्राचीन पौलिश सिद्धान्त उपलब्ध नही है। वराहके पौलिश सिद्धान्तसे मालूम पडता है कि इसके ग्रहगणितमे अति स्थूलता है। आज जो पौलिशके नामसे सिद्धान्त उपलब्ध है, वह अपने मूल रूपमे नही है।

सूर्य सिद्धान्त—इसके कर्त्ता कोई सूर्य नामके ऋषि बतलाये जाते है। इसमे आयी हुई कथाके आधारपर इसका रचनाकाल त्रेता युगका प्रारम्भिक भाग बताया गया है। पर उपलब्ध सूर्य सिद्धान्त इतना प्राचीन नही जँचता है। कुछ लोगोका कथन है कि स्वय सूर्य भगवान्ने मयकी तपस्यासे प्रसन्न होकर उस असुरको ज्योतिष ज्ञान दिया था। श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तवने सूर्य सिद्धान्तकी भूमिकामें असुर नामकी एक भौतिकवादी जाति बतलायी है, शिल्प और यन्त्रविद्यामे यह जाति निपुण होती थी। सूर्य नामक ऋषिने इसी जातिको ज्योतिषशास्त्रकी शिक्षा दी थी। पाश्चात्त्य विद्वानोने सूर्य सिद्धान्तकी स्थूलताका परीक्षण कर इसका रचनाकाल ई० पू० १८० या ई० १०० बताया है। यह ग्रन्थ ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि वर्तमानमें उपलब्ध सूर्य सिद्धान्त प्राचीन सूर्य सिद्धान्तसे भिन्न है, फिर भी इतना तो मानना पडेगा कि सैद्धान्तिक ग्रन्थोमें यह सबसे प्राचीन है। इसमे युगादिसे अहर्गण लाकर मध्यम ग्रह सिद्ध किये गये है और आगे सस्कार देकर स्पष्टग्रहविधि प्रतिपादित की है। इसके प्रारम्भमें ग्रहोकी गति सिद्ध करते हुए लिखा गया है—

पश्चात् व्रजन्तोऽतिजवान्नक्षत्रै सततं ग्रहाः।
जीयमानास्तु लम्बन्ते तुल्यमेव स्वमार्गगाः॥
प्राग्गतित्वमतस्तेषां भगणै. प्रत्यह गति.।
परिणाहवशाद्भिन्नः तद्वशाद्भानि भुञ्जते॥

अर्थात्—शीघ्रगामी नक्षत्रोके साथ सदैव पश्चिमकी ओर चलते हुए ग्रह

अपनी-अपनी कक्षामे समान परिमाणमे हारकर पीछे रह जाते हैं, इसीलिए वह पूर्वकी ओर चलते हुए दिखलाई पडते है और कक्षाओकी परिधिके अनुसार उनकी दैनिक परिधि भी भिन्न दिखाई पडती है, इसलिए नक्षत्र चक्रको भी यह भिन्न समयमें—शीघ्रगामी ग्रह थोडे समयमें और मन्दगति अधिक समयमे पूरा करते है। तात्पर्य यह है कि आकाशमे जितने तारे दिखलाई पडते है, वे सब ग्रहोके साथ पश्चिमकी ओर जाते हुए मालूम पडते है, परन्तु नक्षत्रोके बहुत शीघ्र चलनेके कारण ग्रह पीछे रह जाते है और पूर्वको चलते हुए दिखलाई पडते हैं। इनकी पूर्वकी ओर बढनेकी चाल तो समान है, पर इनकी कक्षाओका विस्तार भिन्न होनेसे इनकी गति भी भिन्न देख पडती है। इस कथनसे ग्रहोकी योजनात्मिका और कलात्मिका, दोनो प्रकारकी गतियाँ सिद्ध हो जाती है।

इस ग्रन्थमे मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, परलेखाधिकार ग्रहयुत्यधिकार, नक्षत्रग्रहयुत्यधिकार उदयास्ताधिकार, शृगोन्नत्यधिकार, पाताधिकार और भूगोलाध्याय नामक प्रकरण है।

उपर्युक्त पचसिद्धान्तोंके अतिरिक्त नारदसहिता, गर्गसहिता आदि दो-चार सहिता ग्रन्थ और भी मिलते है, परन्तु इनका रचनाकाल निर्धारित करना कठिन है। गर्गसहिताके जो फुटकर प्रकरण उपलब्ध है, वे बडे उपयोगी हैं, उनसे भारतीय सस्कृतिके सम्बन्धमें बहुत-कुछ ज्ञात हो जाता है। युगपुराण नामक अशसे उस युगकी राजनीतिक और सामाजिक दशापर पर्याप्त प्रकाश पडता है। इस ग्रन्थकी भाषा प्राकृत मिश्रित सस्कृत है, भाषाकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ जैन मालूम पडता है। परन्तु निश्चित प्रमाण एक भी नहीं है। ज्योतिष शास्त्र विज्ञानमूलक होनेके कारण इसमे समय-समयपर परिवर्तन होते रहते हैं। अतएव प्राचीन ग्रन्थोमे अनेक सशोधन हुए है, इसी कारण किसी भी ग्रन्थका सबल प्रमाणोंके अभावमे रचनाकाल ज्ञात करना कठिन ही नही, बल्कि असम्भव है।

कौटिल्यके अर्थशास्त्रमे ऐसे कई प्रकरण है जिनसे पता चलता है कि उस कालमे ज्योतिषी हर प्रकारके ज्योतिष-गणितसे पूर्ण परिचित थे। तथा ज्योतिषशास्त्रका पर्यवेक्षण आलोचनात्मक ढगसे होने लग गया था। इसके एक-दो स्थल ऐसे भी है, जिनसे वसिष्ठ सिद्धान्त और पितामह सिद्धान्तके प्रचारका भी भान होता है। आर्यभट्टसे कुछ पूर्व ऋषिपुत्र नामके एक ज्योतिर्विद् हुए है। इनकी गणितविषयक रचनाएँ तो नही मिलती है, पर सहिताशास्त्रके यह प्रथम लेखक जँचते है।

पराशर—नारद और वसिष्ठके अनन्तर फलित ज्योतिषके सम्बन्धमे महर्षिपद प्राप्त करनेवाले पराशर हुए है। कहा जाता है कि "कलौ पाराशर स्मृत" अर्थात् कलियुगमे पराशरके समान अन्य महर्षि नही हुए। उनके ग्रन्थ ज्योतिष विषयके जिज्ञासुओके लिए बहुत उपयोगी है। वृहत्पाराशरहोराशास्त्रके प्रारम्भमें बताया है —

अथैकदा मुनिश्रेष्ठं त्रिकालज्ञं पराशरम्।
पप्रच्छोपेत्य मैत्रेय प्रणिपत्य कृताञ्जलिः॥

एक समय मैत्रेयजीने महर्षि पराशरके समीप उपस्थित होकर साष्टाग प्रणाम करके हाथ जोडकर पूछा—

भगवन्! परमं पुण्यं गुह्यं वेदाङ्गमुत्तमम्।
त्रिस्कन्धं ज्यौतिषं होरा गणित संहितेति च॥
एतेष्वपि त्रिषु श्रेष्ठा होरेति श्रूयते मुने।
त्वत्तस्तां श्रोतुमिच्छामि कृपया वद मे प्रभो॥

हे भगवन्! वेदागोमें श्रेष्ठ ज्योतिषशास्त्रके होरा, गणित और सहिता इस प्रकार तीन स्कन्ध है। उनमे भी सबसे होरा शास्त्र ही श्रेष्ठ है, वह मै आपसे सुनना चाहता हूँ। कृपाकर मुझे बतला दिया जाये।

पराशरका समय कौन-सा है तथा इन्होने अपने जन्मसे किस स्थानको पवित्र किया था, यह अभीतक अज्ञात है। पर इनकी रचना 'वृहत्पाराशरहोरा'के अध्ययनसे इतना स्पष्ट है कि इनका समय 'वराहमिहिरसे कुछ

पूर्व है। वराहमिहिरने वृहज्जातकमे ग्रहोके उच्चनीचस्थान, मूलत्रिकोण, नैसर्गिकमित्रता प्रभृति विपय वृहत्पाराशरहोरासे ग्रहण किये प्रतीत होते है, भापा शैली और विपय निरूपण वराहमिहिरसे पूर्ववर्त्ती प्रतीत होता है। मृष्टितत्त्वका निरूपण सूर्य सिद्धान्तके समान है। पौराणिक साहित्यमें भी सृष्टिका निरूपण इसी प्रकार उपलव्ध होता है। मनुस्मृति और सूर्य सिद्धान्तके सृष्टिक्रमकी अपेक्षा भिन्न है। वताया है—

एकोऽव्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वर ।
शुद्धसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वित' ॥
ससारकारकः श्रीमान्निमित्तात्मा प्रतापवान् ।
एकांशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीलया ॥

—सृष्टिक्रम श्लो० १२–१३

स्पष्ट है कि उक्त कथन पौराणिक है अत वृहत्पाराशरहोराका समय ७–८वी शती होना चाहिए।

कौटिल्यमे पराशरका नाम आता है। पर यह नही कहा जा सकता कि ये पराशर 'वृहत्पाराशरहोराशास्त्र'के रचयितासे भिन्न है या वही है। पराशरकी एक स्मृति भी उपलव्ध है। गरुडपुराणमे पराशर स्मृतिके ३९ श्लोकोको सक्षिप्त रूपमे अपनाया है, इससे इस स्मृतिकी प्राचीनता सिद्ध है। कौटिल्यने पराशर और पराशरमतोकी छह वार चर्चा की है। पराशरका नाम प्राचीनकालसे ही प्रसिद्ध है। तैत्तिरीयारण्यक एव वृहदारण्यकमे क्रमसे व्यास पाराशर्य एवं पाराशर्य नाम आये है। निरुक्तने 'पाराशर'के मूलपर लिखा है। पाणिनिने भी भिक्षुसूत्र नामक ग्रन्थको पाराशर्य माना है। पराशर स्मृतिकी भूमिकामें आया है कि ऋषि लोगोने व्यासके पास जाकर उनसे प्रार्थना की कि वे कलियुगके मानवोंके लिए आचारसम्वन्धी धर्मकी वातें लिखें। व्यासजी उन्हें वदरिकाश्रममें शक्तिपुत्र अपने पिता पराशरके पास ले गये और पराशरने उन्हें वर्णधर्मके विपयमें वताया। पराशर स्मृतिमें अन्य १९ स्मृतियोंके नाम आये है। पराशर स्मृतिमें कुछ

नयी और मौलिक बातें भी पायी जाती हैं। पराशरने मनु, उशना, वृहस्पति आदिका उल्लेख किया है। इस स्मृतिमें विनायक स्तुति भी पायी जाती है। पाराशर संहिताका मिताक्षरा, विश्वरूप या अपरार्कने उद्धरण नही दिया है, किन्तु चतुर्विंशतिमतके भाष्यमे भट्टोजिदीक्षित तथा दत्तकमीमासामें नन्दपण्डितने इससे उद्धरण लिये है। अतएव स्पष्ट है कि बृहत्पाराशरहोराके रचयिता यदि स्मृतिकार पराशर ही है, तो इनका समय ईसवी पूर्व होना चाहिए। हमारा अनुमान है कि वृहत्पाराशरहोराके रचयिता पराशर ईसवी सन्की ५-६वी शतीके हैं। ग्रन्थकी भाषा और शैलीके साथ विपय-विवेचन भी वराहमिहिरसे पूर्ववर्त्ती है। अत. ग्रन्थका रचनाकाल ई० सन् ५वी शती और रचनास्थल पश्चिम भारत है।

वृहत्पाराशरहोरा ९७ अध्यायोमें है। उपसहाराध्यायमे समस्त विषयोकी सूची दे दी गयी है। इसमे ग्रहगुणस्वरूप, राशिस्वरूप, विशेपलग्न, पोडशवर्ग, राशिदृष्टि कथन, अरिष्टाध्याय, अरिष्टभग, भावविवेचन, द्वादशभावोका पृथक्-पृथक् फलनिर्देश, अप्रकाशग्रहफल, ग्रहस्फुट-दृष्टिकथन, कारक, कारकाशफल, विविधयोग, रवियोग, राजयोग, दारिद्र्ययोग, आयुर्दाय, मारकयोग, दशाफल, विशेप नक्षत्र दशाफल, कालचक्र, सूर्यादि ग्रहोकी अन्तर्दशाओका फल, अष्टकवर्ग, त्रिकोणशोधन, पिण्डसाधन, रश्मिफल, नष्टजातक, स्त्रीजातक, अगलक्षणफल, ग्रहशान्ति, अशुभजन्म-निरूपण, अनिष्टयोगशान्ति आदि विपय वर्णित हैं। सहिता और जातक दोनो ही प्रकारके विषय इस ग्रन्थमें आये हैं। यह ग्रन्थ फलितकी दृष्टिसे वहुत उपयोगी है। ग्रन्थके अन्तमें बताया है—

> इत्थ पराशरेणोक्तं होराशास्त्रचमत्कृतम्।
> नवं नवजनप्रीत्यै विविधाध्यायसयुतम्॥
> श्रेष्ठ जगद्धितायेद मैत्रेयाय द्विजन्मने।
> तत प्रचरितं पृथ्व्यामादृतं सादरं जनै.॥

—उपसहाराध्याय श्लो० ८–९

इस प्रकार प्राचीन होरा ग्रन्थोमे विलक्षण अनेक अध्यायोंसे युक्त अति श्रेष्ठ इस नवीन होराशास्त्रको ससारके हितके लिए महर्षि पराशरने मैत्रेयको बतलाया। पश्चात् समस्त जगत्में इसका प्रचार हुआ और सभीने इसका आदर किया। उडुदाय प्रदीप (लघुपाराशरी) का प्रणयन पराशर मुनिकृत होरा ग्रन्थका अवलोकन कर ही किया गया है।

ऋषिपुत्र—यह जैन धर्मानुयायी ज्योतिषके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके वशादिका सम्यक् परिचय नही मिलता है, पर Catalogus Catalogorum के अनुसार यह आचार्य गर्गके पुत्र थे। गर्ग मुनि ज्योतिषके धुरन्धर विद्वान् थे, इसमें कोई सन्देह नही। इनके सम्बन्धमे लिखा मिलता है-

जैन आसीज्जगद्वन्द्यो गर्गनामा महामुनि.।
तेन स्वय हि निर्णीत य सत्पाशात्रकेवली ॥
एतज्ज्ञानं महाज्ञान जैनर्षिभिरुदाहृतम्।
प्रकाश्य शुद्धशीलाय कुलीनाय महात्मना ॥

सम्भवत इन्ही गर्गके वशमें ऋषिपुत्र हुए होगे। इनका नाम भी इस बातका साक्षी है कि यह किसी मुनिके पुत्र थे। ऋषिपुत्रका वर्तमानमें एक निमित्तशास्त्र उपलब्ध है। इनके द्वारा रची गयी एक संहिताका भी मदनरत्न नामक ग्रन्थमें उल्लेख मिलता है। इन आचार्यके उद्धरण बृहत्सहिताकी भट्टोत्पली टीकामें भी मिलते हैं।

ऋषिपुत्रका समय वराहमिहिरके पूर्वमे है। इन्होने अपने बृहज्जातकके २६वें अध्यायके ५वें पद्यमें कहा है—"**मुनिमतान्यवलोक्य सम्यग्घोरा वराहमिहिरो रुचिरा चकार।**" इसी परम्परामें ऋषिपुत्र हुए है। ऋषिपुत्रका प्रभाव वराहमिहिरकी रचनाओपर स्पष्ट लक्षित होता है। उदाहरणके लिए एक-दो पद्य दिये जाते हैं—

ससलोहिवण्णहोवरि संकुण इत्ति होइ णायव्वो।
सगामं पुण घोर खग्ग सूरो णिवेदेई ॥

—ऋषिपुत्र

शशिरुधिरनिभे भानौ नभःस्थले भवन्ति सङ्ग्रामाः ।

—वराहमिहिर

जे दिट्ठभुविरसण्ण जे दिट्ठा कहमेणकत्ताणं ।
सदसकुलेन दिट्ठा वऊसट्ठिय ऐण वाणयिया ॥

—ऋषिपुत्र

भौमं चिरस्थिरभवं तच्छान्तिभिराहृतं शममुपैति ।
नाभसमुपैति मृदुता क्षरति न दिव्य वदन्त्येके ॥

—वराहमिहिर

उपर्युक्त अवतरणोसे ज्ञात होता है कि ऋषिपुत्रकी रचनाओका वराह-मिहिरके ऊपर प्रभाव पडा है ।

सहिता विषयकी प्रारम्भिक रचना होनेके कारण ऋषिपुत्रकी रच-नाओमें विषयकी गम्भीरता नही है । किसी एक ही विषयपर विस्तारसे नही लिखा है, सूत्ररूपमे प्राय सहिताके प्रतिपाद्य सभी विषयोका निरूपण किया है । शकुनशास्त्रका निर्माण इन्होने किया है, अपने निमित्तशास्त्रमें इन्होने पृथ्वीपर दिखाई देनेवाले, आकाशमे दृष्टिगोचर होनेवाले और विभिन्न प्रकारके शब्द-श्रवण-द्वारा प्रकट होनेवाले इन तीन प्रकारके निमित्तो-द्वारा फलाफलका अच्छा निरूपण किया है । वर्षोत्पात, देवोत्पात, रजोत्पात, उल्कोत्पात, गन्धर्वोत्पात इत्यादि अनेक उत्पातो-द्वारा शुभा-शुभत्वकी मीमासा वडे सुन्दर ढगसे इनके निमित्तशास्त्रमें मिलती है ।

आर्यभट्ट प्रथम—ज्योतिषका क्रमवद्ध इतिहास आर्यभट्टके समयसे मिलता है । इनका जन्म ई० सन् ४७६ मे हुआ था, इन्होने ज्योतिषका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभटीय' लिखा है । इसमे सूर्य और तारोके स्थिर होने तथा पृथ्वीके घूमनेके कारण दिन और रात होनेका वर्णन है । पृथ्वीकी परिधि ४९६७ योजन वतायी गयी है ।

आर्यभट्टने सूर्य और चन्द्रग्रहणके वैज्ञानिक कारणोकी व्याख्या की है । कालक्रियापादमे युगके समान २ भाग करके पूर्व भागका उत्सर्पिणी और

उत्तर भागका अवसर्पिणी नाम बताया है तथा प्रत्येकके सुषमासुषमा, सुषमा आदि छह-छह भेद बताये हैं—

उत्सर्पिणी युगार्द्धं पश्चादवसर्पिणी युगार्द्धं च ।
मध्ये युगस्य सुषमाऽऽदावन्ते दुःषमाग्न्यंशात् ॥

कालक्रिया पादमे क्षेपक विधिसे ग्रहोके स्पष्टीकरणकी विधि विस्तारसे बतलायी है तथा बुध, शुक्रको विलक्षण सस्कारसे सस्कृत कर स्पष्ट किया है। गोलपादमें मेरुकी स्थितिका सुन्दर वर्णन किया है तथा अक्षक्षेत्रोके अनुपात-द्वारा लम्बज्या, अक्षज्याका साधन सुगमतासे किया है।

आर्यभट्टने १, २, ३ आदि अक सख्याके द्योतक क, ख, ग आदि वर्ण कल्पना किये है अर्थात् अ, आ इत्यादि स्वर वर्ण और क, ख, ग आदि व्यजन वर्णोका १-१ सख्या वाचक अर्थ देकर बडी-बडी सख्याओको प्रकाशित किया है। गीतिकापादमे कहा है—

वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात् ङ्मौ यः ।
खद्विनवके स्वरा नववर्गेऽवर्गे नवान्त्यवर्गे वा ॥

क = १, ख = २, ग = ३, घ = ४, ङ = ५, च = ६, छ = ७, ज = ८, झ = ९, ञ = १०, ट = ११, ठ = १२, ड = १३, ढ = १४, ण = १५, त = १६, थ = १७, द = १८, ध = १९, न = २०, प = २१, फ = २२, ब = २३, भ = २४, म = २५, य = ३०, र = ४०, ल = ५०, व = ६०, श = ७०, ष = ८०, स = ९०, ह = १०० । क = १, कि = १००, कु = १००००, कृ = १००००००, क्लृ = १००००००००, के = १००००००००००, कै = १०००००००००००००, को = १००००००००००००००, कौ = १००००००००००००००००, ख = २, खि = २००, खु = २००००, खृ = २००००००, ख्लृ = २००००००००, खे = २००००००००००, खै = २०००००००००००००, खो = २००००००००००००००, खौ = २००००००००००००००००; इसी प्रकार आगेकी अक सख्याएँ दी गयी हैं।

कुछ पाश्चात्त्य विद्वान् आर्यभट्टकी इस अक सख्यापर-से अनुमान करते है कि उन्होने यह सख्याक्रम ग्रीकोसे लिया है। चाहे जो हो, पर इतना निश्चित है कि आर्यभट्टने पटनामे, जिसका प्राचीन नाम कुसुमपुर था, अपने अपूर्व ग्रन्थकी रचना की है। इनकी गणितविषयक विद्वत्ताका निदर्शन यही है कि उन्होने गणितपादमे वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल एव व्यवहार श्रेणियोके गणितका सुन्दर विवेचन किया है।

अंगविज्जा—अगविद्या भारतवर्षमें प्राचीनकालसे प्रसिद्ध रही है। प्रस्तुत ग्रन्थमे प्राचीन अगविद्याके नियम सकलित है। अष्ट प्रकारके निमित्तज्ञानमे अगनिमित्तको प्रधान और महत्त्वपूर्ण बताया है। आचार्य-ने लिखा है —

जधा णदीओ सव्वाओ ओवरंति महोदधिं।
एवं ३ गोदधिं सव्वे णिमित्ता ओतरंति'ह ॥ १। ६ पृ० १

अर्थात् जिस प्रकार समस्त नदियाँ समुद्रमें मिल जाती है, उसी प्रकार स्वर, लक्षण, व्यजन, स्वप्न, छिन्न, भौम और अन्तरिक्षनिमित्त अग-निमित्त रूपी समुद्रमे मिल जाते है। इस ग्रन्थके अध्ययनसे जय-पराजय, लाभ-हानि, जीवन-मरण आदिको सम्यक् जानकारी प्राप्त की जा सकती है। बताया है—

अणुरत्तो जय पराजय वा राजमरण वा आरोग्गं वा रण्णो आतंकं वा उवद्दव वा मा पुण सहसा वियागरिज्ज णाणो। लाभाऽलाभं सुह-दुक्खं जीवितं मरण वा सुभिक्खं दुब्भिक्खं वा अणावुट्ठिं सुवुट्ठिं वा धणहाणि अज्झप्पवित्तं वा कालपरिमाणं अगहियं तत्तत्थणिच्छियमई सहसा उ ण वागरिज्ज णाणी। पृ० ७

यह ग्रन्थ साठ अध्यायोमें समाप्त किया गया है। इसकी ग्रन्थसख्या नौ हजार श्लोक प्रमाण है। गद्य और पद्य दोनोका प्रयोग किया गया है। यह फलादेशका विशालकाय ग्रन्थ है। इसमें हलन-चलन, रहन-सहन, चर्या-चेष्टा प्रभृति मनुष्यकी सहज प्रवृत्तिसे निरीक्षण-द्वारा फलादेशका निरूपण

किया गया है। यह प्रश्नशास्त्रका ग्रन्थ है और प्रश्नकर्त्ताकी विभिन्न प्रवृत्तियोंके आधारपर फलादेशका कथन करता है। अतएव गम्भीर अध्ययनके अभावमे वास्तविक फलादेशका निरूपण नही किया जा सकता है। ग्रन्थकर्त्ताने अगोके आकार-प्रकार, वर्ण, संख्या, तोल, लिंग, स्वभाव आदिकी दृष्टिसे उनको २७० विभागोमें विभक्त किया है, विविध चेष्टाएँ, पर्यस्तिका, आमर्श, अपश्रय-आलम्बन, खडे रहना, देखना, हँसना, प्रश्न करना, नमस्कार करना, सलाप, आगमन, रुदन, परिवेदन, क्रन्दन, पतन, अभ्युत्थान, निर्गमन, जँभाई लेना, चुम्बन, आलिंगन, प्रभृति नाना चेष्टाओका निरूपण कर फलादेशका प्रतिपादन किया गया है।

इस ग्रन्थके नवम अध्यायमे २७० विषयोका निरूपण किया है। प्रथम द्वारमें शरीरसम्बन्धी ७५ अगोके नाम और उनका फलादेश वर्णित है। यथा—

एताणि आमसं पुच्छे अत्थलाभं जयं तधा।
पराजयं वा सत्तूणं मित्तसपत्तिमेव य ॥ ८। ८ पृ० ६०
समागमं घरावासं थाणमिस्सरियं जसं।
णिव्वुतिं वा पतिट्ठं वा भोगलाभ सुहाणि य ॥ ९। ९ पृ० ६०
दासी-दास जाण-जुग्ग गो-माहिसमडयाऽविलं।
धण-धण्ण खेत्त-वत्थु च विज्जा सपत्तिमेव य ॥ ९।१० पृ० ६०

मस्तक, सिर, सीमन्तक, ललाट, नेत्र, कान, कपोल, ओष्ठ, दांत, मुख, ममूडा, कन्धा, बाहु, मणिबन्ध, हाथ, पैर प्रभृति ७५ अगोका एक बार स्पर्श कर प्रश्नकर्त्ता प्रश्न करे तो अर्थलाभ, जय, शत्रुओके पराजय, मित्र-सम्पत्ति प्राप्ति, समागम, घरमे निवास, स्थानलाभ, यशप्राप्ति, निवृत्ति, प्रतिष्ठा, भोगप्राप्ति, सुख, दासी-दास, यान—सवारी, गाय-भैंस, धन-धान्य, क्षेत्र, वास्तु, विद्या एव सम्पत्ति आदिकी प्राप्ति होती है। उक्त अगोका एक बारसे अधिक स्पर्श करे तो फल विपरीत होता है। वस्त्र और आभूषणोंके स्पर्शका फलादेश भी वर्णित है। इस सन्दर्भमे

विभिन्न प्रकारके मनुष्य, देवयोनि, नक्षत्र, चतुष्पद, पक्षी, मत्स्य, वृक्ष, गुल्म, पुष्प, फल, वस्त्र, आभूषण, भोजन, शयनासन, भाण्डोपकरण, धातु, मणि एव सिक्कोके नामोकी सूचियाँ दी गयी है। वस्त्रोमे पटशाटक, क्षौम, दुकूल, चीनांशुक, चीनपट्ट, प्रावार, शाटक, श्वेतशाट, कौशेय और नाना प्रकारके कम्बलोका उल्लेख आया है। पहननेके वस्त्रोमे उत्तरीय, उष्णीप, कंचुक, वारवाण, सन्नाह पट्ट, विताणक, पच्छत–पिछौरी एवं मल्लसाडक—पहलवानोके लगोटका उल्लेख है। आभूपणोकी नामावली विशेष रोचक है। किरीट और मुकुट सिरपर पहननेके आभूषण है। सिंह-भण्डक वह सुन्दर आभूपण था, जिसमें सिंहके मुखकी आकृति वनी रहती थी और उस मुखमे-से मोतियोके झुग्गे लटकते हुए दिखाये जाते थे। गरुडकी आकृतिवाला आभूषण गरुडक और दो मकरमुखोकी आकृतियोको मिलाकर वनाया गया आभूपण मगरक कहलाता था। इसी प्रकार वैलकी आकृतिवाला वृपभक, हाथीकी आकृतिवाला हत्थिक और चक्रवाक मिथुन-की आकृतिवाला चक्रमिथुनक कहलाता था। इन वस्त्र और आभूपणोंके स्पर्श और अवलोकनसे विभिन्न प्रकारके फलादेश वर्णित है।

५५वें अध्यायमें पृथ्वीके भीतर निहित धनको जाननेकी प्रक्रिया वर्णित है। "तत्थ अत्थि णिधितं ति पुव्वमाधारिते णिधितमट्ठविधमादिसे। तं जधा–भिण्णसतपमाण भिण्णसहस्सपमाण सयसहस्सपमाण कोडिपमाणं अपरिमियपमाणमिति। कायमतेसु उम्मट्ठेसु परिमियणिहाण वूया। तत्थ अपुण्णामेसु अब्भंतरामासे दढामासे णिद्धमासे सुद्धामासे पुण्णामासे य सभ वूया। भिण्णे दसक्खे पुव्वाधारिते दो वा चत्तारि वा अट्ठ वा वूया। समे पुव्वाधारिते दसक्खेवीसं वा [चत्तालीसं वा] सट्ठि वा असीतिं वा वूया।"—पृ० २१३। स्पष्ट है कि पृथ्वीमे निहित निधिका आनयन एव तत्सम्वन्धी विभिन्न जानकारी प्रश्नोके द्वारा की जा सकती है। निधिकी प्राप्ति किस देशमे होगी, इसका विचार भी किया गया है। नष्ट धनके आनयनका विचार ५७वें अध्यायमें किया है। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, तारागण

आदिके विचार-द्वारा नष्टकोपका विचार किया गया है। इस ग्रन्थकी प्रश्न-प्रक्रिया एक प्रकारसे शकुन और चर्या-चेष्टापर अवलम्बित है। प्रसगवश दी गयी विभिन्न सूचियोके आधारसे सस्कृति और सभ्यताकी अनेक महत्त्व-पूर्ण बातें जानी जा सकती है। बरतन, भोजन, भक्ष्य पदार्थ, वस्त्राभूषण, सिक्के प्रभृतिका विस्तारपूर्वक निर्देश किया है। इस ग्रन्थके परिशिष्टके रूपमे 'सटीक अगविद्याशास्त्र' दिया गया है। इसमें अग-प्रत्यगके स्पर्शन पूर्वक शुभाशुभ फलोका निरूपण किया है। सस्कृतमे श्लोक लिखे गये है और टीका भी सस्कृतमे निबद्ध है। ४४ पद्य है और टीकामे अनेक महत्त्वपूर्ण बातें लिखी गयी हैं। इस छोटे-से ग्रन्थका विषय प्राचीन है, पर भाषा-शैली प्राचीन प्रतीत नही होती। इसके रचयिताका भी नाम ज्ञात नही है, पर इतना स्पष्ट है कि अगविद्या भारतका पुरातन ज्ञान है। ग्रन्थके आरम्भमें टीकामें बताया है—

"कालोऽन्तरात्मा सर्वदा सर्वदर्शी शुभाशुभै फलसूचकै सविशेषेण प्राणिनामपराङ्गेषु स्पर्श-व्यवहारेङ्गितचेष्टादिभिर्निमित्तै. फलमभिदर्शयति।" अर्थात् अगस्पर्श, व्यवहार और चर्या-चेष्टादिके द्वारा शुभाशुभ फलका निरूपण किया गया है। इस लघुकाय ग्रन्थमें अगोकी विभिन्न सज्ञाओके उपरान्त फलादेश निबद्ध किया गया है।

कालकाचार्य—यह निमित्त और ज्योतिषके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होने अपनी प्रतिभासे शककुलके साहिको स्ववश किया था तथा गर्दभिल्ल-को दण्ड दिया था, जैन परम्परामे ज्योतिषके प्रवर्तकोमे इनका मुख्य स्थान है, यदि यह आचार्य निमित्त और सहिताका निर्माण न करते तो उत्तरवर्ती जैन लेखक ज्योतिषको पापश्रुत समझकर अछूता ही छोड देते।

कालक कथाओमे पता चलता है कि यह मध्य देशान्तर्गत, 'धारावास' नामक नगरके राजा वयरसिंहके पुत्र थे। इनकी माताका नाम सुरसुन्दरी और बहनका नाम सरस्वती था। एक बार यह घोडेपर वनमें घूमने गये, वहाँ इनकी जैन मुनि गुणाकरसे मुलाकात हुई और उनका धर्मोपदेश सुन-

कर ससारसे विरक्त हो गये और बहुत समय तक जैन शास्त्रोका अभ्यास करते रहे तथा थोडे समयके पश्चात् आचार्य पदको प्राप्त हुए। पाटन (उत्तर गुजरात) के एक ताडपत्रीय पुस्तक भण्डारमे ताडपत्रपर लिखे गये एक प्रकरणमे एक प्राकृत गाथा मिली है, जिसमे बताया गया है कि—"कालका सूरिने प्रथमानुयोगमे जिन, चक्रवर्ती, वासुदेव आदिके चरित्र और उनके पूर्व भवोका वर्णन किया है। तथा लोकानुयोगमे बहुत बडे निमित्त शास्त्रकी रचना की है।" भोजसागर गणि नामक विद्वान्ने सस्कृत भाषामे रमल विद्याविषयक एक ग्रन्थ लिखा है, उसमे उन्होने कालकाचार्य-द्वारा यवन देशसे लायी गयी इस विद्याको बताया है। इस घटनामे चाहे तथ्य हो या नही, पर इतना स्पष्ट है कि ईसवी सन्की तीसरी शताब्दीके ज्योतिर्विदोमे इनका गौरवपूर्ण स्थान था। वराहमिहिराचार्यने बृहज्जातकमे कालकसहिताका उल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि उन्होने एक सहिता ग्रन्थ भी लिखा था, जो आज उपलब्ध नही है, पर निशीथचूर्णि, आवश्यकचूर्णि आदि ग्रन्थोसे इनके ज्योतिष-ज्ञानका पता सहजमे लगाया जा सकता है। ईसवी सन्की प्रथम और द्वितीय शताब्दीके मध्यमे होनेवाले आचार्य उमास्वामी भी ज्योतिषके आवश्यक सिद्धान्तोंसे अभिज्ञ थे।

द्वितीय आर्यभट्ट—इनका सिद्धान्त 'महाआर्यभट्टीय'के नामसे प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थका दूसरा नाम 'महाआर्यसिद्धान्त' भी बताया जाता है। इसमे १८ अध्याय एव ६२५ आर्या—उपगीति है, पाटीगणित, क्षेत्र-व्यवहार और बीजगणित भी इसमे सम्मिलित है। पाराशर सिद्धान्तसे इसमे ग्रह भगण लिये है। इसने प्रथम आर्यभट्टके सिद्धान्तमें कई तरहसे सशोधन किया है। कुछ लोग द्वितीय आर्यभट्टका काल ब्रह्मगुप्तके बाद बतलाते है, पर निश्चित प्रमाणके अभावमे कुछ नही कहा जा सकता है। भास्कराचार्यने अपने सिद्धान्तशिरोमणिके स्पष्टाधिकारमे द्रेष्काणोदय आर्यभट्टीयका दिया है, अत यह भास्करके पूर्ववर्ती है, इतना निश्चित है। महाआर्यसिद्धान्त ज्योतिषकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसकी परम्परा पीछेके अनेक

ज्योतिर्विदोने अपनायी है। इनके जीवन-वृत्तके सम्बन्धमें निश्चित रूपसे कुछ भी ज्ञात नही, पर इनके पाण्डित्यका अनुमान महाआर्यसिद्धान्त-मे किया जा सकता है।

लल्लाचार्य—इनके पिताका नाम भट्टत्रिविक्रम और पितामहका नाम शाम्ब था। लल्लाचार्यके गुरुका नाम प्रथम आर्यभट्ट बताया गया है। इनका जन्म श० स० ४२१ मे हुआ था। इन्होने अपने 'शिष्यधीवृद्धि' नामक ज्योतिष ग्रन्थकी रचना आर्यभट्टकी परम्पराको लेकर की है—

आचार्याऽऽर्यभटोदित सुविषम व्योमौकसा कर्म य-
च्छिष्याणामभिधीयते तदधुना लल्लेन धीवृद्धिदम् ॥
विज्ञाय शास्त्रमलमार्यभटप्रणीतं तन्त्राणि यद्यपि कृतानि तदीयशिष्यैः ।
कर्मक्रमो न खलु सम्यगुदीरितस्तै कर्म ब्रवीम्यहमत क्रमशस्तु सूक्ष्मम् ॥

लल्लाचार्य गणित, जातक और सहिता इन तीनो स्कन्धोमे पूर्ण प्रवीण थे। यद्यपि यह आर्यभट्टके सिद्धान्तोको लेकर चले है, पर तो भी अनेक विशेष विषय इनके ग्रन्थोमे पाये जाते है। शिष्यधीवृद्धिमे प्रधान रूपसे गणिताध्याय और गोलाध्याय, ये दो प्रकरण है। गणिताध्यायमे मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रह-णाधिकार, पर्वसम्भवाधिकार, ग्रहयुत्यधिकार, भग्रहयुत्यधिकार, महापाता-धिकार और उत्तराधिकार नामक उपप्रकरण है। गोलाध्यायमे छेदाधि-कार, गोलबन्धाधिकार, मध्यगतिवासना, भूगोलाध्याय, ग्रहभ्रमसस्थाध्याय, भुवनकोश, मिथ्याज्ञानाध्याय, यन्त्राध्याय और प्रश्नाध्याय नामक उपप्रक-रण है। इनका 'रत्नकोष' नामक सहिता ग्रन्थ भी मिलता है। भास्करा-चार्यने यद्यपि इनके सिद्धान्तोका खण्डन किया है, पर तो भी इनकी विद्व-त्ताका लोहा उन्होने माननेसे इनकार नही किया है।

त्रिस्कन्धविद्याकुशलैकमल्लो लल्लोऽपि यत्राऽप्रतिमो बभूव ।
यातेऽपि किञ्चिद् गणिताधिकारे पाताधिकारे गमनाऽधिकारे ॥

उपर्युक्त श्लोकसे स्पष्ट है कि भास्कराचार्य भी लल्लकी विद्वत्ताके कायल थे।

यदि सूक्ष्मनिरीक्षण-द्वारा भास्करकी रचनाओंका परीक्षण किया जाये तो स्पष्ट ज्ञात होगा कि लल्लाचार्यकी अनेक बातें ज्योंकी त्यों अपना ली गयी हैं। उत्क्रमज्या-द्वारा साधित ग्रहप्रणाली इनकी मौलिक विशेषता है।

पूर्वमध्यकाल (ई० ५०१–१००० तक)

सामान्य परिचय

इस युगमें ज्योतिषशास्त्र उन्नतिकी चरम सीमापर था। वराहमिहिर-जैसे अनेक धुरन्धर ज्योतिर्विद् हुए, जिन्होंने इस विज्ञानको क्रमबद्ध किया तथा अपनी अद्वितीय प्रतिभा-द्वारा अनेक नवीन विषयोंका समावेश किया। इस युगके प्रारम्भिक आचार्य वराहमिहिर या वराह हैं, जिन्होंने अपने पूर्वकालीन प्रचलित सिद्धान्तोंका पंचसिद्धान्तिकामें संग्रह किया। इस कालमें ज्योतिषके सिद्धान्त, संहिता और होरा ये तीन भेद प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रहगणितके क्षेत्रमें सिद्धान्त, तन्त्र एवं करण इन तीन भेदोंका प्रचार भी होने लग गया था। सिद्धान्तगणितमें कल्पादिसे, तन्त्रमें युगादिसे और करणमें शकाब्दपर-से अहर्गण बनाकर ग्रहादिका आनयन किया जाता है। सिद्धान्तमें जीवा और चापके गणित-द्वारा ग्रहोंका फल लाकर आनीत मध्यमग्रहमें संस्कार कर देते हैं तथा भौमादि ग्रहोंका मन्द और शीघ्रफल लाकर मन्दस्पष्ट और स्पष्ट मान सिद्ध करते हैं।

इस कालमें उदयास्त, युति, शृंगोन्नति आदिका गणित भी प्रचलित हो गया था। ब्रह्मगुप्त और महावीराचार्यने गणित विषयके अनेक सिद्धान्तोंको साहित्यका रूप प्रदान किया। महावीराचार्यकी असीमावद्ध संख्याओंके समाधानकी क्रिया बड़ी विलक्षण है। उपर्युक्त दोनों आचार्योंके बीजगणित-विषयक सिद्धान्तोंपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होगा कि इस युगमें—
(१) ऋण राशियोंके समीकरणकी कल्पना, (२) वर्ग समीकरणको हल

करना, (३) एक वर्ग, अनेक वर्गसमीकरण कल्पना, (४) वर्ग, घन और अनेक घातसमीकरणोको हल करना, (५) अकपाश, सख्याके एकादि भेद और कुट्टकके नियम, (६) केन्द्रफलको निकालना, (७) असीमाबद्ध समीकरण, (८) द्वितीय स्थानकी राशियोका असीमाबद्ध समीकरण, (९) अर्द्धच्छेद, त्रिकच्छेद आदि लघुरिक्थ सम्बन्धी गणित, (१०) अभिन्न राशियोका भिन्न राशियोके रूपमे परिवर्तन करना, आदि सिद्धान्त प्रचलित थे।

पूर्वमध्यकालमे अकगणितके भी निम्न सिद्धान्त आविष्कृत हो चुके थे—

(१) अभिन्न गुणन, (२) भागहार, (३) वर्ग, (४) वर्गमूल, (५) घन, (६) घनमूल, (७) भिन्न-समच्छेद, (८) भागजाति, (९) प्रभागजाति, (१०) भागानुबन्ध, (११) भागमातृजाति, (१२) त्रैराशिक, (१३) पचराशिक, (१४) सप्तराशिक, (१५) नवराशिक, (१६) भाण्ड-प्रतिभाण्ड, (१७) मिश्रव्यवहार, (१८) सुवर्ण गणित, (१९) प्रक्षेपक गणित, (२०) समक्रय-विक्रय गणित, (२१) श्रेणीव्यवहार, (२२) क्षेत्रव्यवहार, (२३) छायाव्यवहार, (२४) स्वाशानुबन्ध, (२५) स्वाशापवाह, (२६) इष्टकर्म, (२७) द्वीष्टकर्म, (२८) चितिघन, (२९) घनातिघन, (३०) एकपत्रीकरण एव (३१) वर्गप्रकृति आदि सिद्धान्तोका अकगणितमे प्रयोग होने लग गया था।

रेखागणितके भी अनेक सिद्धान्तोका प्रयोग उस कालमे व्यापक रूपसे होता था। तथा इस विषयका वर्णन इस युगके प्राय सभी ज्योतिर्विदोने विस्तारसे किया है। सिद्धान्त गणित, जिसके लिए जीवा-चापके गणितकी नितान्त आवश्यकता होती है और जिसका प्रचार आदिकालसे ही चला आ रहा था, इस युगमे उसमे अनेक सशोधन किये गये। लल्लाचार्यने उत्क्रमज्या-द्वारा ही ग्रहगणितका साधन किया था, पर इस कालके आचार्योंने यूनान और ग्रीसके सम्पर्कसे क्रमज्या, कोटिज्या, कोट्युत्क्रमज्या आदि-द्वारा ग्रहगणितका साधन किया। पूर्वमध्यकालके ज्योतिष-साहित्यमे रेखागणितके निम्न सिद्धान्तोका उल्लेख मिलता है—

१ समकोण त्रिभुजमे कर्णका वर्ग दोनो भुजाओंके जोडके बराबर होता है।

२ दिये हुए दो वर्गोंका योग अथवा अन्तरके समान वर्ग बनाना।

३ आयतको वर्ग या वर्गको आयतमे बदलना।

४ करणी-द्वारा राशियोका वास्तविक वर्गमूल निकालना।

५ वृत्तको वर्ग और वर्गको वृत्तोमे बदलना।

६ शकु और वर्तुलके घनफल निकालना।

७ विषमकोण चतुर्भुजके कर्णानयनकी विधि और उसके दोनो कर्णोंके ज्ञानसे भुज-साधन करना।

८ त्रिभुज, विपमकोण चतुर्भुज और वृत्तका क्षेत्रफल निकालना।

९ सूचीव्यास वलयव्यास और वृत्तान्तर्गत वृत्तका व्यास निकालना।

१० वृत्त परिधि, वृत्त सूची और उसके घनफलको निकालना।

रेखागणित और भूमिति गणितके साथ-साथ कोणमितिके ज्योतिषत्रि-विषयक गणितोका प्रचार भी ई० सन् ७००-८०० के मध्यमे हुआ था तथा ब्रह्मगुप्तने इस सम्बन्धमें अनेक सिद्धान्त निर्धारित कर त्रिकोणमिति गणित-को ग्रहसाधनके लिए व्यवहृत किया था।

वृहत्सहितामें दैवज्ञकी विद्वत्ताकी ममालोचना करते हुए लिखा है—

तत्र ग्रहगणिते पौलिशरोमकवासिष्ठसौरपैतामहेषु पञ्चस्वेतेषु सिद्धान्तेषु युगवर्षायनर्तुमासपक्षाहोरात्रयाममुहूर्त्तनाडीविनाडीप्राणत्रुटित्रुट्यवयवाद्यस्य कालस्य क्षेत्रस्य च वेत्ता।

चतुर्णां च मासानां सौरसावननाक्षत्रचान्द्राणामधिमासकावमसम्भवस्य च कारणाभिज्ञः।

षष्ट्यब्दयुगवर्षमासदिनहोराधिपतीनां प्रतिपत्तिविच्छेदवित्।

सौरादीनाञ्च मानानां सदृशासदृशयोग्यायोग्यत्वप्रतिपादनपटुः॥

सिद्धान्तभेदेऽप्ययननिवृत्तौ प्रत्यक्ष सममण्डलरेखासम्प्रयोगाभ्युदितांशकानाञ्च छायाजलयन्त्रदृग्गणितसाम्येन प्रतिपादनकुशल। सूर्या-

दीनाञ्च ग्रहाणा शीघ्रमन्दयाम्योत्तरनीचोच्चगतिकारणाभिज्ञ. ।

अर्थात्—पौलिश, रोमक, वासिष्ट, सौर, पितामह इन पाँचो सिद्धान्त-सम्बन्धी युग, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र, प्रहर, मुहूर्त्त, घटी, पल, प्राण, त्रुटि और त्रुटिके सूक्ष्म अवयव काल विभाग, कला, विकला, अंश और राशि रूप सूक्ष्म क्षेत्रविभाग, सौर, सावन, नाक्षत्र और चान्द्र मास, अधिमास तथा क्षयमासका सोपपत्तिक विवरण, सौर एव चान्द्र दिनोका यथार्थ मान और प्रचलित मान्यताओके परीक्षणका विवेक, सम-मण्डलीय छायागणित, जलयन्त्र-द्वारा दृग्गणित, सूर्यादि ग्रहोकी शीघ्रगति, मन्दगति, दक्षिणगति, उत्तरगति, नीच और उच्च गति तथा उनकी वासनाएँ, सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणमे स्पर्श और मोक्षकाल, स्पर्श और मोक्षकी दिशा, ग्रहणकी स्थिति, विमर्द, वर्ण और देश, ग्रहयुति, ग्रह-स्थिति, ग्रहोकी योजनात्मक कक्षाएँ, पृथ्वी, नक्षत्र आदिका भ्रमण, अक्षाश, लम्बाश, द्युज्या, चरखण्डकाल, राशियोके उदयमान एव छाया-गणित आदि विभिन्न विपयोमे पारगत ज्योतिपीको होना आवश्यक बताया गया है ।

उपर्युक्त वाराही सहिताके विवेचनसे स्पष्ट है कि पूर्वमध्यकालके प्रारम्भमे ही ग्रहगणित उन्नतिकी चरम सीमापर था। ई० सन् ६००में इस शास्त्रके साहित्यका निर्माण स्वतन्त्र आकाश-निरीक्षणके आधारपर होने लग गया था। आदिकालीन ज्योतिपके सिद्धान्तोको परिष्कृत किया जाने लगा था ।

फलित ज्योतिप—पूर्वमध्यकालमे फलित ज्योतिपके सहिता और जातक अगोका साहित्य अधिक रूपसे लिखा गया है। राशि, होरा, द्रेष्काण, नवाश, द्वादशाश, त्रिशाश, परिग्रह स्थान, कालबल, चेष्टाबल, ग्रहोके रग, स्वभाव, धातु, द्रव्य, जाति, चेष्टा, आयुर्दाय, दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग, राजयोग, द्विग्रहादियोग, मुहूर्त्तविज्ञान, अगविज्ञान, स्वप्नविज्ञान, शकुन एव प्रश्नविज्ञान आदि फलितके अगोका समावेश होरा शास्त्रमें

होता था। सहितामें सूर्यादि ग्रहोकी चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, सस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, पृथक् मार्ग, वक्र, अनवक्र, नक्षत्रविभाग और कूर्मका सब देशोमे फल, अगस्त्यकी चाल, सप्तर्षियोकी चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहशृंगाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, परिवेष, परिघ, वायु, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिमालक्षण, प्रतिमाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बललक्षण, खड्गलक्षण, पट्टलक्षण, कुक्कुट-लक्षण, कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अश्वलक्षण, स्त्री-पुरुषलक्षण एवं साधारण, असाधारण सभी प्रकारके शुभाशुभोका विवेचन अन्तर्भूत होता था। कही-कहीपर तो कुछ विषय होराके—स्वप्न और शकुन सहिता-में गर्भित किये गये है। इस युगका फलित ज्योतिष केवल पचाग ज्ञान तक ही सीमित नही था, किन्तु समस्त मानव जीवनके विषयोकी आलोचना और निरूपण करना भी इसीमे शामिल था।

ईसवी सन् ५००के लगभग ही भारतीय ज्योतिषका सम्पर्क ग्रीस, अरब और फारस आदि देशोके ज्योतिषके साथ हुआ था। वराहमिहिरने यवनोके सम्बन्धमे लिखा है कि—

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम्।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद् द्विज॥

अर्थात्—म्लेच्छ—कदाचारी यवनोके मध्यमे ज्योतिषशास्त्रका अच्छी तरह प्रचार है, इस कारण वे भी ऋषि-तुल्य पूजनीय है, इस शास्त्रका जानने-वाला द्विज हो तो बात ही क्या?

इससे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके पूर्व यवनोका सम्पर्क ज्योतिष-क्षेत्रमे पर्याप्त मात्रामे विद्यमान था। ईसवी सन् ७७१ मे भारतका एक जत्था बगदाद गया था और उन्हीमे-से एक विद्वान्ने 'ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त' का व्याख्यान किया था। अरबमे इस ग्रन्थका अनुवाद 'अस सिन्द हिन्द' नामसे हुआ है। इब्राहीम इब्नहबीब अलफजारीने इस ग्रन्थके आधारपर मुसलिम

चान्द्रवर्षके स्पष्टीकरणके लिए एक सारणी बनायी थी। अरबमें और भी कई विद्वान् ज्योतिषके प्रचारके लिए गये थे, जिससे वहाँ भारतके युगमानके अनुकरणपर हज़ारो और लाखो वर्षो की युगप्रणालीकी कल्पना कर ग्रन्थ लिखे गये।

भारतका ग्रीसके साथ ईसवी सन् १००के लगभग ही सम्पर्क हो गया था, जिससे ज्योतिष शास्त्रमें परस्परमे बहुत आदान-प्रदान हुआ। भारतीय ज्योतिषमे अक्षाश, देशान्तर, चरमस्कार और उदयास्तकी सूक्ष्म विवेचना मुसलिम और ग्रीक सभ्यताके सम्पर्कसे इस युगमें विशेष रूपसे हुई। पर सिद्धान्त और सहिता इन दो अगोको साहित्यिक रूप प्रदान करनेका सौभाग्य भारतको ही है। यद्यपि जातक अगको जन्म इस देशने दिया था, पर लालन-पालनमे विदेशीय सभ्यताका रग चढनेमे भारत माँकी गोदमें पलनेपर भी कुछ सस्कार पूर्वमध्य कालमें ग्रीक लोगोके पड गये, जो आज तक अक्षुण्ण रूपसे चले आ रहे हैं।

आजके कुछ विद्वान् ईसवी सन् ६००–७०० के लगभग भारतमे प्रश्न अगका ग्रीक और अरबोके सम्पर्कसे विकास हुआ बतलाते है तथा इस अगका मूलाधार भी उक्त देशोके ज्योतिषको मानते हैं, पर यह ग़लत मालूम पड़ता है। क्योकि जैन ज्योतिष जिसका महत्त्वपूर्ण अंग प्रश्नशास्त्र है, ईसवी सनकी चौथी और पाँचवी शताब्दीमें पूर्ण विकसित था। इस मान्यतामे भद्रबाहुविरचित अर्हच्चूडामणिसार प्रश्नग्रन्थ प्राचीन और मौलिक माना गया है। आगेके प्रश्न ग्रन्थोका विकास इसी ग्रन्थकी मूल भित्तिपर हुआ प्रतीत होता है।

जैन मान्यतामे प्रचलित प्रश्न-शास्त्रका विश्लेषण करनेसे प्रतीत होता है कि इसका बहुत-कुछ अश मनोविज्ञानके अन्तर्गत ही आता है। ग्रीकोसे जिस प्रश्न-शास्त्रको भारतने ग्रहण किया है, वह उपर्युक्त प्रश्नशास्त्रसे विलक्षण है।

ईसवी सनकी ७वी और ८वी सदीके मध्यमे 'चन्द्रोन्मीलन' नामक

प्रश्न-ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध था, जिसके आधारपर 'केरलप्रश्न' का आविष्कार भारतमे हुआ है। अतएव यह मानना पडेगा कि प्रश्न अगका जन्म भारतमे हुआ और उसकी पुष्टि ईसवी सन् ७००–९०० तकके समयमे विशेष रूपसे हुई।

उद्योतन सूरिकी कृति कुवलयमालामे ज्योतिष और सामुद्रिकविषयक पर्याप्त निर्देश पाया जाता है। इस ग्रन्थका रचनाकाल शक सवत् ७०० में एक दिन न्यून है अर्थात् शक सवत् ६९९ चैत्र कृष्णा चतुर्दशीको समाप्त किया गया है। उद्योतनने द्वादश राशियोमे उत्पन्न नर-नारियोके भविष्यका निरूपण करते हुए लिखा है—

णिच्चं जो रोगभागी णरवइ-सयणे पूइओ चक्खुलोलो,
धम्मत्थे उज्जमंतो सहियण-त्रलिओ ऊरुजंघो कयण्णू।
सूरो जो चंडकम्मे पुणरवि मउओ वल्लहो कामिणीणं,
जेट्ठो सो भाउयाण जल-णिचय-महा-भीरुओ मेस-जाओ"

—कुवलयमाला पृ० १९

अर्थात्—मेष राशिमें उत्पन्न हुआ व्यक्ति रोगी, राजा और स्वजनो-से पूजित, चचल नेत्र, धर्म और अर्थकी प्राप्तिके लिए उद्योगशील, मित्रोसे विमुख, स्थूल जाँघवाला, कृतज्ञ, शूरवीर, प्रचण्ड कर्म करनेवाला, अल्पधनी, स्त्रियोका प्रिय, भाइयोमें बडा, एव जलसमूह—नदी, समुद्र आदिसे भीत रहनेवाला होता है।

अट्ठारस-पणुवीसो चुक्को सो कह वि मरइ सय-वरिसो।
अगार-चोद्दसीए कित्तिय तह अड्ढ-रत्तम्मि॥ —वही, पृ० १९

मेष राशिमे जन्मे व्यक्तिको १८ और २५ वर्षकी अवस्थामे अल्पमृत्युका योग आता है। यदि ये दोनो अकालमरण निकल जाते है तो सौ वर्षकी आयुमें मरणकाल आता है और कार्तिक मासकी शुक्ला चतुर्दशीकी मध्यरात्रिमे मरण होता है।

वृष राशिमे जन्म लिये हुए व्यक्तियोका फलादेश बतलाते हुए

लिखा है—

भोगी अत्थस्स दाया पिहुल-गल-महा-गंडवासो सुमित्तो
दक्खो सच्चो सुई जो सललिय-गमणो दुट्ठ-पुत्तो कलत्तो।
तेयंसी भिच्च-जुत्तो पर-जुवइ-महाराग-रत्तो गुरूण
गंडे खंधे व्व चिण्हं कुजण-जण-पिओ कंठ-रोगी विसम्मि॥
चुक्को चउप्पयाओ पणुवीसो मरइ सो सय पत्तो।
मग्गसिर-पहर-सेसे-बुह-रोहिणि पुण्ण-खेत्तमि॥—वहीं, पृ० १६

वृष राशिमे उत्पन्न हुआ व्यक्ति भोगी, धन देनेवाला, स्थूल गलेवाला, बड़े-बड़े गालवाला—कपोलवाला, अच्छे मित्रवाला, दक्ष, सत्यवादी, शुचि, लीलापूर्वक गमन करनेवाला, दुष्ट, पुत्र-स्त्रीवाला, तेजस्वी, भृत्ययुक्त, परस्त्रियोका अनुरागी, कन्धे और गलेपर तिल या मस्सेके चिह्नसे युक्त तथा लोगोके लिए प्रिय होता है। इसका चतुष्पद—पशु आदिके कारण पच्चीस वर्षकी अवस्थामे अकालमरण सम्भव होता है। यदि इस अकाल मरणमे बच गया तो मार्गशीर्ष शुक्लपक्षमे बुधवार रोहिणी नक्षत्रमे सौ वर्षकी आयुमे किसी पुण्यक्षेत्रमे इसका मरण होता है।

इसी प्रकार अन्य राशियोमे जन्मग्रहण किये हुए व्यक्तियोका फलादेश भी इस ग्रन्थमे वर्णित है। इस फलादेशकी सत्यतासत्यताके सम्बन्धमें बताया है—"जइ रासी बलिओ रासी-सामी-गहो तहेव, सव्व सच्च। अह एए ण बलिया क्रूरगह-णिरिक्खिया य होंति ता किंचि सच्चं किंचि मिच्छं' ति। अर्थात् राशि और राशीशके बलवान् होनेपर पूर्वोक्त सभी फल सत्य होता है। यदि राशि और राशीश बलवान् न हो और क्रूरग्रहकी राशि हो या राशीश भी क्रूर हो अथवा पापग्रहसे वह राशि और राशीश दृष्ट हो तो फलादेश कुछ सत्य और कुछ मिथ्या होता है।

सामुद्रिक शास्त्रके सम्बन्धमे बताया है—

पुव्व-कय-कम्म-रइय सुह च दुक्खं च जायए देहे।
तत्थ वि य लक्खणाइं तेणेमाइं णिसामेह॥

अंगाइँ उवगाइ अगोवंगाइँ तिण्णि देहम्मि ।
ताणं सुहमसुह वा लक्खणमिणमो णिसामेहि ॥
लक्खिज्जइ जेण सुहं दुक्ख च णराण दिट्ठि-मेत्ताण ।
तं लक्खण ति भाणिय सव्वेसु वि होइ जीवेसु ॥
रत्त सिणिद्ध-मउय पाय-तल जस्स होइ पुरिसस्स ।
ण य सेअण ण वंक सो राया होइ पुहईए ॥
ससि-सूर-वज्ज-चक्कंकुसे य संखं च होज्ज छत्त वा ।
अह वुड्ढ-सिणिद्धाओ रेहाओ होंति णरवइणो ॥
भिण्णा संपुण्णा वा मखाइं देंति पच्छिमा सोगा ।
अह खर-वराह-जंबुय-लक्खका दुक्खिया होंति ॥
वट्टे पायंगुट्ठे अणुकूला होइ भारिया तस्स ।
अगुलि-पमाण-मेत्ते अगुट्ठे भारिया दुइया ॥
जइ मज्झिमाएँ सरिसो कुलवुड्ढी अह अणामिया सरिसो ।
सो होइ जमल-जणओ पिउणो मरणं कणिट्ठीए ॥
पिहुलगुट्ठे पहिओ विणयग्गेणं च पावए विरह ।
भग्गेण णिच्च-दुहिओ जह भणिय लक्खणण्णूहि ॥

—कुवलयमाला, पृ० १२९, प्रघट्टक २१६

पूर्वोपार्जित कर्मोके कारण जीवधारियोको सुख-दु खकी प्राप्ति होती है। इस सुख-दु खादिको लक्षणोके द्वारा जाना जा सकता है। शरीरमे अग, उपाग और अगोपाग ये तीन होते है, इन तीनोके लक्षण कहे जाते है। जिसके द्वारा मनुष्योंके सुख-दु ख अवलोकनमात्रसे जाने जायें, उसे लक्षण कहते है। जिस मनुष्यके पैरका तलवा लाल, स्निग्ध और मृदुल हो तथा स्वेद और वक्रतासे रहित हो तो वह इस पृथ्वीका राजा होता है। पैरमें चन्द्रमा, सूर्य, वज्र, चक्र, अकुश, शख और छत्रके चिह्न होनेपर व्यक्ति राजा होता है। स्निग्ध और गहरी रेखाएँ भी नृपतिके पैरके तलवे-मे होती है। शखादि चिह्न भिन्न अपूर्ण या अस्पष्ट अथवा पूर्ण-स्पष्ट हो तो

उत्तरार्द्ध अवस्थामें सुख-भोगोंकी प्राप्ति होती है। खर-गर्दभ, वराह-शूकर, जवुक-शृगालकी आकृतिके चिह्न हो तो व्यक्तिको कष्ट होता है। समान पदागुष्ठोंके होनेपर मनोनुकूल पत्नीकी प्राप्ति होती है। अँगुलीके समान अँगूठेके होनेपर दो पत्नियोंकी प्राप्ति होती है। यदि मध्यमा अँगुलीके समान अँगूठा हो तो कुलवृद्धि होती है। अनामिकाके समान अँगूठाके होनेपर यमल सन्तानकी प्राप्ति एव कनिष्ठाके समान होनेपर पिताकी मृत्यु होती है। स्थूल अँगूठा होनेपर पथिक—यात्रा करनेवाला होता है। आगेकी ओर अगूठाके झुका रहनेपर विरह वेदनाका कष्ट होता है। भग्न अँगूठाके होनेपर नित्य दु खकी प्राप्ति होती है।

जिस व्यक्तिकी तर्जनी अँगुली दीर्घ होती है, वह व्यक्ति महिलाओंद्वारा सर्वदा तिरस्कृत किया जाता है। वह नाटा होता है, कलहप्रिय होता है और पिता-पुत्रसे रहित होता है। जिसकी मध्यमा अँगुली दीर्घ होती है, उसके वनका विनाश होता है और घरमे स्त्रीका भी विनाश या निर्वास होता है। अनामिकाके दीर्घ होनेसे व्यक्ति विद्वान् होता है तथा कनिष्ठाके दीर्घ होनेसे नाटा होता है। हाथकी अँगुलियोंकी परीक्षाका विपय इस ग्रन्थमे अत्यन्त विस्तारपूर्वक दिया है। सामुद्रिक शास्त्रका ग्रन्थ न होनेपर भी सामुद्रिक शास्त्रकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातें आयी है।

कुवलयमालामें अँगुली और अँगूठेके विचारके अनन्तर हाथकी हथेलीका विचार किया है। हथेलीके स्पर्श, रूप, गन्ध एव लम्बाई-चौडाईका विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। वृपण और लिंगके ह्रस्व, दीर्घ एव विभिन्न आकृतियोंका पर्याप्त विचार किया है। वक्षस्थल, जिह्वा, दाँत, ओष्ठ, कान, नाक आदिके रूप-रग, आकृति, स्पर्श आदिके द्वारा शुभाशुभ फल वर्णित है। अगज्ञानके सम्बन्धमें लेखकने इस कथाग्रन्थमे पर्याप्त सामग्री सकलित कर दी है। दीर्घायुका विचार करते हुए लिखा गया है—

कण्ठ पिट्ठी लिंग जंघे य हवति ह्रस्सया एए।
पिहुला हत्थ पाया दीहाऊ सुत्थिओ होइ॥

चक्खु-सिणेहे सुहओ दतसिणेहे य भोयण मिट्ठं !
तय-णेहेण उ सोक्खं णह-णेहे होइ परम-धणं ॥
—कुवलयमाला पृ० १३१, अनु० २१६

कण्ठ, पीठ, लिंग और जाँघका ह्रस्व—लघु होना शुभ है। हाथ और पेरका दीर्घ होना भी शुभ फलका सूचक है। आँखोके चिकने होनेसे व्यक्ति सुखी, दाँतोके चिकने होनेसे मिष्ठान्नप्रिय, त्वचाके चिकना होनेसे सुख एव नाखूनोके चिकने होनेसे अत्यधिक धनकी प्राप्ति होती है।

इस प्रकार नेत्र, नाखून, दाँत, जाँघ, पैर, हाथ आदिके रूप-रग, स्पर्श, सन्तुलित प्रमाण—वजन एव आकार-प्रकारके द्वारा फलादेशका निरूपण किया गया है।

प्रमुख ज्योतिर्विद् और उनके ग्रन्थोका परिचय

वराहमिहिर—यह इस युगके प्रथम धुरन्धर ज्योतिर्विद् हुए, इन्होने इस विज्ञानको क्रमवद्ध किया तथा अपनी अप्रतिम प्रतिभा-द्वारा अनेक नवीन विशेपताओका समावेश किया। इनका जन्म ईसवी सन् ५०५ मे हुआ था। वृहज्जातकमे इन्होने अपने सम्बन्धमें कहा है—

आदित्यदासतनयस्तदवाप्तबोध· काम्पिल्लके सवितृलब्धवरप्रसादः।
आवन्तिको मुनिमतान्यवलोक्य सम्यग्घोरा वराहमिहिरो रुचिरां चकार ॥

अर्थात्—काम्पिल्ल (कालपी) नगरमे सूर्यसे वर प्राप्त कर अपने पिता आदित्यदाससे ज्योतिपशास्त्रकी शिक्षा प्राप्त की, अनन्तर उज्जैनीमे जाकर रहने लगे और वहीपर वृहज्जातककी रचना की। इनकी गणना विक्रमादित्यकी सभाके नवरत्नोमे की गयी है। यह त्रिस्कन्ध ज्योतिपशास्त्रके रहस्यवेत्ता, नैसर्गिक कविता-लताके प्रेमाश्रय कहे गये है। इन्होने ज्योतिप शास्त्रको जो कुछ दिया है, वह युग-युगोतक इनकी कीर्ति-कौमुदीको भासित करता रहेगा।

इन्होने अपने पूर्वकालोन प्रचलित सिद्धान्तोका पचसिद्धान्तिकामे

संग्रह किया है। इसके अतिरिक्त बृहत्संहिता, बृहज्जातक, लघुजातक, विवाह-पटल, योगयात्रा और समाससंहिता, नामक ग्रन्थोंकी रचना की है।

वराहमिहिरके जातक ग्रन्थोंका विषय सर्वसामान्य, गम्भीर और मत-मतान्तरोंके विचारोंसे परिपूर्ण है। बृहज्जातकमें मेषादि राशियोंकी यवन संज्ञा, अनेक पारिभाषिक शब्द एवं यवनाचार्योंका भी उल्लेख किया है। मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य आदिके नाम आये हैं। इनकी संहिता भी अद्वितीय है, ज्योतिष-शास्त्रमें यों अनेक संहिताएँ है, पर इनकी संहिता-जैसी एक भी पुस्तक नही। डॉक्टर कर्नने बृहत्संहिताकी बडी प्रशंसा की है। वास्तविक बात तो यह है कि फलित ज्योतिषका इनके समान कोई अद्वितीय ज्ञाता नही हुआ है। यह निष्पक्ष ज्योतिषी और भारतीय ज्योतिष साहित्यके निर्माता माने जाते हैं। पाश्चात्य विद्वानोंका कथन है कि वराहमिहिराचार्यने भारतके ज्योतिषको केवल ग्रह-नक्षत्र ज्ञान तक ही मर्यादित न रखा, वरन् मानव जीवनके साथ उसकी विभिन्न पहलुओं-द्वारा व्यापकता बतलायी तथा जीवनके सभी आलोच्य विषयोंकी व्याख्याएँ की। सचमुच वराहमिहिरा-चार्यने एक खासा साहित्य इसपर तैयार किया है।

कल्याणवर्मा—इनका समय ईसवी सन् ५७८ माना जाता है। इन्होंने यवनोंके होराशास्त्रका सार संकलित कर सारावली नामक जातक ग्रन्थकी रचना की है। यह सारावली वराहमिहिरके बृहज्जातकसे भी बडी है, जातकशास्त्रकी दृष्टिसे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भट्टोत्पलने बृहज्जातक-की टीकामें सारावलीके कई श्लोक उद्धृत किये है। कल्याणवर्माने स्वतः अपने सम्बन्धमें लिखा है—

देवग्रामपयःप्रपोषणबलाद् ब्रह्माण्डसत्पञ्जरं
कीर्तिः सिंहविलासिनीव सहसा यस्येह भित्त्वा गता।
होरां व्याघ्रभटेश्वरो रचयति स्पष्टां तु सारावलीं
श्रीमान् शास्त्रविचारनिर्मलमनाः कल्याणवर्मा कृती॥

सग्रह किया है। इसके अतिरिक्त बृहत्सहिता, बृहज्जातक, लघुजातक, विवाह-पटल, योगयात्रा और ममाससहिता, नामक ग्रन्थोकी रचना की है।

वराहमिहिरके जातक ग्रन्थोका विपय सर्वसामान्य, गम्भीर और मत-मतान्तरोके विचारोंसे परिपूर्ण है। बृहज्जातकमे मेपादि राशियोकी यवन सज्ञा, अनेक पारिभापिक शब्द एव यवनाचार्योंका भी उल्लेख किया है। मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य आदिके नाम आये है। इनकी सहिता भी अद्वितीय है, ज्योतिप-शास्त्रमे यो अनेक सहिताएँ है, पर इनकी सहिता-जैसी एक भी पुस्तक नही। डॉक्टर कर्नने बृहत्सहिताकी बडी प्रशसा की है। वास्तविक बात तो यह है कि फलित ज्योतिपका इनके समान कोई अद्वितीय ज्ञाता नही हुआ है। यह निष्पक्ष ज्योतिपी और भारतीय ज्योतिप साहित्यके निर्माता माने जाते है। पाश्चात्त्य विद्वानोका कथन है कि वराहमिहिराचार्यने भारतके ज्योतिपको केवल ग्रह-नक्षत्र ज्ञान तक ही मर्यादित न रखा, वरन् मानव जीवनके साथ उसकी विभिन्न पहलुओ-द्वारा व्यापकता बतलायी तथा जीवनके सभी आलोच्य विपयोकी व्याख्याएँ की। सचमुच वराहमिहिरा-चार्यने एक खासा साहित्य इसपर तैयार किया है।

कल्याणवर्मा—इनका समय ईसवी सन् ५७८ माना जाता है। इन्होने यवनोके होराशास्त्रका सार सकलित कर सारावली नामक जातक ग्रन्थकी रचना की है। यह सारावली वराहमिहिरके बृहज्जातकसे भी बडी है, जातकशास्त्रकी दृष्टिसे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भट्टोत्पलने बृहज्जातक की टीकामे सारावलीके कई श्लोक उद्धृत किये है। कल्याणवर्माने स्वय अपने सम्बन्धमे लिखा है—

देवग्रामपय प्रपोषणबलाद् ब्रह्माण्डसत्पञ्जर
कीर्ति सिंहविलासिनीव सहसा यस्येह भित्त्वा गता।
होरा व्याघ्रभटेश्वरो रचयति स्पष्ट तु सारावली
श्रीमान् शास्त्रविचारनिर्मलमनाः कल्याणवर्मा कृती॥

इससे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके होराशास्त्रको संक्षिप्त देख यवन-होराशास्त्रोंका सार लेकर इन्होंने सारावलीकी रचना की है। इस ग्रन्थकी श्लोक-संख्या ढाई हजारसे अधिक बतायी जाती है।

ब्रह्मगुप्त—यह वेधविद्यामें निपुण, प्रतिष्ठित और असाधारण विद्वान् थे। इनका जन्म पंजाबके अन्तर्गत 'भिलनालका' नामक स्थानमें ईसवी सन् ५९८ में हुआ था। ३० वर्षकी अवस्थामें इन्होंने 'ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त' नामक ग्रन्थकी रचना की। इसके अतिरिक्त ६७ वर्षकी अवस्थामें 'खण्ड-खाद्यक' नामक एक करण ग्रन्थ भी इन्होंने बनाया था। कहते हैं कि इस ग्रन्थका यह नाम अर्थात् ईखके रससे बना हुआ मधुर, रखनेका कारण यह बताया जाता है कि उस समयमें इस देशमें बौद्ध और सनातनियोंमें धार्मिक झगडा बराबर चला करता था, इससे इन दोनोंमें शास्त्रार्थ भी खूब होता था। सनातनियोंके खण्डनके लिए बौद्ध और जैन ग्रन्थ लिखा करते थे और इन दोनोंके खण्डनके लिए सनातनी। ज्योतिषमें भी यह खण्डन-मण्डनकी प्रथा प्रचलित थी। किसी बौद्ध पण्डितने 'लवणमुष्टि' अर्थात् एक मुष्टि नमक नामक ग्रन्थ लिखा था, जिसका तात्पर्य यही था कि सनातनियोंपर छिड-कनेके लिए एक मुट्ठी-भर नमक। इसीके उत्तरमें ब्रह्मगुप्तने 'खण्ड-खाद्यक' रचा अर्थात् मुट्ठी-भर नमकके बदले इन्होंने लोगोंको मधुरता दी।

ब्रह्मगुप्त ज्योतिषके प्रौढ विद्वान् थे। इन्होंने बीजगणितके कई नवीन नियमोंका आविष्कार किया, इसीसे यह इस गणितके प्रवर्त्तक कहे गये हैं। अरबवालोंने बीजगणित ब्रह्मगुप्तसे ही लिया है। इनके गणित ग्रन्थोंका अनुवाद अरबी भाषामें भी हुआ सुना जाता है। ब्रह्मस्फुट सिद्धान्तका 'असिन्द हिन्द' और 'खण्डखाद्यक' का 'अलर्कन्द' नाम अरबवालोंने रखा है।

इन्होंने पृथ्वीको स्थिर माना है, इसलिए आर्यभट्टके पृथ्वी-चलन सिद्धान्तकी जी-भर निन्दा की है। ब्रह्मगुप्तने अपने पूर्वके ज्योतिषियोंकी गलतीका समाधान विद्वत्ताके साथ किया है। वैसे तो यह आर्यभट्टके निन्दक

थे, पर अपना करण ग्रन्थ खण्डखाद्यक उसीके अनुकरणपर लिखा है। इस ग्रन्थके आरम्भके आठ अध्याय तो केवल आर्यभट्टके अनुकरणमात्र है, उत्तर भागके तीन अध्यायोमे आर्यभट्टकी आलोचना है। अलवरूनीने ब्रह्मगुप्तके ज्योतिप ज्ञानकी वहुत प्रशसा की है।

मुजाल—इनका वनाया हुआ 'लघुमानस' नामक करण ग्रन्थ है, जिसमे ५८४ शकाब्दका अहर्गण सिद्ध किया गया है। इस ग्रन्थमें मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, तिथ्यधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, ग्रहयुत्यधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार और शृगोन्नत्यधिकार ये आठ प्रकरण है। गणित ज्योतिपकी दृष्टिसे ग्रन्थ अच्छा मालूम पडता है। विपय-प्रतिपादनकी शैली सरल और हृदयग्राह्य है। पाठक पढते-पढते गणित-जैसे शुष्क विपयको भी रुचि और धैर्यके साथ अन्त तक पढता जाता है और अन्त तक जी नही ऊवता है। ग्रन्थकारकी यह शैली प्रशसा योग्य है।

महावीराचार्य—ब्रह्मगुप्तके पश्चात् जैन सम्प्रदायमें महावीराचार्य नामके एक धुरन्धर गणितज्ञ हुए। यह राष्ट्रकूट वशके अमोघवर्प नृपतुगके समयमे हुए थे, इसलिए इनका समय ईसवी सन् ८५० माना जाता है। इन्होने ज्योतिपपटल और गणितसारसंग्रह नामके ज्योतिप ग्रन्थोकी रचना की है। ये दोनो ही ग्रन्थ गणित ज्योतिपके हैं, इन ग्रन्थोसे इनकी विद्वत्ताका ज्ञान सहजमें ही लगाया जा सकता है। गणितसारके प्रारम्भमें गणित विपयकी प्रशसा करते हुए लिखा है—

कामतन्त्रेऽर्थशास्त्रे च गान्धर्वे नाटकेऽपि वा।
सूपशास्त्रे तथा वैद्ये वास्तुविद्यादिवस्तुपु॥
छन्दोऽलङ्कारकाव्येपु तर्कव्याकरणादिपु।
कलागुणेपु सर्वेपु प्रस्तुत गणित परम्॥
सूर्यादिग्रहचारेपु ग्रहणे ग्रहसयुतौ।
त्रिप्रश्ने चन्द्रवृत्तौ च सर्वत्राङ्गीकृत हि तत्॥

इस ग्रन्थमें सज्ञाधिकार, परिकर्मव्यवहार, कलासवर्ण व्यवहार, प्रकीर्ण-

व्यवहार, त्रैराशिकव्यवहार, मिश्रक व्यवहार, क्षेत्र गणितव्यवहार, खात-व्यवहार एव छायाव्यवहार नामके प्रकरण है। मिश्रक व्यवहारमे सम-कुट्टीकरण, विषमकुट्टीकरण और मिश्रकुट्टीकरण आदि अनेक प्रकारके गणित हैं। पाटीगणित और रेखागणितकी दृष्टिसे इसमे अनेक विशेपताएँ है। इनके क्षेत्रव्यवहार प्रकरणमे आयतको वर्ग और वर्गको आयतके रूपमे वदलनेकी प्रक्रिया वतायी है। एक स्थानपर वृत्तोको वर्ग और वर्गोंको वृत्तोमे परिणत किया गया है। समत्रिभुज, विषमत्रिभुज, समकोण चतुर्भुज, विपमकोण चतुर्भुज, वृत्तक्षेत्र, सूचीव्यास, पचभुजक्षेत्र एव बहुभुजक्षेत्रोका क्षेत्रफल, घनफल निकाला है। ज्योतिषपटलमे ग्रह, नक्षत्र और ताराओके स्थान, गति, स्थिति और सख्या आदिका प्रतिपादन किया है। यद्यपि ज्योतिषपटल सम्पूर्ण उपलब्ध नही है, पर जितना अश उपलब्ध है उससे ज्ञात होता है कि गणितसारका उपयोग इस ग्रन्थके ग्रहगणितमे किया गया है।

भट्टोत्पल—यह प्रसिद्ध टीकाकार हुए है। जिस प्रकार कालिदासके लिए मल्लिनाथ सिद्धहस्त टीकाकार माने जाते है, उसी प्रकार वराह-मिहिरके लिए भट्टोत्पल एक अद्वितीय प्रतिभाशाली टीकाकार है। यदि सच कहा जाये तो मानना पडेगा कि इनकी टीकाने ही वराहमिहिरको इतनी ख्याति प्रदान की है। वराहमिहिरके ग्रन्थोके अतिरिक्त वराहमिहिरके पुत्र पृथुयशाकृत षट्पचाशिका और ब्रह्मगुप्तके खण्डखाद्य नामक ग्रन्थोपर इन्होने विद्वत्तापूर्ण समन्वयात्मक टीकाएँ लिखी है। टीकाओके अतिरिक्त प्रश्न-ज्ञान नामक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी इनका रचा बताया जाता है। इस ग्रन्थके अन्तमे लिखा है—

भट्टोत्पलेन शिष्यानुकम्पयावलोक्य सर्वशास्त्राणि।
आर्यासप्तशत्यैव प्रश्नज्ञान समासतो रचितम्॥

इससे स्पष्ट है कि सात-सौ आर्या श्लोकोमें प्रश्नज्ञान नामक ग्रन्थकी रचना की है। भट्टोत्पलने अपनी टीकामें अपनेसे पहलेके सभी आचार्योंके वचनोको उद्धृत कर एक अच्छा तद्विपय समन्वयात्मक सकलन किया है। इसके

आधारपर-से प्राचीन ज्योतिषशास्त्रका महत्त्वपूर्ण इतिहास तैयार किया जा सकता है। इनका समय श० ८८८ है।

चन्द्रसेन—इनका रचा गया केवलज्ञानहोरा नामक महत्त्वपूर्ण विशालकाय ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ कल्याणवर्माके पीछेका रचा गया प्रतीत होता है, इसके प्रकरण सारावलीसे मिलते-जुलते हैं, पर दक्षिणमें रचना होनेके कारण कर्णाटक प्रदेशके ज्योतिषका पूर्ण प्रभाव है। इन्होंने ग्रन्थके विषयको स्पष्ट करनेके लिए बीच-बीचमें कन्नड भाषाका भी आश्रय लिया है। यह ग्रन्थ अनुमानत तीन-चार हज़ार श्लोकोंमें पूर्ण हुआ है। ग्रन्थके आरम्भमें कहा गया है—

होरा नाम महाविद्या वक्तव्यञ्च भवद्धितम्।
ज्योतिर्ज्ञानैकसारं भूषणं बुधपोषणम्॥

इन्होंने अपनी प्रशंसा भी प्रचुर परिमाणमें की है—

आगमैः सदृशो जैनः चन्द्रसेनसमो मुनिः।
केवलीसदृशी विद्या दुर्लभा सचराचरे॥

इस ग्रन्थमें हेमप्रकरण, दाम्यप्रकरण, शिलाप्रकरण, मृत्तिकाप्रकरण, वृक्षप्रकरण, कार्पास-गुल्म-वल्कल तृण-रोम-चर्म-पट-प्रकरण, सख्याप्रकरण, नष्टद्रव्यप्रकरण, निर्वाहप्रकरण, अपत्यप्रकरण, लाभालाभप्रकरण, स्वप्रकरण, स्वप्नप्रकरण, वास्तुविद्याप्रकरण, भोजनप्रकरण, देहलोहदीक्षाप्रकरण, अजन-विद्याप्रकरण एव विषविद्याप्रकरण आदि है। ग्रन्थको आद्योपान्त देखनेसे ज्ञात होता है, कि यह सहिता विषयक रचना है, होरा-सम्बन्धी नही। होरा जैसा कि इसका नाम है, उसके सम्बन्धमे कुछ भी नही कहा गया है।

श्रीपति—यह अपने समयके अद्वितीय ज्योतिर्विद् थे। इनके पाटी गणित, बीजगणित और सिद्धान्तशेखर नामके गणित ज्योतिषके ग्रन्थ तथा श्रीपतिपद्धति, रत्नावली, रत्नसार, रत्नमाला ये फलित ज्योतिषके ग्रन्थ है। इनके पाटीगणितके ऊपर सिहतिलक नामक जैनाचार्यकी एक 'तिलक' नामक

टीका है। इनकी विशेषता यह है कि इन्होने ज्या खण्डोके विना ही चाप मानसे ज्याका आनयन किया है—

दो कोटिभागरहिताभिहता खनागचन्द्रास्तदीयचरणोनशरार्कदिग्भि·।
ते व्यासखण्डगुणिता विहृता फलं तु ज्याभिर्विनापि भवतो भुजकोटिजीवा॥

इनकी रचनाशैली अत्यन्त सरल और उच्चकोटिकी है। इन्हे केवल गणितका ही ज्ञान नही था, प्रत्युत ग्रहवेध क्रियासे भी यह पूर्ण परिचित थे। इन्होने वेध-क्रिया-द्वारा ग्रह-गणितकी वास्तविकता अवगत कर उसका अलग सकलन किया था, जो सिद्धान्तशेखरके नामसे प्रसिद्ध है। ग्रह-गणितके साथ-साथ जातक और मुहूर्त्त विषयोके भी यह प्रकाण्ड पण्डित थे। इनका जन्म समय ईसवी सन् ९९९ वताया जाता है।

श्रीधर—यह ज्योतिपशास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनका समय दसवी सदीका अन्तिम भाग माना जाता है। इन्होने गणितसार और ज्योतिर्ज्ञान-विधि सस्कृत भापामे तथा जातकतिलक कन्नड भापामें लिखे हैं। इनके गणितसारपर एक जैनाचार्यकी टीका भी उपलव्ध है।

गणितसारमे अभिन्न गुणक, भागहार, वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल, भिन्न, समच्छेद, भागजाति, प्रभागजाति-भागानुवन्ध, भागमातृजाति, त्रैराशिक, सप्तराशिक, नवराशिक, भाण्ड-प्रतिभाण्ड, मिश्रकव्यवहार, भाव्यकव्यवहार-सूत्र, एकपत्रीकरणसूत्र, सुवर्णगणित, प्रक्षेपकगणित, समक्रयविक्रयसूत्र, श्रेणी-व्यवहार, क्षेत्रव्यवहार, खातव्यवहार, चितिव्यवहार, काष्टव्यवहार, राशि-व्यवहार, छायाव्यवहार आदि गणितोका निरूपण किया गया है। इसमे "व्यासवर्गाद्दशगुणात्पद परिधि" वाला परिधि आनयनका नियम वताया है। वृत्त क्षेत्रका क्षेत्रफल परिधि और व्यासके घातका चतुर्थांश वताया गया है, लेकिन पृष्ठ फलके सम्वन्धमे कही भी उल्लेख नही है।

ज्योतिर्ज्ञानविधि प्रारम्भिक ज्योतिषका ग्रन्थ है। इसमे व्यवहारोपयोगी मुहूर्त्त भी दिये गये है। आरम्भमे सवत्सरोके नाम, नक्षत्रनाम, योगनाम, करणनाम, तथा उनके शुभाशुभत्व दिये गये है। इसमें मासशेप, मासा-

विपतिशेप, दिनशेप, दिनाविपतिशेप आदि अर्थगणितकी अद्भुत और विलक्षण क्रियाएँ भी दी गयी हैं। यो तो मासशेप आदिका वर्णन अन्यत्र भी है, इस ग्रन्थके विपय एक नये तरीकेसे लिखे गये हैं, तिथियोंके स्वामी नन्दा, भद्रा आदिका स्वरूप तथा उनका शुभाशुभत्व विस्तारसहित वताया गया है।

जातकतिलककी भापा कन्नड है, यह ग्रन्थ भी जातक शास्त्रकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण सुननेमें आया है। दक्षिण भारतमें इनके ग्रन्थ अधिक प्रामाणिक माने जाते हैं तथा सभी व्यावहारिक कार्य इन्हींके ग्रन्थोंके आधारपर वहाँ सम्पन्न किये जाते हैं।

श्रीधराचार्य कर्णाटक प्रान्तके निवासी थे। इनकी माताका नाम अव्वोका और पिताका नाम वलदेव शर्मा था। इन्होंने वचपनमें अपने पितासे ही संस्कृत और कन्नड साहित्यका अध्ययन किया था। प्रारम्भमें यह शैव थे, किन्तु वादमें जैनधर्मानुयायी हो गये थे। अपने समयके ज्योतिर्विदोंमें इनकी अच्छी ख्याति थी।

भट्टवोसरि—इनके गुरुका नाम दामनन्दि आचार्य था। इन्होंने आयज्ञानतिलक नामक एक विस्तृत ग्रन्थकी रचना प्राकृत भापामें की है। मूल गाथाओंकी विवृति संक्षिप्त रूपसे संस्कृतमें स्वयं ग्रन्थकारने लिखी है। ग्रन्थके पुष्पिका वाक्यमें "इति दिगम्वराचार्यपण्डितदामनन्दिशिष्य-भट्टवोसरिविरचिते सायश्रीटीकायज्ञानतिलके कालप्रकरणम्" कहा है। इस ग्रन्थका रचनाकाल विपय और भापाकी दृष्टिसे ईसवी सन् १०वीं शताब्दी मालूम पड़ता है। जिस प्रकार मल्लिपेणने ग्रन्थके प्रारम्भमें सुग्रीवादि मुनीन्द्रों-द्वारा प्रतिपादित आयज्ञानको कहा है, इसी प्रकार इन्होंने आयकी अधिष्ठात्री देवी पुलिन्दिनीकी स्तुतिमें—"सुग्रीवपूर्वमुनिसूचित-मन्त्रवीजं तेषां वचांसि न कदापि मुधा भवन्ति" कहा है। इससे स्पष्ट है कि मल्लिपेणके समयके पूर्वमें ही इस ग्रन्थकी रचना हुई होगी। प्रश्न-शास्त्रकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें ध्वज, धूम, सिंह, गज, खर, श्वान, वृप और ध्वांक्ष इन आठ आयों-द्वारा प्रश्नोंके फलका

सुन्दर वर्णन किया है।

इन प्रधान ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त भोजराज, ब्रह्मदेव आदि और भी दो-चार ज्योतिषी हुए हैं, जिन्होने इस युगमे ज्योतिष साहित्यकी श्रीवृद्धि करनेमे पर्याप्त सहयोग प्रदान किया है। इस कालमे ऐसे भी अनेक ज्योतिषके ग्रन्थ लिखे गये हैं जिनके रचयिताओके सम्बन्धमे कुछ भी ज्ञात नही है।

उत्तर मध्यकाल (ई० १००१–१६००):

सामान्य परिचय

इस युगमे ज्योतिषशास्त्रके साहित्यका बहुत विकास हुआ है। मौलिक ग्रन्थोके अतिरिक्त आलोचनात्मक ज्योतिषके अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। भास्कराचार्यने अपने पूर्ववर्त्ती आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, लल्ल आदिके सिद्धान्तोकी आलोचना की और आकाशनिरीक्षण-द्वारा ग्रहमानकी स्थूलता ज्ञात कर उसे दूर करनेके लिए बीजसस्कारकी व्यवस्था बतलायी। ईसवी सन्‌की १२वी सदीमें गोलविषयके गणितका प्रचार बहुत हुआ था, इस समय गोलविषयके गणितसे अनभिज्ञ ज्योतिषी मूर्ख माना जाता था। भास्कराचार्यने समीक्षा करते हुए बताया है—

> वादी व्याकरणं विनैव विदुषां धृष्टः प्रविष्टः सभां
> जल्पन्नल्पमतिः स्मयात्पटुवटुभ्रूभङ्गवक्रोक्तिभिः।
> ह्रीणः सन्नुपहासमेति गणको गोलानभिज्ञस्तथा
> ज्योतिर्वित्सदसि प्रगल्भगणकप्रश्नप्रपञ्चोक्तिभिः॥

अर्थात्—जिस प्रकार तार्किक व्याकरण ज्ञानके बिना पण्डितोकी सभामें लज्जा और अपमानको प्राप्त होता है, उसी प्रकार गोलविषयक गणितके ज्ञानके अभावमें ज्योतिषी ज्योतिर्विदोकी सभामें गोलगणितके प्रश्नोका सम्यक् उत्तर न दे सकनेके कारण लज्जा और अपमानको प्राप्त करता है।

उत्तरमध्यकालमे पृथ्वीको स्थिर और सूर्यको गतिशील स्वीकार किया गया है। भास्करने बताया है कि जिस प्रकार अग्निमे उष्णता, जलमें शीतलता, चन्द्रमे मृदुता स्वाभाविक है उसी प्रकार पृथ्वीमें स्वभावत स्थिरता है। पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिकी चर्चा भी इस समयके ज्योतिष-शास्त्रमे होने लग गयी थी। इस युगके ज्योतिष-साहित्यमे आकर्षण-शक्तिकी क्रियाको साधारणत पतन कहा गया है, और बताया है कि पृथ्वीमे आकर्षण-शक्ति है, इसलिए अन्य द्रव्य गिराये जानेसे पृथ्वीपर आकर गिरते हैं। केन्द्राभिकर्षिणी और केन्द्रापसारिणी ये दो शक्तियाँ प्रत्येक वस्तुमे मानी हुई हैं तथा यह भी स्वीकार किया गया है कि प्रत्येक पदार्थमें आकर्षण-शक्ति होनेसे ही उपर्युक्त दोनो प्रकारकी क्रियात्मक शक्तियाँ अपने कार्यको सुचारु रूपसे करती है।

भास्करने पृथ्वीका आकार कदम्बकी तरह गोल बताया है, कदम्बके ऊपरके भागमे केशरकी तरह ग्रामादि स्थित हैं। इनका कथन है कि यदि पृथ्वीको गोल न माना जाये तो शृंगोन्नति, ग्रहयुती, ग्रहण, उदयास्त एव छाया आदिके गणित-द्वारा साधित ग्रह दृक्तुल्य सिद्ध नही हो सकेंगे। उदयान्तर, चरान्तर और भुजान्तर सस्कारोकी व्यवस्था कर ग्रहगणितमे सूक्ष्मताका प्रचार भी इन्हीके द्वारा हुआ है।

उत्तरमध्यकालकी प्रमुख विशेषता ग्रहगणितके सभी अगोके सशोधनकी है। लम्बन, नति, आयनवलन, आक्षवलन, आयनदृक्कर्म, आक्षदृक्कर्म, भूमाबिम्ब साधन, ग्रहोंके स्पष्टीकरणके विभिन्न गणित और तिथ्यादिके साधनमे विभिन्न प्रकारके सस्कार किये गये, जिससे गणित-द्वारा साधित ग्रहोका मिलान आकाश-निरीक्षण-द्वारा प्राप्त ग्रहोसे हो सके।

इस युगकी एक अन्य विशेषता यन्त्र-निर्माणकी भी है। भास्कराचार्य और महेन्द्रसूरिने अनेक यन्त्रोंके निर्माणकी विधि और यन्त्रो-द्वारा ग्रहवेधकी प्रणालीका निरूपण सुन्दर ढगसे किया है। यद्यपि इस कालके प्रारम्भमें ग्रहगणितका बहुत विकास हुआ, अनेक करण ग्रन्थ तथा सारणियाँ लिखी

गयी, पर ई० सन्‌की १५वी शताब्दीसे ही ग्रहवेधकी परिपाटीका ह्रास होने लग गया है। यो तो प्राचीन ग्रन्थोको स्पष्ट करने और उनके रहस्यो-को समझानेके लिए इस युगमें अनेक टीकाएँ और भाष्य लिखे गये, पर आकाश-निरीक्षणकी प्रथा उठ जानेसे मौलिक साहित्यका निर्माण न हो सका। ग्रहलाघव, करणकुतूहल और मकरन्द-जैसे सुन्दर करण ग्रन्थोका निर्मित होना भी इस युगके लिए कम गौरवकी बात नही है।

फलित ज्योतिपमे जातक, मुहूर्त्त, सामुद्रिक, रमल और प्रश्न इन अगोके साहित्यका निर्माण भी उत्तरमध्यकालमें कम नही हुआ है। मुस-लिम संस्कृतिके अति निकट सम्पर्कके कारण रमल और ताजिक इन दो अगोका तो नया जन्म माना जायेगा। ताजिक शब्दका अर्थ ही अरबदेशसे प्राप्त शास्त्र है। इस युगमे इस विषयपर लगभग दो दर्जन ग्रन्थ लिखे गये है। इस शास्त्रमें किसी व्यक्तिके नवीन वर्प और मासमे प्रवेश करनेकी ग्रह-स्थितिपर-से उसके समस्त वर्पऔर मासका फल बताया जाता है। वलभद्र-कृत ताजिक ग्रन्थमें कहा है—

यवनाचार्येण पारसीकभाषायां प्रणीतं ज्योतिःशास्त्रैकदेशरूप वार्षि-कादिनानाविधफलादेशफलकशास्त्रं ताजिकफलवाच्यं तदनन्तरभूतै समर-सिंहादिभि· ब्राह्मणै तदेव शास्त्र संस्कृतशब्दोपनिबद्धं ताजिकशब्द-वाच्यम्। अत एव तैस्वा एव इक्कवालादयो यावत्यः सज्ञा उपनिबद्धा·।
अर्थात्—यवनाचार्यने फारसी भाषामें ज्योतिष शास्त्रके अगभूत वर्प, मासके फलको नाना प्रकारसे व्यक्त करनेवाले ताजिक शास्त्रकी रचना की थी। इसके पश्चात् समरसिह आदि विद्वानोने सस्कृत भाषामे इस शास्त्रकी रचना की और इक्कबाल, इन्दुवार, इशराफ आदि यवनाचार्य-द्वारा प्रति-पादित योगोकी सज्ञाएँ ज्योकी-त्यो रखी।

कुछ विद्वानोका मत है कि ईसवी सन् १३०० मे तेजसिह नामके एक प्रकाण्ड ज्योतिषी भारतमे हुए थे, उन्होने वर्प-प्रवेश-कालीन लग्नकुण्डली-द्वारा ग्रहोका फल निकालनेकी एक प्रणाली निकाली थी। कुछ कालके

पश्चात् इस प्रणालीका नाम आविष्कर्त्ताके नामपर ताजिक पड गया। ग्रन्थान्तरोमें यह भी लिखा मिलता है कि—

गर्गाद्येर्यवनैश्च रोमकमुखै सत्यादिभिः कीर्तितम्।
शास्त्र ताजिकसज्ञक ॥

अर्थात्—गर्गाचार्य, यवनाचार्य, सत्याचार्य और रोमकने जिस फलादेश-सम्बन्धी शास्त्रका निरूपण किया था, वह ताजिक शास्त्र था। अतएव यह स्पष्ट है कि ताजिक शास्त्रका विकास स्वतन्त्र रूपसे भारतीय ज्योतिषतत्त्वो-के आधारपर हुआ है। हाँ, यवनोके सम्पर्कसे उसमें सशोधन और परिवर्द्धन अवश्य किये गये हैं, पर तो भी उसकी भारतीयता अक्षुण्ण बनी हुई है।

प्रश्न-अगके साहित्यका निर्माण भी इस युगमें अधिक रूपसे हुआ। आचार्य दुर्गदेवने स० १०८९ मे रिष्टसमुच्चय नामक ग्रन्थमे अगुलिप्रश्न, अलक्तप्रश्न, गोरोचनप्रश्न, प्रश्नाक्षरप्रश्न, शकुनप्रश्न, अक्षरप्रश्न, होरा-प्रश्न और लग्नप्रश्न इन आठ प्रकारके प्रश्नोका अच्छा प्रतिपादन किया है। इसके अतिरिक्त पद्मप्रभ सूरिने वि० स० १२९४ में भुवनदीपक नामक एक छोटा-सा ग्रन्थ १७० श्लोकोका बनाया है, जो प्रश्न-शास्त्रका उत्कृष्ट ग्रन्थ है। ज्ञानप्रदीपिका नामका एक प्रश्न-ग्रन्थ भी निराला है, इसमें अनेक गूढ ओर मानसिक प्रश्नोके उत्तर देनेकी प्रक्रियाका वर्णन किया गया है। लग्नको आधार मानकर भी कई प्रश्न-ग्रन्थ लिखे गये हैं, जिनका फल प्राय जातक-ग्रन्थोके मूलाधारपर स्थित है। ईसवी सन्की १५वी और १६वी शताब्दीमें भी कुछ प्रश्न-ग्रन्थोका निर्माण हुआ है।

रमल—यह पहले ही लिखा जा चुका है कि रमलका प्रचार विदेशियोंके ससर्गसे भारतमें हुआ है। ईसवी सन् ११वी और १२ वी शताब्दीकी कुछ फ़ारसी भाषामें रची गयी रमलकी मौलिक पुस्तकें खुदाबख्शखाँ लाइब्रेरी पटनामें मौजूद है। इन पुस्तकोमें कर्त्ताओके नाम नही हैं। सस्कृत भाषामें रमलकी पाँच-सात पुस्तकें प्रधान रूपसे मिलती हैं। रमलनवरत्नम् नामक ग्रन्थमें पाशा बनानेकी विधिका कथन करते हुए बताया है कि—

वेदतत्त्वोपरिकृतं रम्लशास्त्रं च सूरिभि.।
तेषां भेदाः षोडशैव न्यूनाधिक्यं न जायते ॥

अर्थात्—अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी इन चार तत्त्वोपर विद्वानोने रमल-शास्त्र वनाया है तथा इन चार तत्त्वोके सोलह भेद कहे है, अत रमलके पाशेमें सोलह शकल वतायी गयी हैं।

ई० १२४६ में सिंहासनारूढ होनेवाले नासिरुद्दीनके दरवारमें एक रमलशास्त्रके अच्छे विद्वान् थे। जव नासिरुद्दीनकी मृत्युके वाद वलवन शासक वन वैठा था, उस समय तक वह विद्वान् उनके दरवारमें रहा था। इसने फारसीमें रमल साहित्यका सृजन भी किया था। सन् १३१४ मे सीताराम नामके एक विद्वान्ने रमलसार नामका एक ग्रन्थ संस्कृतमें रचा है, यद्यपि इनका यह ग्रन्थ अभीतक मुद्रित हुआ मिलता नही है, पर इसका उल्लेख मद्रास यूनिवर्सिटीके पुस्तकालयके सूचीपत्रमें है।

किवदन्ती ऐसी भी है कि वहलोल लोदीके साथ भी एक अच्छा रमलशास्त्रका वेत्ता रहता था, यह मूक प्रश्नोका उत्तर देनेमें सिद्धहस्त वताया गया है। रमल-नवरत्नके मगलाचरणमे पूर्वके रमलशास्त्रियोको नमस्कार किया गया है—

नत्वा श्रीरमलाचार्यान् परमाद्यसुखाभिधै.।
उद्धृतं रमलाम्भोधेर्नवरत्न सुशोभनम् ॥

अर्थात्—प्राचीन रमलाचार्योंको नमस्कार करके परमसुख नामक ग्रन्थकर्त्ता-ने रमलशास्त्ररूपी समुद्रमें-से सुन्दर नवरत्नको निकाला है।

इस ग्रन्थका रचनाकाल १७वी शताव्दी है। अतः यह स्वय सिद्ध है कि उत्तरमध्यकालमें रमलशास्त्रके अनेक ग्रन्थोका निर्माण हुआ है।

मुहूर्त्त—यो तो उदयकालमें ही मुहूर्त्त-सम्वन्धी साहित्यका निर्माण होने लग गया था तथा आदिकाल और पूर्वमध्यकालमे सहिताशास्त्रके अन्तर्गत ही इस विपयकी रचनाएँ हुई थी, पर उत्तर मध्यकालमें इस

अगपर स्वतन्त्र रचनाएँ दर्जनोकी सख्यामें हुई है। शक सवत् १४२० में नन्दिग्रामवासो केशवाचार्य कृत मुहूर्त्ततत्त्व, शक सवत् १४१३ में नारायण कृत मुहूर्त्त-मार्त्तण्ड, शक सवत् १५२२ में रामभट्ट कृत मुहूर्त्तचिन्तामणि, शक सवत् १५४९ मे विट्ठल दोक्षित कृत मुहूर्त्त कल्पद्रुम आदि मुहूर्त्त-सम्बन्धी रचनाएँ हुई है। इस युगमे मानवके सभी आवश्यक कार्योके लिए शुभाशुभ समयका विचार किया गया है।

शकुनशास्त्र—इसका विकास भी स्वतन्त्र रूपसे इस युगमे अधिक हुआ है। वि० स० १२३२ में अह्लिलपट्टणके नरपति नामक कविने नरपति-जयचर्या नामक एक शुभाशुभ फलका बोध करानेवाला अपूर्व ग्रन्थ रचा है। इस ग्रन्थमें प्रधानरूपसे स्वर-विज्ञान-द्वारा शुभाशुभ फलका निरूपण किया गया है। वसन्तराज नामक कविने अपने नामपर वसन्तराज शकुन नामका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचा है। इस ग्रन्थमे प्रत्येक कार्यके पूर्वमें होनेवाले शुभाशुभ शकुनोका प्रतिपादन आकर्पक ढगसे किया गया है। इन ग्रन्थोके अतिरिक्त मिथिलाके महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र वल्लालसेनने श० स १०९२ मे अद्भुतसागर नामका एक सग्रह ग्रन्थ रचा है, जिसमे अपने समयके पूर्ववर्त्ती ज्योतिर्विदोकी सहिता-सम्बन्धी रचनाओका सग्रह किया है। कई जैन मुनियोने शकुनके ऊपर वृहद् परिमाणमें रचनाएँ लिखी है। यद्यपि शकुनशास्त्रके मूलतत्त्व आदिकालके ही थे, पर इस युगमें उन्ही तत्त्वोकी विस्तृत विवेचनाएँ लिखी गयी हैं।

उत्तरमध्यकालमे भारतीय ज्योतिपने अनेक उत्थानो और पतनोको देखा है। विदेशियोके सम्पर्कसे होनेवाले सशोधनोको अपनेमें पचाया है और प्राचीन भारतीय ज्योतिपकी गणित-विपयक स्थूलताओको दूर कर सूक्ष्मताका प्रचार किया है।

यदि सक्षेपमे उत्तरमध्यकालके ज्योतिप-साहित्यपर दृष्टिपात किया जाये तो यही कहा जा सकता है कि इस कालमें गणित-ज्योतिपकी अपेक्षा फलित-ज्योतिपका साहित्य अधिक फला-फूला है। गणित-ज्योतिपमे भास्कर-

के समान अन्य दूसरा विद्वान् नही हुआ, जिससे विपुल परिमाणमे इस विपयकी सुन्दर रचनाएँ नही हो सकी ।

उत्तरमध्यकालके ग्रन्थ और ग्रन्थकारोका परिचय

सिद्धान्त ज्योतिपका विकास इस कालमे विशेप रूपसे हुआ है। यद्यपि देशकी राजनैतिक परिस्थिति साहित्यके सृजनके लिए पूर्वमध्यकालके समान अनुकूल नही थी, फिर भी भास्कर आदिने गणित-साहित्यके निर्माणमे अपूर्व कौशल दिखलाया है । यहाँ इस युगके प्रमुख ज्योतिर्विदोका परिचय दिया जाता है—

भास्कराचार्य—वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्तके बाद इनके समान प्रतिभाशाली, सर्वगुणसम्पन्न दूसरा ज्योतिर्विद् नही हुआ। इनका जन्म ईसवी सन् १११४ में विज्जडविड नामक ग्राममें हुआ था। इनके पिताका नाम महेश्वर उपाध्याय था। इन्होने एक स्थानपर लिखा है—

आसीन्महेश्वर इति प्रथित. पृथिव्यामाचार्यवर्यपदवीं विदुषा प्रपन्न· ।
लब्धावबोधकलिकां तत एव चक्रे तज्जेन बीजगणितं लघुभास्करेण ॥

इससे स्पष्ट है कि महेश्वर इनके पिता और गुरु दोनो ही थे। इनके द्वारा रचित लीलावती, बीजगणित, सिद्धान्तशिरोमणि, करणकुतूहल और सर्वतोभद्र ग्रन्थ हैं।

ब्रह्मगुप्तके ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त और पृथूदक स्वामीके भाष्यको मूल मानकर इन्होने अपना सिद्धान्तशिरोमणि बनाया है, तथा आर्यभट्ट, लल्ल, ब्रह्मगुप्त आदिके मतोकी समालोचना की है। शिरोमणिमें अनेक नये विपय भी आये हैं, प्राचीन आचार्योके गणितोमे सशोधन कर बीज सस्कार निर्धारित किये। इन्होने सिद्धान्तशिरोमणिपर वासना भाष्य भी लिखा है, जिससे इनके सरल और सरस गद्यका भी परिचय मिल जाता है। ज्योतिपी होनेके साथ-साथ भास्कराचार्य ऊँचे दर्जेके कवि भी थे। इनकी कविताशैली अनुप्रासयुक्त है, ऋतु वर्णनमें यमक और श्लेषकी सुन्दर

वहार दिखलायी पडती है। गणितमें वृत्त, पृष्ठघनफल, गुणोत्तरश्रेणी, अकपाश, करणीवर्ग, वर्गप्रकृति, योगान्तर भावना-द्वारा कनिष्ठ-ज्येष्ठा-नयन एव सरल कल्पना द्वारा एक और अनेक वर्ण मानायन आदि विषय इनकी विशेषताके द्योतक है। सिद्धान्तमे भगणोपपत्ति लघुज्याप्रकारसे ज्यानयन, चन्द्रकलाकर्ण-साधन, भूमानयन, सूर्यग्रहणका गणित, स्पष्ट शर-द्वारा स्पष्ट क्रान्तिका साधन आदि बातें इनकी पूर्वाचार्योंकी अपेक्षा नवीन है। इन्होने फलितका कोई ग्रन्थ लिखा था, पर आज वह उपलब्ध नही है, कुछ उद्धरण इनके नामसे मुहूर्त्तचिन्तामणिकी पीयूषधारा टीकामें मिलते है।

दुर्गदेव—ये दिगम्बर जैन धर्मानुयायी थे। इनका समय ईसवी सन् १०३२ माना जाता है। ये ज्योतिष-शास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होने अर्घकाण्ड और रिट्ठसमुच्चय नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं। रिट्ठसमुच्चयके अन्तमे लिखा है—

रइयं बहुसत्थत्थं उवजीवित्ता हु दुग्गएवेण।
रिट्ठ समुच्चयसत्थं वयणेण संजमदेवस्स॥

अर्थात्—इस शास्त्रकी रचना दुर्गदेवने अपने गुरु सयमदेवके वचनानुसार की है। ग्रन्थमे एक स्थानपर सयमदेवके गुरु सयमसेन और उनके गुरु माधवचन्द्र बताये गये हैं। दुर्गदेवने रिट्ठसमुच्चय जैन शौरसेनी प्राकृतमें २६१ गाथाओंका शकुन और शुभाशुभ निमित्तोंके सकलन रूपमें रचा है। इस ग्रन्थकी रचना कुम्भनगर अनगामें की गयी है। लेखकने रिट्ठो–रिष्टोंके पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ नामक तीन भेद किये हैं। प्रथम श्रेणीमे अँगुलियोंका टूटना, नेत्रज्योतिकी हीनता, रसज्ञानकी न्यूनता, नेत्रोंसे लगातार जलप्रवाह एव अपनी जिह्वाको न देख सकना आदिको परिगणित किया है। द्वितीय श्रेणीमें सूर्य और चन्द्रमाका अनेक रूपोमे दर्शन, प्रज्वलित दीपकको शीतल अनुभव करना, चन्द्रमाको त्रिभगी रूपमे देखना, चन्द्रलाञ्छनका दर्शन न होना इत्यादिको लिया है। तृतीयमें निजच्छाया,

परच्छाया तथा छायापुरुपका वर्णन है और आगे जाकर छायाका अगविहीन दर्शन आदि विपयोपर तथा छायाका सछिद्र और टूटे-फूटे रूपमे दर्शन आदिपर अनेको मत दिये हैं। अनन्तर ग्रन्थकर्त्ताने स्वप्नोका कथन किया है जिन्हें उसने देवेन्द्र कथित तथा सहज इन दो रूपोमें विभाजित किया है। अरिष्टोकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति करते हुए प्रश्नारिष्टके आठ भेद—अगुलि-प्रश्न, अलक्तप्रश्न, गोरोचनाप्रश्न, प्रश्नाक्षरप्रश्न—आलिंगित, दग्ध, ज्वलित और शान्त, एव शकुनप्रश्न बताये हैं। प्रश्नाक्षरारिष्टका अर्थ वतलाते हुए लिखा है कि मन्त्रोच्चारणके अनन्तर पृच्छकसे प्रश्न कराके प्रश्नवाक्यके अक्षरोका दूना और मात्राओको चौगुना कर योगफलमें सातसे भाग देना चाहिए। यदि शेप कुछ न रहे तो रोगीकी मृत्यु और शेष रहने-से रोगीका चगा होना फल जानना चाहिए। सक्षेपमे यह कहा जा सकता है कि इस ग्रन्थमें आचार्यने वाह्य और आन्तरिक शकुनोके द्वारा आनेवाली मृत्युका निश्चय किया है। ग्रन्थका विषय रुचिकर है।

उदयप्रभदेव—इनके गुरुका नाम विजयसेन सूरि था। इनका समय ईसवी सन् १२२० वताया जाता है। इन्होने ज्योतिप-विपयक आरम्भ-सिद्धि अपर नाम व्यवहारचर्या नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थपर वि० स० १५१४में रत्नेश्वर सूरिके शिष्य हेमहस गणिने एक विस्तृत टीका लिखी है। इस टीकामे इन्होने मुहूर्त्त-सम्बन्धी साहित्यका अच्छा सकलन किया है। लेखकने ग्रन्थके प्रारम्भमे ग्रन्थोक्त अध्यायोका सक्षिप्त नामकरण निम्न प्रकार दिया है—

दैवज्ञदीपकलिका व्यवहारचर्यामारम्भसिद्धमुदयप्रभदेव एनाम्।
शास्तिक्रमेण तिथिवारभयोगराशिगोचर्यकार्यगमवास्तुविलग्नमेमि॰॥

हेमहस गणिने व्यवहारचर्या नामकी सार्थकता दिखलाते हुए लिखा है—

व्यवहार. शिष्टजनसमाचार॰ शुभतिथिवारमादिपु शुभकार्यकरणादि-रूपस्तस्य चर्या।

अर्थात्—इस ग्रन्थमे प्रत्येक कार्यके शुभाशुभ मुहूर्त्तोका वर्णन है। मुहूर्त्त

अगकी दृष्टिसे ग्रन्थ मुहूर्तचिन्तामणिके समान उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है। उपर्युक्त ११ अध्यायोमें सभी प्रकारके मुहूर्त्तोंका वर्णन किया है। ग्रन्थको आद्योपान्त देखनेपर लेखककी ग्रहगणित-विपयक योग्यता भी ज्ञात हो जाती है। हेमहस गणिने टीकाके मध्यमे प्राकृतकी यह गणित-विषयक गाथाएँ उद्धृत की है, जिनसे पता लगता है कि इनके समक्ष कोई प्राकृतका ग्रह-गणित सम्बन्धी ग्रन्थ था। इस ग्रन्थमे अनेक विशेषताएँ है।

मल्लिषेण—यह सस्कृत और प्राकृत दोनो भाषाओके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके पिताका नाम जिनसेन सूरि था, यह दक्षिण भारतके धारवाड जिलेके अन्तर्गत गदग तालुका नामक स्थानके रहनेवाले थे। इनका समय ईसवी सन् १०४३ माना गया है। इनका ज्योतिषका ग्रन्थ 'आयसद्भाव' नामक है। ग्रन्थके आदिमें लिखा है—

सुग्रीवादिमुनीन्द्रैः रचित शास्त्रं यदायसद्भावम्।
तत्सम्प्रत्यार्याभिविरच्यते मल्लिषेणेन॥
ध्वजधूमसिंहमण्डलवृषखरगजवायसा भवन्त्यायाः।
ज्ञायन्ते ते विद्भिरिहैकोत्तरगणनया चाष्टौ॥

इन उद्धरणोसे स्पष्ट है कि इनके पूर्वमें भी सुग्रीव आदि जैन मुनियोके द्वारा इस विषयकी और रचनाएँ भी हुई थी, उन्हींके साराशको लेकर इन्होने 'आयसद्भाव' की रचना की है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमे आयकी अधिष्ठात्री देवी पुलिन्दिनीको माना है और उसका स्मरण भी किया है। इस ग्रन्थमें कुल १९५ आर्याएँ तथा अन्तमे एक गाथा, इस तरह १९६ पद्य हैं। ग्रन्थके अन्तमे ग्रन्थकर्त्ताने कहा है कि इस ग्रन्थके द्वारा भूत, भविष्यत् और वर्तमान इन तीनो कालोका ज्ञान हो सकता है। तथा अन्यको इस विद्याको न देनेके लिए जोर दिया है—

अन्यस्य न दातव्य मिथ्यादृष्टेस्तु विशेषतोऽवधेयम्।
शपथ च कारयित्वा जिनवरदेव्या पुर सम्यक्॥

ग्रन्थकर्त्ताने इसमें ध्वज, धूम, सिंह, मण्डल, वृष, खर, गज और

वायस इन आठो आयोका स्वरूप तथा उनके फलाफलका सुन्दर विवेचन दिया है ।

राजादित्य—इनके पिताका नाम श्रीपति और माताका नाम वसन्ता था। इनका जन्म कोण्डिमण्डलके 'यूविनवाग' नामक स्थानमे हुआ था। इनके नामान्तर राजवर्म, भास्कर और वाचिराज बताये जाते है । यह विष्णुवर्धन राजाकी सभाके प्रधान पण्डित थे, अत इनका समय ईसवी सन् ११२० के लगभग है । यह कवि होनेके साथ-साथ गणित ज्योतिपके माने हुए विद्वान् थे । कर्णाटक कविचरितके लेखकका कथन है कि कन्नड साहित्यमें गणितका ग्रन्थ लिखनेवाला यह सबसे पहला विद्वान् था । इनके द्वारा रचित व्यवहारगणित, क्षेत्रगणित, व्यवहाररत्न और जैनगणितसूत्रटीकोदाहरण, चित्रहसुगे और लीलावती ये गणित ग्रन्थ प्राप्य है । इनके ये समस्त ग्रन्थ कन्नड भाषामे है। इनके ग्रन्थोमें अकगणितके सभी विषयके अतिरिक्त बीजगणित और रेखागणितके भी अनेक विपय आये है । इन सब गणितोका ग्रहगणितमे अत्यधिक उपयोग होता है । इनके गुरुका नाम शुभचन्द्रदेव बताया जाता है ।

वल्लालसेन--मिथिलाके महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र थे। इन्हे ज्योतिपशास्त्रसे बहुत प्रेम था। राज्याभिपेकके आठ वर्प वाद ईसवी सन् ११६८ मे सहितारूप अद्भुत-सागर नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थमे गर्ग, वृद्धगर्ग, वराह, पराशर, देवल, वसन्तराज, कश्यप, यवनेश्वर, मयूरचित्र, ऋषिपुत्र, राजपुत्र, ब्रह्मगुप्त, महवलभद्र, पुलिश, सूर्यसिद्धान्त, विष्णुचन्द्र और प्रभाकर आदिके वचनोका सग्रह है। ग्रन्थ बहुत बडा है। लगभग ७-८ हजार श्लोक प्रमाणमे पूरा किया गया है। सूर्य, चन्द्र, मगल, वुध, गुरु, भृगु, शनि, केतु, राहु, ध्रुव, ग्रहयुद्ध, सवत्सर, ऋक्ष, परिवेप, इन्द्रधनुष, गन्धर्वनगर, निर्घात, दिग्दाह, छाया, तमोधूमनीहार, उल्का, विद्युत्, वायु, मेघ, प्रवर्पण, अतिवृष्टि, कबन्ध, भूकम्प, जलाशय, देवप्रतिमा, वृक्ष, गृह, वस्त्रोपानहासनाद्य, गज, अश्व, विडाल आदि अनेक

अद्‌भुत वार्त्ताओंका निरूपण इस ग्रन्थमें विस्तारसे किया गया है। वास्तवमे यह ग्रन्थ अपना यथार्थ नाम सिद्ध कर रहा है। इस ग्रन्थकी सबसे बडी विशेषता यह है कि ज्योतिष विद्याके ज्ञानके अतिरिक्त इससे अनेक इतिहासकी बातें भी ज्ञात की जा सकती हैं। ज्योतिषका इतिहास लिखनेमे इससे बहुत बडी सहायता मिलती है। इस ग्रन्थमे पद्योंके अतिरिक्त बीच बीचमे गद्य भी दिया गया है।

पद्मप्रभसूरि—नागौरकी तापगच्छीय पट्टावलीसे पता चलता है कि यह वादिदेव सूरिके शिष्य थे। इन्होंने भुवन-दीपक या ग्रहभावप्रकाश नामक ज्योतिषका ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थपर सिंहतिलकसूरिने, जो सफल टीकाकार और ज्योतिषके मर्मज्ञ थे, वि० स० १३२६में एक 'विवृति'नामक टीका लिखी है। इनको तिलक नामकी टीका श्रीपतिके पाटी गणितपर बहुत महत्त्वपूर्ण है। 'जैन साहित्यनो इतिहास' नामक ग्रन्थमे इनके गुरुका नाम विबुवप्रभ सूरि बताया है। इनके द्वारा रचित मुनिसुव्रतचरित, कुन्थुचरित और पार्श्वनाथस्तवन भी कहे जाते हैं। भुवन-दीपकका रचना काल वि० स० १२९४ है। यह ग्रन्थ छोटा होते हुए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें ३६ द्वार-प्रकरण हैं। राशिस्वामी, उच्चनीचत्व, मित्रशत्रु, राहुका गृह, केतुस्थान, ग्रहोंके स्वरूप, द्वादश भावोंसे विचारणीय बातें, इष्टकालज्ञान, लग्न-सम्बन्धी विचार, विनष्टग्रह, राजयोगोंका कथन, लाभालाभ विचार, लग्नेशकी स्थितिका फल, प्रश्न-द्वारा गर्भविचार, प्रश्न-द्वारा प्रसव ज्ञान, यमजविचार, मृत्युयोग, चौर्यज्ञान, द्रेष्काणादिके फलोंका विचार विस्तारसे किया है। इस ग्रन्थमे कुल १७० श्लोक हैं। इसकी भाषा सस्कृत है, ज्योतिषकी ज्ञातव्य सभी बातें इस ग्रन्थके द्वारा जानी जा सकती हैं।

नरचन्द्र उपाध्याय—यह कासद्रुहगच्छके सिंहसूरिके शिष्य थे। इन्होंने ज्योतिषशास्त्रके अनेक ग्रन्थोंकी रचना की है। वर्त्तमानमे इनके बेडाजातकवृत्ति, प्रश्नशतक, प्रश्नचतुर्विंशतिका, जन्मसमुद्र सटीक, लग्न-

विचार, ज्योतिपप्रकाश उपलब्ध हैं। इनके सम्बन्धमे एक स्थानपर कहा गया है—

देवानन्दमुनीश्वरपदपङ्कजसेवकै षट्चरणः।
ज्योतिःशास्त्रमकार्षीन् नरचन्द्राख्यो मुनिप्रवरः॥

इस श्लोक-द्वारा देवानन्द नामक मुनि इनके गुरु मालूम पडते है। दिगम्बर समुदायमे 'नारचन्द्र' नामक ज्योतिप ग्रन्थ जो उपर्युक्त ग्रन्थोसे भिन्न है, नरचन्द्र-द्वारा रचित माना जाता है। इनके सम्बन्धमे एक स्थानपर यह भी उल्लेख मिलता है—

श्रीकाशहृद्गणेशोद्योतन-सूरीष्टसिंहसूरिभ्रृत·।
नरचन्द्रोपाध्यायः शास्त्रं चन्द्रेऽर्थबहुलमिदम्॥

नरचन्द्रने स० १३२४मे माघ सुदी ८ रविवारको वेडाजातकवृत्तिकी रचना १०५० श्लोक प्रमाणमे की है। इनकी ज्ञानदीपिका नामक एक अन्य रचना भी ज्योतिपकी वतायी जाती है। वेडाजातकवृत्तिमे लग्न और चन्द्रमासे ही समस्त फलोका विचार किया गया है। यह जातक ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। प्रश्नचतुर्विंशतिकाके प्रारम्भमें ज्योतिपका महत्त्वपूर्ण गणित लिखा है। ग्रन्थ अत्यन्त गूढ और रहस्यपूर्ण है।

पञ्चवेदयामगुण्ये रविभुक्तदिनान्विते।
त्रिंशद्भुक्ते स्थितं यत्तत् लग्नं सूर्योदयर्क्षत.॥

उपर्युक्त श्लोकमे अत्यन्त कौशलके साथ दिनमान सिद्ध किया है। ज्योतिष-प्रकाश फलित ज्योतिपका मुहूर्त्त और सहिता-विषयक सुन्दर ग्रन्थ है। इसके दूसरे भागमे जन्मकुण्डलीके फलका वडी सरलतासे विचार किया है। फलित ज्योतिषका आवश्यक ज्ञान केवलज्योतिपप्रकाश-द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

अट्ठकवि या अर्हद्दास—यह जैन ब्राह्मण थे। इनका समय ईसवी सन् १३०० के लगभग माना जाता है। अर्हद्दासके पिता नागकुमार थे। यह कन्नड भाषाके प्रकाण्ड विद्वान् थे, इन्होंने कन्नडमे अट्ठमत नामक ज्यो-

तिपका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। शक संवत्की चौदहवी शताब्दीमें भास्कर नामके आन्ध्रकविने इस ग्रन्थका तेलुगु भाषामें अनुवाद किया है। अद्भुतमतमें वर्षाके चिह्न, आकस्मिक लक्षण, शकुन, वायु, चन्द्र, गोप्रवेश, भूकम्प, भूजातफल, उत्पातलक्ष्य, परिवेपलक्षण, इन्द्रधनुर्लक्षण, प्रथमगर्भ-लक्षण, द्रोणसख्या, विद्युत्लक्षण, प्रतिसूर्यलक्षण, सवत्सरफल, ग्रहद्वेप, मेघो-के नाम, कुल-वर्ण, ध्वनिविचार, देशवृष्टि, मासफल, राहुचक्र, नक्षत्रफल, सक्रान्तिफल आदि विपयोका प्रतिपादन किया गया है।

महेन्द्रसूरि—यह भृगुफर निवासी मदनसूरिके शिष्य फीरोजशाह तुगलकके प्रधान सभापण्डित थे। इन्होने नाडीवृत्तके धरातलमें गोल-पृष्ठस्थ सभी वृत्तोका परिणमन करके यन्त्रराज नाम ग्रह-गणितका उप-योगी ग्रन्थ बनाया है। इनके शिष्य मलयेन्दुसूरिने सोदाहरण टीका लिखी है। इस ग्रन्थकी प्रशसा करते हुए स्वय ग्रन्थकारने लिखा है—

यथा भट प्रौढरणोत्कटोऽपि शस्त्रैर्विमुक्त परिभूतिमेति।
तद्वन्महाज्योतिषनिस्तुषोऽपि यन्त्रेण हीनो गणकस्तथैव ॥

इस ग्रन्थमे अनेक विशेपताएँ है, परमाक्रान्ति २३ अश ३५ कला मानी गयी है। इस ग्रन्थकी रचना शक स० ११९२ मे हुई है। इसमें गणिताध्याय, यन्त्रघटनाध्याय, यन्त्ररचनाध्याय, यन्त्रशोधनाध्याय और यन्त्रविचारणाध्याय ये पाँच अध्याय है। क्रमोत्क्रमज्यानयन, भुजकोटिज्या-का चापसाधन, क्रान्ति-साधन, द्युज्याखण्डसाधन, द्युज्याफलानयन, सौम्य यन्त्रके विभिन्न गणितोका साधन, अक्षाशसे उन्नताश साधन, ग्रन्थके नक्षत्र ध्रुवादिसे अभीष्ट वर्पके ध्रुवादिका साधन, नक्षत्रोके दृक्कर्मसाधन, द्वादश राशियोके विभिन्न वृत्त-सम्बन्धी गणितोका साधन, इष्टशकुसे छायाकरण-साधन, यन्त्रशोधन प्रकार और उसके अनुसार विभिन्न राशि और नक्षत्रो-के गणितका साधन, द्वादश भाव और नवग्रहोके स्पष्टीकरणका गणित एव विभिन्न यन्त्रो-द्वारा सभी ग्रहोके साधनका गणित बहुत सुन्दर ढगसे इस ग्रन्थमें बताया गया है। इसपर-से पचाग बहुत सरलतासे बनाया जा

सकता है।

मकरन्द—इन्होने सूर्यसिद्धान्तके अनुसार तिथ्यादि साधनरूप सारणी अपने नामसे (मकरन्द) बनारसमे शक सं० १४०० मे तैयार की है। ग्रन्थके आदिमें लिखा है—

श्रीसूर्यसिद्धान्तमतेन सम्यक् विश्वोपकाराय गुरूपदेशात्।
तिथ्यादिपत्रं वितनोति काश्यां आनन्दकन्दो मकरन्दनामा॥

मकरन्दके ऊपर दिवाकर ज्योतिषी-द्वारा लिखा गया विवरण है। इनकी इस सारणी-द्वारा पंचाग अनेक ज्योतिषी बनाते हैं। इस समय ग्रहलाघव सारणी और मकरन्द सारणीका खूब प्रचार है। मकरन्द सारणीका जॉन बेण्टली साहबने अँगरेजीमें भी अनुवाद किया है। यह ग्रन्थ ज्योतिषियोके लिए बडा उपयोगी है।

केशव—इनके पिताका नाम कमलाकर और गुरुका नाम वैद्यनाथ था। इनका जन्म पश्चिमी समुद्रके किनारे नन्दिग्राममे ईसवी सन् १४५६ में हुआ था। यह ज्योतिष शास्त्रके बडे भारी विद्वान् थे। इन्होने ग्रहकौतुक, वर्षग्रहसिद्धि, तिथिसिद्धि, जातकपद्धति, जातकपद्धतिविवृति, ताजिकपद्धति, सिद्धान्तवासना पाठ, मुहूर्त्ततत्त्व, कायस्थादि धर्म पद्धति, कुण्डाष्टकलक्षण एव गणितदीपिका इत्यादि अनेक ग्रन्थ बनाये है। इनके पुत्र गणेशदैवज्ञने इनकी प्रशसा करते हुए लिखा है—

सोमाय ग्रहकौतुकं खगकृतिं तच्चालनाख्यं तिथे
सिद्धिं जातकपद्धतिं सविवृतिं तत्ताजिके पद्धतिम्।
सिद्धान्तेऽप्युपपत्तिपाठनिचयं मौहूर्त्ततत्त्वाभिधं
कायस्थादिजधर्मपद्धतिमुखं श्रीकेशवार्योऽकरोत्॥

इससे सिद्ध होता है कि केशव ज्योतिषशास्त्रके पूर्ण पण्डित थे। ग्रह-गणित और फलित इन दोनो विषयोका इन्हे अच्छा ज्ञान था।

गणेश—इनके पिताका नाम केशव और माताका नाम लक्ष्मी था। इनका जन्म ईसवी सन् १५१७ माना जाता है। यह अपूर्व प्रतिभासम्पन्न

ज्योतिषी थे, इन्होंने १३ वर्षकी उम्रमे ग्रहलाघव-जैसे अपूर्व करण ग्रन्थकी रचना की थी। इनके द्वारा रचित अन्य ग्रन्थोमें लघुतिथिचिन्तामणि, वृहत्तिथिचिन्तामणि, सिद्धान्तशिरोमणि टीका, लीलावती टीका, विवाहवृन्दावन टीका, मुहूर्त्ततत्त्वटीका, श्राद्धादिनिर्णय, छन्दार्णवटीका, सुधीरजनीतर्जनीयन्त्र, कृष्णजन्माष्टमी निर्णय, होलिका निर्णय आदि वताये जाते हैं।

ग्रहलाघवमे ज्या-चापके विना अकोंद्वारा ही सारा ग्रहगणित किया गया है। इसमें कल्पादिसे अहर्गणके तीन खण्ड कर ध्रुवक्षेप-द्वारा ग्रह सिद्ध किये गये है। वर्त्तमानमें जितने करण ग्रन्थ उपलब्ध है, उनमें सवसे सरल और प्रामाणिक ग्रहलाघव ही माना जाता है। यद्यपि इसके ग्रहगणितमे कुछ स्थूलता है, पर काम चलाने लायक यह अवश्य है।

ढुण्ढिराज—यह पार्थपुराके रहनेवाले नृसिंह दैवज्ञके पुत्र और ज्ञानराजके शिष्य थे। इनका समय ईसवी सन् १५४१ है। इन्होंने जातकाभरण नामक फलित ज्योतिपका एक सुन्दर ग्रन्थ वनाया है। यह ग्रन्थ फलित ज्योतिपमें अपने ढगका निराला है, जन्मपत्रीका फलादेश इसमें वहुत सुन्दर ढगसे वताया गया है। जातकाभरणकी श्लोक-सख्या दो हजार है, केवल इस ग्रन्थके सम्यक् अध्ययनसे फलित-ज्योतिपका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

नीलकण्ठ—इनके पिताका नाम अनन्तदैवज्ञ और माताका नाम पद्मा था। इनका जन्म-समय ईसवी सन् १५५६ वताया जाता है। इन्होंने अरवी और फारसीके ज्योतिप-ग्रन्थोके आधारपर ताजिकनीलकण्ठी नामक एक फलित-ज्योतिपका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ वनाया है। विदेशी भापाके साहित्यसे केवल शरीर-भर ग्रहण किया है, आतमा भारतीय ज्योतिपकी है। नीलकण्ठीमें तीन तन्त्र—सज्ञातन्त्र, वर्पतन्त्र और प्रश्नतन्त्र है। इसमे इक्कवाल, इन्दुवार, इत्थशाल, इशराफ, नक्त, यमया, मणऊ, कम्वूल, गैरकम्वूल, खल्लासर, रद्द, दुफाली, कुत्थ, दुत्थोत्थदवीर, तुम्वी, रकुत्थ और दुरफा ये सोलह योग अरवी ज्योतिपमे लिये गये प्रतीत होते हैं। इन योगो-द्वारा वर्पकुण्डलीमें

प्राणियोके शुभाशुभका निर्णय किया जाता है ।

रामदैवज्ञ—यह अनन्तदैवज्ञके पुत्र और नीलकण्ठके भाई थे। इनका जन्म समय ईसवी सन् १५६५ माना जाता है। इन्होने शक संवत् १५२२मे मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक एक महत्त्वपूर्ण मुहूर्त्त ग्रन्थ वनाया है। इस समय सर्वत्र इसीके आधारपर विवाह, द्विरागमन, यात्रा, यज्ञोपवीत आदि सस्कारोके मुहूर्त्त निकाले जाते है। यह ग्रन्थ श्रीपति-द्वारा रचित रत्नमालाका एक सस्कृत रूप है। इन्होने अकवरकी आज्ञासे शक स० १५१२में एक रामविनोद नामका करण ग्रन्थ भी बनाया है। रामदैवज्ञने टोडरमलको प्रसन्न करनेके लिए टोडरानन्द नामक एक सहिता-विषयक ज्योतिषका ग्रन्थ वनाया है, लेकिन आज यह ग्रन्थ उपलब्ध नही है ।

मल्लारि—इनके पिताका नाम दिवाकरनन्दन और वडे भाइयोका नाम कृष्णचन्द्र और विष्णुचन्द्र था। इन्होने अपने पितासे ही ज्योतिपशास्त्रका अध्ययन किया था। इनकी ग्रहलाघवके ऊपर उपपत्तिसहित एक सुन्दर टीका है। इस टीका-द्वारा इनकी गोल और गणित-सम्बन्धी विद्वत्ताका पता सहजमे लग जाता है। वक्र केन्द्राश निकालनेके लिए की गयी समीकरणकी कल्पना इनकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वापूदेव शास्त्रीने सिद्धान्तशिरोमणिके स्पष्टाधिकारकी टिप्पणीमें वक्र केन्द्राश निकालनेके लिए मल्लारिकी कल्पनाका प्रयोग किया है ।

नारायण—यह टापर ग्रामनिवासी अनन्तनन्दनके पुत्र थे। इनका समय ईसवी सन् १५७१ माना गया है। इन्होने शक सवत् १४९३ मे विवाहादि अनेक मुहूर्त्तोसे युक्त मुहूर्त्तमार्तण्ड नामक मुहूर्त ग्रन्थ वनाया था। ग्रन्थके देखनेसे इनकी ज्योतिप-सम्बन्धी निपुणताका पता सहजमें लग जाता है। इस ग्रन्थमें अनेक विशेपताएँ है, इसकी रचना शार्दूलविक्रीडित छन्दोमे हुई है ।

इस नामके एक दूसरे विद्वान् ईसवी सन् १५८८ मे हो गये है। इन्होने केशवपद्धतिके ऊपर टीका लिखी है तथा एक वीजगणित भी वनाया है। इसमें अवर्गरूप प्रकृतिका रूप क्षेपीय कनिष्ठ, ज्येष्ठ-द्वारा आसन्न मूल

निकाला गया है, जिससे ग्रन्थकर्त्ताकी गणित-विषयक योग्यताका अनुमान लगाया जा सकता है। कारण सूत्र इस प्रकार है—

मूलं ग्राह्यं यस्य च तत्र प्रक्षेपजे पदे तत्र।
ज्येष्ठं ह्रस्वपदेनोद्धरेद्भवेन्मूलमासन्नम् ॥

रंगनाथ—इनका जन्म काशीमें ईसवी सन् १५७५ मे हुआ था। इनके पिताका नाम बल्लाल और माताका गोजि था। इन्होने सूर्यसिद्धान्तकी गूढार्थ-प्रकाशिका नामक टीका लिखी है। इस टीकासे इनकी ज्योतिष-विषयक विद्वत्ताका पता लग जाता है। इन्होने उक्त टीकामें अनेक नवीन बातें लिखी है।

इन प्रधान ज्योतिर्विदोंके अतिरिक्त इस युगमें शतानन्द, केशवार्क, कालिदास, महादेव, गंगाधर, भक्तिलाभ, हेमतिलक, लक्ष्मीदास, ज्ञानराज, अनन्तदैवज्ञ, दुर्लभराज, हरिभद्रसूरि, विष्णुदैवज्ञ, सूर्यदैवज्ञ, जगदेव, कृष्ण-दैवज्ञ, रघुनाथशर्मा, गोविन्ददैवज्ञ, विश्वनाथ, नृसिंह, विट्ठलदीक्षित, शिव-दैवज्ञ, समन्तभद्र, बलभद्रमिश्र और सोमदैवज्ञ भी हुए हैं। इन्होने स्वतन्त्र मौलिक ग्रन्थ लिखकर तथा पूर्वाचार्योंके ग्रन्थोकी टीकाएँ लिखकर ज्योतिष शास्त्रको समृद्धिशाली बनाया है। गोविन्ददैवज्ञने मुहूर्त्तचिन्तामणिकी पीयूष-धारा टीका लिखकर इस ग्रन्थको सदाके लिए अमर बना दिया है। यह केवल टीका ही नही है बल्कि मुहूर्त्तसम्बन्धी साहित्यका एक संग्रह है। इसी प्रकार नृसिंहदैवज्ञने सूर्यसिद्धान्त और सिद्धान्तशिरोमणिकी सौरभाष्य और वासनावार्तिक नामकी टीकाएँ रची। इन टीकाओसे तद्विषयक एक नया साहित्य ही खड़ा हो गया। उत्तरमध्यकालके अन्तिमके ज्योतिषियोंमें ग्रहवेधकी प्रणाली उठती हुई-सी नजर आती है। नवीन ग्रह-गणित संशो-धक भी इस कालमें भास्करके बाद इने-गिने ही हुए है। जातक और मुहूर्त्तविषयक साहित्य इस कालमें खूब पल्लवित हुआ है। मुहूर्त्त अंगपर स्वतन्त्र रूपसे पूर्वमध्यकालके ज्योतिर्विदोने नाम मात्रको लिखा था किन्तु इस कालमें यह अंग खूब पुष्ट हुआ है।

अर्वाचीन काल (ई० १६०१ से १९५१) :
सामान्य परिचय

अर्वाचीन कालके आरम्भमें मुसलिम सस्कृतिके साथ-साथ पाश्चात्त्य सभ्यताका प्रचार भी भारतमे हुआ। यो तो उत्तरमध्यकालमें ही ज्योतिषियोने आकाशावलोकन त्याग कर पुस्तकोका पल्ला पकड लिया था और पुस्तकीय ज्ञान ही ज्योतिष माना जाने लगा था। सच बात तो यह है कि भास्कराचार्यके बाद मुसलिम राज्योके कारण हिन्दूधर्म, सम्पत्ति, साहित्य और ज्योतिष आदि विषयोकी उन्नतिपर आपत्तिके पहाड गिरे जिससे उक्त विषयोका विकास रुक गया। कुछ धर्मान्ध साम्प्रदायिक पक्षपाती मुसलिम बादशाहोने सम्प्रदायकी तेज शराबके नशेसे चूर होकर भारतीय ज्ञान-विज्ञानको हिन्दू समाजकी बपौती समझकर नष्ट-भ्रष्ट करनेमे जरा भी सकोच नही किया। विद्वानोको राजाश्रय न मिलनेसे ज्योतिषके प्रसार और विकासमें कुछ कम बाधाएँ नही आयी। नवीन सशोधन और परिवर्द्धन तो दरकिनार रहा, पुरातन ज्योतिष ज्ञान-भण्डारका सरक्षण भी कठिन हो गया। यद्यपि कुछ हिन्दू, मुसलिम विद्वानोने इस युगमें फलित ग्रन्थोकी रचनाएँ की, लेकिन आकाश-निरीक्षणकी प्रथा उठ जानेसे वास्तविक ज्योतिष तत्त्वोका विकास नही हो सका।

शकुन, प्रश्न, मुहूर्त्त, जन्मपत्र एव वर्षपत्रके साहित्यकी अवश्य वृद्धि हुई है। कमलाकर भट्टने सूर्यसिद्धान्तका प्रचार करनेके लिए 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' नामक गणित-ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचा है। इस अर्वाचीन कालके प्रारम्भमे प्राचीन ग्रन्थोपर टीका-टिप्पण बहुत लिखे गये।

ई० सन् १७८० मे आमेराधिपति महाराज जयसिहका ध्यान ज्योतिषकी ओर विशेष आकृष्ट हुआ और उन्होने काशी, जयपुर एव दिल्लीमें वेधशालाएँ बनवायी, जिनमे पत्थरोकी ऊँची और विशाल दीवालोके रूपमें बडे-बडे यन्त्र बनवाये। स्वय महाराज जयसिह इस विद्याके प्रेमी थे,

इन्होने युरॅपकी प्रचलित तारासूचियोमें कई भूलें निकाली तथा भारतीय ज्योतिपके आधारपर नवीन सारणियाँ तैयार करायी ।

सामन्त चन्द्रशेखरने अपने अद्वितीय बुद्धिकौशल-द्वारा ग्रहवेध कर प्राचीन गणित-ज्योतिपके ग्रन्थोमे सशोधन किया तथा अपने सिद्धान्तो-द्वारा ग्रहोकी गतियोके विभिन्न प्रकार वतलाये ।

इधर अँगरेज़ी सभ्यताके सम्पर्कसे भारतमें अँगरेज़ी भापाका प्रचार हो गया । इस भाषाके प्रचारके साथ-साथ अँगरेज़ी आधुनिक भूगोल और गणितविपयक विभिन्न ग्रन्योके पठन-पाठनकी प्रथा भी प्रचलित हुई । सन् १८५७के पश्चात् तो आधुनिक नवीन आविष्कृत विज्ञानोका प्रभाव भारत-के ऊपर विशेप रूपसे पडा है । फलत अँगरेजी भापाके जानकार सस्कृतके विद्वानोंने इस भापाके नवीन गणित ग्रन्थोका अनुवाद सस्कृतमे कर ज्योतिप-की श्रीवृद्धि की है । वापूदेव शास्त्री और प० सुधाकर द्विवेदीने इस ओर विशेष प्रयत्न किया है । आप महानुभावोके प्रयासके फलस्वरूप ही रेखा-गणित, वीजगणित और त्रिकोणमितिके ग्रन्थोसे आजका ज्योतिष धनी कहा जा सकेगा । केतक नामक विद्वान्ने केतकी ग्रह-गणितकी रचना अँगरेज़ी ग्रह-गणित और भारतीय गणित-सिद्धान्तोके समन्वयके आधारपर की है । दीर्घवृत्त, परिवलय, अतिपरवलय इत्यादिके गणितका विकास इस नवीन सभ्यताके सम्पर्ककी मुख्य देन माना जायेगा ।

पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य, सौर-चक्र, वुध, शुक्र, मगल, अवान्तर ग्रह, वृहस्पति, यूरेनस, नेपच्यून, नभस्तूप, आकाशगगा और उल्का आदिका वैज्ञानिक विवेचन पश्चिमीय ज्योतिपके सम्पर्कसे इधर तीस-चालीस वर्पोके वीचमें विशेप रूपसे हुआ है । डॉ० गोरखप्रसादने आधुनिक वैज्ञानिक अन्वेपणोके आधारपर इस विपयकी एक विशालकाय सौरपरिवार नामकी पुस्तक लिखी है, जिसमे सौर-जगत्के सम्वन्धमे अनेक नवीन वातोका पता लगता है । श्री० वा० सम्पूर्णानन्दजी ज्योतिर्विनोद नामक पुस्तकमे कापर्निकस, जिओर्दानो, गैलेलिओ और केप्लर आदि पाश्चात्य ज्योतिपियो-

के अनुसार ग्रह, उपग्रह और अवान्तर ग्रहोका स्वरूप वतलाया है। श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तवने सूर्य-सिद्धान्तका आधुनिक सिद्धान्तोके आधार-पर विज्ञानभाष्य लिखा है, जिससे सस्कृतज्ञ ज्योतिपके विद्वानोका वहुत उपकार हुआ है। अभिप्राय यह है कि आधुनिक युगमे पाश्चात्य ज्योतिप-के सम्पर्कसे गणित ज्योतिपके सिद्धान्तोका वैज्ञानिक विवेचन प्रारम्भ हुआ है। यदि भारतीय ज्योतिषी आकाश-निरीक्षणको अपनाकर नवीन ज्योतिपके साथ तुलना करें तो पूर्वमध्यकालसे चली आयी ग्रह-गणितकी सारणियोकी स्थूलता दूर हो जाये और भारतीय ज्योतिपकी महत्ता अन्य देशवासियोके समक्ष प्रकट हो जाये।

आधुनिककाल या अर्वाचीन प्रमुख ज्योतिर्विदोका परिचय

मुनीश्वर—यह रगनाथके पुत्र थे। इनका समय ईसवी सन् १६०३ माना जाता है। इन्होने शक सवत् १५६८ भाद्रपद शुक्ला पचमी सोमवार-के भगणादिको सिद्ध कर सिद्धान्तसार्वभौम नामक एक ज्योतिप ग्रन्थ वनाया है। इन्होने भास्कराचार्यके सिद्धान्तशिरोमणि और लीलावती नामक ग्रन्थोपर विस्तृत टीकाएँ लिखी हैं। यह काव्य, व्याकरण, कोश और ज्योतिष आदि अनेक विषयोके प्रकाण्ड विद्वान् थे।

दिवाकर—इनके पिताका नाम नृसिंह था। इनका जन्म ईसवी सन् १६०६ में हुआ था। इन्होने अपने चाचा शिवदैवज्ञसे ज्योतिपशास्त्रका अध्ययन किया था। यह अत्यन्त प्रसिद्ध ज्योतिषी, काव्य, व्याकरण, न्याय आदि शास्त्रोंमें प्रवीण और अनेक ग्रन्थोके रचयिता थे। १९ वर्पकी अव-स्थामें इन्होने फलित-विषयक जातकपद्धति नामक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। मकरन्दविवरण, केशवीय पद्धतिकी प्रौढ मनोरमा नामकी महत्त्वपूर्ण टीका और अपने-द्वारा रचित पद्धतिप्रकाशके ऊपर सोदाहरण टीका भी इन्होने रची है।

कमलाकर भट्ट—यह दिवाकरके भाई थे। इन्होने अपने भाई दिवा-

करसे ही ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन किया था। यह गोल और गणित दोनो ही विषयोंके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होने प्रचलित सूर्यसिद्धान्तके मतानुसार 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' नामक ग्रन्थ शक स० १५८० मे काशीमें बनाया है। सौरपक्षकी श्रेष्ठता परम्परागत मानकर अन्य ब्रह्मपक्ष आदिको इन्होने नही माना, इसी कारण भास्कराचार्यका स्थान-स्थानपर खूब खण्डन किया है। इन्होंने तत्त्वविवेकके आदिमें लिखा है—

प्रत्यक्षागमयुक्तिशालि तदिद शास्त्र विहायान्मया
यत्कुर्वन्ति नराधमास्तु तदसत् वेदोक्तिशून्या भृशम् ॥

कमलाकरने ज्योतिषके अनेक सिद्धान्तोको तत्त्वविवेकमें बडी कुशलताके साथ रखा है, यदि यह निष्पक्ष होकर इन सिद्धान्तोकी समीक्षा करते तो वास्तवमें 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' एक अद्वितीय ग्रन्थ होता।

नित्यानन्द—यह इन्द्रप्रस्थपुरके निवासी गौड ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम देवदत्त था। सन् १६३९ में इन्होने सायन गणनाके अनुसार 'सिद्धान्तराज' नामक महत्त्वपूर्ण ज्योतिषका ग्रन्थ बनाया। इन्होंने चन्द्रमाको स्पष्ट करनेकी सुन्दर रीति बतायी है। 'सिद्धान्तराज' में मीमासाध्याय, मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, शृगोन्नत्यधिकार, भ-ग्रहयुत्यधिकार, भ-ग्रहोंके उन्नताशसाधनाधिकार, भुवनकोश, गोलबन्धाधिकार एवं यात्राधिकार है। ग्रहगणितकी दृष्टिसे यह महत्त्वपूर्ण है।

महिमोदय—इनके गुरुका नाम लब्धिविजय सूरि था और इनका समय वि० स० १७२२ बताया गया है। यह गणित और फलित दोनो प्रकारके ज्योतिषके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित ज्योतिष-रत्नाकर, गणित साठ सौ, पचागानयनविधि ग्रन्थ कहे जाते है। ज्योतिषरत्नाकर ग्रन्थ फलितका है और अवशेष दोनो ग्रन्थ गणितके है। ज्योतिषरत्नाकरमें सहिता, मुहूर्त्त और जातक इन तीनो ही अगोपर प्रकाश डाला गया है। छोटा होते हुए भी ग्रन्थ उपयोगी है। पचागानयनविधिके

नामसे ही उसका विषय प्रकट हो जाता है। इस ग्रन्थमे अनेक सारणियाँ है, जिनसे पंचागके गणितमे पर्याप्त सहायता मिलती है। यदि सूक्ष्मताकी तहमे प्रवेश किया जाये तो इस गणितमे सस्कारकी आवश्यकता प्रतीत होगी। इसके गणित-द्वारा आगत ग्रहोमे दृग्गणितैक्य नही होगा। गणित साठ सौ गणितका ग्रन्थ है।

मेघविजयगणि—यह ज्योतिपशास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनका समय वि० सं० १७३७ के आसपास माना जाता है। इनके द्वारा रचित मेघमहोदय या वर्पप्रवोध, उदयदीपिका, रमलशास्त्र और हस्तसजीवन आदि मुख्य है। वर्पप्रवोधमे १३ अधिकार और ३५ प्रकरण हैं। इसमे उत्पातप्रकरण, कर्पूरचक्र, पद्मिनीचक्र, मण्डलप्रकरण, सूर्य और चन्द्रग्रहणका फल, प्रत्येक महीनेका वायु-विचार, संवत्सरका फल, ग्रहोंके राशियोपर उदयास्त और वक्री होनेका फल, अयन-मास-पक्ष-विचार, सक्रान्तिफल, वर्पके राजा, मन्त्री, धान्येश, रसेश आदिका निरूपण, आय-व्यय विचार, सर्वतोभद्रचक्र, शकुन आदि विपयोका सुन्दर वर्णन है। हस्तसजीवनमें तीन अधिकार हैं। प्रथम अधिकार दर्शनाधिकार है, जिसमे हाथ कैसे देखना, हाथ ही पर-से मास, दिन, घटी, पल आदिका शुभाशुभ फल, रेखा और लग्नचक्र वनाकर कहना, द्वितीय अधिकार स्पर्शनाधिकार है, जिसमें हाथको स्पर्श करनेसे ही समस्त शुभाशुभ फलोका निरूपण, जैसे इस वर्षमें कितनी वर्षा होगी, विना किसी मन्त्रादिकके इस समय कितना दिन या रात गत है, इसका ज्ञान कर लेना, तृतीय विमर्शनाधिकारमें रेखाओपर-से ही आयु, सन्तान, स्त्री, भाग्योदय, जीवनकी प्रमुख घटनाएँ, सासारिक सुख आदि वातोका ज्ञान गवेषणापूर्ण रीतिसे वताया गया है। इनके फलित ग्रन्थोको देखनेसे सहिता और सामुद्रिक शास्त्र सम्वन्धी प्रकाण्ड विद्वत्ताका पता सहजमे लग जाता है।

उभयकुशल—इनका समय वि० स० १७३७ के लगभग माना जाता है। यह फलित ज्योतिषके अच्छे ज्ञाता थे, इन्होने विवाह-पटल और

चमत्कार-चिन्तामणि नामक दो ज्योतिष ग्रन्थोकी रचना की है। यह मुहूर्त्त और जातक दोनो अगोके ज्ञाता थे।

लब्धिचन्द्रगणि—यह खरतरगच्छीय कल्याणनिधानके शिष्य थे। इन्होने वि० स० १७५१ के कार्त्तिक मासमें ज्योतिपका जन्मपत्रीपद्धति नामक एक व्यवहारोपयोगी ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थमे इष्टकाल, भयात, भभोग, लग्न एव नवग्रहोका स्पष्टीकरण आदि गणितके विषय भी हैं। जन्मपत्रीके सामान्य फलका वर्णन भी इस ग्रन्थमें किया है।

बाघजी मुनि—यह पार्श्वचन्द्रगच्छीय शाखाके मुनि थे। इनका समय वि० सं० १७८३ माना जाता है। इन्होने तिथिसारणी नामक ज्योतिपका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। इसके अतिरिक्त इनके दो-तीन फलित ज्योतिपके भी मुहूर्त्त-सम्बन्धी ग्रन्थोका पता लगता है। तिथिसारणीमें पचाग बनानेकी प्रक्रिया है। यह मकरन्द-सारणीके समान उपयोगी है।

यशस्वतसागर—इनका दूसरा नाम जसवन्तसागर भी बताया जाता है। यह ज्योतिप, न्याय, व्याकरण और दर्शनशास्त्रके धुरन्धर विद्वान् थे। इन्होने ग्रहलाघवके ऊपर वार्त्तिक नामकी टीका लिखी है। वि० स० १७६२में जन्मकुण्डली विषयको लेकर 'यशोराजपद्धति' नामक एक व्यवहारोपयोगी ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ जन्मकुण्डलीकी रचनाके नियमो-के सम्बन्धमें विशेप प्रकाश डालता है, उत्तरार्द्धमें जातकपद्धतिके अनुसार सक्षिप्त फल बतलाया है।

जगन्नाथ सम्राट्—यह तैलग ब्राह्मण, जयपुरनरेश जयसिंह महा-राजके सभापण्डित थे। इन्होने महाराज जयसिंहकी आज्ञासे अरबी भाषामें लिखित 'इजास्ती' नामक ज्योतिप ग्रन्थका सस्कृतमे अनुवाद किया है। इसके अतिरिक्त युक्लेदके रेखागणितका भी अरबीसे सस्कृतमे अनुवाद किया है। इस रेखागणितमें १५ अध्याय है। रेखागणितके अनुवादका समय शक स० १६४० है। कुछ लोगोका कहना है कि रेखागणितके मूल रचयिता युक्लेद नही थे, किन्तु मिलिटस नगर निवासी थेलस हैं। रेखा

गणितके पहले अध्यायमे ४८, दूसरेमे १४, तीसरेमें ३७, चौथेमें १६, पॉचवेंमे २५, छठेमे ३३, सातवेंमें ३९, आठवेंमे २५, नौवेंमे ३८, दसवें में १०९, ग्यारहवेंमे ४१, बारहवेंमें १५, तेरहवेंमें २१, चौदहवेंमे १० और पन्द्रहवेंमें ६ क्षेत्र हैं। इसमें प्रतिज्ञा या साध्य शब्दके स्थानपर क्षेत्र शब्दका प्रयोग किया गया है।

बापूदेव शास्त्री—इनका जन्म ईसवी सन् १८२१ मे पूना नगरमे हुआ था। इनके पिताका नाम सीताराम था। भारतीय ज्योतिप और युरॅपियन गणित इन दोनोके यह अद्वितीय विद्वान् थे। वर्त्तमानमे नवीन गणितकी जागृतिके मूल कारण शास्त्रीजी हैं। इनके त्रिकोणमिति, बीजगणित और अव्यक्त गणितके तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। शास्त्रीजीने अनेक वर्षों तक गवर्नमेण्ट सस्कृत कॉलेजमें अध्यापकी की और सैकडो देश-देशान्तरके शिष्योको विद्यादान देकर अपनी कीर्त्तिरूपी चन्द्रिकाका विस्तार किया। सिद्धान्तशिरोमणिके सशोधनके बाद शास्त्रीजीका नाम 'सशोधक' प्रसिद्ध हो गया। वास्तवमे यह थे भी सच्चे सशोधक। गणितविपयक युरॅपके उच्च सिद्धान्तोका भारतीय सिद्धान्तोके साथ इन्होने बहुत कुछ सामजस्य किया है। ईसवी सन् १८९० में इनका स्वर्गवास हो गया।

नीलाम्बर झा—ईसवी सन् १८२३ में प्रतिष्ठित और विद्वान् मैथिल ब्राह्मण-कुलमे आपका जन्म हुआ था। यह पटनाके निवासी और अलवरके राजा श्री शिवदाससिंहके आश्रित थे। इन्होने क्षेत्रमिति और त्रिकोणमितिके आधारपर 'गोलप्रकाश' नामक ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थमे प्राचीन सिद्धान्तोके अनेक प्रकार, उपपत्ति और बहुत-से प्रश्नोके उत्तर बडी उत्तमता और नवीन रीतिसे दिखलाये हैं। वास्तवमें इस ग्रन्थसे इनकी ज्योतिपविषयक प्रगाढ विद्वत्ता प्रकट होती है।

सामन्त चन्द्रशेखर—इनका जन्म उडीसाके अन्तर्गत कटकसे २५कोस खण्डद्वारा राज्यमे सन् १८३५ मे हुआ था। यह व्याकरण, स्मृति, पुराण, न्याय, काव्य और ज्योतिपके मर्मज्ञ विद्वान् थे। पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें

इनको ज्योतिप गणना करनेकी योग्यता प्राप्त हो गयी थी। लेकिन थोडे ही दिनोंमें इन्हें ज्ञात हुआ कि जिस ग्रह या नक्षत्रको गणनानुसार जिस स्थानपर होना चाहिए, वह उस स्थानपर नहीं है अतएव इन्होने नियमित रूपसे आकाशका अवलोकन करना आरम्भ किया। इस कार्यके लिए यन्त्रोकी आवश्यकता थी, पर यन्त्र मिलना असम्भव था। इसलिए इन्होने प्राचीन ग्रन्थोके आधारपर कुछ यन्त्र बनाये। यद्यपि ये यन्त्र अनगढ और स्थूल थे, किन्तु यह अपनी प्रतिभाके बलपर इनसे सूक्ष्म काम कर लेते थे। वेध-द्वारा ग्रहोको निश्चित कर इन्होने 'सिद्धान्त-दर्पण' नामक ज्योतिपका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थको देखकर इनके ज्योतिप ज्ञानकी जितनी प्रशसा की जाये, थोडी है।

सुधाकर द्विवेदी—इनका जन्म काशीमें ईसवी सन् १८६० में हुआ था। यह ज्योतिप ज्ञानके सिवा अन्य विषयोके भी अद्वितीय विद्वान् थे। फ्रेंच, अँगरेज़ी, मराठी, हिन्दी आदि विभिन्न भापाओके साहित्यके ज्ञाता थे। वर्तमान ज्योतिपशास्त्रके ये उद्धारक है। इन्होने प्राचीन जटिल गणित ज्योतिप-विपयक ग्रन्थोको भाष्य, उपपत्ति, टीका आदि लिखकर प्रकाशित किया। चलनकलन, दीर्घवृत्त, गणकतरगिणी, प्रतिभाबोधक, पचसिद्धान्तिकाकी टीका, सूर्यसिद्धान्तकी सुधावर्षिणी टीका, ग्रहलाघवकी उपपत्ति, ब्रह्मस्फुट सिद्धान्तका तिलक इत्यादि अनेक रचनाएँ इनकी मिलती है। बृहत्सहिताका सशोधन कर प्रामाणिक सस्करण इन्होने प्रकाशित कराया था। इस कालमें प्राचीन ज्योतिपशास्त्रका उद्धार करनेवाला सुधाकरजी-जैसा अन्य नहीं हुआ है। इनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी।

इन उपर्युक्त प्रसिद्ध ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त इस युगमें, रगनाथ, शकरदैवज्ञ, शिवलाल पाठक, परमानन्द पाठक, लक्ष्मीपति, बबुआज्योतिपी, मथुरानाथ शुक्ल, परमसुखोपाध्याय, बालकृष्ण ज्योतिपी, कृष्णदेव, शिवदैवज्ञ, दुर्गाशकर पाठक, गोविन्दाचारी, जयराम ज्योतिपी, सेवाराम शर्मा, लज्जाशकर शर्मा, नन्दलाल शर्मा, देवकृष्ण शर्मा, गोविन्ददेव शास्त्री,

केतक, दुर्गाप्रसाद द्विवेदी, रामयत्न ओझा, मानसागर, विनयकुशल, हीर-कलश, मेघराज, सूरचन्द्र, जयविजय, जयरत्न, जिनपाल, जिनदत्तसूरि, श्यामाचरण ओझा, हृषीकेश उपाध्याय आदि अन्य लब्धप्रतिष्ठ ज्योतिषी हुए हैं। इन्होने भी अनेक प्रकारसे ज्योतिषशास्त्रकी अभिवृद्धिमें सहायता प्रदान की है। वर्तमान ज्योतिषियोमे श्रीरामव्यास पाण्डेय, सूर्यनारायण व्यास, श्रीनिवास पाठक, विन्ध्येश्वरीप्रसाद आदि उल्लेखनीय हैं। मिथिला-मे अनेक अच्छे ज्योतिर्विद् हुए है। पद्मभूषण प० विष्णुकान्त झा ज्योतिषके अच्छे विद्वान् हैं। सस्कृत भाषामे कविता भी करते हैं। देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसादका जीवनवृत्त संस्कृत पद्योमे लिखा है। वर्तमानमें पटनामे आपका ज्योतिष-कार्यालय भी है।

समीक्षा

यदि समग्र भारतीय ज्योतिष शास्त्रके इतिहासपर दृष्टिपात किया जाये तो अवगत होगा कि प्राचीन कालमें भारत सभ्यता और सस्कृतिमे कितना आगे बढा हुआ था। प्राचीन ऋषियोने अपने दिव्यज्ञान और योगजन्य शक्तिसे ग्रह और नक्षत्रोके सम्बन्धमे सब कुछ जान लिया था। वे आँखोसे राशि, नक्षत्र, ताराव्यूह, चन्द्र, सूर्य और मगलादि ग्रहोकी गति, स्थिति और सचार आदिको देखकर योगके बलसे अपने शरीरस्थित सौर-मण्डलसे तुलना कर आन्तरिक ग्रहोकी गति, स्थिति तथा उसके द्वारा होने-वाले फलाफलका निरूपण करते रहे। ज्योतिषका पूर्णज्ञान उन्हें वैदिक-कालमें ही था, पर उसकी अभिव्यक्ति साहित्यके रूपमे क्रमश हुई है। पृथ्वीकी आकर्षण शक्तिके विषयमे भारतीयोने न्यूटन और गैलेलिओसे सैकडो वर्ष पहले ज्ञात कर लिया था। भास्कराचार्यने 'सिद्धान्तशिरोमणि'-के गोलाध्यायमें कहा है—

आकृष्टशक्तिश्च महीतया यत्
स्वस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्त्या।

आकृष्यते तत्पततीति भाति
समे समन्तात् क्व पतत्विय खे ॥

अर्थात् पृथ्वीमें आकर्षण शक्ति है, इससे वह अपने आसपासके पदार्थोंको खींचा करती है। पृथ्वीके समीपमे आकर्षण-शक्ति अधिक होती है और जिस प्रकार दूरी वढती जाती है, वैसे ही वह घटती जाती है। भास्कराचार्यने इसके कारणका विवेचन करते हुए लिखा है कि किसी स्थानपर भारी और हलकी वस्तु पृथ्वीपर छोडी जाये तो दोनो समान कालमे पृथ्वीपर गिरेंगी, यह न होगा कि भारी वस्तु पहले गिरे और हलकी वादको। अतएव ग्रह और पृथ्वी आकर्षण-शक्तिके प्रभावसे भ्रमण करते है।

पृथ्वीकी गोलाईका कथन करते हुए प्राचीन आचार्योंने लिखा है कि "गोलेकी परिधिका १००वाँ भाग समतल दिखाई पडता है, पृथ्वी एक वहुत वडा गोला है तथा मनुष्य वहुत ही छोटा है, अत उसकी पीठपर स्थित उसे वह सम--चपटी जान पडती है। यह एक आश्चर्यकी वात है कि भारतीय ऋपि-महर्पि दूरवीनके विना केवल अपनी आँखोंसे देखकर ही आकाशकी सारी स्थितिको जान गये थे। फलित-ज्योतिषका अनुभव उन्होने अपने दिव्य ज्ञानसे किया। यद्यपि वेविलोनिया और यूनानके सम्पर्कसे फलित और गणित दोनो ही प्रकारके भारतीय ज्योतिषमें अनेक नयी वातोका समावेश हुआ, परन्तु मूलतत्त्व ज्योके-त्यो अविकृत रहे। ताजिकपद्धतिका श्रीगणेश यवनोके कारण ही हुआ है।

अर्वाचीन ज्योतिपमे जो शिथिलता आयी है, उसका कारण दिव्य ज्ञानवाले ऋपियोकी कमी है। आज हमारे देशमें न तो वडी-वडी वेघशालाएँ है और न योग-क्रियाके जानकार ऋपि-महर्पि ही। इसलिए नवीन विवृत्तियाँ ज्योतिपमे नही हो रही हैं।

द्वितीयाध्याय

भारतीय ज्योतिषके सिद्धान्त

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि भारतीय ज्योतिपका मुख्य प्रयोजन आत्म-कल्याणके साथ लोक-व्यवहारका सम्पन्न करना है। लोक-व्यवहारके निर्वाहके लिए ज्योतिषके क्रियात्मक दो सिद्धान्त है—गणित और फलित। गणित ज्योतिषके शुद्ध गणितके अतिरिक्त करण, तन्त्र और सिद्धान्त ये तीन भेद एव फलितके जातक, ताजिक, मुहूर्त्त, प्रश्न एव शकुन ये पाँच भेद किये गये है। यो तो भारतीय ज्योतिपके सिद्धान्तोका वर्गीकरण और भी अनेक भेद-प्रभेदोमे किया जा सकता है, परन्तु मूल विभागोका उक्त वर्गीकरण ही अधिक उपयुक्त है। प्रस्तुत ग्रन्थको अधिक लोकोपयोगी वनानेकी दृष्टिसे इसमे गणित-ज्योतिपके सिद्धान्तोपर कुछ न लिखकर फलित ज्योतिपके प्रत्येक अगपर प्रकाश डालनेका प्रयत्न किया जायेगा। यद्यपि भारतीय ज्योतिपके रहस्यको हृदयंगम करनेके लिए गणित-ज्योतिप-का ज्ञान अनिवार्य है, पर साधारण जनताके लिए आवश्यक नही। क्योकि प्रामाणिक ज्योतिर्विदो-द्वारा निर्मित तिथिपत्रो—पचागोपर-से कतिपय फलितसे सम्वद्ध गणितके सिद्धान्तो-द्वारा अपने शुभाशुभका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। अतएव यहाँपर प्रयोजनीभूत आवश्यक ज्योतिप तत्त्वोका निरूपण किया जा रहा है। हर एक व्यक्तिके लिए यह जरूरी नही कि वह ज्योतिपी हो, किन्तु मानव-मात्रको अपने जीवनको व्यवस्थित करनेके नियमोको जानना वाजिब हो नही, अनिवार्य है।

फलित-ज्योतिपके ज्ञानके लिए तिथि, नक्षत्र, योग, करण और वारके सम्वन्धमे आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। अतएव जातक अंगपर लिखनेके पूर्व उपर्युक्त पाँचोके सक्षिप्त परिचयके साथ आव-

श्यक परिभाषाएँ दी जाती हैं—

तिथि—चन्द्रमाकी एक कलाको तिथि माना गया है। इसका चन्द्र और सूर्यके अन्तरांशोपर-से मान निकाला जाता है। प्रतिदिन १२ अंशोका अन्तर सूर्य और चन्द्रमाके भ्रमणमे होता है, यही अन्तरांशका मध्यम मान है। अमावास्याके बाद प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमा तककी तिथियाँ शुक्लपक्षकी और पूर्णिमाके बाद प्रतिपदासे लेकर अमावास्या तककी तिथियाँ कृष्ण पक्षकी होती हैं। ज्योतिषशास्त्रमें तिथियोकी गणना शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ होती है।

तिथियोंके स्वामी—प्रतिपदाका स्वामी अग्नि, द्वितीयाका ब्रह्मा, तृतीयाकी गौरी, चतुर्थीका गणेश, पंचमीका शेषनाग, षष्ठीका कार्तिकेय, सप्तमीका सूर्य, अष्टमीका शिव, नवमीकी दुर्गा, दशमीका काल, एकादशीके विश्वेदेवा, द्वादशीका विष्णु, त्रयोदशीका काम, चतुर्दशीका शिव, पौर्णमासीका चन्द्रमा और अमावास्याके पितर हैं। तिथियोंके शुभाशुभत्वके अवसरपर स्वामियोका विचार किया जाता है।

अमावास्याके तीन भेद हैं—सिनीवाली, दर्श और कुहू। प्रात कालसे लेकर रात्रि तक रहनेवाली अमावास्याको सिनीवाली, चतुर्दशीसे विद्धको दर्श एव प्रतिपदासे युक्त अमावास्याको कुहू कहते हैं।

तिथियोंकी संज्ञाएँ—१।६।११ नन्दा, २।७।१२ भद्रा, ३।८।१३ जया, ४।९।१४ रिक्ता और ५।१०।१५ पूर्णा संज्ञक हैं।

पक्षरन्ध्र—४।६।८।९।१२।१४ तिथियाँ पक्षरन्ध्र संज्ञक है।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्रमे दोनो पक्षोकी अष्टमी और नवमी, वैशाखमें दोनो पक्षोकी द्वादशी, ज्येष्ठमे कृष्णपक्षकी चतुर्दशी और शुक्लपक्षकी त्रयोदशी, आषाढमें कृष्णपक्षकी षष्ठी और शुक्लपक्षकी सप्तमी, श्रावणमें दोनो पक्षोकी द्वितीया और तृतीया, भाद्रपदमें दोनो पक्षोकी प्रतिपदा और द्वितीया, आश्विनमें दोनो पक्षोकी दशमी और एकादशी, कार्तिकमे कृष्ण पक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी चतुर्दशी, मार्गशीर्षमे दोनो पक्षोकी सप्तमी

और अष्टमी, पौषमें दोनो पक्षोकी चतुर्थी और पचमी, माघमे कृष्णपक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी षष्ठी एव फाल्गुनमें कृष्णपक्षकी चतुर्थी और शुक्लपक्षकी तृतीया मासशून्य सज्ञक है। मासशून्य तिथियोमें कार्य करनेसे सफलता प्राप्त नही होती।

सिद्धा तिथियाँ—मगलवारको ३।८।१३, बुधवारको २।७।१२, बृहस्पतिवारको ५।१०।१५, शुक्रवारको १।६।११ एवं शनिवारको ४।९।१४ तिथियाँ सिद्धि देनेवाली सिद्धासज्ञक है। इन तिथियोमे किया गया कार्य सिद्धिप्रदायक होता है।

दग्ध, विष और हुताशन सज्ञक तिथियाँ—रविवारको द्वादशी, सोमवारको एकादशी, मगलवारको पचमी, बुधवारको तृतीया, बृहस्पतिवारको षष्ठी, शुक्रको अष्टमी और शनिवारको नवमी दग्धा सज्ञक, रविवारको चतुर्थी, सोमवारको षष्ठी, मगलवारको सप्तमी, बुधवारको द्वितीया, बृहस्पतिवारको अष्टमी, शुक्रवारको नवमी और शनिवारको सप्तमी विष सज्ञक एवं रविवारको द्वादशी, सोमवारको षष्ठी, मगलवारको सप्तमी, बुधवारको अष्टमी, बृहस्पतिवारको नवमी, शुक्रवारको दशमी और शनिवारको एकादशी हुताशन सज्ञक है। नामानुसार इन तिथियोमे कार्य करनेसे विघ्न-बाधाओका सामना करना पडता है।

दग्ध-विष-हुताशनयोगसज्ञाबोधकचक्र

रविवार	सोमवार	मगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वार
१२	११	५	३	६	८	९	दग्ध
४	६	७	२	८	९	७	विष
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशन

नक्षत्र—कई ताराओंके समुदायको नक्षत्र कहते हैं। आकाश-मण्डलमें जो असंख्यात तारिकाओंसे कहीं अश्व, शकट, सर्प, हाथ आदिके आकार बन जाते हैं, वे ही नक्षत्र कहलाते हैं। जिस प्रकार लोक-व्यवहारमें एक स्थानसे दूसरे स्थानकी दूरी मीलों या कोशोंमें नापी जाती है, उसी प्रकार आकाश-मण्डलकी दूरी नक्षत्रोंसे ज्ञात की जाती है। तात्पर्य यह है कि जैसे कोई पूछे कि अमुक घटना सडकपर कहाँ घटी, तो यही उत्तर दिया जायेगा कि अमुक स्थानसे इतने कोश या मील चलनेपर, उसी प्रकार अमुक ग्रह आकाशमें कहाँ है, तो इस प्रश्नका भी वही उत्तर दिया जायेगा कि अमुक नक्षत्रमें। समस्त आकाश-मण्डलको ज्योतिषशास्त्रने २७ भागोंमें विभक्त कर प्रत्येक भागका नाम एक-एक नक्षत्र रखा है। सूक्ष्मतासे समझानेके लिए प्रत्येक नक्षत्रके भी चार भाग किये गये हैं, जो चरण कहलाते हैं। २७ नक्षत्रोंके नाम निम्न हैं[१]—(१) अश्विनी (२) भरणी (३) कृत्तिका (४) रोहिणी (५) मृगशिरा (६) आर्द्रा (७) पुनर्वसु (८) पुष्य (९) आश्लेषा (१०) मघा (११) पूर्वाफाल्गुनी (१२) उत्तराफाल्गुनी (१३) हस्त (१४) चित्रा (१५) स्वाति (१६) विशाखा (१७) अनुराधा (१८) ज्येष्ठा (१९) मूल (२०) पूर्वाषाढा (२१) उत्तराषाढा (२२) श्रवण (२३) धनिष्ठा (२४) शतभिषा (२५) पूर्वाभाद्रपद (२६) उत्तराभाद्रपद (२७) रेवती।

---

१ अश्विनी भरणी चैव कृत्तिका रोहिणी मृग:।
आर्द्रा पुनर्वसु पुष्यस्तथाश्लेषा मघा तत:॥
पूर्वाफाल्गुनिका चैव उत्तराफाल्गुनी तत:।
हस्तश्चित्रा तथा स्वाती विशाखा तदनन्तरम्॥
अनुराधा ततो ज्येष्ठा ततो मूलं निगद्यते।
पूर्वाषाढोत्तराषाढा त्वभिजिच्छ्रवणा तत:॥
धनिष्ठा शततारारव्य पूर्वाभाद्रपदा तत:।
उत्तराभाद्रपदा चैव रेवत्येतानि भानि च॥

ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम्।

अभिजित्को भी २८वाँ नक्षत्र माना गया है। ज्योतिर्विदोका अभिमत है कि उत्तराषाढकी आखिरी १५ घटियाँ और श्रवणके प्रारम्भकी चार घटियाँ, इस प्रकार १९ घटियोके मानवाला अभिजित् नक्षत्र होता है। यह समस्त कार्योंमें शुभ माना गया है।

नक्षत्रोंके स्वामी—अश्विनीका अश्विनीकुमार, भरणीका काल, कृत्तिका-

---

तत्र स्थिर बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥

—मुहूर्त्तचिन्तामणि, नक्षत्रप्रकरण श्लो० २

चरसंज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ॥
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ वही, पद्य ३

क्रूर और उग्रसंज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥—वही, ४ श्लो०

मिश्रसंज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥—वही, ५ श्लो०

क्षिप्र और लघु संज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ वही, श्लो० ६

मृदु और मैत्री संज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदुमैत्रं भृगुस्तथा ॥
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम् ॥—वही, श्लो० ७

तीक्ष्ण और दारुणसंज्ञक नक्षत्र और उनमें विधेय कार्य—

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम् ॥ वही, श्लो० ८

अधोमुखादि संज्ञाएँ—

मूलाहिमिश्रोग्रमधोमुखं भवेदूर्ध्वास्यमार्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवम् ।
तिर्यङ्मुखं मैत्रकरानिलादितिज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषु सत् ॥वही,श्लो०९

का अग्नि, रोहिणीका ब्रह्मा, मृगशिरका चन्द्रमा, आर्द्राका रुद्र, पुनर्वसुका अदिति, पुष्यका बृहस्पति, आश्लेषाका सर्प, मघाका पितर, पूर्वाफाल्गुनीका भग, उत्तराफाल्गुनीका अर्यमा, हस्तका सूर्य, चित्राका विश्वकर्मा, स्वातिका पवन, विशाखाका शुक्राग्नि, अनुराधाका मित्र, ज्येष्ठाका इन्द्र, मूलका निर्ऋति, पूर्वाषाढाका जल, उत्तराषाढाका विश्वेदेव, अभिजित्का ब्रह्मा, श्रवणका विष्णु, धनिष्ठाका वसु, शतभिषाका वरुण, पूर्वाभाद्रपदका अजैकपाद, उत्तराभाद्रपदका अहिर्बुध्न्य एव रेवतीका पूषा स्वामी हैं। नक्षत्रोंका फलादेश भी स्वामियोंके स्वभाव-गुणके अनुसार जानना चाहिए।

पचक सज्ञक नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, और रेवती इन नक्षत्रोंमे पचक दोष माना जाता है।

मूलसंज्ञक नक्षत्र—ज्येष्ठा, आश्लेषा, रेवती, मूल, मघा और अश्विनी ये नक्षत्र मूलसज्ञक हैं। इनमें यदि बालक उत्पन्न होता है तो २७ दिनके पश्चात् जब वही नक्षत्र आ जाता है तब शान्ति करायी जाती है। इन नक्षत्रोंमे ज्येष्ठा और मूल गण्डान्त मूलसज्ञक तथा आश्लेषा सर्पमूलसज्ञक हैं।

ध्रुव-चर-उग्र-मिश्र-लघु-मृदु तीक्ष्णसज्ञक नक्षत्र—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ध्रुवसज्ञक, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चलसज्ञक, विशाखा और कृत्तिका मिश्रसज्ञक, हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघुसज्ञक, मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्रसज्ञक एव मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुणसज्ञक हैं। कार्यकी सिद्धिमें नक्षत्रोंकी सज्ञाओंका फल प्राप्त होता है।

अधोमुखसज्ञक—मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा अधोमुखसज्ञक हैं। इनमें कुआँ या नीव खोदना शुभ माना जाता है।

ऊर्ध्वमुखसज्ञक—आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्वमुखसज्ञक हैं।

तिर्यङ्मुखसंज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ्मुख संज्ञक है।

दग्धसंज्ञक नक्षत्र—रविवारको भरणी, सोमवारको चित्रा, मंगलवारको उत्तराषाढा, बुधवारको धनिष्ठा, बृहस्पतिवारको उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवारको ज्येष्ठा एवं शनिवारको रेवती दग्धसंज्ञक है। इन नक्षत्रोंमें शुभ कार्य करना वर्जित है।

मासशून्य नक्षत्र—चैत्रमे रोहिणी और अश्विनी, वैशाखमे चित्रा और स्वाति, ज्येष्ठमे उत्तराषाढा और पुष्य, आषाढमे पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावणमे उत्तराषाढा और श्रवण, भाद्रपदमे शतभिषा और रेवती; आश्विनमें पूर्वाभाद्रपद, कार्त्तिकमे कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्षमे चित्रा और विशाखा, पौषमें आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघमे श्रवण और मूल एवं फाल्गुनमे भरणी और ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र है।

योग—सूर्य और चन्द्रमाके स्पष्ट स्थानोको जोडकर तथा कलाएँ बनाकर ८०० का भाग देनेपर गत योगोकी संख्या निकल आती है। शेषसे यह अवगत किया जाता है कि वर्त्तमान योगकी कितनी कलाएँ बीत गयी है। शेषको ८०० मे-से घटानेपर वर्तमान योगकी गम्य कलाएँ आती हैं। इन गत या गम्य कलाओको ६० से गुणाकर सूर्य और चन्द्रमाकी स्पष्ट दैनिक गतिके योगसे भाग देनेपर वर्तमान योगकी गत और गम्य घटिकाएँ आती है। अभिप्राय यह है कि जब अश्विनी नक्षत्रके आरम्भसे सूर्य और चन्द्रमा दोनो मिलकर ८०० कलाएँ आगे चल चुकते है तब एक योग बीतता है, जब १६०० कलाएँ आगे चलते है तब दो, इसी प्रकार जब दोनो १२ राशियाँ—२१६०० कलाएँ अश्विनीसे आगे चल चुकते हैं तब २७ योग बीतते हैं।

२७ योगोके नाम ये[१] हैं—(१) विष्कम्भ (२) प्रीति (३) आयुष्मान्

---

१. विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्य. शोभनस्तथा।
अतिगण्ड. सुकर्मा च धृतिः शूलस्तथैव च ॥

(४) सौभाग्य (५) शोभन (६) अतिगण्ड (७) सुकर्मा (८) धृति (९) शूल (१०) गण्ड (११) वृद्धि (१२) ध्रुव (१३) व्याघात (१४) हर्षण (१५) वज्र (१६) सिद्धि (१७) व्यतीपात (१८) वरीयान् (१९) परिघ (२०) शिव (२१) सिद्ध (२२) साध्य (२३) शुभ (२४) शुक्ल (२५) ब्रह्म (२६) ऐन्द्र (२७) वैधृति।

योगोंके स्वामी—विष्कम्भका स्वामी यम, प्रीतिका विष्णु, आयुष्मान्का चन्द्रमा, सौभाग्यका ब्रह्मा, शोभनका बृहस्पति, अतिगण्डका चन्द्रमा, सुकर्माका इन्द्र, धृतिका जल, शूलका सर्प, गण्डका अग्नि, वृद्धिका सूर्य, ध्रुवका भूमि, व्याघातका वायु, हर्षणका भग, वज्रका वरुण,

गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा।
वज्रसिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः॥
साध्यः सिद्ध शुभः शुक्लो ब्रह्मेन्द्रो वैधृतिस्तथा॥

योगोंका त्याज्यकाल—

परिघस्य त्यजेदर्द्धं शुभकर्म तत परम्।
त्यजादौ पञ्च विष्कम्भे सप्त शूले च नाडिका॥
गण्डव्याघातयो. षट्क नव हर्षणवज्रयो.।
वैधृतिं च व्यतीपात समस्त परिवर्जयेत्॥
विष्कम्भे घटिकास्तिस्त्र शूले पञ्च तथैव च।
गण्डाऽतिगण्डयो. सप्त नव व्याघातवज्रयोः॥

परिघ योगका आधा भाग त्याज्य है, उत्तरार्ध शुभ है। विष्कम्भयोगकी प्रथम पाँच घटिकाएँ, शूलयोगकी प्रथम सात घटिकाएँ, गण्ड और व्याघात योगकी प्रथम छह घटिकाएँ, हर्षण और वज्र योगकी नौ घटिकाएँ एव वैधृति और व्यतिपात योग समस्त परित्याज्य है। मतान्तरसे विष्कम्भके तीन दण्ड, शूलके पाँच दण्ड, गण्ड और अतिगण्डके सात दण्ड एव व्याघात और वज्रयोगके नौ दण्ड शुभकार्य करनेमें त्याज्य है।

कृत्यचिन्तामणिके अनुसार शुभ कार्योंमें साध्य योगका एक दण्ड, व्याघात योगके दो दण्ड, शूलयोगके सात दण्ड, वज्रयोगके छह दण्ड एव गण्ड और अतिगण्डके नौ दण्ड त्याज्य है।

सिद्धिका गणेश, व्यतीपातका रुद्र, वरीयान्का कुवेर, परिघका विश्वकर्मा, शिवका मित्र, सिद्धका कार्त्तिकेय, साध्यकी सावित्री, शुभकी लक्ष्मी, शुक्लकी पार्वती, ब्रह्मका अश्विनीकुमार, ऐन्द्रका पितर एव वैधृतिकी दिति हैं।

करण[1]—तिथिके आधे भागको करण कहते है, अर्थात् एक तिथिमे दो करण होते हैं। ११ करणोके नाम निम्न हैं— (१) वव (२) वालव (३) कौलव (४) तैतिल (५) गर (६) वणिज (७) विष्टि (८) शकुनि (९) चतुष्पद (१०) नाग (११) किंस्तुघ्न। इन करणोमें पहलेके ७ करण चरसज्ञक और अन्तिम ४ करण स्थिरसज्ञक हैं।

---

१. ववबालवकौलवतैतिलगरवणिजविष्टयः सप्त।
शकुनिचतुष्पदनागकिंस्तुघ्नानि ध्रुवाणि करणानि॥

करणोंके स्वामी—

ववबालवकौलवतैतिलगरवणिजविष्टिसञ्ज्ञानाम्।
पतय. स्युरिन्द्रकमलजमित्रार्यमभूश्रिय सयमाः॥

वव, वालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि इन सात करणों के क्रमशः इन्द्र, ब्रह्मा, मित्र, अर्यमा, पृथ्वी, लक्ष्मी और यम स्वामी हैं।

कृष्णचतुर्दश्यन्तार्द्धाद्ध्रुवाणि शकुनिचतुष्पदनागाः।
किंस्तुघ्नमथ च तेषा कलिवृषफणिमारुताः पतय॰॥

तिथ्यर्द्ध भोग क्रमसे कृष्णा चतुर्दशीके शेषार्द्धसे आरम्भ होकर शुक्लप्रतिपदा-के पूर्वार्द्ध पर्यन्त शकुनि, चतुष्पद, नाग और किंस्तुघ्न ये चार करण होते हैं। इन्हें ध्रुव कहते हैं। इनके कलि, वृष, फणी और मारुत स्वामी है।

तृतीयादशमीशेषे तत्पञ्चम्योस्तु पूर्वत।
कृष्णे विष्टि. सिते तद्वत्तासा परतिथिष्वपि॥

कृष्णपक्षमें विष्टि–भद्रा तृतीया और दशमीतिथिके उत्तरार्द्धमें होता है। कृष्ण पक्षकी पञ्चमी, सप्तमी और चतुर्दशी तिथिके पूर्वार्द्धमें विष्टि (भद्रा) करण होता है। शुक्ल पक्षमें चतुर्थी और एकादशीके परार्द्धमें तथा अष्टमी और पौर्ण-मासीके पूर्वार्द्धमें विष्टि (भद्रा) करण होता है। भद्राका समय समस्त शुभ कार्योंमें त्याज्य है।

करणोंके स्वामी—ववका इन्द्र, वालवका ब्रह्मा, कौलवका सूर्य, तैतिलका सूर्य, गरका पृथ्वी, वणिजका लक्ष्मी, विष्टिका यम, शकुनिका कलियुग, चतुष्पादका रुद्र, नागका सर्प एव किंस्तुघ्नका वायु है।

विष्टि करणका नाम भद्रा है, प्रत्येक पचाङ्गमें भद्राके आरम्भ और अन्तका समय दिया रहता है। भद्रामें प्रत्येक शुभकर्म करना वर्जित है।

वार—जिस दिनकी प्रथम होराका जो ग्रह स्वामी होता है, उस दिन उसी ग्रहके नामका वार रहता है। अभिप्राय यह है कि ज्योतिपशास्त्रमें शनि, बृहस्पति, मगल, रवि, शुक्र, बुध और चन्द्रमा ये ग्रह एक दूसरेसे नीचे-नीचे माने गये है। अर्थात् सवसे ऊपर शनि, उससे नीचे बृहस्पति, उससे नीचे मगल, मगलके नीचे रवि, इत्यादि क्रमसे ग्रहोंकी कक्षाएँ है। एक दिनमे २४ होराएँ होती है—एक-एक घण्टेकी एक-एक होरा होती है। दूसरे शब्दोमे यह कहा जा सकता है कि घण्टेका दूसरा नाम होरा है। प्रत्येक होराका स्वामी अध कक्षाक्रमसे एक-एक ग्रह होता है। सृष्टि-आरम्भमें सवसे पहले सूर्य दिखलाई पडता है, इसलिए १ली होराका स्वामी माना जाता है। अतएव १ले वारका नाम आदित्य वार या रविवार है। इसके अनन्तर उस दिनकी २री होराका स्वामी उसके पासवाला शुक्र, ३रीका वुध, ४थीका चन्द्रमा,

---

मेषोक्षकौर्पमिथुने घटसिंहमीनकर्कपु चापमृगतौलिसुतासु सूर्ये।
स्वर्मर्त्यनागनगरी क्रमश· प्रयाति विष्टिः फलान्यपि ददाति हि तत्र देशे॥

सार वैशाख, ज्येष्ठ, मार्गशीर्ष और आषाढ़में भद्राका निवास स्वर्गलोकमें, फाल्गुन, भाद्रपद, चैत्र और श्रावणमें मृत्युलोकमें एव पौष, माघ, कार्तिक और आश्विन मासमे भद्राका निवास नागलोकमें होता है।

स्वर्गे भद्रा शुभ कुर्यात्पाताले च धनागमम्।
मर्त्यलोके यदा भद्रा सर्वकार्यविनाशिनी॥

स्वर्गमें भद्राके निवास करनेसे शुभफलकी प्राप्ति, पाताल लोकमें निवास करनेसे धन-सचय और मृत्युलोकमें निवास करनेसे समस्त कार्योंका विनाश होता है।

५वींका शनि, ६ठीका बृहस्पति, ७वीका मगल, ८वीका रवि, ९वीका शुक्र, १०वीका बुध, ११वीका चन्द्रमा, १२वीका शनि, १३वीका बृहस्पति, १४वीका मगल, १५वीका रवि, १६वीका शुक्र, १७वीका बुध, १८वीका चन्द्रमा, १९वीका शनि, २०वीका बृहस्पति, २१वीका मगल, २२वीका रवि, २३वीका शुक्र और २४वीका बुध स्वामी होता है। पश्चात् २रे दिनकी १ली होराका स्वामी चन्द्रमा पडता है, अत दूसरा वार सोमवार या चन्द्रवार माना जाता है। इसी प्रकार ३रे दिनकी १ली होराका स्वामी मगल, ४थे दिनकी १ली होराका स्वामी बुध, ५वें दिनकी १ली होराका स्वामी बृहस्पति, छठे दिनकी १ली होराका स्वामी शुक्र एव ७वें दिनकी १ली होराका स्वामी शनि होता है। इसीलिए क्रमशः मगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये वार माने जाते है।

वार-संज्ञाएँ—बृहस्पति, चन्द्र, बुध और शुक्र ये वार सौम्यसज्ञक एव मगल, रवि और शनि ये वार क्रूर-सज्ञक माने गये है। सौम्यसज्ञक वारोंमे शुभकार्य करना अच्छा माना जाता है।

रविवार स्थिर, सोमवार चर, मगलवार उग्र, बुधवार सम, गुरुवार लघु, शुक्रवार मृदु एवं शनिवार तीक्ष्णसज्ञक है। शल्यक्रियाके लिए शनिवार उत्तम माना गया है। विद्यारम्भके लिए गुरुवार और वाणिज्य आरम्भ करनेके लिए बुधवार प्रशस्त माना गया है।

नक्षत्रोंके चरणाक्षर

चू चे चो ला = अश्विनी, ली लू ले लो = भरणी, आ ई उ ए = कृत्तिका, ओ वा वी वू = रोहिणी, वे वो का की = मृगशिर, कू घ ङ छ = आर्द्रा, के को हा ही = पुनर्वसु, हू हे हो डा = पुष्य, डी डू डे डो = आश्लेषा, मा मी मू मे = मघा, मो टा टी टू = पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी = उत्तराफाल्गुनी, पू ष ण ठ = हस्त, पे पो रा री = चित्रा, रू रे रो ता = स्वाति,

ती तू ते तो = विशाखा, ना नी नू ने = अनुराधा, नो या यी यू = ज्येष्ठा, ये यो भा भी = मूल, भू धा फा ढा = पूर्वाषाढा, भे भो जा जी = उत्तराषाढा, खी खू खे खो = श्रवण, गा गी गू गे = धनिष्ठा, गो सा सी सू = शतभिषा, से सो दा दी = पूर्वाभाद्रपद, दू थ झ ञ = उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची = रेवती ।

अक्षरानुसार राशिज्ञान

	राशि	अक्षर	राशिज्ञान करनेकी सरल प्रकारविधि यह है
१	मेष	= चू चे चो ला ली लू ले लो आ	आ ला
२	वृष	= ई उ ए ओ वा वी वू वे वो	उ वा
३	मिथुन	= का की कू घ ङ छ के को हा	का छा
४	कर्क	= ही हू हे हो डा डी डू डे डो	डा हा
५	सिंह	= मा मी मू मे मो टा टी टू टे	मा टा
६	कन्या	= टो पा पी पू ष ण ठ पे पो	पा ठा
७	तुला	= रा री रू रे रो ता ती तू ते	रा ता
८	वृश्चिक	= तो ना नी नू ने नो या यी यू	नो या
९	धनु	= ये यो भा भी भू धा फा ढा भे	भू धा फा ढा
१०	मकर	= भो जा जी खी खू खे खो गा गी	खा जा
११	कुम्भ	= गू गे गो सा सी सू से सो दा	गो सा
१२	मीन	= दी दू थ झ ञ दे दो चा ची	दा चा

राशियोंका परिचय

आकाशमें स्थित भचक्रके ३६० अंश अथवा १०८ भाग होते हैं। समस्त भचक्र १२ राशियोंमें विभक्त है, अतः ३० अंश अथवा ९ भागकी एक राशि होती है।

१ मेष—पुरुष जाति, चरसंज्ञक, अग्नितत्त्व, पूर्व दिशाकी मालिक, मस्तकका बोध करानेवाली, पृष्ठोदय, उग्र प्रकृति, लाल-पीले वर्णवाली,

कान्तिहीन, क्षत्रियवर्ण, सभी समान अंगवाली और अल्प सन्तति है। यह पित्तप्रकृतिकारक है, इसका प्राकृतिक स्वभाव साहसी, अभिमानी और मित्रोपर कृपा रखनेवाला है।

वृष—स्त्री राशि, स्थिरसंज्ञक, भूमितत्त्व, शीतल स्वभाव, कान्तिरहित, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, वातप्रकृति, रात्रिवली, चार चरणवाली, श्वेत वर्ण, महाशब्दकारी, विपमोदयी, मध्यम सन्तति, शुभकारक, वैश्यवर्ण और शिथिल शरीर है। यह अर्द्धजल राशि कहलाती है। इसका प्राकृतिक स्वभाव स्वार्थी, समझ-बूझकर काम करनेवाली और सासारिक कार्योमे दक्ष होती है। इससे मुख और कपोलोका विचार किया जाता है।

मिथुन—पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, वायुतत्त्व, तोतेके समान हरितवर्णवाली, पुरुष राशि, द्विस्वभाव, विपमोदयी, उष्ण, शूद्रवर्ण, महाशब्दकारी, चिकनी, दिनबली, मध्यम सन्तति और शिथिल शरीर है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विद्याध्ययनी और शिल्पी है। इससे शरीरके कन्धो और वाहुओका विचार किया जाता है।

कर्क—चर, स्त्री जाति, सौम्य और कफ प्रकृति, जलचारी, समोदयी, रात्रिवली, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, रक्त-धवल मिश्रितवर्ण, वहुचरण एवं सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव, सासारिक उन्नतिमे प्रयत्नशीलता, लज्जा, कार्यस्थैर्य और समयानुयायिताका सूचक है। इससे वक्ष-स्थल और गुर्देका विचार किया जाता है।

सिह—पुरुप जाति, स्थिरसज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनवली, पित्त प्रकृति, पीत वर्ण, उष्ण स्वभाव, पूर्व दिशाकी स्वामिनी, पुष्ट शरीर, क्षत्रिय वर्ण, अल्पसन्तति, भ्रमणप्रिय और निर्जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वरूप मेषराशि-जैसा है, पर तो भी इसमे स्वातन्त्र्य प्रेम और उदारता विशेष रूपसे वर्तमान है। इससे हृदयका विचार किया जाता है।

कन्या—पिंगल वर्ण, स्त्री जाति, द्विस्वभाव, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, रात्रिवली, वायु और शीत प्रकृति, पृथ्वीतत्त्व और अल्प सन्तान-

वाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव मिथुन-जैसा है, पर विशेपता इतनी है कि अपनी उन्नति और मानपर पूर्ण ध्यान रखनेकी यह कोशिश करती है। इससे पेटका विचार किया जाता है।

तुला—पुरुप जाति, चरसज्ञक, वायुतत्त्व, पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, अल्पसन्तानवाली, श्यामवर्ण, शीर्पोदयी, शूद्रसज्ञक, दिनवली, क्रूर स्वभाव और पाद जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, ज्ञानप्रिय, कार्य-सम्पादक और राजनीतिज्ञ है। इससे नाभिके नीचेके अगोका विचार किया जाता है।

वृश्चिक—स्थिरसज्ञक, शुभ्रवर्ण, स्त्री जाति, जलतत्त्व, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, रात्रिवली, कफ प्रकृति, वहु सन्तति, ब्राह्मण वर्ण और अर्द्ध जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव दम्भी, हठी, दृढप्रतिज्ञ, स्पष्टवादी और निर्मल है। इससे जननेन्द्रियका विचार किया जाता है।

धनु—पुरुप जाति, काचन वर्ण, द्विस्वभाव, क्रूरसज्ञक, पित्त प्रकृति, दिनवली, पूर्व दिशाकी स्वामिनी, दृढ शरीर, अग्नितत्त्व, क्षत्रिय वर्ण, अल्प सन्तति एव अर्द्ध जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव अधिकारप्रिय, करुणामय और मर्यादाका इच्छुक है। इससे पैरोकी सन्धि तथा जघाओका विचार किया जाता है।

मकर—चरसज्ञक, स्त्री जाति, पृथ्वीतत्त्व, वात प्रकृति, पिंगल वर्ण, रात्रिवली, वैश्यवर्ण, शिथिल शरीर और दक्षिण दिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उच्च दशाभिलापी है। इससे घुटनोका विचार किया जाता है।

कुम्भ—पुरुप जाति, स्थिरसज्ञक, वायुतत्त्व, विचित्र वर्ण, शीर्पोदय, अर्द्धजल, त्रिदोप प्रकृति, दिनवली, पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, उष्ण स्वभाव, शूद्र वर्ण, क्रूर एव मध्यम सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, शान्तचित्त, धर्मवीर और नवीन वातोका आविष्कारक है। इससे पेटके भीतरी भागोका विचार किया जाता है।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्री जाति, कफ प्रकृति, जलतत्त्व, रात्रिवली, विप्रवर्ण, उत्तर दिशाकी स्वामिनी और पिंगल रग है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उत्तम, दयालु और दानशील है। यह सम्पूर्ण जलराशि है। इससे पैरोका विचार किया जाता है।

राशि स्वरूपका प्रयोजन

उपर्युक्त बारह राशियोका जैसा स्वरूप वतलाया है, इन राशियोमे उत्पन्न पुरुप और स्त्रियोका स्वभाव भी प्राय वैसा ही होता है। जन्म-कुण्डलीमें राशि और ग्रहोंके स्वरूपके समन्वयपर-से ही फलाफलका विचार किया जाता है। दो व्यक्तियोकी या वर-कन्याकी शत्रुता और मित्रता अथवा पारस्परिक स्वभाव मेलके लिए भी राशि स्वरूप उपयोगी है।

शत्रुता और मित्रताको विधि

पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमे तथा अग्नितत्त्व और वायुतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमें परस्पर मित्रता रहती है। पृथ्वी और अग्नितत्त्व, जल और अग्नितत्त्व एव जल और वायुतत्त्ववाली राशियो-के व्यक्तियोमें परस्पर शत्रुता रहती है।

राशियोके स्वामी

(मेष और वृश्चिकका मगल,) (वृप और तुलाका शुक्र,) (कन्या और मिथुन-का वुध,) (कर्कका चन्द्रमा,) (सिहका सूर्य,) (मीन और धनुका वृहस्पति,) (मकर और कुम्भका शनि,) (कन्याका राहु) (एव मिथुनका केतु है।)

शून्यसज्ञक राशियाँ—चैत्रमें कुम्भ, वैशाखमें मीन, ज्येष्ठमे वृप, आषाढमें मिथुन, श्रावणमें मेप, भाद्रपदमे कन्या, आश्विनमें वृश्चिक, कार्त्तिकमें तुला, मार्गशीर्पमे धनु, पौपमें कर्क, माघमे मकर एव फाल्गुनमे सिह शून्यसज्ञक है।

राशियोका अंग-विभाग

द्वादश राशियाँ काल-पुरुपका अग मानी गयी है। मेपको सिरमे, वृपको मुखमें, मिथुनको स्तनमध्यमें, कर्कको हृदयमे, सिहको उदरमे, कन्याको कमरमे, तुलाको पेडूमें, वृश्चिकको लिगमे, धनुको जघामे, मकरको दोनो घुटनोमें, कुम्भको दोनो जाँघोमें एव मीनको दोनो पैरोमे माना है।

चर सारणी—मिनिट, सेकेण्ड रूप फल

क्रान्त्यंश

अक्षांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	४	८	१३	१७	२१	२५	३०	३४	३८	४२	४६	५१	५५	०	४	९	१३	१८	२२	२७	३२	३७	४२	४७
२	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३
	८	१७	२५	३४	४२	५०	५९	८	१६	२४	३३	४२	५१	०	८	१७	२६	३६	४५	५५	४	१४	२४	३४
३	०	०	०	०	१	१	१	१	१	२	२	२	२	३	३	३	३	३	४	४	४	४	५	५
	१३	२५	३८	५०	३	१६	२८	४१	५४	७	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५४	८	२२	३७	५१	६	२०
४	०	०	०	१	१	१	१	२	२	२	३	३	३	४	४	४	४	५	५	५	६	६	६	७
	१७	३४	५०	७	२४	४१	५८	१५	३२	५०	७	२४	४२	०	१८	३६	५४	१२	३१	५०	९	२८	४८	८
५	०	०	१	१	१	२	२	२	३	३	३	४	४	५	५	५	६	६	६	७	७	८	८	८
	२१	४२	३	२४	४५	६	२८	४९	१०	३२	५४	१६	३८	०	२२	४४	७	३०	५४	१८	४२	६	३६	५६
६	०	०	१	१	२	२	२	३	३	४	४	५	५	६	६	६	७	७	८	८	९	९	१०	१०
	२५	५०	१६	४१	६	३२	५८	२३	४९	१४	४१	७	३४	०	२७	५४	२२	४९	१८	४६	१५	४४	१४	४४
७	०	०	०	१	२	२	३	३	४	४	५	५	६	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	११	१२
	२९	५८	२८	५८	२८	५८	२७	५७	२७	५८	२८	५९	३०	१	३२	४	३७	९	४२	१५	४८	२१	५३	२६

८	० ३४	१ ८	१ ४१	२ १५	२ ४९	३ २३	३ ५७	४ ३२	५ ६	५ ४१	६ १६	६ ५१	७ २६	८ २	८ ३८	९ १४	९ ५१	१० २८	११ ६	११ ४४	१२ २२	१३ १	१३ ४१	१४ २१
९	० ३८	१ १६	१ ५४	२ ३२	३ १०	३ ४९	४ २७	५ ६	५ ४५	६ २४	७ ३	७ ४३	८ २३	९ ३	९ ४४	१० २४	११ ६	११ ४८	१२ ३०	१३ १३	१३ ५६	१४ ४०	१५ २५	१६ १०
१०	० ४२	१ २४	२ ७	२ ५०	३ ३१	४ १४	४ ५८	५ ४१	६ २४	७ ८	८ १	८ ३६	९ २०	१० ५	१० ५०	११ ३६	१२ २२	१३ ८	१३ ५५	१४ ४३	१५ ३२	१६ २०	१७ १०	१८ ०
११	० ४६	१ ३३	२ २०	३ ७	३ ५४	४ ४१	५ २८	६ १६	७ ३	७ ५१	८ ४०	९ २८	१० १७	११ ७	११ ५६	१२ ४७	१३ ३८	१४ २९	१५ २१	१६ १४	१७ ७	१८ १	१८ ५६	१९ ५२
१२	० ५१	१ ४२	२ ३३	३ २४	४ १६	५ ७	५ ५९	६ ५१	७ ४३	८ ३६	९ २८	१० २१	११ १५	१२ ९	१३ ४	१३ ५८	१४ ५४	१५ ५०	१६ ४४	१७ ४५	१८ ४३	१९ ४२	२० ४२	२१ ४३
१३	० ५५	१ ५१	२ ४६	३ ४२	४ ३८	५ ३४	६ ३०	७ २७	८ २३	९ २०	१० १७	११ १५	१२ १३	१३ १२	१४ ११	१५ ११	१६ १२	१७ १४	१८ १७	१९ २०	२० २४	२१ ३०	२२ ३७	२३ ४६
१४	१ ०	२ ०	३ ०	४ ०	५ ०	६ ०	७ १	८ २	९ ३	१० ५	११ ७	१२ ९	१३ १२	१४ १५	१५ १९	१६ २३	१७ २९	१८ ३५	१९ ४१	२० ४८	२१ ५७	२३ ८	२४ १८	२५ ३०
१५	१ ४	२ ८	३ १३	४ १८	५ २२	६ २७	७ ३२	८ ३८	९ ४४	१० ५०	११ ५६	१३ ४	१४ ११	१५ १९	१६ २८	१७ ३८	१८ ४७	१९ ५८	२१ १०	२२ २२	२३ ३६	२४ ५२	२६ ७	२७ २४
१६	१ ९	२ १८	३ २६	४ ३६	५ ४५	६ ५४	८ ४	९ १४	१० २५	११ ३६	१२ ४७	१३ ५९	१५ ११	१६ २४	१७ ३८	१८ ५२	२० ७	२१ २३	२२ ४०	२३ ५८	२५ १६	२६ ३७	२७ ५८	२९ २०
१७	१ १३	२ २७	३ ४०	४ ५४	६ ८	७ २२	८ ३६	९ ५१	११ ६	१२ २२	१३ ३८	१४ ५४	१६ १२	१७ २९	१८ ४८	२० ७	२१ २७	२२ ४८	२४ ११	२५ ३४	२६ ५७	२८ २३	२९ ५०	३१ १९

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
१८	१	२	३	५	६	७	९	१०	११	१३	१४	१५	१७	१८	१९	२१	२२	२४	२५	२७	२८	३०	३१	३३
	१८	३६	५४	१२	३१	५०	९	२८	४८	८	३०	५०	१२	३५	५९	२३	४८	१४	४२	८	३७	१०	४२	२०
१९	१	२	४	५	६	८	९	११	१२	१३	१५	१६	१८	१९	२१	२२	२४	२५	२७	२८	३०	३१	३३	३५
	२३	४५	८	३१	५४	१८	४२	६	३०	५५	२१	४६	१४	४७	१०	३९	९	४१	१४	४८	२४	५९	३७	१६
२०	१	२	४	५	७	८	१०	११	१३	१४	१६	१७	१९	२०	२२	२३	२५	२७	२८	३०	३२	३३	३५	३७
	२७	५५	२२	५०	१८	४६	१५	४४	१३	४३	१४	४५	१८	५०	२३	५५	३०	८	४७	२७	८	५०	३३	१८
२१	१	३	४	६	७	९	१०	१२	१३	१५	१७	१८	२०	२१	२३	२५	२६	२८	३०	३२	३३	३५	३७	३९
	२३	४	३७	९	४२	१५	८	२२	५६	३२	७	४३	२०	५८	३६	१६	५६	३७	१९	२	५०	४१	३०	२२
२२	१	३	४	६	८	९	११	१३	१४	१६	१८	१९	२१	२३	२४	२६	२८	३०	३१	३३	३५	३७	३९	४१
	३७	१४	५१	२८	६	४४	२३	१	४०	२०	१	४२	२४	८	५२	३७	२३	१०	५८	२०	४१	३५	३०	२७
२३	१	३	५	६	८	१०	११	१३	१५	१७	१८	२०	२२	२४	२६	२७	२९	३१	३३	३५	३७	३९	४१	४३
	४२	२४	६	४८	३१	१४	५७	४१	२५	१०	५६	४२	३०	१८	७	५८	४९	४२	३७	३३	३०	२७	३५	३५
२४	१	३	५	७	८	१०	१२	१४	१६	१८	१९	२१	२३	२५	२७	२९	३१	३३	३५	३७	३९	४१	४३	४५
	४७	३४	२१	८	५६	४४	३२	२१	१०	०	५२	४३	३६	३०	२४	२०	१९	२०	२१	२३	२५	२९	३४	४०
२५	१	३	५	७	९	११	१३	१५	१६	१८	२०	२२	२४	२६	२८	३०	३२	३४	३६	३९	४१	४३	४५	४७
	५२	४४	३६	२८	२१	१४	८	२	५६	५२	१४	४५	४३	४२	४३	४४	४७	४१	५८	५	१५	२६	४०	५३
२६	१	३	५	७	८	११	१३	१५	१७	१९	२१	२३	२५	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	४३	४५	४७	५०
	५७	५४	५२	४९	३७	४५	४३	४३	४३	४४	४६	४८	५२	५६	२	९	१८	२८	४०	५४	१०	२८	४८	१०

२७	२	४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४	२७	२९	३१	३३	३५	३८	४०	४२	४५	४७	४९	५२
	२	५	७	१०	१३	१७	२१	२६	३१	३७	४४	५२	१	१२	२३	३६	५०	७	२५	४५	७	३२	५८	२७
२८	२	४	६	८	१०	१२	१४	१७	१९	२१	२३	२५	२८	३०	३२	३५	३७	३९	४२	४४	४७	४९	५२	५४
	७	१५	२३	३१	४०	४९	५८	८	१९	३१	४४	५७	१२	२८	४६	४	२५	४९	१२	३६	२	३०	४	३८
२९	२	४	६	८	११	१३	१५	१७	२०	२२	२४	२७	२९	३१	३४	३६	३९	४१	४४	४६	४९	५१	५४	५७
	१३	२६	४०	५३	७	२२	३६	५२	९	२६	४४	४	२४	४६	१०	३५	१	३०	०	३२	८	४६	२६	९
३०	२	४	६	९	११	१३	१६	१८	२०	२३	२५	२८	३०	३३	३५	३८	४०	४३	४५	४८	५१	५३	५६	५९
	१८	३७	५६	१५	३५	५५	१६	३७	५९	२२	४६	१२	३८	५	३४	७	४४	१५	४२	३१	१३	५८	४६	३५
३१	२	४	७	९	१२	१४	१६	१९	२१	२४	२६	२९	३१	३४	३७	३९	४२	४५	४७	५०	५३	५६	५९	६२
	२४	४८	१३	३८	३	२९	५६	२२	५०	२०	५०	२१	५४	२८	४	४१	२१	२	४६	३२	२०	१२	६	२
३२	२	५	७	१०	१२	१५	१७	२०	२२	२५	२७	३०	३३	३५	२८	४१	४४	४६	४९	५३	५५	५८	६१	६४
	३०	०	३०	१	३२	४	३६	९	४३	१८	५४	३२	१८	५२	३३	१७	३	५२	४२	३६	३१	३०	३३	३७
३३	२	५	७	१०	१३	१५	१८	२०	२३	२६	२९	३१	३४	३७	४०	४२	४५	४८	५१	५४	५७	६०	६३	६७
	३६	१२	४८	२४	१	३९	१८	५७	३८	१८	०	४४	३०	१६	५	५६	४९	४४	४१	४१	४४	४८	५४	४
३४	२	५	८	१०	१३	१६	१९	२१	२४	२७	३०	३२	३५	३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	६०	६३	६६	६९
	४२	२४	६	४९	३२	१२	०	४६	३४	१९	८	५८	५०	४४	३९	३६	३६	३८	४३	५१	१	१५	३३	५४
३५	२	५	८	११	१४	१६	१९	२२	२५	२८	३१	३४	३७	४०	४३	४६	४९	५२	५५	५९	६२	६५	६९	७२
	४८	३६	२५	१४	३	५३	४४	३५	१८	२२	१७	१३	१३	१३	१५	२०	२७	३६	४७	०	२२	४४	१०	४०
३६	२	५	८	११	१४	१७	२०	२३	२६	२९	३२	३५	३८	४१	४४	४८	५१	५४	५७	६१	६४	६८	७१	७५
	५४	४९	४४	३९	३४	३१	२८	२६	२६	२७	२८	३२	३८	४४	५४	६	२०	३७	५७	२०	४६	१७	५१	३०

आवश्यक परिभाषाएँ

६० प्रतिपल	=	१ विपल		६० प्रतिविकला	=	१ विकला
६० विपल	=	१ पल		६० विकला	=	१ कला
६० पल	=	१ घटी या दण्ड		६० कला	=	१ अंश
२४ मिनिट	=	१ घटी		३० अंश	=	१ राशि
$२\frac{१}{२}$ पल	=	१ मिनिट		१२ राशि	=	१ भगण
$२\frac{१}{२}$ विपल	=	१ सेकेण्ड		८ यव	=	१ अंगुल
$२\frac{१}{२}$ घटी	=	१ घंटा		२४ अंगुल	=	१ हाथ
६० घटी	=	एक अहोरात्र		४ हाथ	=	१ दण्ड या बाँस
				२००० बाँस	=	१ कोश

जातक

जातक अंगमें प्रधान रूपसे जन्मपत्रीके निर्माण-द्वारा व्यक्तिकी उत्पत्तिके समयके ग्रह-नक्षत्रोंकी स्थितिपर-से जीवनका फलाफल निकाला गया है।

जन्मकुण्डलीका गणित प्रधान रूपसे इष्टकालपर आश्रित है। इष्टकाल जितना सूक्ष्म और शुद्ध होगा, जन्मपत्रीका फलादेश भी उतना ही प्रामाणिक निकलेगा। इष्टकाल—सूर्योदयसे लेकर जन्म समय या अभीष्ट समय तकके कालको इष्टकाल कहते हैं।

जहाँका इष्टकाल बनाना हो उस स्थानका सूर्योदय बनाकर प्रचलित स्टैण्डर्ड टाइमको इष्ट स्थानीय (लोकल) सूर्य घडीका टाइम बना लें।

स्थानीय सूर्योदय निकालनेकी विधि—पंचांगमें प्रति दिनकी सूर्य-क्रान्ति लिखी रहती है। जिस दिनका सूर्योदय बनाना हो उस दिनकी क्रान्ति और इष्ट स्थानीय अक्षांशका फल आनेवाली चरसारणीमें देखकर निकाल लेना चाहिए, और जो मिनिट, सेकेण्ड रूप फल आवे उसे उत्तरा क्रान्ति होनेपर ६ घण्टेमें जोड देने और दक्षिणा क्रान्तिमें ६ घण्टेमें-से घटा देनेपर सूर्यास्तका समय निकलता है। इसे १२ घण्टेमें-से घटानेपर सूर्योदय होता है, सूर्यास्तकालको ५ से गुणा कर देनेपर घट्यादि दिनमान होता है।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीयाके दिन विश्व-पंचागमे सूर्यकी उत्तरा क्रान्ति १२ अश ५४ कला है। आरामे इस दिन-का सूर्योदय निकालना है। आगे दी गयी अक्षाश-देशान्तर वोधक सारणीमें आराका अक्षाश २५°|३०′ दिया गया है। इन दोनोपर-से चर सारणीके अनुसार मिनिट, सेकेण्ड रूप फल निकालना है।

सारणोमें २५ अश अक्षाशका १२ अशके क्रान्तिवाले कोठेमें २२ मिनिट ४५ सेकेण्ड फल दिया है, यहाँ अभीष्ट अक्षाश २५°|३०′ है अत २५ और २६ अश अक्षाशवाले १२ अशके क्रान्तिके कोठोका अन्तर किया—

२३।४८—२६ अश अक्षाशका फल
२२।४५—२५ अश अक्षाशका फल

१।३ इस मिनिटादि अन्तरके सेकेण्ड वनाये
१ × ६० = ६० + ३ = ६३ सेकेण्ड। यहाँ अनुपात किया कि ६० कला का फल ६३ सेकेण्ड है तो ३० कलाका कितना ?

$$\frac{६३ \times ३०}{६०} = \frac{६३}{२} = ३१\frac{१}{२}$$

३१½ से० इसे २५ अश अक्षाशके फलमें जोडा तो—

२२।४५
०।३१
२३।१६

यहाँ २३।१६ फल १२ अश क्रान्तिका आया है,
किन्तु १२।५४ का निकालनेके लिए क्रिया की—

२४।४३—१३ अंश क्रान्तिके कोठेका फल
२२।४५—१२ अश क्रान्तिके कोठेका फल

१।५८ मिनिटादि फल एक अशका
१ × ६० = ६० + ५८ = ११८ सेकेण्ड

अनुपात किया कि ६० कलाका फल ११८ सेकेण्ड है तो ५४ कलाका कितना ?

$$\frac{११८ \times ५४}{६०} = \frac{५३१}{५} = १०६\frac{१}{५} \text{ सेकेण्ड}$$

१०६ से० = १ मिनिट ४६ सेकेण्ड, पहलेवाले फलमे जोडा तो

२३।१६
१।४६

२५।२, = २५ मिनिट २ सेकेण्ड फलको उत्तरा क्रान्ति होनेके कारण ६ घण्टेमें जोडा तो— ६ । ० । ०

२५ । २

---

६ । २५ । २ सूर्यास्तका समय अर्थात्

६ वजकर २५ मिनट २ सेकेण्डपर आरामें सूर्यास्त होगा। इसे १२ घण्टेमें-से घटाया—१२ । ० । ०

६ । २५ । २

---

५ । ३४ । ५८ सूर्यास्त काल ६ । २५ । २ सूर्यास्त ×

५ = ३२ घटी ५ पल १० विपल दिनमान आरा नगरका हुआ।

(६०।०।०—३२।५।१०)—२७।५४।५० रात्रिमान आराका।

स्टैण्डर्ड टाइमको लोकल टाइम बनानेकी विधि—स्टैण्डर्ड टाइम (Standard time) प्राय समस्त भारतमे एक ही होता है। क्योकि ये प्रचलित घडिया एक ही साथ मिलायी जाती हैं, इनमें हर जगह एक ही माथ १२ वजते है और एक ही साथ दो। लेकिन धूपघडीका समय प्रत्येक स्थानका भिन्न-भिन्न होता है। आरामे धूपघडीके अनुसार जिस समय १२ वजते हैं उस समय आगरेमे ११ वजकर ३५ मिनिट ही समय होता है। इस अन्तरको दूर करनेके लिए ज्योतिपमें दो सस्कारोकी व्यवस्था की गयी है। एक वेलान्तर और दूसरा देशान्तर।

जब स्थानीय धूपघडीमें १२ वजते है तव मध्याह्न कालमे सूर्य ठीक सिरके ऊपर नहीं रहेगा, कुछ पूर्व या पश्चिमकी ओर रहेगा। वर्पमे केवल चार वार ही सूर्यघडीमे १२ वजनेपर सूर्य ठीक सिरके ऊपर आवेगा,

अवशेष दिनोमे मध्यम मध्याह्न और स्पष्ट मध्याह्नका अन्तर जाननेके लिए वेलान्तर सस्कार किया जाता है।

स्टैण्डर्ड टाइमसे लोकल टाइम (स्थानीय समय) ज्ञात करनेके लिए देशान्तर सस्कार करना पडता है। स्टैण्डर्ड टाइम भारतवर्षमे ८२°।३०' रेखाश (तूलाश) का है। इससे अधिक (Longitude) मे एक अश अन्तरमे ४ मिनिटके हिसावसे स्टैण्डर्ड टाइममें धन अथवा ऋण—स्टैण्डर्ड टाइमके रेखाशसे इष्ट स्थानका रेखाश अधिक हो तो धन और कम हो तो ऋण कर देनेसे इष्ट स्थानीय समय आ जाता है। लेकिन यहाँ वेलान्तर सस्कार करना भी आवश्यक है।

नवम्बर मासमे मध्यम मध्याह्न और स्पष्ट मध्याह्नका अन्तर १६ मिनिटके लगभग हो जाता है। यदि ज्योतिषी इष्टकालमें इन दोनो सस्कारो-को न करे तो बडी भारी भूल रह जायेगी। आगे दी गयी वेलान्तर सारणी-मे जहाँ धन लिखा हो वहाँ उन महीनोकी उन तारीखोमें जोडना और जहाँ ऋण हो, वहाँ घटाना चाहिए।

वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको दिनके २ वजकर २५ मिनिटपर आरामे किसी बालकका जन्म हुआ है। इस स्टैण्डर्ड टाइमका आराकी धूपघडीके अनुसार समय निकालना है।

आराका रेखाश (Longitude) आगेवाली अक्षाश-देशान्तर बोधक सारणीमे ८४°|४०' दिया है और स्टैण्डर्ड टाइमका रेखाश ८२°|३०' है, दोनोका अन्तर किया—(८४°|४०'—८२°|३०') = २°|१०' अन्तर हुआ। इसे ४ मिनिट प्रति अशके हिसावसे गुणा किया तो ८ मिनिट ४० सेकेण्ड हुआ।

स्टैण्डर्ड टाइमके रेखाशसे आराका रेखाश अधिक है, अतएव स्टैण्डर्ड टाइममे इस आगत फलको जोडना चाहिए। २|२५| ०

८|१०

२|३३|१० हुआ। वेलान्तर

सस्कार करनेके लिए आगे दी गयी वेलान्तर सारणीमे जन्मदिन—२४ अप्रैलका फल देखा तो २ मिनिट घन फल मिला, इस फलको भी इस सस्कृत समयमे जोड दिया तो—२|३३|१०

०| २| ०

२|३५|१० अर्थात् २वजकर३५ मिनिट १०सेकेण्ड वालकका आराका जन्म-समय हुआ। इष्टकाल बनानेके लिए इसी समयको वास्तविक जन्म-समय मानेंगे।

अक्षाश और देशान्तर-वोधक सारणी

क्रम स०	नाम नगर	प्रान्त	अक्षाश	रेखाश
१	अकलेश्वर	गुजरात	२१.३८	७३ ३०
२	अकालकोट	वम्वई	१७.३१	७६ १५
३	अकोला	वरार	२०.४२	७६.५९
४	अगरतल्ला	त्रिपुरा	२३.५०	९१ १५
५	अछनेरा	यू० पी०	२७.१२	७२ ४५
६	अजन्ता	हैदरावाद	२०.३३	७५ ४८
७	अजमेर	अजमेर	२६.७२	७४ ३९
८	अजयगढ	म० प्र०	२४.५३	८०.१३
९	अटक	पंजाव	३३.५३	७२.१७
१०	अण्डमन	अण्डमन	१२ ०	९२ ४०
११	अनन्तापुर	मैसूर	१४.५	७५.१७
१२	अनूपगढ	पंजाव	२९.१०	७३ ५
१३	अमरावती	वरार	२० ५६	७७ ४७
१४	अम्वर	राजस्थान	२६.५९	७५ ५३
१५	अम्वाला	पंजाव	३० २१	७६ ५०
१६	अम्बिकापुर	म० प्र०	२३.१०	८२.५

१७ अमरोहा	यू० पी०	२८ ५४	७८ २५
१८ अमृतसर	पजाब	३१ ३७	७४ ४८
१९ अयोध्या	यू० पी०	२६ ४८	८२ १९
२० अरान्तक	मद्रास	१०.१०	७९ २
२१ अरावली	राजस्थान	२५ ०	७३.१०
२२ अलमोडा	यू० पी०	२९ ३५	७९ ४१
२३ अलवर	राजस्थान	२७ ३४	७६.४०
२४ अलीगढ	यू० पी०	२७.५५	७८ २५
२५ अलीपुर	वगाल	२२.३२	८४ २४
२६ अलीवाग	वम्बई	१८ ३९	७२ ५५
२७ अलीराजपुर	म० प्र०	२२ ११	७४ २४
२८ अल्लूर	आन्ध्र	१६ ४३	८१.९
२९ अवध	यू० पी०	२६.४५	८२ ०
३० अवर	राजपूताना	२४ ३६	७२ ४५
३१ अवोर	आसाम	२८ २०	९५.०
३२ असय्य	हैदरावाद	२० १५	७५ ५८
३३ अहमदनगर	वम्वई	१९ ५	७४ ४०
३४ अहमदाबाद	,,	२३ ०	७३ ३०
३५ अहमादपुर	पजाव	२९.६	७१ १६
३६ आगरा	यू० पी०	२७ ०	७८ १३
३७ आजमगढ	यू० पी०	२६ १५	८३ १६
३८ आन्ध्र प्रदेश		१७ ०	८१ ०
३९ आरकट	मद्रास	१२ ५०	७९ २६
४० आरनी	,,	१२ ४०	९९ १९
४१ आरा	विहार	२५ ३०	८४ ०
४२ आसनसोल	वगाल	२३ ४२	८७ १

४३	आसाम	आसाम	२५ २०	९३ ३०
४४	इटारसी	म० प्र०	२० ३०	७७ ५५
४५	इन्द्रवती	मद्रास	१९ ३	८१ ०
४६	इन्दौर	म० प्र०	२२ ४४	७५ ५०
४७	इम्फाल	असम	२४ ४४	९३ ५८
४८	इलाहाबाद	यू० पी०	२५ २८	८१ ५०
४९	उडीसा	उडीसा	२१ १०	८५.०
५०	उज्जैन	मध्य प्रदेश	२३ ९	७५ ४३
५१	उटकमण्ड	मद्रास	११.२४	७६ ४४
५२	उदयपुर	राजस्थान	२४ ३५	७३ ४३
५३	उन्नाव	यू० पी०	२६ ४८	८० ४३
५४	उरई	यू० पी०	२५ ५९	७९ ३०
५५	एटा	यू० पी०	२७ ३५	७८ ४०
५६	एलौरा	आन्ध्र प्रदेश	१६ ४२	८१ १०
५७	ओसमानाबाद	महाराष्ट्र	१८ ८	७६ ६
५८	औरंगाबाद	हैदराबाद	१९.५५	७५ ३०
५९	कच्छ	गुजरात	२२ ३५	६९ ४०
६०	कटक	उडीसा	२० ५८	८५ ५४
६१	कटनी	म० प्र०	२३ ४७	८० २७
६२	कटिहार	बिहार	२५ ३०	८७ ४०
६३	काठियावाड	गुजरात	२२ ०	७१ ०
६४	कन्नौज	यू० पी०	२७ ३	७९ ५८
६५	करनाल	पंजाब	२९ ४२	७७ २०
६६	कर्नूल	आन्ध्र प्र०	१५ ५०	७८ ५०
६७	कर्नाटक	दक्षिण भारत	१३ ०	७८ ०
६८	करांची	सिन्ध	२४ ५१	६७ ४

६९	करीमनगर	हैदराबाद	१८ २८	७९ ६
७०	करूर	मद्रास	१० ५८	७८ ७
७१	करौली	राजस्थान	२६ ३०	७७ ४
७२	कल्याण	महाराष्ट्र	१९ १४	७३.१०
७३	कलकत्ता	बंगाल	२२ ३८	८८ २१
७४	कलिंगपट्टम्	मद्रास	१८ २०	८४.१०
७५	कसौली	पंजाब	१८ २०	८४.१०
७६	कांगरा	पंजाब	३० ५३	७७ १
७७	कांजीवरम्	मद्रास	१२ ५०	७९ ४५
७८	काथर	विहार	२५ ३०	८७ ४०
७९	कादिरी	मद्रास	१४ ७	७८ १२
८०	कावला	यू० पी०	२३ ०	७० १०
८१	कानपुर	यू० पी०	२४ २८	८० २४
८२	कामवेलपुर	पंजाब	३३ ४७	७२ २३
८३	काम्बे	बम्बई	२२ १९	७२ ३८
८४	कारकल	मद्रास	१० ३४	७९ ४०
८५	कालका	पंजाब	३० ५०	७६ ५९
८६	कालाबाघ	पंजाब	३२ ५८	७१ ३६
८७	काश्मीर	काश्मीर	३४ ०	७७ ०
८८	कावली	मद्रास	१४ ५५	८० ३
८९	कालीकट	मद्रास	११ १५	७५ ५९
९०	कालेमियर	मद्रास	१० १८	७९ ५२
९१	किसनगंज	विहार	२६ १०	८७ २
९२	किसनगढ	राजस्थान	२७ ५३	७० ४७
९३	किसनगढ	राजस्थान	२६ ३४	७४.५५
९४	कुन्दापुर	मद्रास	१३ ३८	७४ ४४

९५	कुद्दप्पा	मद्रास	१४ ३०	७८ ४५
९६	कुद्दालोर	मद्रास	११ ३०	७९ ४५
९७	कुन्नूर	मद्रास	११ २०	७६ ५०
९८	कुमता	बम्बई	१४ २६	७४ २७
९९	कुमारी अन्तरीप	मद्रास	८ ४०	७७ ३६
१००	कुमिल्ला	बंगाल	२३ २५	९१ १३
१०१	कुरनूल	मद्रास	१५ ५०	७८ ५
१०२	कुर्ग	दक्षिण भारत	१२ २०	७६ १०
१०३	कृष्णराजधाम	मैसूर	१२ २०	७६ ३२
१०४	केनेनर	मद्रास	११ ५२	७५ २५
१०५	केरल	दक्षिण भारत	१० ०	७६ २५
१०६	कोकोनाडा	मद्रास	१६ ५७	८२.१५
१०७	कोचीन	केरल	९ ५८	७६ १७
१०८	कोटाराज्य	राजस्थान	२५ १०	७५ ५२
१०९	कोटद्वार	यू० पी०	२९ ४३	७८ ३३
११०	कोडिकनाल	मद्रास	१० १३	७६ ३२
१११	कोलार	मैसूर	१३ ९	७८ ११
११२	कोलूर	मद्रास	१३ ५३	७४ ५३
११३	कोल्हापुर	महाराष्ट्र	१६ ४२	७४ १६
११४	कोहिमा	आसाम	२५ ३८	९४ १०
११५	क्वायमटोर	मद्रास	११ ०	७७ ०
११६	खण्डवा	म० प्र०	२१ ५०	७६.२३
११७	खदरो	बम्बई	२६ ९	६८ ४७
११८	खनियाधाना	म० प्र०	२५ १	७८ ७
११९	खुरजा	यू० पी०	२८ १५	७७ ५०
१२०	खुलना	बंगाल	२२ ४९	८९ ३७

१२१	खेरकी	वम्बई	११ ३३	७३.५४
१२२	खेरलू	वरौदा	२३ ५४	७२ ४०
१२३	खैरपुर	वम्बई	२७ २८	६८ ४४
१२४	गढवाल	यू० पी०	३० १५	७९.३०
१२५	गया	बिहार	२४ ४५	८५ ०
१२६	ग्वालियर	म० प्र०	२६ १४	७८.१०
१२७	ग़ाजियाबाद	यू० पी०	२८ ४०	७७ २८
१२८	गाज़ीपुर	यू० पी०	२५.३४	८३ ३५
१२९	गारो	असम	२५ ३०	९० ३०
१३०	गुजरात	गुजरात	२३ ०	७२ ३०
१३१	गुजरानवाला	पंजाव	३२ १०	७४ १४
१३२	गुटकुल	आन्ध्र	१५ ११	७७ २५
१३३	गुडगॉव	पंजाव	२८ ३७	७७ ४०
१३४	गुना	म० प्र०	२४ ४०	७७ २०
१३५	गुन्तूर	आन्ध्र प्र०	१६ १८	८० २९
१३६	गुरदासपुर	पजाव	३२ ३०	७५ २७
१३७	गोआ	भारत	१५ ३०	७३.५७
१३८	गोडा	यू० पी०	२६ २८	८२ १०
१३९	गोरखपुर	यू० पी०	२६ ४५	८३ २४
१४०	गोलका	बंगाल	२३ ५०	८९ ४६
१४१	गोलपारा	असम	२६ ११	९० ४१
१४२	गोलकुण्डा	हैदरावाद	१७ २३	७८ २७
१४३	गोहाटी	आसाम	२६ ११	९१ ४७
१४४	गगानगर	राजस्थान	२९ ४९	७३.५०
१४५	गजाम	उडीसा	१९ २०	८५.६
१४६	चकराता	यू० पी०	३० ४३	७७ ५४

१४७	चटगाँव	बंगाल	२२ २१	९१ ५३
१४८	चण्डीगढ	पजाब	३०.४२	७६ ५४
१४९	चतरापुर	मद्रास	१९ २१	८५ ३
१५०	च दौसी	उ० प्र०	२८ २७	७८ ४९
१५१	चन्द्रनगर	वगाल	२२ ५२	८८ २५
१५२	चाइंवामी	विहार	२२ ३३	८५ ५१
१५३	चाँदपुर	वगाल	२३ १२	९० ४०
१५४	चाँदवाडी	विहार	२२ ४६	८६ ४८
१५५	चाँदा	म० प्र०	१९ ५७	७९ २१
१५६	चाँदोद	वम्बई	२० २०	७४ १९
१५७	चिकमागालूर	मैसूर	१३ १८	७५ ४९
१५८	चिकाकोल	मद्रास	१८ १७	८३ ५७
१५९	चित्तरजन	विहार	२३ ५२	८६ ३९
१६०	चित्तूर	केरल	१० ४३	७६ ४७
१६१	चित्तौर	राजपूताना	२४ ५४	७४ ५२
१६२	चित्र	मैसूर	१४ १४	७६ २६
१६३	चिदम्वरम्	मद्रास	११ २४	७९ ४४
१६४	चिलान	काश्मीर	३५ २६	७४ १५
१६५	चुनार	यू० पी०	२५ ८	८२ ५६
१६६	चेरापुजी	असम	२५ १७	९१.४७
१६७	छपरा	विहार	२५ ४६	८४ ४९
१६८	छतरपुर	म० प्र०	२४.५४	७९ ३८
१६९	छिंदवाडा	म० प्र०	२२ २३	७८ ५९
१७०	छोटानागपुर	विहार	२३ ०	८५.०
१७१	जगन्नाथगज	वंगाल	२४ ३९	८९.५०
१७२	जगदलपुर	म० प्र०	१८ ०	८२ ७

१७३	जनकपुर	म० प्र०	२३ ४३	८१ ५०
१७४	जव्बलपुर	म० प्र०	२३.१०	८० ०
१७५	जमशेदपुर	विहार	२२ ५०	८६.१०
१७६	जमालपुर	विहार	२५ १९	८६.३२
१७७	जलगाँव	महाराष्ट्र	२१.५०	७५ ४०
१७८	जयनगर	विहार	२६ ४३	८६ ९
१७९	जागरौन	पजाव	३०.४०	७५ ४०
१८०	जामपुर (जम्बू)	पंजाव	२९ ३९	७० ३८
१८१	जामनगर	गुजरात	२२ ३२	७० ५
१८२	जम्बू	काश्मीर	३२ ४४	७५ ५४
१८३	जालन	हैदरावाद	१९ ५१	७५ ५६
१८४	जालन्धर	पंजाव	३१ १९	७५ १८
१८५	जालपागोडी	वगाल	२६.३२	८८.४६
१८६	जालियानवाला	पंजाव	३२ ४०	७३.३९
१८७	जालौन	यू० पी०	२६ ८	७९ २३
१८८	जूनागढ	काठियावाड	२१ ३१	७० ३६
१८९	जैकोवावाद	वम्बई	२८ १७	६८ ३९
१९०	जैपुर राज्य	राजस्थान	२६ ५५	७५.५२
१९१	जैसलमेर राज्य	राजस्थान	२६ ५५	७०.५७
१९२	जैसूर	वगाल	२३ १०	८९ १०
१९३	जोधपुर राज्य	राजस्थान	२६ १८	७३ ४
१९४	जौनपुर	यू० पी०	२५ ४२	८२ ५५
१९५	जौरा	म० प्र०	२३ ४२	७५ ५
१९६	झालरापाटन	राजस्थान	२४ ३२	७६ १२
१९७	झालावार	राजस्थान	२४ ३५	७६ १०
१९८	झाँसी	यू० पी०	२५ ४०	७८ ४९

१९९	टाटानगर	विहार	२२ ५०	८६ १०
२००	टीकमगढ	म० प्र०	२४ ४५	७८ ५३
२०१	टोंक राज्य	राजस्थान	२६ ११	७५ ५०
२०२	ट्रावंकोर	ट्रावकोर स्टेट	९ ०	७७ ०
२०३	डलहौजी	पजाव	३२ ३२	७६ ०
२०४	डालटेनगंज	विहार	२४ २	८४ १०
२०५	डिवरूगढ	आसाम	२७ ३८	९४ ५५
२०६	डीमापुर	आसाम	२५ ५१	९३ ४८
२०७	डेगइसमाईलखाँ	पजाव	३१ ४९	७० ५२
२०८	डेरागाजीखाँ	पजाव	३० ५	७० ५२
२०९	ढाका	पू० व० पाकि०	२३ ४३	९० २६
२१०	तिरुपती	मद्रास	१३ ४०	७९ २०
२११	त्रिचनापल्ली	मद्रास	१० ५०	७८ ४६
२१२	त्रिपुरा	वगाल	२६ ४५	९१ ३०
२१३	तेंजोर	मद्रास	१० ४७	७९ १०
२१४	दतिया	म० प्र०	२५ ३९	७८ २१
२१५	दरभगा	विहार	२६ १०	८५ ५७
२१६	दानापुर	विहार	२५ ५८	८५.५
२१७	दार्जिलिग	वगाल	२७ ३०	८८ १८
२१८	दिनाजपुर	वगाल	२५ ३७	८८ ४०
२१९	दिल्ली	दिल्ली	२८.३८	७७ १२
२२०	दुमका	विहार	२४ ३०	८७ २०
२२१	दुमदुम	वगाल	२७ ३५	९४ ४०
२२२	द्रुग	म० प्र०	२१ १५	८१ १७
२२३	देमन	वम्वई	२२ २५	७२ ५३
२२४	देवघर	विहार	२४ ३०	८६ ४५

२२४	देहरादून	उ० प्र०	३० २०	७८ ५
२२५	दोहद	म० प्र०	२२ ५७	७४ २०
२२६	दौलताबाद	हैदराबाद	१९ ५७	७५ १५
२२७	धनबाद	विहार	२३ ४७	८६ ३०
२२८	धर्मपुरी	मद्रास	१२ १०	७८ ५
२२९	धार	म० प्र०	२२ ४०	७५ ५
२३०	धारनपुर	बम्बई	२० ३२	७३ १३
२३१	धारवाड	मैसूर	१५ ३९	७५ ५९
२३२	धूलिया	बम्बई	२१ ०	७४ ५६
२३३	धूबडी	आसाम	२६ २	९० ०
२३४	धेनकानल	उडीसा	२० ३५	८५ ३०
२३५	धौलपुर राज्य	राजस्थान	२६ ४५	७७ ५८
२३६	नागपुर	महाराष्ट्र	२१ ५	७९ ५
२३७	नरसिंहपुर	म० प्र०	२२ ५७	७९ १५
२३८	नारायणगज	बगाल	२३ २७	९० ३२
२३९	नासिक	बम्बई	२० २	७३ ५०
२४०	नीमच	म० प्र०	२४ २७	७४.५२
२४१	नेरोल	मद्रास	१४ २७	८२ २
२४२	नैनीताल	उ० प्र०	२९ २३	७९ ३०
२४३	पचमढी	म० प्र०	२२ ३०	७८ २२
२४४	पटना	विहार	२५ ३५	८५ १०
२४५	पटियाला	पंजाव	३० २०	७६ २५
२४६	पलामू	विहार	२३ ५२	८४ १७
२४७	पाटन	बडौदा	२३ ५२	७२ १०
२४८	पालघाट	मद्रास	१० ४६	७६ ४२
२४९	पाण्डुचेरी	मद्रास	११ ५६	७९ ५३

२५०	पानीपत	पंजाब	२९ २३	७७ १
२५१	पारसनाथ	बिहार	२४ ०	८६ ११
२५२	पालामऊ	बिहार	२३ ५२	८४ १७
२५३	पीलीभीत	उ० प्र०	२८ ३८	७९ ५१
२५४	पुर्लिया	बिहार	२३ २०	८५ २५
२५५	पुरी	उ० प्र०	३० ९	७८ ४९
२५६	पुरी	बिहार	१९ ४८	८५ ५२
२५७	पुडुकोट्टे	मद्रास	१० २३	७८ ५२
२५८	पूर्णिया	बिहार	२५ ४९	८७ ३१
२५९	पूना	बम्बई	१९ ०	७२ ५५
२६०	पेशावर	सीमाप्रान्त	३४ १५	७६ २५
२६१	प्रतापगढ	राजस्थान	२४ २	७४.४०
२६२	फतेहगढ	उ० प्र०	२७ २३	७९ ४०
२६३	फतेहपुर	राजस्थान	२८ ०	७५ २
२६४	फतेहपुर सीकरी	उ० प्र०	२७ ६	७७ ४२
२६५	फरीदकोट	पंजाब	३० ४०	७४.५७
२६६	फरीदपुर	बंगाल	२३ ३६	८९ ५३
२६७	फरूखाबाद	उ० प्र०	२७ २४	७९ ३७
२६८	फलटन	बम्बई	१८ ०	७४ २९
२६९	फिरोजपुर	पंजाब	३० ५५	७४ ४०
२७०	फैजाबाद	उ० प्र०	२६ ४७	८२ १२
२७१	बक्सर	बिहार	२५ ३४	८४ १
२७२	बखसार	राजस्थान	२४ ४३	७१.९
२७३	बघेलखण्ड	म० प्र०	२४ १०	८२ ०
२७४	बडौच	बम्बई	२१ ४५	७३ ०
२७५	बडौदा	बम्बई	२२ ०	७३ ३०

२७६	वद्रीनाथ	उ० प्र०	३०.४५	७९.२५
२७७	वनारस	उ० प्र०	२५ १५	८३ ०
२७८	वम्वई	वम्वई	१८ ५५	७२ ५४
२७९	वर्द्धमान	वंगाल	२३ १६	८७ ५४
२८०	वर्धा	म० प्र०	२४ ४५	७८ ३९
२८१	वरहमपुर	वंगाल	२४ ५	८८ १०
२८२	वरहमपुर	मद्रास	१९ १८	८४ ४८
२८३	वरार	म० प्र०	२० १५	७७ ३०
२८४	वरौदा	म० प्र०	२२ २२	७३ १७
२८५	वरेली	उ० प्र०	२८ १५	७९ ३०
२८६	वलिया	उ० प्र०	२४ ४४	८४ ११
२८७	वलैरी	मद्रास	१५ ४५	७४ ३०
२८८	वस्तर	म० प्र०	१९ ३०	८१ ३०
२८९	वस्ती	उ० प्र०	२६ ४५	८२ ५८
२९०	वहराइच	उ० प्र०	२७.३४	८१ ३८
२९१	वाकरगज	वगाल	२२ २९	९० १८
२९२	वारकपुर	वंगाल	२२.४६	८८ २४
२९३	वारमेर	राजस्थान	२५ ४९	७१ ३२
२९४	वारन	राजस्थान	२५ ३	७६ ३०
२९५	वारपेट	आसाम	२६ २०	९१ ३
२९६	वारमूला	काश्मीर	३४.१५	७४ २५
२९७	वारसी	वम्वई	१८ १३	७५.४४
२९८	वारौनी	म० प्र०	२२.३	७४ २७
२९९	वालासोर	विहार	२१.३०	८६ ५४
३००	वालाघाट	म० प्र०	१८ ५८	८६ ०
३०१	वालगिर	उडीसा	२० ५०	८३ २५

३०२	वालोचा	राजस्थान	२५ ४९	७२.२१
३०३	वामवा	मद्रास	१८ ५३	८४ ३८
३०४	वासिईम	वरार	२०.३	७७.०
३०५	विमलीपट्टम्	मद्रास	१७ ५३	८३ ३०
३०६	विलासपुर	म० प्र०	२२ ५	८२ १३
३०७	विलोचिस्तान	सीमाप्रान्त	२८ ०	६५ ०
३०८	वीकानेर	राजस्थान	२१ ४३	७३.२
३०९	वीजापुर	वम्वई	१६ ५०	७५ ४७
३१०	वुकुर	वम्वई	२७ ४०	६८ ५६
३११	वुन्देलखण्ड	उ० प्र०	२४ ४०	८० ०
३१२	वुरहानपुर	म० प्र०	२१ १७	७६ १६
३१३	वुलसार	वम्वई	२० ३६	७२ ५९
३१४	वूँदी	राजस्थान	२५ २७	७५ ४१
३१५	वेतिहा	विहार	२६ ५९	८४ ३८
३१६	वेरहमपुर	वगाल	२४ १०	८८ २०
३१७	वेल्लरे	मद्रास	१५ १२	७७ ५
३१८	वेलगाँव	वम्वई	१५ ४२	७४ ४०
३१९	वेंगलोरु	मैसूर	१२ ५८	७७ ३०
३२०	वोगरा	वगाल	२४ ५१	८८ २६
३२१	वेलोनिया	त्रिपुरा	२३ १५	९१ २५
३२२	वौनीगढ	विहार	२१ ४५	८५ ०
३२३	वौव्वली	मद्राम	१८ ३४	८३ ४५
३२४	वह्मनी राज्य		२० ५२	८५ ४०
३२५	भटिण्डा	पजात्र	३० ११	७५ ०
३२६	भण्डारा	म० प्र०	२१ ८	७९ ४०
३२७	भदारा	म० प्र०	२४ ४८	७०.२६

३२८	भद्रक	उड़ीसा	२१ ०	८५.३३
३२९	भरतपुर राज्य	राजस्थान	२७ १९	७७.५०
३३०	भमरगढ	,,	१९ ३०	८० ३०
३३१	भागलपुर	विहार	२५ १२	८६ ५२
३३२	भावनगर	बम्बई	२१ ५९	७२ १९
३३३	भीमा	मैसूर	१७ २५	७६ ०
३३४	भुज	कच्छ	२३ १०	६९ ४५
३३५	भुवनेश्वर	उड़ीसा	२० १०	८५ ५०
३३६	भुसावल	बम्बई	२१ १०	७५ ५८
३३७	भेलसा	म० प्र०	२३.३२	७७ ५१
३३८	भोपाल	म० प्र०	२३ १५	७७ ३०
३३९	मसूरी	उ० प्र०	३० २३	७८.१०
३४०	मऊ	उ० प्र०	२५ १५	७९.११
३४१	मन्दसौर	म० प्र०	२४.५	७५ ०
३४२	मछलीपट्टम्	मद्रास	१६ २	८१ १२
३४३	मथुरा	उ० प्र०	२७ ३९	७७ ४८
३४४	मण्डला	म० प्र०	२२ ४५	८० २६
३४५	मदारीपुर	वगाल	२३ १४	९० १५
३४६	मद्रास	मद्रास	१३ ४	८८ १७
३४७	मदुरा	मद्रास	९ ५०	७८ ५०
३४८	मधुपुर	विहार	२४ १८	८६ ३७
३४९	मधुवनी	विहार	२६ २१	८६ ७
३५०	मनीपुर	आसाम	२४ ४४	९ ४०
३५१	मलावार	बम्बई	१२ ०	७५ २५
३५२	महावलेश्वर	वम्बई	१७ ५८	७३.४३
३५३	महोवा	उ० प्र०	२५ १८	७९.५५

३५४	महवूवनगर	मैसूर	१६ ४५	७७ ५५
३५५	मानिकपुर	उ० प्र०	२५ ४	८१ ८
३५६	मालिकपुर	वरार	२० ५३	७६ १७
३५७	मालवा	म० प्र०	२३ ४०	७५ ३०
३५८	मालखान	मैसूर	१६.०	७३ ५०
३५९	मिर्ज़ापुर	उ० प्र०	२५.७	८२ २
३६०	मुकामा	विहार	२५ २४	८५ ५५
३६१	मुगलपुरा	पजाव	३१.३१	७४ २४
३६२	मुगेर	विहार	२५.२३	८६ ३०
३६३	मुज़फ्फरगढ	पजाव	३० ५	७१.१४
३६४	मुज़फ्फरनगर	उ० प्र०	२९ २७	७७ ४०
३६५	मुज़फ्फरपुर	विहार	२६ ५	८५ २९
३६६	मुर्शिदावाद	वगाल	२४ ११	८८.१९
३६७	मुरादावाद	उ० प्र०	२८ ५१	७८ ४९
३६८	मुरार	म० प्र०	२६ १३	७८.११
३६९	मुलतान	पजाव	३० १२	७१ ३१
३७०	मुसलीपट्टम	आन्ध्र	१६ १२	८१ १२
३७१	मेदनीपुर	वगाल	२२ २५	८७ २१
३७२	मेरठ	उ० प्र०	२९ १	७७.४५
३७३	मेवाड	राजस्थान	२५ ४०	७३ ३०
३७४	मेंगलूर	मद्रास	१२ ५८	७५.०
३७५	मैनपुरी	उ० प्र०	२७ १४	७९ ३
३७६	मैसूर	मैसूर	१२ १८	७६ ३७
३७७	मोतिहारो	विहार	२६ ४०	८४ १७
३७८	रतलाम	म० प्र०	२३ ३१	७५ ७
३७९	राजकोट	वम्वई	२२.१८	७०.५६

३८०	राजनादगाँव	म० प्र०	२१ ५	८१ ५
३८१	रानीगज	वगाल	२३ ३६	८७ ९
३८२	रामगढ	राजस्थान	२७ २५	७० २०
३८३	रामगढ	विहार	२३ २३	८५ ३०
३८४	रामटेक	महाराष्ट्र	२१ २०	७९ १५
३८५	रामपुर	उ० प्र०	२८ ४८	७९ ५
३८६	रायगढ	म० प्र०	२१ ५४	८३ २६
३८७	रायपुर	म० प्र०	२१ १५	८१ ४१
३८८	रायबरेली	उ० प्र०	२६ १४	८१ १६
३८९	रावलपिण्डी	पजाब	३३ ३७	७३.६
३९०	राँची	विहार	२३ २३	८५.२३
३९१	रुडकी	उ० प्र०	२९ ५२	७७ ५३
३९२	रुहेलखण्ड	उ० प्र०	२८ ३०	७९ ०
३९३	लखनऊ	उ० प्र०	२६ ५५	८० ५९
३९४	ललितपुर	उ० प्र०	२४ २२	७८ २८
३९५	लश्कर	म० प्र०	२६ १०	७८.१०
३९६	लारकन	बम्बई	२७ ३३	६८ १५
३९७	लाहौर	पजाब	३१ २७	७४ २६
३९८	लुधियाना	पजाब	३० ५५	५.५४
३९९	लोदराना	पजाब	२९ ३२	७१ ४७
४००	विजगापट्टम्	मद्रास	१७ ४२	८३ २०
४०१	विजयनगरम्	मद्रास	१५ २०	७६ ३०
४०२	ब्यावर	राजस्थान	२६ ६	७४ २१
४०३	शाहजहाँपुर	उ० प्र०	७० ५४	७९.२७
४०४	शिमला	पजाब	३१ ६	७७ १३
४०५	शिवपुरी	म० प्र०	२५.४०	७७ ४४
४०६	शोलापुर	महाराष्ट्र	१७ ४०	७५ ५६
४०७	श्रीनगर	काश्मीर	३४.६	७४ ५१
४०८	सतारा	बम्बई	१७ ४१	७४ १

४०९	ननराम	विहार	२४.५७	८४ ३
४१०	सहारनपुर	उ० प्र०	२९ ५८	७७.३३
४११	सागर	म० प्र०	२३.५०	७८ ५०
४१२	सांगली	बम्बई	१६.५२	७४ ३६
४१३	स्यालकोट	पंजाब	३२.३१	७४ ३६
४१४	सिरोही	राजस्थान	२४ ५३	७२ ५४
४१५	सिलहट	आसाम	२४.५३	९१ ५४
४१६	सिलीगुडी	बंगाल	२६.४२	८८ २५
४१७	सिवान	विहार	२६ २	८४.७
४१८	सिवनी	म० प्र०	२२ ६	७९ ३५
४१९	सीतापुर	उ० प्र०	२७.३२	८०.४३
४२०	सीतामढी	विहार	२६.३५	८५ ३२
४२१	सुन्दरवन	बंगाल	२२ ०	८९.०
४२२	सुलतानपुर	उ० प्र०	२६.१६	८२.७
४२३	सूरत	बम्बई	२१.१२	७२.५२
४२४	सोमनाथ	बम्बई	२१ ४	७०.२६
४२५	शोलापुर	बम्बई	१७.४०	७५ ५६
४२६	हरदोई	उ० प्र०	२७.३०	८०.५
४२७	हरद्वार	उ० प्र०	३०.०	७८.०९
४२८	हापुड	उ० प्र०	२८ ४५	७७.४०
४२९	हांसी	पंजाब	२९ ५	७५ ५५
४३०	हिम्मतनगर	गुजरात	२३ ३७	७२ ५७
४३१	हिमाचल प्रदेश		३१ ३०	७७.०
४३२	हुब्बली	बम्बई	१५.२०	७२ १२
४३३	हैदराबाद	दक्षिण भारत	१७ २०	७८ ३०
४३४	होशंगाबाद	म० प्र०	२२ ४६	७० ४५

नोट—यहाँ २२ ६ का अर्थ २२ अंश ६ कला तथा ७९ २५ का अर्थ ७० अंश २५ कला है। अर्थात् जो नगरोंके अक्षांश और रेखांशोके अंक दिये गये हैं, वे अंश और कला हैं।

वेलान्तर सारणी

	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०	मि०
१	—४	—१४	—१२	—४	+३	+२	—४	—६	+०	+१०	+१६	+११
२	—४	—१४	—१२	—४	+३	+२	—४	—६	+०	+११	+१६	+१०
३	—५	—१४	—१२	—३	+३	+२	—४	—६	+१	+११	+१६	+१०
४	—५	—१४	—१२	—३	+३	+२	—४	—६	+१	+११	+१६	+१०
५	—६	—१४	—१२	—३	+४	+२	—४	—६	+१	+१२	+१६	+९
६	—६	—१४	—११	—२	+४	+२	—४	—६	+२	+१२	+१६	+९
७	—७	—१४	—११	—२	+४	+१	—५	—६	+२	+१२	+१६	+८
८	—७	—१४	—११	—२	+४	+१	—५	—५	+२	+१२	+१६	+८
९	—७	—१४	—११	—२	+४	+१	—५	—५	+३	+१३	+१६	+७
१०	—८	—१४	—१०	—१	+४	+१	—५	—५	+३	+१३	+१६	+७
११	—८	—१४	—१०	—१	+४	+१	—५	—५	+३	+१३	+१६	+६
१२	—९	—१४	—१०	—१	+४	+०	—५	—५	+४	+१४	+१६	+६
१३	—९	—१४	—१०	—०	+४	+०	—५	—५	+४	+१४	+१६	+६
१४	—९	—१४	—९	—०	+४	—०	—६	—४	+५	+१४	+१५	+५
१५	—१०	—१४	—९	+०	+४	—०	—६	—४	+५	+१४	+१५	+५
१६	—१०	—१४	—९	+०	+४	—०	—६	—४	+५	+१४	+१५	+४

	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
१७	—१०	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—४	+६	+१५	+१५	+४
१८	—११	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—४	+६	+१५	+१५	+३
१९	—११	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—३	+६	+१५	+१४	+३
२०	—११	—१४	—८	+१	+४	—१	—६	—३	+७	+१५	+१४	+२
२१	—१२	—१४	—७	+१	+४	—२	—६	—३	+७	+१५	+१४	+२
२२	—१२	—१४	—७	+२	+४	—२	—६	—३	+७	+१५	+१४	+१
२३	—१२	—१४	—७	+२	+३	—२	—६	—२	+८	+१६	+१३	+१
२४	—१२	—१३	—६	+२	+३	—२	—६	—२	+८	+१६	+१३	+०
२५	—१३	—१३	—६	+२	+३	—२	—६	—२	+८	+१६	+१३	+०
२६	—१३	—१३	—६	+२	+३	—३	—६	—२	+९	+१६	+१२	—१
२७	—१३	—१३	—५	+२	+३	—३	—६	—१	+९	+१६	+१२	—१
२८	—१३	—१३	—५	+३	+३	—३	—६	—१	+९	+१६	+१२	—२
२९	—१३	—१२	—५	+३	+३	—३	—६	—१	+१०	+१६	+११	—२
३०	—१४	×	—४	+३	+३	—३	—६	—०	+१०	+१६	+११	—३
३१	—१४	×	—४	×	+३	×	—६	—०	×	+१६	×	—३

इष्टकाल बनानेके नियम—स्थानीय सूर्योदय, सूर्यास्त और दिनमान बनानेके पश्चात् जन्मसमयको स्थानीय धूपघडीके अनुसार बना लेना चाहिए। अनन्तर निम्न चार नियमोसे जहाँ जिसका उपयोग हो, उसके अनुसार घट्यादिरूप इष्टकाल निकाल लेना चाहिए।

१—सूर्योदयसे लेकर १२ बजे दिनके भीतरका जन्म हो तो जन्म-समय और सूर्योदयकालका अन्तर कर शेपको ढाई गुना ($2\frac{1}{2}$) करनेसे घट्यादि इष्टकाल होता है जैसे मान लिया कि आरा नगरमें वि० सं २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको प्रात काल ८ बजकर १५ मिनिटपर किसीका जन्म हुआ है। पहले इस स्टैण्डर्ड टाइमको स्थानीय समय बनाना है। अत आराके रेखाश और स्टैण्डर्ड टाइमसे रेखाशका अन्तर कर लिया तो—(८४।४०)—(८२। ३०) = (२+१०) इसे ४ मिनिटसे गुणा किया तो—८ मिनिट ४० सेकेण्ड आया। स्टैण्डर्ड टाइमके रेखाशसे आराका रेखाश अधिक है, इसलिए इस फलको स्टैण्डर्ड टाइममे जोडा—

८।१५।०
  ८।४०
————
८।२३।४० देशान्तर सस्कृत समय

२४ अप्रैलको वेलान्तर सारणीमे दो मिनिट धन सस्कार लिखा है, अत उसे जोडा तो—(८।२३।४०) + (०।२।०) = ८।२५।४० आराका समय हुआ, यही बालकका जन्मसमय माना जायेगा। उपर्युक्त नियमके अनुमार इष्टकाल बनानेके लिए आराका सूर्योदय इस जन्मदिनका निकालना है, पहले उदाहरणमे इस दिनका सूर्योदय ५।३४।४८ बजे आया है। अतएव—

८।२५।४० जन्मसमयमें-से
५।३४।४८ सूर्योदयको घटाया
————
२।५०।५५—इसे ढाई गुना किया—(२।५०।५२) × $\frac{5}{2}$ = ७।७।१० घट्यादि इष्टकाल हुआ।

२—यदि १२ वजे दिनसे सूर्यास्तके अन्दरका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेपको ढाई गुना कर दिनमानमें-से घटाने-पर इष्टकाल होता है। उदाहरण—वि० म २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको २ वजकर २५ मिनिटपर आरामें जन्म हुआ है। समय शुद्ध करनेके लिए देशान्तर और वेलान्तर दोनो सस्कार किये—(२।२५) + (०।८।४० देशान्तर) + (०।२।० वेलान्तर) = २।३५।४० आराका जन्मसमय। सूर्यास्त पहले उदाहरणमे ६।२५।१२ और दिनमान ३२ घटी ६ पल निकाला गया है अत ६।२५।१२ सूर्यास्तमें-से

२।३५।४० जन्मसमयको घटाया

३।४९।३२ इसे ढाई गुना किया

(३।४९।३२) × ५/२ = ९।३३।५० फल आया, इमे दिनमानमें-से घटाया—

३२। ६ दिनमानमें-से

९।३३।५० को घटाया

२२।३२।१०

३—सूर्यास्तसे १२ वजे रात्रिके भीतरका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेपको ढाई (२½) गुना कर दिनमानमे जोड देनेसे इष्टकाल होता है। उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके १० वजकर ४५ मिनिटपर आरा नगरमें किसी बच्चेका जन्म हुआ है। पूर्ववत् यहांपर भी देशान्तर और वेलान्तर सस्कार किये—(१०।४५) + (०।८।४०) + (०।२।०) = १०।५५।४० जन्मसमय—१०।५५।४० जन्मसमयमें-से

६।२५।१२ सूर्यास्तकालको घटाया

४।३०।२८ इसे ढाई गुना किया—(४।३०।२८) × ५/२

११।१६।१० फल आया, इमे दिनमानमे जोडा—३२। ६। ० दिनमान

११।१६।१० फल

इष्टकाल घट्यादि हुआ। ४३।२२।१०

४—यदि रातके १२ बजेके पश्चात् और सूर्योदयके पहलेका जन्म हो तो सूर्योदयकाल और जन्मसमयका अन्तर कर शेपको ढाई (२½) गुना कर ६० घटीमे-से घटानेपर इष्टकाल होता है। उदाहरण—वि० स० २००1 वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके ४ बजकर १२ मिनिटपर जन्म हुआ है। अतएव (४।१५।०) + (०।८।४० देशान्तर) + (०।२।० वेलान्तर) = ४।२५।४० संस्कृत जन्मसमय हुआ।

५।३४।४८ सूर्योदयमें-से
४।२५।४० जन्मसमयको घटाया

१। ९।८ (१।९।८) × ५/२ = २।५२।५० फल,
६०। ०। ० मे-से घटाया
२।५२।५०

५७। ७।१० इष्टकाल हुआ।

५—सूर्योदयसे लेकर जन्मसमय तक जितने घण्टा, मिनिट और सेकेण्ड हो, उन्हे ढाई गुना कर देनेसे घट्यादि इष्टकाल होता है। उदाहरण—वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको दिनके ४ बजकर १५ मिनिटपर आरामें जन्म हुआ है। अतएव—
(४।१५।०) + (०।८।४० देशान्तर) + (०।२।० वेलान्तर) = ४।२५।४० जन्मसमय। सूर्योदय ५।३४।४८ पर होता है, इसलिए गणना करनेपर सूर्योदयसे लेकर जन्मसमय तक १० घण्टे ५० मिनिट ५२ सेकेण्ड हुए। इनको ढाई गुना किया—(१०।५०।५२) × ५/२ = २७।७।१० घट्यादि इष्टकाल हुआ।

भयात[1] और भभोग साधन

यदि पचाग अपने यहाँका नही हो तो पचागके तिथि, नक्षत्र,

१ गतर्क्षघट्या गगनाङ्कशुद्धा. द्विष्ठा. क्रमादिष्टघटीप्रयुक्ता।
इष्टर्क्षनाडीसहितास्च कार्या भयातभोगौ भवतः क्रमण॥
—दशामञ्जरी, नि० ब० १९२२ ई०, श्लो० २।

योग और करणके घटी, पलोमें देशान्तर मस्कार करके अपने स्थान—जहाँकी जन्मपत्री वनानी हो, वहाँके नक्षत्रका मान निकाल लेना चाहिए।

यदि इष्टकालसे जन्मनक्षत्रके घटी, पल कम हो तो जन्मनक्षत्र गत और आगामी नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है तथा जन्मनक्षत्रके घटी, पल इष्ट-कालके घटी, पलोमे अधिक हो तो जन्मनक्षत्रसे पहलेका नक्षत्र गत और वर्तमान नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है। गत नक्षत्रके घटी, पलोको ६० मे-से घटानेपर जो शेप आवे उसे दो जगह रखना चाहिए, एक स्थानपर इष्टकालको जोड देनेसे भयात और दूसरे स्थानपर जन्मनक्षत्र जोड देनेपर भभोग होता है।

उदाहरण—वि० म० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीयाको आरामे दिनके २ वजकर २५ मिनिटपर किसी वच्चेका जन्म हुआ है। इस समयका पूर्व नियमके अनुसार इष्टकाल २२।३२।१० है। इस दिन भरणी नक्षत्रका मान वनारमके विश्वपचागमें ६।२७ लिखा है। पहले इस नक्षत्रमानको आराका वना लेना है।

८४।४० आरा रेखाशमें-से
८३। ० वनारसका रेखाश घटाया
१।४०

१।४० को ४ मिनिटमे गुणा किया अर्थात् अशोको गुणा करनेपर मिनिट और कलाओको गुणा करनेपर सेकेण्ड होते है। (१।४०) × ४ = ६।४० यह मिनिटादि है, इसे घट्यादि वनानेकी विधि यह है कि मिनिटोको $२\frac{१}{२}$ से गुणा करनेपर पल और सेकेण्डोको $२\frac{१}{२}$ से गुणा करनेपर विपल होते है। अतएव—(६।४०) × $\frac{५}{२}$ = १६।४० पलादिमान। यह वनारसमे आराका देशान्तर मस्कार धनात्मक हुआ। क्योकि वनारमके रेखाशसे आरा रेखाश अधिक है। इस मस्कार-द्वारा तिथि, नक्षत्र, योग आदिका मान आरामें निकाला जायेगा—

६।२७।० बनारसमे भरणीका प्रमाण
१६।४० देशान्तर संस्कार

६।४३।४० भरणी नक्षत्र आरामे हुआ।

प्रस्तुत उदाहरणमें इष्टकाल २२।३२।१० है, इसके घटो, पल जन्म-नक्षत्र भरणीके घटी, पलोसे अधिक है, अतएव भरणी गत नक्षत्र और कृत्तिका जन्मनक्षत्र माना जायेगा।

६०। ०। ० मे-से
६।४३।४० भरणीके मानको घटाया।
५३।१६।२०—इसे दो स्थानोमे रखा।

५।११।० बनारसमे कृत्तिकाका मान
१६।४० देशान्तर
५।२७।५० आरामें कृत्तिका नक्षत्रका मान

५३।१६।२० मे
२२।३२।१० इष्टकाल जोडा
१५।४८।३० भयात

५३।१६।२० मे
५।२७।४० जन्मनक्षत्र कृत्तिका जोडा
५८।४४। ० भभोग[1]

लग्न निकालनेकी प्रक्रिया

जन्म समयमें क्रान्तिवृत्तका जो प्रदेश—स्थान क्षितिजवृत्तमें लगता है, वही लग्न कहलाता है। दूसरे शब्दोमे यह भी कहा जा सकता है कि दिनका उतना अंश जितनेमे किसी एक राशिका उदय होता है, लग्न कहलाता है। अहोरात्रमे बारह राशियोका उदय होता है, इसीलिए एक दिन-रातमें बारह लग्नोकी कल्पना की गयी है। 'फलदीपिका'में 'राशीनामुदयो लग्नं' अर्थात् एक राशिके उदयकालको लग्न बतलाया है। लग्न-साधनके लिए अपने स्थानका उदयमान जानना आवश्यक है। अत चरखण्डोका साधन निम्न प्रकार करना चाहिए।

---

१ भभोगका मान ६७ घटी तक हो सकता है। ६७ घटीसे अधिक होनेपर हो इसमें ६० का भाग देना चाहिए। भयात सदा भभोगसे कम आता है।

सायन मेष संक्रान्ति या सायन तुला संक्रान्तिके दिन मध्याह्नकालमें १२ अंगुल शंकुकी छाया जितनी हो, उतना ही अपने स्थानकी पलभाका प्रमाण समझना चाहिए। इस पलभाको तीन स्थानोंमें रखकर प्रथम स्थानमें १० से, दूसरेमें ८ से और तीसरे स्थानमे $\frac{१}{३}$° से गुणा करनेपर तीन राशियोंके चरखण्ड होते हैं। इनको मेषादि तीन राशियोमे ऋण, कर्कादि तीन राशियोंमें धन, तुलादि तीन राशियोंमें धन एव मकरादि तीन राशियोमे ऋण करनेसे उदयमान आता है।

आराकी पलभा ५ अगुल ४३ प्रत्यंगुल है। इसे तीन स्थानोंमें रखकर क्रिया की तो—

(५।४३) × १० = ५७।१०

(५।४३) × ८ = ४५।४४

(५।४३) × $\frac{१}{३}$° = १९।१३

इन चरखण्डोका वेधोपलब्ध पलात्मक राशि-मानमे सस्कार किया तो आराका उदयमान आया—

मेष[१]	२७८—५७।१०	=	२२०।५०	=	मीन
वृष	२९९—४५।४४	=	२५३।१६	=	कुम्भ
मिथुन	३२३—१९।१३	=	३०३।५७	=	मकर
कर्क	३२३ + १९।१३	=	३४२।१३	=	धनु
सिंह	२९९ + ४५।४४	=	३४४।४४	=	वृश्चिक
कन्या	२७८ + ५७।१०	=	३३५।१०	=	तुला

प्रत्येक नगरकी पलभा अपने स्थानके अक्षांशोपर-से आगे दी गयी सारणीपर-से ज्ञात की जा सकती है।

---

१ लङ्कोदयादिघटिका गजभानि २७८ गोङ्क—
दस्रा २९९ स्त्रिपक्षदहनाः ३२३ क्रमगोत्क्रमस्थाः ॥
हीनान्विताश्चरदलैः क्रमगोत्क्रमस्थै-
र्मेषादितां ऽथ उत्क्रमगास्त्विमे स्युः ॥—ग्रहलाघव त्रि० प्र० श्लो० १।

पलभा ज्ञान सारणी

अक्षाश	पलभा (अगुलात्मक)	अक्षाश	पलभा (अगुलात्मक)
५	१। ३। ०	२२	४।५०।५२
६	१।१५।४४	२३	५। ५।३८
७	१।२८।२३	२४	५।२०।३१
८	१।४१।१०	२५	५।३५।४२
९	१।५४।०	२६	५।५१। ७
१०	२। ६।५४	२७	६। ६।५०
११	२।१९।५५	२८	६।२२।४८
१२	२।३३।०	२९	६।३९। ४
१३	२।४६।१२	३०	६।५५।४१
१४	२।५९।२८	३१	७।१२।३६
१५	३।१२।५४	३२	७।२९।५३
१६	३।२६।२४	३३	७।४७।३१
१७	३।४०। ५	३४	८। ५।३८
१८	३।५३।५६	३५	८।२४। ७
१९	४। ७।५५	३६	८।४३। ५
२०	४।२२। १	३७	९। २।३५
२१	४।३६।२२	३८	९।२२।३०

उदाहरण—आराका अक्षाश २५।३० है, पलभा सारणीमे २५ अक्षाशकी पलभा ५।३५।४२ लिखी है। ३० कलाकी पलभा निकालनेके लिए २५ अश और २६ अशके पलभा कोष्ठकोका अन्तर कर अनुपात-द्वारा ३० कलाकी पलभा निकालकर २५ अक्षाशकी पलभामे जोड देनेसे आराकी पलभा आ जायेगी।

५।५१।७—२६ अशकी पलभामे-से

५।३५।४२—२५ अशकी पलभाको घटाया

१५।२५—एक अश अर्थात् ६० कलाकी पलभा हुई, इसे ३० से गुणा कर ६०का भाग देनेपर ३० कलाकी पलभा आ जायेगी।

१५।२५ × ३० = ४५०।७५० − ६० = ७।४२

१४

५।३५।४२—२५ अंशकी पलभामें
७।४२—३० कलाकी पलभा जोडी
५।४३।२४। आराकी पलभा हुई

अब जिस समयका लग्न बनाना हो उस समयके स्पष्ट सूर्यमें तात्कालिक स्पष्ट अयनांश जोड देनेसे तात्कालिक सायन सूर्य होता है। इस तात्कालिक सायन सूर्यके भुक्त या भोग्य अंशादिको स्वदेशीय उदयमानसे गुणा करके ३० का भाग देनेपर लब्ध पलादि भुक्त या भोग्यकाल होता है—भुक्तांशको स्वोदयसे गुणाकर ३० का भाग देनेपर भुक्तकाल और भोग्यांशको स्वोदयसे गुणा कर ३० का भाग देनेपर भोग्यकाल आता है। इस भुक्त या भोग्यकालको इष्ट घटी-पलोंमें घटानेसे जो शेष रहे उसमें भुक्त या भोग्य राशियोंके उदयमानोंको जहाँतक घटा सकें, घटाना चाहिए। शेषको ३० से गुणा कर अशुद्धोदयमान (जो राशि घटी नही है उसके उदयमान) से भाग देनेपर जो अंशादि लब्ध आयें, उनको क्रमसे अशुद्ध[1] राशिमें घटाने और शुद्ध राशिमें जोडनेसे सायन स्पष्ट लग्न होता है। इसमें-से अयनांश घटानेपर स्पष्टलग्न आता है।

सूर्य स्पष्ट प्राय पंचागोंमें प्रतिदिनका दिया रहता है। यद्यपि यह सूर्य-स्पष्ट जन्मसमयके इष्टकालका नही होता है, लेकिन लग्न बनानेका काम साधारणतया इससे चलाया जा सकता है। यहाँ सिर्फ विचार इतना ही करना है कि यदि दिनका जन्म हो तो पहले दिनका सूर्य-स्पष्ट और रातका जन्म हो तो उसी दिनका सूर्य-स्पष्ट काममें लाना चाहिए। इस सूर्य-स्पष्टमें अयनांश जोडकर सायन सूर्य बना लेना चाहिए, तब पूर्वोक्त नियमानुसार क्रिया करनी चाहिए।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको आरामें २३ घटी २२ पल इष्टकालपर किसी बालकका जन्म हुआ है। इस

---

१ जो राशि नष्ट न सके उसे अशुद्ध और जिस राशि तकके उदयमान इष्टकालके पलोंमें नष्ट जायें वह शुद्ध राशि कहलाती है।

इष्टकालका लग्न निकालनेके लिए इस दिनका सूर्य-स्पष्ट ०।१०।२८।५७ लिया। इसमें अयनाश अर्थात्—

२३ अश ४६ कला जोडा तो—

०।१०।२८।५७ सूर्य-स्पष्ट

२३।४६। ० अयनाश

१।४।१४।५७ सायन सूर्य

यहाँ वृपराशिके सूर्यका भुक्ताश ४।१४।५७ है और भोग्याश—

=१।०।०।०—एक राशिमें-से

०।४।१४।५७—भुक्ताश घटाया

२५।४५। ३ भोग्याश

वृप राशिका भोग्याश होनेसे, आराके वृपराशिके उदयमानसे गुणा किया—

२५।४५।३ × २५४ = ६५४०।०।४२।४२ इस सख्याकी प्रथम अंक राशिमे ३०से भाग दिया तो २१८।०।४२।४२ यहाँ पहली अकराशि पल है, आगेवाली राशियाँ विपलादि हैं। गणित क्रियामें केवल पलोका उपयोग होता है, इसलिए और राशियोका त्याग कर दिया तो—२१८ ही राशि रह गयी।

इष्टकाल २३।२२के पल बनाये— × ६०

१३८०

२२

१४०२ पल-हुए, इनमे-से

२१८ भोग्य पल घटाये

११८४

३०३ मिथुन

८८१

३४१ कर्क

५४०

{ यहाँ वृपराशिके उदयमानसे गुणा कर निकाला गया था, अत उसमें आगे-वाली राशियोके उदयमान घटाये हैं।

५८०
३४४ सिंह
१९६

{ यहाँ सिंह तक राशियोके उदयमान इष्टकालके पलोंमे-से घट गये है, अत सिंह शुद्ध और कन्या अशुद्ध कहलायेगी।

१९६ × ३० = ५८८०, इसमे अशुद्ध राशिके उदयमानसे भाग दिया

३३६) ५८८० (१७ अंश
३३६
२५२०
२३५२
१६८ × ६० =
३३६) १००८० (३०कला
१००८
×

५।१७।३०।० सायन लग्नमें-से
२३।४६।० अयनांश घटाया
४।२३।४४।० यह स्पष्ट लग्न है।

{ सिंह राशि घट गयी थी, अतएव लग्नके राशि स्थानमें ५ माना जायगा।

अयनांश निकालनेकी विधि

अयनांश निकालनेकी कई विधियाँ प्रचलित हैं। वर्तमानमे साधारणतया ज्योतिर्विद् ग्रहलाघव, मकरन्द और सूर्यसिद्धान्त इन तीन ग्रन्थोंके आधारपर-से निकालते है। किन्तु मुझे ग्रहलाघव-द्वारा निकाला गया अयनांश ठीक जँचता है। वेध क्रिया-द्वारा भी लगभग इतना ही अयनांश आता है। ग्रहलाघवकी विधि निम्न प्रकार है—

इष्ट शक वर्ष, जो पचांगमे लिखा रहता है, उसमें-से ४४४ घटाकर शेषमे ६० का भाग देनेसे अयनांश होता है।[१]

उदाहरण—शक स० १८६६—४४४ = १४२२ ÷ ६० = २३।४६

मकरन्द-विधि—इष्ट शक वर्षमे-से ४२१ घटाकर शेषको दो स्थानोंमे रखे, एक स्थानमें १०से भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानमे-से घटावे।

[१] शक वेदाब्धिवेदोन ४४४ षष्टिभक्तोऽयनांशका॰ ॥ अथवा वेदाब्ध्यब्ध्यून-खरसहृत॰ शकोऽयनांशा॰।—ग्रहलाघव रविचन्द्र० श्लो० ७।

जो शेप आवे उसमे ६० का भाग देनेसे अयनांश आता है।

उदाहरण—शक सं० १८६६ – ४२१ = १४४५,

१४४५ – १० = १४४।३०

१४४५। ० मे-से

१४४।३० को घटाया

१३००। ३० शेप रहा,

१३००।३० – ६० = २१।४० अयनांश हुआ।

लग्नशुद्धिका विचार

जन्मकुण्डलीका सारा फल लग्नके ऊपर आश्रित है, यदि लग्न ठीक न बना हो तो उस कुण्डलीका फल सत्य नही हो सकता है। यद्यपि शहरोमें घडियाँ रहती है, परन्तु उन घडियोके समयका कुछ ठीक नहीं, कोई घडी तेज रहती है तो कोई सुस्त। इसके अतिरिक्त जव लग्न एक राशिके अन्त और दूसरी राशिके आदिमे आता है, उस समय उसमे सन्देह हो जाता है। प्राचीन आचार्योंने लग्नके शुद्धाशुद्ध विचारके लिए निम्न नियम वतलाये है, इन नियमोके अनुसार लग्नकी जाँच कर लेना अत्यावश्यक है।

१—प्राणपद एव गुलिकके साधन-द्वारा इष्टकालके शुद्धाशुद्धका निर्णय कर गणितागत लग्नके साथ तुलना करनी चाहिए।

२—इष्टकाल, सूर्य स्थित नक्षत्र, जन्मकालीन चन्द्रमा, मान्दि एव स्त्री-पुरुप-जन्म योग-द्वारा लग्नका विचार करना चाहिए।

३—प्रसूतिका-गृह, प्रसूतिका-वस्त्र एवं उपसूतिका-सख्या आदि उत्पत्ति कालीन वातावरणके निर्णय-द्वारा लग्नका निर्णय करना चाहिए।

४—जातकके शारीरिक चिह्न, गठन, रूप-रग इत्यादि शरीरकी वनावट-द्वारा लग्नका निर्णय करना। जिन्हें ज्योतिप शास्त्रकी लग्नप्रणालीका अनुभव होता है, वे जातकके शरीरके दर्शन मात्रसे लग्नका निर्णय कर लेते हैं।

लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	२ ५० ९	२ ५७ ४७	३ ५ २५	३ १३ ५	३ २० ४८	३ २८ ३५	३ ३६ १८	३ ४८ ६	३ ५२ ०	३ ५९ ४८	४ ७ ४२	४ १५ ३९	४ २३ ४७	४ ३१ ३९
वृ. १	६ ५४ ५९	७ ३ ५२	७ १२ ४१	७ २१ ४७	७ ३० ५२	७ ३९ ५९	७ ४९ ११	७ ५८ २४	८ ७ ४०	८ १७ १	८ २६ २५	८ ३५ ४३	८ ४५ २४	८ ५४ ५९
मि २	११ ४६ ४१	११ ५७ १६	१२ ७ ५५	१२ १८ ३७	१२ २९ ४२	१२ ४० ९	१२ ५१ १९	१३ १ ५१	१३ १२ ४७	१३ २३ ४५	१३ ३४ ४५	१३ ४५ ४८	१३ ५६ ५२	१४ ८ ०
क. ३	१७ २१ १३	१७ ३२ ४४	१७ ४४ १६	१७ ५५ ४९	१८ ७ २२	१८ १८ ५६	१८ ३० २९	१८ ४२ ३	१८ ५३ ३८	१९ ५ ११	१९ १६ ४४	१९ २८ २०	१९ ३९ ५२	१९ ५१ २५
सि. ४	२३ ६ ३४	२३ १७ ५७	२३ २९ २७	२३ ४० ३९	२३ ५१ ५९	२४ ३ १९	२४ १४ ३९	२४ २५ ५५	२४ ३७ १२	२४ ४८ २८	२४ ५९ ४४	२५ १० ५८	२५ २२ १२	२५ ३३ २५
क ५	२८ ४२ ३६	२८ ५३ ४०	२९ ४ ४६	२९ १५ ४७	२९ २६ ५०	२९ ३७ ५९	२९ ४८ ५७	३० ० २०	३० ११ ५३	३० २२ २१	३० ३३ ८	३० ४४ १३	३० ५५ ४	३१ ६ २०

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	
३९	४७	५५	४	१२	२०	२९	३७	४५	५४	२	११	१९	२८	३७	४६	मे-०
४१	४९	५७	९	२३	३९	१	२१	५८	३५	४६	२०	५८	३८	२२	९	
९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	
४	१४	२४	३३	४३	५३	३	१३	२३	३४	४४	५४	४	१५	२५	३६	वृ० १
३७	१९	४	५३	४६	४२	४३	४५	५१	०	१४	३०	४९	१३	३९	९	
१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	
१९	३०	४१	५२	४	१५	२६	८	४९	०	१२	२३	३५	४६	५८	९	मि० २
९	२०	३२	४९	५	२४	४४	६	२९	५३	१७	४५	१४	४२	११	४२	
२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२२	२२	
२	१४	२६	३७	४९	०	१२	२३	३५	४६	५८	९	२०	३२	४३	५५	क० ३
५८	३०	३	३७	६	३७	८	३७	१७	३५	४	३०	५६	२२	३७	११	
२५	२५	२६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२८	२८	२८	
४४	५५	७	१८	२९	४०	५१	२	१३	२४	३६	४७	५८	९	२०	३१	सिं० ४
३८	४९	०	१०	२५	३६	४९	५१	५३	५९	६	१२	१७	२२	२७	३२	
३१	३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३	३३	३३	३४	
१७	२८	३९	५०	१	१२	२३	३५	४६	५७	९	१९	३०	४१	५२	४	क० ५
२४	२८	३३	३७	४३	४८	५४	०	७	१९	१०	२६	३५	४९	२९	११	

लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	३४ १५ २२	३४ २६ ३४	३४ ३७ ४८	३४ ४९ २	३५ ० १६	३५ ११ ३१	३५ २२ ४६	३५ ३४ ५	३५ ४५ २१	३५ ५६ ४१	३६ ८ ६	३६ १९ २०	३६ ३० ३३	३६ ४२ ३
वृ० ७	३९ ५७ २	४० ८ ३५	४० २० ८	४० ३१ ४०	४० ४३ १६	४० ५४ ४९	४१ ६ ५२	४१ १७ ५६	४१ २९ ३१	४१ ४१ ४	४१ ५२ ३८	४२ ४ ११	४२ १५ ४३	४२ २७ १६
ध० ८	४५ ४० ५१	४५ ५२ ०	४६ ३ ७	४६ २४ १२	४६ २५ १५	४६ ३६ १५	४६ ४७ १३	४६ ५८ ८	४७ ८ ४१	४७ १९ ५१	४७ ३० १८	४७ ४१ २३	४७ ५२ ४	४८ २ ४४
म० ९	५० ५५ २२	५१ ५ १	५१ १४ ३६	५१ २४ १७	५१ ३३ ३५	५१ ४२ ५९	५१ ५२ १९	५२ १ ३६	५२ १० ४९	५२ २० १	५२ २९ ८	५२ ३८ १३	५२ ४७ ११	५२ ५६ ८
कु० १०	५५ २० १७	५५ २८ २१	५५ ३६ १३	५५ ४४ २१	५५ ५२ १८	५५ ० १२	५६ ७ ५३	५६ १५ ५४	५६ २३ ४२	५६ ३१ २८	५६ ३९ १२	५६ ४६ ५४	५६ ५४ ३४	५७ २ १३
मी० ११	५९ ८ ५२	५९ १६ ११	५९ २३ १७	५९ ३० ४८	५९ ३८ ६	५९ ४५ १९	५९ ५२ ४२	० ० ०	० ७ १८	० १४ ४०	० २१ ५४	० २९ १२	० ३६ ४३	० ४३ ४९

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
३६ ५३ २५	३७ ४ ४९	३७ १६ १३	३७ २७ ३८	३७ ३९ ३	३७ ५० ३०	३८ १ ५६	३८ १३ २५	३८ २४ ४३	३८ ३६ २३	३८ ४७ ५२	३८ ५९ २३	३९ १० ५४	३९ २२ २५	३९ ३३ ५७	३९ ४५ २९	तु. ६
४२ ३८ ४७	४२ ५० १८	४३ १ ४३	४३ १३ १८	४३ २४ ४७	४३ ३६ १५	४३ ४७ ४३	४३ ५९ ७	४४ १० ३१	४४ २१ ५४	४४ ४३ ३६	४४ ४४ ३६	४४ ५५ ५४	४५ ७ १३	४५ १८ ३६	४५ २९ ३९	वृ ७
४८ १३ १९	४८ २३ ५१	४८ ३४ २१	४८ ४४ ४७	४८ ५५ १०	४९ ५ २९	४९ १५ ४६	४९ २५ ५९	४९ ३६ ९	४९ ४६ १५	४९ ५६ १७	५० ६ १८	५० १६ १४	५० २६ ६	५० ३५ ५५	५० ४५ ४१	ध. ८
५३ ५ १	५३ १३ ५१	५३ २२ ३८	५३ ३१ २२	५३ ४० २	५३ ४८ ३९	५३ ५७ १४	५४ ५ ४७	५४ १४ २	५४ २२ ३८	५४ ३० ५९	५४ ३९ २०	५४ ४७ ३७	५४ ५५ ५१	५५ ४ ३	५५ १२ ५१	म ९
५७ ९ ५०	५७ १७ १७	५७ २४ ५९	५७ ३२ ३२	५७ ३९ ५८	५७ ४८ २८	५७ ५५ ४९	५८ २ ३३	५८ ९ ५४	५८ १७ १९	५८ २४ ४४	५८ ३२ ७	५८ ३९ २४	५८ ४६ ५१	५८ ५४ २	५९ १ ३२	कुं. १०
० ५१ ८	० ५८ २८	१ ५ ५८	१ १३ ९	१ २० ३१	१ २७ ५३	१ ३५ १६	१ ४२ ४०	१ ५० ५	१ ५७ २७	२ ४ ११	२ ११ ३२	२ २० २०	२ २७ २८	२ ३५ ०	२ ४२ ३४	मी ११

लग्न निकालनेकी सुगम विधि—सारणी-द्वारा जिस दिनका लग्न बनाना हो, उस दिनके सूर्यके राशि और अश पचागमे देखकर लिख लेने चाहिए। आगे दी गयी लग्न-सारणीमें राशिका कोष्ठक बायी ओर और अशका कोष्ठक ऊपरी भागमे है। सूर्यके जो राशि, अश लिखे है उनका फल लग्न-सारणीमें अर्थात् सूर्यकी राशिके सामने और अशके नीचे जो अक संख्या मिले उसे इष्टकालके घटी, पलोमे जोड दे, वही योग या उसके लगभग जिस कोष्ठकमें मिले, उसके बायी ओर राशिका अक और ऊपरी अशका अक होगा, यही राश्यादि लग्न मान होगा। त्रैराशिक-द्वारा कला विकलाका प्रमाण भी निकाल लेना चाहिए।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला २ सोमवारको २३ घटी २२ पल इष्टकालका लग्न बनाना है। इस दिन पचागमे सूर्य ०।१०।२८।५७ लिखा है। इसको एक स्थानपर लिख लिया। लग्न-सारिणीमे शून्य राशि अर्थात् मेप राशिके सामने और १० अशके नीचे ४।७।४२ सख्या लिखी है, इसे इष्टकालमें जोडा—

२३।२२।० इष्टकालमे
४।७।४२ फलको जोडा
२७।२९।४२

इस योगको पुन लग्न-सारणीमे देखा पर २७।२९।४२ तो कही नही मिले, किन्तु सिह राशिके २३वें अशके कोष्ठकमे २७।२४।५९ सख्या मिली। इसी राशिके २४वें अशके कोष्ठकमे २७।३६।६ अकसख्या है, यह अकसख्या अभीष्ट योगकी अकसख्यासे अधिक है, अत २३ अश सिह राशिके ग्रहण करना चाहिए। अतएक लग्नका मान ४।२३ राश्यादि हुआ। कला, विकला निकालनेके लिए २३वें और २४वें कोष्ठकके अकोका एव पूर्वोक्त योगफल और २३वें अशके कोष्ठकके अशोका अन्तर कर लेना चाहिए। द्वितीय अन्तरकी सख्याको ६०से गुणा कर गुणनफलमे प्रथम

अन्तर-संख्याका भाग देनेपर कलाएँ आयेंगी, शेषको पुन ६० से गुणा कर उसी सख्याका भाग देनेसे विकला आयेगी। प्रस्तुत उदाहरणमे—

२७।३६। ६—२४ अशके को० मे-से
२७।२४।५९—२३ अशके को० को घटाया
११।७ इसे एकजातीय किया

११।७ × ६० =
६६० + ७ =
६६७

२७।२९।४२ योगफलमें-से
२७।२४।५९—२३ अंशके को० को घटाया
४।४३ इसे एकजातीय किया
४।४३ × ६०
= २४० + ४३ = २८३,
२८३ × ६० = १६९८० – ६६७ = २५।२७, अतएव लग्नमान ४।२३°।२५'।२७'' हुआ।

इसी प्रकार अन्य उदाहरणोका गणित किया जा सकता है। यद्यपि यह गणित-प्रक्रिया सरल है, लेकिन स्वदेशीय उदयमान-द्वारा साधित गणित क्रियाकी अपेक्षा स्थूल है।

प्राणपदसाधन और उसके द्वारा लग्नशुद्धि

यद्यपि कुछ विशेषज्ञोका मत है कि प्राणपद-द्वारा इष्टकालकी शुद्धि नही करनी चाहिए, क्योकि पराशर आदि प्राचीन ज्योतिर्विदोने प्राणपद-को एक अप्रकाशक ग्रहके रूपमे मानकर उसका द्वादश भावोमे फल बतलाया है। इसके द्वारा इष्टकालकी शुद्धि करनेकी जो प्रक्रिया प्रचलित है, वह आर्प नही है। इस सम्बन्धमें मेरा यह मत है कि यह प्रणाली आर्प हो या नही, किन्तु इष्टकालका शोधन इसके द्वारा उपयुक्त है। ज्योतिप-शास्त्रकी प्रत्यक्ष-गणित-क्रिया ही इसमें प्रमाण है।

१५ पल समयको प्राण कहते हैं, इस प्रकार एक घटीमें चार प्राण होते हैं। क्रिया करनेके लिए इष्टकालकी घटियोंको चारसे गुणा करना चाहिए और पलोंमें १५ का भाग देकर लब्धिको चतुर्गुणित[1] घटी सख्यामें जोड देना चाहिए। इस योगफलमें १२ का भाग देनेपर जो शेष बचे वही प्राणपदकी राशि होगी, शेष पलोंको २ से गुणा करनेपर अंश होगे।

प्राणपद साधनका दूसरा नियम यह है कि इष्टकालको पलात्मक बनाकर १५ का भाग देनेपर लब्ध राशि और शेषमें २ का गुणा करनेपर अंश होगे। पर यहाँ इतनी विशेषता और समझनी चाहिए कि राशिसख्या यदि १२ से अधिक हो तो उसमें १२ का भाग देकर लब्धको जोड शेषको राशिसख्या माननी चाहिए। यह प्राणपद साधनकी मध्यम विधि है। स्पष्ट करनेके लिए यदि सूर्य चर[2] राशिमें हो तो उसके राशि, अंशमें प्राणपदके राशि, अंशोंको जोड देनेसे स्पष्ट प्राणपद होता है और सूर्य स्थिर या द्विस्वभाव राशिमें हो तो उससे पचम या नवम राशियोंमें जो चरराशि हो उस राशि और सूर्यके अंशोंमें गणितागत मध्यम प्राणपदके राशि अंशोंको जोड देनेसे स्पष्ट प्राणपद होता है।

यदि गणितागत लग्नके अंश और प्राणपदके अंश बराबर हो तो लग्नको शुद्ध समझना चाहिए। अंशोंमें अतुल्यता होनेपर इष्टकालको सशोधित करना—कुछ पल घटाना या बढाना चाहिए लेकिन यह सशोधन भी इस प्रकारका हो जिससे लग्नांशोंमें न्यूनता न आये।

उदाहरण—इष्टकाल २३ घटी २२ पल है और सूर्य ०।१० है २३।२२—इष्टकालके पल बनाये—

---

१ घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्याप्तैश्च पलैर्युता। दिनकरेणापहृतं शेष प्राणपद स्मृतम्॥ शेषात्पलान्ताद् द्विगुणीविधाय राश्यशसूर्यर्क्षनियोजिताय। तत्रापि तद्राशिचरान् क्रमेण लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात्॥

२ चर—मेष, कर्क, तुला, मकर, स्थिर—वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ और द्विस्वभाव—मिथुन, कन्या, धन, मीन।

१३८० + २२ = १४०२ पलात्मक इष्टकाल

१४०२ − १५ = ९३ लब्धि ७ शेष। शेपको २ से गुणा किया तो ७ × २ = १४ हुआ। ९३ ÷ १२ = ७ लब्धि ९ शेप आया। यहाँ लब्धिका त्याग कर दिया तो गणितागत मध्यम प्राणपद ९ राशि १४ अश हुआ।

सूर्य मेप राशिके १० अंशपर है। मेप राशि चर है, अत सूर्यके राशि अशोमे ही आगत प्राणपदको जोडा।

०।१० सूर्यके राशि अशमे ९।१४ प्राणपदको जोडा तो =

९।२४ स्पष्ट प्राणपद हुआ।

पहले इसी इष्टकालका लग्नाश २३ आया है और प्राणपदका अंश २४ है। ये दोनो अशात्मक मान मिलते नही है अत इष्टकालको कुछ कम या अधिक करना चाहिए जिससे लग्नाश मिल जाये। प्राणपदाश संख्यामे १ अश अधिक है, इसलिए इष्टकालको कुछ कम करना होगा। यदि इष्टकालमें ½ पल कम कर दिया जाये तो प्राणपदाश लग्नाशसे मिल जायेगा, क्योकि १ पलमे २ अश होते है, अत इष्टकाल २३ घटी २१½ मानना होगा। इस इष्टकालपर-से पूर्वोक्त प्रक्रियाके अनुसार लग्नके राश्यादि निकाल लेने चाहिए। प्राणपदसे लग्न निश्चय करनेमें एक रहस्यपूर्ण बात यह है कि प्राणपदकी राशि या उससे ५वी, ७वी और ९वी लग्नकी राशि आती हो अथवा प्राणपदकी ७वी राशिसे ५वी और ९वी लग्नकी राशि हो तो मनुष्यका जन्म समझना चाहिए। यदि प्राणपदकी राशिसे २री, ६ठी और १०वी राशि लग्न-राशि हो तो पशुका जन्म, प्राणपदकी राशिसे ३री, ७वी और ११वी राशि लग्न-राशि हो तो पक्षीका जन्म एव प्राणपदकी राशिसे ४ थी, ८वी और १२वी राशि लग्न-राशि हो तो कीट, सर्पादिका जन्म समझना चाहिए।

लडके या लडकीकी जन्मकुण्डली वनाते समय प्राणपदसे मनुष्य-जन्म सिद्ध न हो तो उस इष्टकालको कुछ घटा-वढाकर शुद्ध करना चाहिए।

गुलिकसाधन

अपने स्थानके दिनमानमे ८का भाग देकर प्रत्येक भागमे एक-एक अधिपतिकी कल्पना की जाती है और जिस भागका अधिपति शनि होता है—शनिके खण्डको, गुलिक कहते हैं। प्रतिदिनके खण्डोंके अधिपतियोकी गणना उस दिनके वाराधिपतिसे क्रमश की जाती है। जैसे मगलवारके दिन गुलिक बनाना हो तो १ले खण्डका अधिपति मगल, २रेका बुध, ३रेका बृहस्पति, ४थेका शुक्र, ५वेंका शनि, ६ठेका रवि और ७वेंका चन्द्रमा होगा। ८वें खण्डका कोई अधिपति नही होता है। इस दिन शनिका ५वाँ खण्ड है, अत ५वाँ गुलिक कहलायेगा।

रातमें जन्म होनेपर रात्रिमानके समान ८ भागोमे-से प्रथम भाग-खण्डका वाराधिपतिसे पचमग्रह अधिपति होता है। इसी प्रकार क्रमश आगे गणना करनेपर जिस खण्डका अधिपति शनि होगा, वही गुलिक खण्ड कहलायेगा। जैसे—सोमवारकी रात्रिको गुलिक जाननेके लिए रात्रिमानमें ८का भाग देकर पृथक्-पृथक् खण्ड निकाल लिये। यहाँ प्रथम खण्डका स्वामी चन्द्रमासे पचम ग्रह शुक्र होगा। द्वितीय खण्डका शनि, तृतीयका रवि, चतुर्थ-का चन्द्रमा, पचमका, मगल, षष्ठका बुध और सप्तमका बृहस्पति होगा। यहाँ सुविधाके लिए नीचे गुलिक-चक्र दिया जाता है जिससे प्रतिदिनके दिवाखण्ड और रात्रिखण्डके गुलिकका बिना गणना किये ज्ञान हो सके।

गुलिक-ज्ञापक चक्र

रवि	सोम	मगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	वार
७	६	५	४	३	२	१	दिनके इष्टकालमें गुलिक खण्ड
३	२	१	७	६	५	४	रात्रिके इष्टकालमें गुलिक खण्ड

गुलिक इष्ट बनानेकी प्रक्रिया यह है कि जिस दिनका गुलिक बनाना हो उस दिन दिनका जन्म होनेपर दिनमानमे और रातका जन्म होनेपर रात्रिमानमें ८का भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसमें गुलिक-ज्ञापक चक्रमे लिखित उस दिनके अकसे गुणा कर देनेपर इष्टकाल हो जाता है। इस गुलिक इष्टकालपर-से लग्न-साधनकी प्रक्रियाके अनुसार लग्न बनाना चाहिए, यही गणितागत गुलिक लग्न होगा।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ल द्वितीया सोमवारको दिनके २-४५ मिनिटपर जन्म हुआ है। इस दिनका गुलिक इष्टकाल—

सोमवारके दिनमान ३२ घटी ६ पलमें ८का भाग दिया—३२।६ – ८ = ४।०।४५ एक खण्डका मान हुआ। इसे गुलिक-ज्ञापक चक्रमें अकित सोमवारको अंक सख्या ६ से गुणा किया—

४।०।४५ × ६ = २४।४।३० गुलिक इष्टकाल हुआ। लग्न बनानेके लिए सोमवारके सूर्यके राश्यश (०।१०) लग्न-सारणीमे देखें तो ४।७।४२ फल मिला। २४।४।३० इष्टकालमे

४।७।४२ प्राप्त फलको जोडा

२८।१२।१२ इसे पुन लग्न-सारणीमे देखा तो ४।२७ लग्न आया। अर्थात् सिंह राशिके २७वें अशपर गुलिक लग्न है।

गुलिक लग्नका उपयोग

गुलिक लग्नसे पूर्व साधित जन्म-लग्न राशि १ली, ३री, ५वी, ७वी, ९वी और ११वी हो तो मनुष्यका जन्म समझना चाहिए तथा गणितागत लग्नको शुद्ध मानना चाहिए।

लग्नके शुद्धाशुद्ध अवगत करनेके अन्य उपाय

(१) इष्टकालमें २ का भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसमे सूर्य जिस नक्षत्रमे हो उस नक्षत्रकी सख्याको मिला दे। इस योगमे २७ का भाग

देनेसे जो शेष रहे उसी सख्यक नक्षत्रकी राशिमे लग्न होता है।

उदाहरण—२३।२२ इष्टकाल है और सूर्य अश्विनी नक्षत्रमे है।

२३।२२ – २ = ११।४१, यहाँ अश्विनी नक्षत्रसे सूर्य नक्षत्र तक गणना की तो १ सख्या आयी, इसे फलमे जोडा—११।४१ + १।० = १२।४१ – २७ = ० लब्ध, १२।४१ शेष रहा। अश्विनीसे १२वी सख्या तक गणना करनेपर उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र आया। उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रकी सिंह राशि है, यही लग्न राशि १ले भी आयी है, अत यह लग्न शुद्ध है।

(२) इष्टकालको ६से गुणा कर गुणनफलमे जन्मदिनके सूर्यके अश जोड दे। इस योगफलमें ३० का भाग देकर लब्धि ग्रहण कर लेनी चाहिए तथा १५ से अधिक शेष रहनेपर लब्धिमें एक और जोड देना चाहिए। यदि ३० से भाग न जाये तो लब्धि एक मान लेनी चाहिए। सूर्य राशिकी अगली राशिसे भागफलके अकोको गिन लेनेसे जो राशि आवे वही लग्नकी राशि होगी। यदि यह गणितागत लग्नसे मिल जाये तो लग्नको शुद्ध समझना चाहिए।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२ × ६ = १४०।१२

१४०।१२ इसमे
 १०।० सूर्यके अश जोडे

१५०।१२ – ३० = ५ लब्धि, ०।१२ शेष।

सूर्य मेष राशिपर है, उससे अगली राशि वृष है, अत वृषसे पाँच अक आगे गिननेपर कन्या राशि आती है। प्रस्तुत उदाहरणका लग्न सिंह आया है, इसका निर्णय पहले दो-तीन नियमोंसे भी किया गया है, अत यहापर एक घटाकर लग्न निकालना चाहिए। ज्योतिषके गणितमे कभी-कभी एक घटाकर या एक जोडकर भी क्रिया की जाती है।

(३) यदि दिनमें दिनमानके अर्द्ध भागसे पहले जन्म हो तो जन्म-कालीन रविगत नक्षत्रमे ७वें नक्षत्रकी राशि, दिनके अवशेष भागमें जन्म

हो तो रविगत नक्षत्रसे १२वें नक्षत्रकी राशि एव रात्रिके पूर्वार्द्धमे जन्म होनेसे १७वें नक्षत्रकी राशि और शेप रात्रिमें जन्म होनेसे २४वें नक्षत्रकी राशि लग्नराशि होती है।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२ घट्यात्मक है। दिनमान ३२।६ है, इसका आधा १६।३ हुआ, प्रस्तुत इष्टकाल दिनके पूर्वार्द्धसे आगेका है, अतः रवि-नक्षत्रसे १२वें नक्षत्रकी राशि लग्नकी राशि होनी चाहिए। रवि नक्षत्र यहाँ अश्विनी है, अश्विनीसे १२ नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी आता है, इस नक्षत्र-की राशि सिंह है, यही लग्नकी राशि हुई।

(४) चन्द्रमासे पंचम या नवम स्थानमे लग्न-राशिका होना सम्भव है। चन्द्रमाके नवमाशके सप्तम स्थानसे नवम और पचम स्थानमे लग्न राशिका होना सम्भव है। चन्द्रमा जिस स्थानमे हो उस स्थानके स्वामीसे विपम स्थानोमे लग्नका होना सम्भव है। लग्नमे भी चन्द्रमा रह सकता है।

नवग्रह स्पष्ट करनेकी विधि

जिस इष्टकालकी जन्मपत्री बनानी हो, उसके ग्रह स्पष्ट अवश्य कर लेने चाहिए। क्योकि ग्रहोके स्पष्ट मानके ज्ञान विना अन्य फलादेश ठीक नही घट सकता है। यहाँ ग्रह स्पष्टीकरणका तात्पर्य ग्रहोंके राश्यादि मानसे है। दूसरी वात यह है कि कुण्डलीके द्वादशभावोमें ग्रहोका स्थापन ग्रहमान—राश्यादि ग्रह ज्ञात हो जानेपर ही सम्यक् हो सकता है। अतएव प्रत्येक जन्मकुण्डलीमे जन्माग चक्रके पूर्व ग्रहस्पष्ट चक्र लिखना अनिवार्य है। चन्द्रमा-को छोड शेप आठ ग्रहोके स्पष्ट करनेकी विधि एक-सी है।

पचागोमे ग्रहस्पष्टकी पक्ति लिखी रहती[1] है। लेकिन किसीमे

---

[1] प्रस्तारस्तु यदाग्रे स्यादिष्ट सशोधयेदृणम्।
इष्टकालो यदाग्रे स्यात्प्रस्तार सशोधयेद्धनम्॥

पचागमें आठ-आठ दिनके ग्रह स्पष्ट किये लिखे रहते हैं, इसे पक्ति या प्रस्तार कहते हैं। प्रस्तार यदि इष्टकालसे आगे हो तो प्रस्तारके वार-घटी-पलमें इष्ट समयके वार-घटी पल घटा दें। जो शेष रहे वह वारादि ऋणचालन होता है और जो इष्टकाल

फलको जोडने और धनचालनमें आगत अशादि फलको घटानेसे स्पष्टमान होता है।

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला २ सोमवारको २३।२२ इष्टकालके ग्रह स्पष्ट करने है। पचागमें वैशाख शुक्ला पचमी शुक्रवारके ५।५१ इष्टकालकी ग्रहस्पष्ट पक्ति लिखी है। यहाँ इष्टकाल सोमवारका है और ग्रहपक्ति शुक्रवारकी है, अत इष्टकालसे ग्रहपक्ति आगेकी हुई तथा ग्रह पक्तिमे-से इष्टकालको घटाना है, इसलिए यहाँ ऋणसस्कार हुआ—

६।५।५१ पक्तिके वारादि, २।२३।२२ इष्टकालके वारादि।

ग्रहपंक्ति वै० शु० ५ शुक्रवार इष्टकाल ५।५१

सूर्य	मगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
०	२	०	३	११	२	३	९	राशि
१३	२३	२२	२४	२७	०	८	८	अश
४३	०	१६	१६	२०	२३	५४	५४	कला
२२	३३	५	४४	१०	४६	५०	५०	विकला
५८	३४	१७	३	७४	५	३	३	गति कला
१२	२८	३९	४	१२	४८	११	११	गति वि०
		व						

६।५।५१ पक्तिके वारादिमे-से २।२३।२२ इष्टकालके वारादिको घटाया तो ३।४२।२९ ऋण चालन आया।

सूर्यसाधन

चालन	सूर्यगति
	५८।१२
३	१७४।३६—तीनके अंकका गुणनफल
४२	२४३६।५०४ ब्यालीसके अंकका गुणनफल
२९	१६८२।३४८ उन्तीसके अंकका गुणनफल

१७४।२४७२।२१८६।३४८ – ६० (६० से भाग देकर लब्धि ५, शेष ४८ आगेकी राशियोंमें जोड़ा)

१७४।२४७२।२१९१ – ६०
लब्ध ३६, शेष ३१

१७४।२५०८ – ६०।३१।४८
लब्ध ४१, शेष ४८

२१५ – ६०।४८।३१।४८
३'।३५'।४८''।३१'''।४८''''

प्रक्रिया यह है कि गुणा करते समय एक-एक अंक दाहिनी ओर बढ़ा कर रखते जायेंगे और सब कलादिको जोड़ देंगे। फिर सब अंकोंमें ६०का भाग देते हुए लब्धिको बायीं ओरकी संख्यामें जोड़नेसे अंशादि फल होगा।

०।१३।४३।२२ पठितके सूर्यमें-से
३।३५।४७ आगतफलको घटाया
०।१०।७।३४ स्पष्ट सूर्य हुआ

{ ऋण चालन होनेसे फलको घटाया है।

मंगलसाधन

चालन

	३४।२८ मंगल गति
३	१०२।८४
४२	१४२८।११७६
२९	९८६।८१२
	१०२।१५१२।२१६२।८१२ – ६०
	लब्ध १३ शेष ३२
	१०२।१५१२।११७५ – ६२।३२
	लब्ध ३६ शेष १५

१०२।१५४८ – ६०।१५।३२

लब्ध २५ ४८ शेष

१२७ – ६०।४८।१५।३२

२°।७'।४८"।१५"'।३२"" यहाँ केवल विकला तक हो फल इष्ट है।

२।२३।०।३२ पंक्तिके मगलमें-से

२।७।४८ आगत फलको घटाया

२।२१।५२।४४ स्पष्ट मगल

बुधसाधन

	१७।३९ बुध गति
३	५१।११७
४२	७१४।१६३८
२९	४९३।११३१
	५१।८३१।२१३१।११३१

(पूर्ववत् ६०का भाग देनेके पश्चात् अशादिका फल निकाला)

१°।५'।२६"।४८'''।५१'''' बुध फल आया। यह बुध वक्री है, अत ऋणचालन होनेसे इन फलको पक्तिके बुधमें जोड़ा —

०।२२।१६। ५
    १। ५।२६
०।२३।२१।३१ स्पष्ट बुध हुआ

इसी तरह चन्द्रमाके सिवा अन्य सभी ग्रहोंका स्पष्टीकरण किया जाता है।

चन्द्रस्पष्टकी विधि

भयातकी घटियोंको ६० से गुणाकर पल जोडनेसे पलात्मक भयात और भभोगकी घटियोंको ६०से गुणाकर पल जोड देनेसे पलात्मक भभोग होता है। पलात्मक भयातको ६०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग दें, शेपको पुन ६०से गुणाकर उसी पलात्मक भभोगका भाग दें, ३री वार शेपको फिर ६०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग दें, तो लब्ध वर्तमान नक्षत्रके भुक्त घटी, पल होंगे। अश्विनी नक्षत्रसे गत नक्षत्रतक गिनकर ६०से गुणाकर भुक्त घटी, पलादिमे जोड दे और इस योगफलको २ से गुणाकर गुणनफलमें ९ से भाग देनेपर लब्ध अश, कला, विकला फल होगा। यदि अशसख्या ३०से अधिक आवे तो ३०का भाग देकर राशि बना लेना चाहिए।[1]

---

[1] गता भघटिका खतर्कगुणिता भभोगोद्धृता,
युता च भगतेन षष्टि ६०गुणितेन द्विघ्नीकृता।
नवाप्तलवपूर्वके शशिभवेच्च तत्पूर्वकै-
र्नभोऽम्बरवियद्गजाब्धि ४८००० युग्मवेज्जवा कीर्त्तिता॥

भयात घटी पलको साठसे गुणा करके भभोगके पलोंसे भाग देनेपर जो अंक मिलें, उन घटी-पल-विपलात्मक तीन अकोंको स्पष्ट भयात जानना चाहिए। अनन्तर इन

उदाहरण—भयात १६।३९ और भभोग ५८।४४ है।

१६।३९
६०
९६० + ३९ = ९९९ पलात्मक भयात

५८।४४
६०
३४८० + ४४ = ३५२४ पलात्मक भभोग

९९९ × ६० = ५९९४० − ३५२४ = १७।०।३२ अर्थात् १७ घटी ० पल ३२ विपल लब्धि हुई। यहाँ जन्मनक्षत्र कृत्तिका है, अत उसके पहलेका नक्षत्र भरणी हुआ। अश्विनीसे गणना करनेपर भरणी तक दो सख्या हुई अत २ × ६० = १२०

(१२०) + (१७।०।३२) = १३७।०।३२ इसे २से गुणा किया—

१३७।०३२ × २ = २७४।१।४

२७४।१।४ ÷ ९ = ३०।२६।४७ अशात्मक लब्धि हुई अत अशोमें ३०का भाग दिया तो १।०।२६।४७ राश्यादि चन्द्र स्पष्ट हुआ।

चन्द्रगतिसाधन

२८८००००मे पलात्मक भभोगसे भाग देनेपर लब्ध चन्द्रमाकी गतिकी कलाएँ आयेंगी, शेपमे ६०का गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेपर लब्ध गतिकी विकलाएँ आवेंगी।

उदाहरण—पलात्मक भभोग ३५२४ है।

अकोंको साठसे गुणे हुए अश्विनी आदि गतनक्षत्र सख्यामें जोड़कर दूना करे। पश्चात् नौ से भाग देकर अश, कला और विकला रूप फल आता है। अशों में तीसका भाग देनेसे राशि आती है। इस प्रकार राश्यशादि रूप चन्द्रमा होता है।

२८८०००० – ३५२४ = ८१७ लब्धि, शेष ८९२ × ६० = ५३५२० – ३५२४ = १५ लब्धि, शे० ५६०, अतएव चन्द्रस्पष्ट गति ८१७।१५ हुई।

चन्द्रसारणी-द्वारा चन्द्रस्पष्ट करनेकी विधि

जिस नक्षत्रका जन्म हो उसके पहलेके नक्षत्रके नीचेकी राश्यादि अकसख्या 'सत्ताईस नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्रसारणी'में देखकर लिख लेना चाहिए। पश्चात् भयातकी घटियोंकी राश्यादि अकसख्याको 'भयात गतघटीपर चन्द्रसारणी'मे देखकर लिख लेना चाहिए। अनन्तर आगेवाले कोष्ठकके साथ अन्तर कर अनुपातसे पलोका फल निकालना चाहिए अथवा अन्तरको पलोंसे गुणा कर ६०का भाग देनेसे अंशादि लब्ध उसे पहलेवाले फलमें जोड देनेपर भयातका अशादि फल आ जायेगा, पुन नक्षत्र और इस भयातके फलको जोड देनेसे चन्द्र स्पष्ट हो जायेगा। यहाँ स्मरण रखनेकी एक बात यह है कि १३ अश २० कलाका विभाजन भभोगमें करना चाहिए। कारण भभोग ६० घटीसे प्राय सर्वदा ही ज्यादा या कम होता है अत भयातके पलोको १३ अश २० कलासे गुणा कर भभोगके पलोका भाग देकर जो अशादि फल आये उसे नक्षत्रफलमे जोडनेसे स्पष्ट चन्द्रमा होता है।

उदाहरण—भयात १६।३९ कृत्तिका, भभोग ५८।४४। यहाँ जन्म-नक्षत्रके पहलेका नक्षत्र भरणी है। अत भरणीके नीचेकी अकसख्या ०।२६।४०।० है। पलात्मक भयात ९९९ और पलात्मक भभोग ३५२४ है। अतएव १३ अश २० कला $= १३\frac{२०}{६०} = १३ + \frac{१}{३} = \frac{४०}{३} \times \frac{९९९}{३५२४} = \frac{४१३२०}{८८१} = \frac{४०}{३} \times \frac{१११}{३५२४} = \frac{३३३०}{८८१} = ३\frac{६८७}{८८१} \times \frac{६०}{१} = ४७\frac{८१३}{८८१} \times \frac{६०}{१} = \frac{७८९०}{८८१}$ = ०, ७८०—०, ३।४७।० अंशादि।

०।२६।४०।० भरणीकी अकसंख्या

०। ३।४७।० भयातका फल

१। ०।२७।० स्पष्ट चन्द्रमा

नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्र सारणी

अ०	भ०	कृ०	रो०	मृ०	आ०	पु०	पु०	श्ले०	म०	पू०	उ०	ह०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
०	०	१	१	२	२	३	३	४	४	४	५	५
१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०	१३	२६	१०	२३
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्ये०	मू०	पू०	उ०	श्र०	ध०	श०	पू०	उ०	रे०
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७
६	६	७	७	८	८	८	९	९	१०	१०	११	११	१२
६	२०	३	१६	०	१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०
४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

भयात गतघटीपर चन्द्र सारणी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	१	१	१	१	२	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६
१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०

३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
६	७	७	७	७	८	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३
५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०

सर्वर्क्षपर गति बोधक स्पष्ट सारणी

५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७
८८८	८७२	८५७	८४२	८२७	८१३	८००	७८६	७७४	७६१	७५०	७३८	७२७	७१६
४८	४०	८	६	३४	३३	०	५४	१२	५७	०	३०	१८	२८

स्पष्ट ग्रहचक्र

सूर्य	चन्द्र	मगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	
०	१	२	०	३	११	२	३	९	रा०
१०	०	२१	२३	२४	२३	७	९	९	अं०
७	३४	५२	२१	७	२०	७	५	५	क०
३४	३४	४४	३१	३२	१०	४५	१५	१५	वि०

सारणी-द्वारा चन्द्रगति स्पष्ट करनेका नियम भभोगकी घटियोंके नीचे-को अक-सख्या देखकर लिख लेनी चाहिए। पश्चात् आनेवाले कोष्ठकके साथ अन्तर कर पलोसे गुणाकर ६०का भाग दें। जो लब्ध आये उसे पूर्वोक्त फलमे जोड या घटा देनेसे चन्द्रकी स्पष्टगति आ जाती है।

उदाहरण—भभोग ५८।४४ है। 'सर्वर्क्षपर गतिका स्पष्ट' नामक चक्रमे ५८के नीचे अकसख्या ८२७।३४ है। आगेकी कोष्ठक-सख्या ८१३।३३ है, दोनो सख्याओका अन्तर किया—

८२७।३४
८१३।३३
―――――
१४। १ इसे ४४ से गुणा किया

१४। १ को एकजातीय बनाया तो $\frac{१४।१}{६०}$

८४० + १ = ८४१

८४१ × ४४ = ३७००४ – ६० = ६१६ विकला

६१६ – ६० = १०।१६ इसे पहलेवाले फलमे-से घटाया अत

८२७।३४
१०।१६
―――――
८१७।१८ चन्द्रकी गति

अन्य ग्रहोकी गति पचागमें लिखी रहती है अत उसीको जन्मपत्रीमे लिख देते है। जिन पचागोमें दैनिक ग्रह स्पष्ट रहते हैं उनमें दो दिनके

ग्रहोंका अन्तर कर निकाल लेना चाहिए। परन्तु चन्द्रमाकी स्पष्ट गति उपर्युक्त विधिसे ही निकालनी चाहिए।

जन्मपत्रीमे नवग्रह स्पष्ट चक्र लिखनेके पश्चात् जो लग्न आया हो उसीको पहले रखकर द्वादश कोठोंमें अक स्थापित कर दें। पश्चात् जो ग्रह जिस राशिपर हो उसे वहाँ स्थापित कर देना चाहिए, उदाहरण—यहाँ लग्न ४।२३।२५।२७ आया है, अत लग्नस्थानमें ५ का अक रखा जायेगा भारतीय पद्धतिके अनुसार जन्मपत्री लिखनेकी प्रक्रिया निम्न प्रकार है।

आदित्याद्या ग्रहा· सर्वे नक्षत्राणि च राशय· ।
सर्वान् कामान् प्रयच्छन्तु यस्यैपा जन्मपत्रिका ॥१॥
स्वस्तिश्रीसौख्यधात्री सुतजयजननी तुष्टिपुष्टिप्रदात्री
माङ्गल्योत्साहकर्त्री गतभवसदसत्कर्मणा व्यञ्जयित्री।
नानासम्पद्विधात्री वनकुलयशसामायुपा वर्द्धयित्री
दुष्टापद्विघ्नहर्त्री गुणगणवसतिर्लिख्यते जन्मपत्री ॥२॥

श्रीमान् नृपति विक्रम संवत् २००१, शक सवत् १८६६, वैशाख मास, कृष्णपक्ष सोमवारको द्वितीया तिथिमे, जिसका घट्यादि मान विश्वपचागके अनुसार आरामें देशान्तर सस्कृत ४५ घटी ९ पल, भरणी नक्षत्रका मान ६ घटी ४३ पल तदुपरि कृत्तिका नक्षत्र, आयुष्मान् योगका मान १७ घटी ८ पल, बालव नाम करणका मान घट्यादि १६।४७, जन्मसमयका सस्कृत इष्टकाल २३।२२।२३ है। इस दिन दिनमान घट्यादि ३२।६ रात्रिमान २७।५४ उभयमान ६०।० मे आरा नगरनिवासी श्रीमान् चित्रगुप्तवशमें श्रेष्ठ बाबू हनुमानदासके पुत्र बाबू हरिप्रसादके चिरजीवि पुत्र हरिमोहन सेनकी वैदिक विधिपूर्वक परिणीता भार्या मोहनदेवीकी दक्षिण कुक्षिसे पुत्र उत्पन्न हुआ। होराशास्त्रानुसार भयात १६।३९ भभोग ५८।४४ है, अत-एव कृत्तिका नक्षत्रके द्वितीय चरणमें जन्म हुआ और इसका राशि नाम 'ई' अक्षरपर ईश्वरदेव रखा गया। यह पुत्र गुरुजन और पुण्यके प्रसादसे दीर्घ-जीवी हो।

संस्कृत भाषामे लिखनेकी विधि

अथ श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कराज्यात् २००१ सवत्सरे १८६६ शाके वसन्तर्तौ शुभे वैशाखमासे कृष्णपक्षे चन्द्रवासरे द्वितीयाया तिथौ घटचादय. ४५।९ भरणीनक्षत्रे घटचादय ६।४३ तदुपरि कृत्तिकानक्षत्रे, आयुष्मान्-योगे घटचादय १७।८ वालवकरणे घटचादय १६।४७ अत्र सूर्योदयादिष्ट-काल घटचादय २३।२२।२३ मेपराशिस्थिते सूर्ये वृषराशिस्थिते चन्द्रे एव पुण्यतिथौ पञ्चाङ्गशुद्धौ शुभग्रहनिरीक्षितकल्याणवत्या वेलाया सिंह-लग्नोदये दिनप्रमाण वटचादय ३२।६ रात्रिप्रमाण घटचादय २७।५४ उभयप्रमाण ६०।० आरानगरे चित्रगुप्तवशावतसस्य श्रीमत हनुमान-दासस्य पुत्र हरिप्रसादस्तस्य पुत्र बाबू हरिमोहनसेनस्य गृहे सुशीलवती-भार्याया दक्षिणकुक्षौ द्वितीयपुत्रमजीजनत्। अत्रावकहोडाचक्रानुसारेण भयातम् १६।३९ भभोग ५८।४४ तेन कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणे जायमानत्वात् ईकाराक्षरे 'ईश्वरदेव' इति राशिनाम प्रतिष्ठितम्। अय च देवगुरुप्रसादा-द्दीर्घायुर्भूयात्।

इसके पश्चात् जो पहले नवग्रहस्पष्ट चक्र लिखा गया है, उसे लिखना चाहिए, पश्चात् जन्मकुण्डली चक्रको अकित करना। पहले उदाहरणानुसार जन्मकुण्डली चक्र निम्न प्रकार हुआ—

जन्मकुण्डली चक्र चन्द्रकुण्डली चक्र
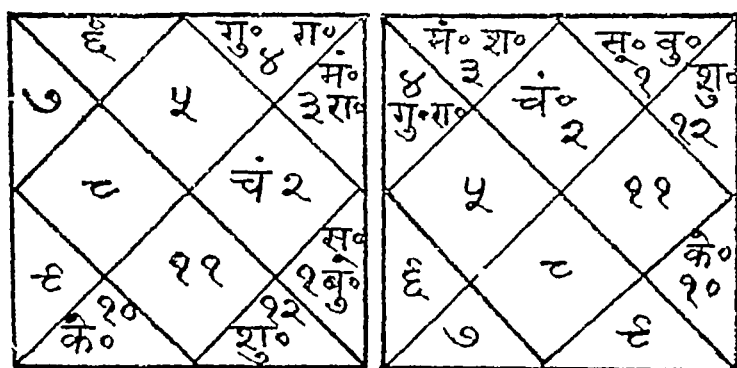
द्वादश भाव स्पष्ट करनेकी विधि[1]

भाव स्पष्ट करनेके लिए प्रथम दशम भावका साधन किया जाता है। इस भावका गणित करनेके लिए नतकाल जाननेकी आवश्यकता होती है, क्योंकि दशम भावकी साधनिकाके लिए नतकाल ही इष्टकाल होता है। नतकाल ज्ञात करनेके निम्न चार प्रकार हैं—

१—दिनार्धसे पहलेका इष्टकाल हो तो इष्टकालको दिनार्धमें-से घटानेसे पूर्वनत होता है।

२—दिनार्धके बादका इष्टकाल हो तो दिनमानमें-से इष्टकाल घटाकर जो अवशेष बचे, उसको दिनार्धमें घटानेसे पश्चिमनत होता है।

३—रात्रि अर्धसे पहलेका इष्टकाल हो तो दिनमानको इष्टकालमें घटानेसे जो शेष आवे उसमें दिनार्ध जोड़नेसे पश्चिमनत होता है।

पूर्वं नतं स्याद्दिनरात्रिखण्डं दिवोनिशोरिष्टघटीविहीनम्।
दिवानिशोरिष्टघटीषु शुद्धं द्युरात्रिखण्डं त्वपरं नतं स्यात्॥
तत्काले सायनार्कस्य भुक्तभोग्यांशसंगुणात्।
स्वोदयात्खाग्नि ३० लब्धं यद्भुक्तं भोग्यं रवेस्त्यजेत्।
इष्टनाडीपलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयात्।
शेषं खत्र्या ३० हतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम्॥
अशुद्धशुद्धभे हीनं युक्तन्तुर्व्ययनांशकम्।
एवं लङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात्॥
पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत्।
सषड्भलग्नखे जायातुर्या लग्नौ न तुर्यतः॥
अग्रे त्रयः षडेवं ते मार्द्धयुक्ताः परेऽपि षट्।
खेटे भावसमे पूर्णं फलं सन्धिसमे तु खम्॥
षष्ठांशयुक्तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात्।
त्रयः ससन्धयो भावाः षष्ठांशो नैकयुक्सुखात्॥
—ताजिकनीलकण्ठी, बनारस सं० १९९६, संज्ञातन्त्र श्लो० १ श्लो० २०—२६

४—रात्रि अर्धके बाद इष्टकाल हो तो ६० घटीमे-से इष्टकालको घटानेसे जो शेप आवे उसमे दिनार्ध जोडनेसे पूर्वनत होता है।

यदि पश्चिमनत हो तो भोग्य प्रकारसे और पूर्वनत हो तो भुक्त प्रकारसे लकोदयमान-द्वारा लग्न साधनके समान दशम भावका साधन करना चाहिए।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२, दिनमान ३२।६ रात्रिमान २७।५४ है। दिनमान ३२।६ का आधा किया तो दिनार्ध = ३२।६ – २ = १६।३; इस उदाहरणमें इष्टकाल दिनार्धके वादका है अत नतकाल साधनके द्वितीय नियमानुसार—

३२।६ दिनमानसे
२३।२२ इष्टकालको घटाया

८।४४ शेप, इसे दिनार्धमें-से घटाया तो (१६।३)–(८।४४) = ७।१९ पश्चिमनत हुआ।

उदाहरण २—इष्टकाल ६।४५, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४ दिनार्ध १६।३ है।

इस उदाहरणमें इष्टकाल दिनार्धसे पहलेका है, अत १६।३ दिनार्ध-में-से ६।४५ इष्टकालको घटाया तो ९।१८ पूर्वनत हुआ।

उदाहरण ३—इष्टकाल ४२।४८, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४, दिनार्ध १६।३ रात्र्यर्ध १३।५७ है।

इस उदाहरणमें पहले यह विचार करना होगा कि यह इष्टकाल रातका है या दिनका ? प्रस्तुत उदाहरणमें दिनमान ३२।६ है और इष्ट-काल ४२।४८ है, अत दिनमानसे इष्टकाल अधिक होनेके कारण रातका इष्टकाल कहलायेगा। अब रातमे रात्र्यर्धसे पहलेका या रात्र्यर्धके वादका ? इस निश्चयके लिए दिनमानमे रात्र्यर्ध जोडकर इष्टकालसे मिलान करना चाहिए। अत ३२।६ दिनमानमे रात्र्यर्ध जोडा तो—(३२।६)

+ (१३।५७) = ४६।३ रात्र्यर्व तकका मिश्रकाल। प्रस्तुत उदाहरणका इष्टकाल रात्र्यर्वके पहलेका है, अत ४२।८८ इष्टमें-से

३२। ६ दिनमान घटाया तो
१०।४२ शेप

१६। ३ दिनार्धमें
१०।४२ शेपको जोडा
२६।४५ पश्चिमनत

इस उदाहरण ४—इष्टकाल ५२।४५, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४, दिनार्व १६।३ अर्धरात्रि तकका मिश्रकाल ४६।३ है।

उदाहरणमें अर्धरात्रिके वाद इष्टकाल है अतः नतकाल सावनके चतुर्थ नियमानुसार ६०। ०में

५२।४५ इष्ट घटाया
७।१५ अवशेप

७।१५ अवशेपमें
१६। ३ दिनार्व जोडा
२३।१८ पूर्वनत हुआ।

दशम साधनका उदाहरण

सूर्य ०।१०। ७।३४ (प्रथम उदाहरणमे पश्चिमनत होनेसे भोग्य अयनाश ०।२३।४६। ० प्रकारसे सावन करना होगा)

१। ३।३३।३४ सायन सूर्य।

भोग्याश निकालनेके लिए सूर्यके इन भुक्ताशोंको ३० अशमें-से घटाया—

३०। ०। ०
३।५३।३४
२४। ६।२६

२४।६।२६ भोग्याशको लंकोदय राशिमानसे गुणा करना है। लकोदयका प्रमाण निम्न प्रकार है—

मेष	=	२७८	=	मीन
वृष	=	२९९	=	कुम्भ
मिथुन	=	३२३	=	मकर
कर्क	=	३२३	=	धनु
सिंह	=	२९९	=	वृश्चिक
कन्या	=	२७८	=	तुला

प्रस्तुत उदाहरणमे सूर्य वृष राशिका है, अत वृषके राशिमानसे भोग्याशोको गुणा किया—

२४।७।२६ × २९९ = २४०।१६।३।३४ { इस गुणनफलके दो अकोमे ६० का भाग और तीसरेमे ३० का भाग दिया गया है।

नतकाल ७।१९ के पल बनाये, ७ × ६० + १९ = ४३९ नतपल

४३९ नतकालके पलोमे-से

२४०।१६ भोग्य पलादिको घटाया

१९८।४४ यहाँ मिथुन राशिके पल नही घटते है, अत मिथुन राशि ही अशुद्ध कहलायेगी—

१९८।४४ × ३० = ५९६२।० इसमे अशुद्ध राशिमानका भाग दें—

५९६२।० – ३२३ = १८।२९।२१ अशादि हुआ। उदाहरणमे वृषराशिका मान घट गया था, अत इस अशादिमे दो राशि और जोडी—

१८।२९।२१
२। ०। ०। ०

२।१८।२९।२१ सायन दशम

२।१८।२९।२१ मायन दशममें-से
०।२३।४६। ० अयनांश घटाया

१।२४।४३।२१ दशम स्पष्ट

भुक्तांश साधन-द्वारा दशमका उदाहरण

मायन सूर्य १।३।५३।३४, पूर्वनत १७।९ है। मायन सूर्य वृष राशिका होनेसे भुक्तांशोंको वृषके लंकोदय मानमे गुणा किया—भुक्तांश
३।५३।३४ × २९९ = ३८।२३।६।३६ भुक्त पल हुआ
१७।९ नतकालके पल बनाये, १७ × ६० + ९ = १०२९ नतपल

१०२९ नतकालके पलोंमें
२७८।० मेषका मान घटाया

७५१।०
२७८।० मीनका मान घटाया

४७३।०
२९९। ० कुम्भका मान घटाया

(भुक्तांशपर-से लग्न या दशमका साधन करते समय उल्टा राशिमान घटाया जाता है।)

१३५।३७ इसमें-से मकरका राशिमान नही घटा है, अत मकर अशुद्ध हुई।
१३५।३७ × ३० = ४०६८।३० इसमे अशुद्ध राशिमानका भाग दिया—
४०६८।३० ÷ ३२३ = १२।३५।३९ अशादि, इसमे शुद्ध राशियाँ जहाँतक घट सकी है, उस राशिपर्यन्त मख्याको इस पलमें जोडा—

१२।३५।३९
११। ०। ०। ०

११।१२।३५।३९ सायन दशममे-से
०।२३।४६। ० अयनांश घटाया

१०।१८।४९।३९ स्पष्ट दशम

दशम भाव साधन करनेके अन्य नियम

१—नतकालको इष्टकाल मानकर जिस दिनका दशम भाव साधन करना हो, उस दिनके सूर्यके राशि, अश पचागमे देखकर लिख लेने चाहिए। आगे दी गयी दशमसारणीमे राशिका कोष्ठक बायी ओर और अशका कोष्ठक ऊपरी भागमें है। सूर्यके जो राशि अश लिखे हैं उनका फल दशमसारणीमें—सूर्यकी राशिके सामने और अशके नीचे जो अक-सख्या मिले, उसे पश्चिमनत हो तो नतरूप इष्टकालमे जोड देनेसे और पूर्वनत हो तो सारणीके अकोमें घटा देनेसे जो अक आवें उनको पुन दशमसारणीमें देखें तो बायी ओर राशि और ऊपर अश मिलेंगे। ये राशि, अंश ही दशमके राश्यादि होगे। कला, विकला फल त्रैराशि-द्वारा निकलता है।

२—इष्टकालमें-से दिनार्ध घटाकर जो आये वह दशम भावका इष्ट होगा। यदि इष्टकालमें-से दिनार्ध न घट सके तो इष्टकालमे ६० घटी जोडकर दिनार्ध घटानेसे दशमका इष्टकाल होता है। इष्टकालपर-से प्रथम नियमके अनुसार दशमसारणी-द्वारा दशमसाधन करना चाहिए।

३—लग्नसारणी-द्वारा लग्न बनाते समय सूर्यफलमे इष्टकाल जोडने-से जो घटचादि अश आये, उसमे १५ घटी घटानेसे शेष अक दशम-सारणीमें जिस राशि, अशका फल हो, वही दशम लग्न होगा।

दशम लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	३ ३२ ४६	३ ४२ ११	३ ५१ ३६	४ १ ४	४ १० ३२	४ २० २	४ २९ ३३	४ ३९ ५	४ ४८ ४४	४ ५८ २४	५ ७ ५१	५ १७ २३	५ २७ १०	५ ३८ ३१
वृ १	८ २६ ०	८ ३६ १३	८ ४६ २९	८ ५६ ४३	९ ७ ४	९ १७ २४	९ २७ ४७	९ ३८ १०	९ ४८ ३५	९ ५९ ७	१० ० ३१	१० २० २०	१० ३० ३४	१० ४१ ५१
मि २	१३ ४३ ४६	१३ ५४ ३८	१४ ५ ३१	१४ १६ २५	१४ २७ १८	१४ ३८ १२	१४ ४९ ६	१५ ० ०	१५ १० ५४	१५ २१ ३८	१५ ३२ ४१	१५ ४३ ३५	१५ ५४ २८	१६ ५ २२
क ३	१९ ८ १८	१९ १८ ५३	१९ २० २६	१९ ३० ५८	१९ ५० २९	२० ० ५७	२० ११ २४	२० २१ ४९	२० ३२ १३	२० ४२ ३६	२० ५२ ५६	२१ ३ १७	२१ १३ ३१	२१ २३ ४६
मि ४	२४ १३ २६	२४ २३ ९	२४ ३२ ५०	२४ ४२ ३१	२४ ५२ ९	२५ १ ४६	२५ ११ १८	२५ २० ५५	२५ ३० २७	२५ ३९ ५८	२५ ४९ २८	२५ ५८ ५५	२६ ८ २३	२६ १७ ४९
क ५	२८ ५५ ४४	२९ ४ ५५	२९ १४ ७	२९ २३ १८	२९ ३२ २८	२९ ४१ ३९	२९ ५० ४९	३० ० ०	३० ९ १०	३० १८ २१	३० २७ ३२	३० ३६ ४२	३० ४५ ५३	३० ५५ ४

सारणी

	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे ०	५ ४६ ३४	५ ५६ १९	६ ६ ५	६ १५ ५३	६ २५ ४३	६ ३५ ३५	६ ४५ ३०	६ ५५ २३	७ ५ २०	७ १५ १९	७ २५ १९	७ ३५ २१	७ ४५ २६	७ ५५ ३१	८ ५ ३९	८ १५ ४९
वृ १	१० ५१ ४२	११ २ १९	११ १२ ५७	११ २३ ३६	११ ३४ १६	११ ४४ ५८	११ ५५ ४३	१२ ६ २६	१२ १७ ११	१२ २७ ५७	१२ ३८ ४५	१२ ४९ ३३	१३ ० २२	१३ ११ १४	१३ २२ ३	१३ ३२ ५४
मि. २	१६ १६ १४	१६ २७ ६	१६ ३७ ५७	१६ ४८ ४८	१६ ५९ ३८	१७ १० २७	१७ २१ १५	१७ ३२ ३	१७ ४२ ४९	१७ ५३ ३४	१८ ४ १७	१८ १५ २	१८ २५ ४३	१८ ३६ २४	१८ ४७ ३	१८ ५७ ४१
क. ३	२१ ३३ ५८	२१ ४४ ११	२१ ५५ २१	२२ ४ २८	२२ १४ ३४	२२ २४ ३८	२२ ३४ ४१	२२ ४४ ४१	२२ ५४ ३९	२३ ४ ३७	२३ १४ २९	२३ २४ २५	२३ ३४ १७	२३ ४४ ७	२३ ५३ ५५	२४ ३ ४१
सिं ४	२६ २७ १४	२६ ३६ ३७	२६ ४५ ५९	२६ ५५ २१	२७ ४ ४१	२७ १४ १	२७ २३ १९	२७ ३२ ३७	२७ ४१ ५४	२७ ५१ १०	२८ ० २५	२८ ९ ३९	२८ १८ ५३	२८ २८ ७	२८ ३७ १९	२८ ४६ ३२
क ५	३१ ४ १६	३१ १३ २८	३१ २२ ४०	३१ ३१ ५३	३१ ४१ ७	३१ ५० २१	३१ ५९ ३५	३२ ८ ५०	३२ १८ ६	३२ २७ २३	३२ ३६ ४१	३२ ४५ ५९	३२ ५५ १८	३३ ४ ३९	३३ १४ ०	३३ २३ २२

दशम लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	३३ ३२ ४६	३३ ४२ ११	३३ ५१ ३६	३४ १ ४	३४ १० ३२	३४ २० २	३४ २९ ३३	३४ ३९ ५	३४ ४८ ४४	३४ ५८ १४	३५ ७ ५१	३५ १७ २९	३५ २७ १०	३५ ३६ ५१
वृ० ७	३८ २६ ०	३८ ३६ १३	३८ ४६ २८	३८ ५६ ४३	३९ ७ ४	३९ १७ २४	३९ २७ ४७	३९ ३८ १०	३९ ४८ ३५	३९ ५९ २	४० ९ ४१	४० २० २०	४० ३० ३४	४० ४१ ७
ध० ८	४३ ४३ ४६	४३ ५४ ३८	४४ ५ ३१	४४ १६ २५	४४ २७ १८	४४ ३८ १२	४४ ४९ ६	४५ ० ०	४५ १० ५४	४५ २१ ४८	४५ ३२ ४१	४५ ४३ ३५	४५ ५४ २८	४६ ५ २२
म० ९	४९ ८ १८	४९ १८ ५३	४९ २९ २६	४९ ३९ ५८	४९ ५० २९	५० ० ५७	५० ११ २४	५० २१ ४९	५० ३२ १३	५० ४२ ३६	५० ५२ ५६	५१ ३ १७	५१ १३ ३१	५१ २३ ४८
कु० १०	५४ १३ ३६	५४ २३ ९	५४ ३२ ५०	५४ ४२ ३०	५४ ५२ ९	५५ १ ४६	५५ ११ ४६	५५ २० ५५	५५ ३० २७	५५ ३९ ५८	५५ ४९ २८	५५ ५८ ५६	५६ ८ २३	५६ १७ ४९
मी० ११	५८ ५५ ४४	५९ ४ ५५	५९ १४ ७	५९ ३३ १७	५९ ३२ २८	५९ ४१ ३९	५९ ५० ४९	० ० ०	० ९ १०	० १८ २१	० २७ ३२	० ३६ ४२	० ४५ ५३	० ५५ ४

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
३५	३५	३६	३६	३६	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८	
४६	५६	६	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	तु. ६
३४	१०	५	५३	४३	३५	३०	२३	२०	१९	२१	२६	२६	२१	३९	४८	
४०	४१	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२	४२	४२	४३	४३	४३	४३	
५१	२	१२	२३	३४	४४	५५	६	१७	२७	३८	४९	०	११	२२	३२	वृ ७
४२	१९	५७	३६	२६	५८	४३	२६	११	५७	४५	४३	२२	१४	३	५४	
४६	४६	४६	४६	४६	४७	४७	४७	४७	४७	४८	४८	४८	४८	४८	४८	
१६	२७	३७	४८	५९	१०	२१	३२	४२	५३	४	१५	२५	३६	४७	५७	ध. ८
१४	६	५७	४८	३८	२७	१५	३	४९	३४	१७	२	४३	२४	३	४१	
५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४	
३३	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४	५३	३	म. ९
५९	११	२०	२८	३४	३८	११	४१	३९	३७	२९	२५	१७	७	५५	४१	
५६	५६	५६	५६	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५८	५८	५८	५८	५८	५८	
२७	३६	४५	५५	४	१४	२३	३२	४१	५१	०	९	१८	२८	३७	४६	कुं. १०
१४	३७	५९	२१	४१	१	१९	३७	१४	१०	२५	३९	५३	६	१९	३२	
१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	३	३	३	
४	१३	२२	३१	४१	५०	५९	८	१८	२७	३६	४५	५५	४	१४	२३	मी. ११
१६	२८	४०	५३	७	२१	३५	५०	६	२३	४१	५९	१८	३९	०	२२	

लग्नसे दशमभाव

		०	१	२	३	४	५	६	७	८	०	१०	११	१२	१३
मेष	०	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९
		२३	२४	२५	२५	२६	२७	२८	२८	२९	०	०	१	२	३
		५६	३७	१८	५९	४०	२१	२	४३	२४	५	४०	२८	१५	५
		२६	५६	२६	३८	४३	४२	४७	२२	२७	५२	११	५९	२६	३
वृष	१	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
		१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
		४३	२३	२२	१९	१०	१	५२	४२	३३	२४	१८	६	८	९
		३९	२१	६	२४	४२	२४	६	५४	४४	३०	१८	२	५४	५४
मिथुन	२	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११
		१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२९	०
		४६	५२	५७	३	९	१५	२०	२९	३१	२७	४१	५१	५	९
		४८	४२	५८	२	२७	३	३८	१३	५१	२४	२०	२३	१२	८
कर्क	३	११	११	११	११	११	११	११	११	०	०	०	०	०	०
		२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	१	२	३	४	६	७
		१४	१७	४१	५५	९	२३	३६	५०	४	१८	३२	४७	२	१९
		०	४५	३५	२३	१६	२४	४१	२६	५३	१९	७	५१	२२	४१
सिंह	४	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
		२७	२८	२९	०	१	२	४	५	६	७	८	९	१०	१२
		९	१८	५७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	२२	६	२०	३५
		२५	३९	५२	६	१९	३३	४८	२	१६	३०	५४	३२	५	८
कन्या	५	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
		२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३
		३८	४१	४३	४५	४७	५०	५२	५४	५९	५९	१	३	५	७
		२	८	१०	१२	१	०	५	८	३	७	१३	२१	३५	५२

साधन सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	
३	४	५	६	६	७	८	९	१०	११	११	१२	१३	१४	१५	१५	मे ०
४६	३६	२३	१०	५७	४४	३१	१८	५	७	४२	३२	२४	२४	६	५६	
३८	४९	१०	४६	४६	४८	४०	५१	१	१४	५०	४३	४८	५०	१	४८	
९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	
२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	वृ १
१०	११	१२	१३	१३	१५	१६	१७	१८	१८	२०	२१	२४	२३	३५	४१	
५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	३४	३०	४०	१७	
११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	
१	२	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	२०	मि २
३२	४६	०	१४	२८	४१	५५	९	२३	३७	५१	४	१८	३१	४६	०	
५३	३७	३८	२४	१०	५५	५५	४०	२९	१७	२	५७	४२	२७	२१	१३	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
८	९	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	क ३
३१	४५	०	९	१८	२७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	
१५	४२	१३	३५	३९	५२	६	१९	३५	४८	१२	१६	२९	४३	५६	१२	
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	
१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	सिं ४
४४	३५	४४	१०	१२	१४	१६	१८	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	५२	
१२	१२	१९	२०	५५	४	८	९	१०	१५	५५	७	२	५	८	१	
२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	क. ५
१०	१२	१४	१६	१४	२१	२१	२९	२७	३०	३२	३५	३७	४०	४२	४३	
८	१	०	७	१४	२२	३०	३२	१	५	८	९	७	२५	५०	५९	

लग्नसे दशमभाव

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तुला ६	३ ० ४५ ७	३ १ ४ ५	३ २ ५० ८	३ ३ ५२ १३	३ ४ ५४ १५	३ ५ ५९ १९	३ ६ ५९ २२	३ ८ १ २	३ ९ २ ५	३ १० ५ १४	३ ११ ८ ३८	३ १२ १५ ५५	३ १३ २३ १७	३ १४ ३४ १२
वृश्चिक ७	४ ४ १० ७	४ ५ १९ ५	४ ६ २९ ३	४ ७ ३८ २	४ ८ ४३ ०	४ ९ ५३ १	४ ११ ३ ५	४ १२ २० १३	४ १३ ३५ २५	४ १४ ४९ ३५	४ १६ ४ ४५	४ १७ १६ ८	४ १८ ३० ३	४ १९ ४४ १०
धनु ८	५ १० ३९ १४	५ ११ ५३ १	५ १३ ६ ५	५ १४ २० ३	५ १५ ३४ १५	५ १६ ४८ २२	५ १८ २ ११	५ १९ १५ ३	५ २० २९ २९	५ २१ ४३ १०	५ २२ ५७ १५	५ २४ ११ २५	५ २५ १४ ४८	५ २६ १९ ३७
मकर ९	६ १४ ३८ १	६ १५ ३९ २	६ १६ ४० ५	६ १७ ४१ २	६ १८ ४२ १	६ १९ ४३ ०	६ २० ४४ ३	६ २१ ४५ १	६ २२ ४६ ५०	६ २३ ४७ २२	६ २४ ४८ ११	६ २५ ४९ ८	६ २६ ५० १५	६ २७ ५२ ३
कुम्भ १०	७ ११ ४० ५१	७ १२ ५ ३२	७ १३ २२ ३२	७ १४ ९ ३३	७ १४ ५६ ३०	७ १५ ४३ २२	७ १६ ३० ७	७ १७ २१ ५	७ १८ १४ ९	७ १८ ५१ १०	७ १९ ३८ ५२	७ २० २४ ८	७ २१ ५ ३	७ २१ ४६ १५
मीन ११	८ ३ २४ ३९	८ ४ ५ १२	८ ४ ४९ ५	८ ५ २८ ३	८ ६ ९ ०	८ ६ ५० ८	८ ७ ३२ २	८ ८ १२ ६	८ ९ ३ ७	८ ९ ३४ ५	८ १० १५ ३	८ १० ५६ ४५	८ ११ २७ ४७	८ १२ १३ ३६

सारणी

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	तु.६
१५	१६	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	०	१	३	
४२	५०	१	१०	५९	२८	३८	४८	५६	९	१५	२४	३३	४२	५२	१	
३	०	१	८	१५	२२	८	९	३५	४२	५६	२	८	५	३	७	
४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	वृ०. ७
२०	२२	२३	२४	२५	२७	२८	२९	०	२	३	४	५	६	८	९	
५८	१२	२५	३८	५५	७	१९	३४	४८	२	१६	३०	४३	५३	११	२५	
१	२	५	३	५७	१२	२५	१८	२१	७	४	५	३	१	१५	०	
५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	ध. ८
२७	२८	२९	०	१	२	३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	
२७	३०	३०	४२	४७	५३	५८	४	१०	१५	२१	२६	३२	३४	३६	४०	
३७	३७	४२	३	४	५	३	१५	१२	२०	३०	५	८	३	४५	०	
६	६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	म० ९
२८	२९	०	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	९	१०	११	
१०	१	१	५२	४३	३३	२४	१५	६	५७	४६	३८	२९	२०	१०	७	
३२	४०	४५	५०	७	३	४	९	१३	२१	२७	३५	४०	४५	५०	५०	
७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	कु. १०
२२	२३	२४	२४	२५	२५	२६	२७	२७	२८	२९	२९	०	११	२	२	
३८	३९	१६	५९	१२	५६	३४	१५	५६	३७	१८	५९	४०	२१	३०	३	
२७	३७	४८	५९	१	२	३	६	८	१०	१२	५	३०	१५	१६	४	
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	मी. ११
१२	१३	१४	१५	१५	१६	१७	१७	१८	१९	१९	२०	२१	२१	२२	२३	
५९	४०	२०	०	३५	२४	५	४६	२८	९	५७	३१	१२	५३	३४	१५	
२६	१२	४२	३५	१	२	८	५	७	३	५३	५९	१	५	३	४	

लग्नसे दशम भाव साधन—लग्नके राशि अंशों-द्वारा फल लेकर—लग्न राशिके सामने और अंशके नीचे जो अंकसंख्या 'लग्नसे दशम भाव साधनसारणी' मे मिले वही दशम भाव होगा।

उदाहरण १—पश्चिमनतकाल ७।१९, सूर्य ०।१० इस सूर्यके राशि, अंशोको दशमसारणीमे देखा तो शून्य राशि और दश अंशके सामनेका फल ५।७।५१ मिला। पश्चिमनत होनेके कारण इसे इष्टकाल स्वरूप नतमें जोडा—५। ७५१ आगत फल

७।१९। ० नत-इष्टकाल

१२।२६।५१ इसे पुन दशमसारणीमें देखा तो इस संख्याके लगभग १ राशि २३ अंशका फल मिला, अत दशम भाव १।२३ हुआ।

उदाहरण २—इष्टकाल १०।१५, दिनमान ३२।६, दिनार्ध १६।३, सूर्य०।१० है।

यहाँ इष्टकालमें-से दिनार्ध घटाना है, लेकिन इष्टकाल कम होनेके कारण दिनार्ध घटता नहीं है, अत ६० जोडकर घटाया—६० + (१०।१५)

७०।१५ योगफलमें-से

१६। ३ दिनार्ध घटाया

५४।१२ दशम साधनका इष्टकाल। पूर्ववत् सूर्यके राश्यादिको दशमसारणीमें देखा तो फल ५।७।५१ मिला। ५।७।५१ आगतफलमें

५४।१२। ० इष्टकालको जोडा

५९।१९।५१ इसे दशमसारणीमें

देखा तो ११।२ आया, यही दशम भाव हुआ।

उदाहरण ३—लग्नमान ४।२३।२५।२७ है। इसके राशि अंशोको 'लग्नसे दशम भाव साधनसारणी'में देखा तो ४ राशिके सामने और २३ अंशके नीचे १।२२।३०।१५ फल प्राप्त हुआ, यही दशम भाव हुआ।

अन्य भाव साधन करनेकी प्रक्रिया

दशम भावकी राशिमे छह जोडनेसे चतुर्थ भाव आता है। चतुर्थ भावमे-से लग्नको घटानेसे जो आये उसमे छहका भाग देकर लब्धको लग्नमे जोडनेसे लग्नकी सन्धि, लग्नकी सन्धिमे इस षष्ठाशको जोडनेसे द्वितीय भाव, द्वितीय भावमे इस षष्ठाशको जोडनेसे धनभावकी सन्धि, इस सन्धिमें षष्ठाशको जोडनेसे तृतीय—सहजभाव, सहजभावमे षष्ठाश जोडनेसे तृतीय भावकी सन्धि और इस सन्धिमे षष्ठाश जोडनेसे चतुर्थभाव होता है।

३० अशमे-से इस षष्ठाशको घटाकर शेषको चतुर्थ भाव—सुहृद्भावमे जोडनेसे चतुर्थकी सन्धि, इस सन्धिमे उसी शेषको जोडनेसे पचम भाव—पुत्रभाव, पुत्रभावमें इसी शेपको जोडनेसे षष्ठ—रिपुभाव और इस षष्ठ भावमे इसी शेपको जोडनेसे—रिपुभावकी सन्धि होती है।

लग्नमे छह राशि जोडनेसे सप्तम भाव, लग्नसन्धिमे छह राशि जोडनेसे सप्तम भावकी सन्धि, द्वितीय भावमे छह राशि जोडनेसे अष्टम भाव, द्वितीय भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे अष्टम भावकी सन्धि, तृतीय भावमे छह राशि जोडनेसे नवम भाव, तृतीय भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे नवम भावकी सन्धि, चतुर्थ भावमे छह राशि जोडनेसे दशम भाव, चतुर्थकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे दशम भावकी सन्धि, पचम भावमे छह राशि जोडनेसे एकादश भाव, पचम भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे एकादश भावकी सन्धि, षष्ठ भावमे छह राशि जोडनेसे द्वादश भाव और षष्ठ भावकी सन्धिमे छह राशि जोडनेसे द्वादश भावकी सन्धि होती है।

उदाहरण—

१।२४।४३।२१ दशम भाव
६। ०। ०। ० जोडा

७।२४।४३।२१ चतुर्थ भावमे-से

४।२३।२५।२७ लग्नको घटाया
३। ११।७।५४ – ६ = ०।१५।१२।५९ षष्ठांश
४।२३।२५।२७ लग्नमे
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोडा
५। ८।३८।२६ लग्नकी सन्धिमे
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोडा
५।२३।५१।२५ द्वितीय भावमे
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोडा
६। ९। ४।२४ द्वितीय भावकी सन्धिमे
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोडा
६।२४।१७।२३ तृतीय भावमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोडा
७। ९।३०।२३ तृतीय भावकी सन्धिमें
०।१५।१२।५९ षष्ठांश जोडा
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भाव
३० अशमें-से
०।१५।१२।५९ षष्ठांशको घटाया
०।१४।४७। १ शेष
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भावमे
०।१४।४७। १ शेषको जोडा
८। ९।३०।२२ चतुर्थ भावकी सन्धि
०।१४।४७। १ शेषको जोडा
८।२४।१७।२३ पचम भाव
०।१४।४७। १ शेषको जोडा
९। ९। ४।२४ पचम भावकी सन्धि

९। ९। ४।२४ पचम भाव सन्धि
०।१४।४७।१ शेपको जोडा
९।२३।५१।२५ षष्ठ भाव
०।१४।४७। १ शेषको जोडा
१०। ८।३८।२६ पष्ठ भावकी सन्धि
०।१४।४७। १ शेपको जोडा
१०।२३।२५।२७ सप्तम भाव

लग्न सन्धि ५।८।३८।२६ + ६ राशि = ११।८।३८।२६ सप्तम भाव-सन्धि
द्वितीय भाव ५।२३।५१।२५ + ६ राशि = ११।२३।५१।२५ अष्टम भाव
द्वितीय भावकी सन्धि ६।९।४।२४ + ६ राशि = ०।९।४।२४ अष्टम भाव-की सन्धि
तृतीय भाव ६।२४।१७।५६ + ६ राशि = ०।२४।१७।३३ नवम भाव
तृतीय भाव सन्धि ७।९।३०।२२ + ६ राशि = १।९।३०।२२ नवम भाव-की सन्धि
चतुर्थ भाव ७।२४।४३।२१ + ६ राशि = १।२४।४३।२१ दशम भाव
चतुर्थ भावकी सन्धि ८।९।३०।२२ + ६ राशि = २।९।३०।२२ दशम भाव-की सन्धि
पचम भाव ८।२४।१७।२३ + ६ राशि = २।२४।१७।२३ एकादश भाव
पचम भावकी सन्धि ९।९।४।२४ + ६ राशि = ९।९।४।२४ एकादश भाव
सं षष्ठ भाव ९।२३।५१।२५ + ६ राशि = ३।२३।५१।२५ द्वादश भाव
षष्ठ भावकी सन्धि १०।८।३८।२६ + ६ राशि = ४।८।३८।२६ द्वादश भावकी सन्धि

द्वादश भावोके नाम

तनु, धन, महज, सुहृद्, पुत्र, रिपु, स्त्री, आयु, धर्म, कर्म, आय और व्यय ये क्रमश वारह भावोके नाम है। द्वादश भाव स्पष्ट चक्र लिखते समय प्रत्येक भावके अनन्तर उसके सन्धि मानको रखते है।

द्वादश भाव स्पष्ट चक्र

त०	स०	ध०	स०	म०	म०	सु०	म०	पु०	स०	रि०	म०
४	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	१०
२३	८	२३	९	२४	९	२४	९	२४	९	२३	८
२५	३८	५१	५	१७	३०	४३	३०	१७	४	५१	३८
२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६
स्त्री०	**म०**	**आ०**	**स०**	**ध०**	**स०**	**क०**	**म०**	**आ०**	**स०**	**व्य०**	**स०**
१०	११	११	०	०	१	१	२	२	३	३	४
२३	८	२३	९	२४	९	२४	९	२४	९	२३	८
२५	३८	५१	४	१७	३०	४३	३०	१७	४	५१	३८
२७	३६	२५	२४	२३	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६

चलित चक्र अवगत करनेका नियम

चलित चक्र ज्ञात करनेके लिए ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्टके साथ तुलनात्मक विचार करना चाहिए। यदि ग्रहके राश्यादि भावके राश्यादिके तुल्य हो तो वह ग्रह उस भावमें और उसके राश्यादि भावसन्धिके राश्यादिके समान हो अथवा भावके राश्यादिसे आगे और भावसन्धिके राश्यादिसे पीछे हो तो भावसन्धिमें एवं आगेवाले या पीछेवाले भावके राश्यादिके समान हो तो आगे या पीछेके भावमें ग्रहको समझना चाहिए[1]।

---

[1] वदन्ति भावैक्यदलं हि सन्धिस्तत्र स्थितः स्यादबलो ग्रहेन्द्रः।
ऊनेषु सन्धेर्गतभावजातमागामिजं चाप्यधिकं करोति॥
भावेशतुल्यः खलु वर्त्तमानो भावो हि सम्पूर्णफलं विधत्ते।
भावोनके चाप्यधिके च खेटे त्रिराशिके नामफलं प्रकल्प्यम्॥
भावप्रवृत्तौ हि फलप्रवृत्तिः पूर्णं फलं भावसमांशकेषु।
ह्रासः क्रमाद्भावविरामकाले फलस्य नाशः कथितो मुनीन्द्रैः॥

चलित चक्रकी जन्मपत्रीमें अत्यावश्यकता रहती है। चलितके विना ग्रहोके स्थानका ठीक ज्ञान नही हो सकता है।

प्रस्तुत उदाहरणका चलित चक्र ज्ञात करनेके लिए सर्वप्रथम सूर्यके साथ विचार किया। नवग्रहस्पष्ट चक्रमे सूर्य ०।१०।७।३४ आया है और भावस्पष्टमें अष्टम—आयुभावकी सन्धि ०।९।४।२४ है, सूर्यके अश सन्धिके अशोसे आगे है, अत सूर्य नवम—धर्मभावमें माना जायेगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४ है, धर्मभाव ०।२४।१७।३३ और इसकी सन्धि १।९।३०।२२ है, अतएव यहाँ चन्द्रमा नवम भावकी सन्धिमे माना जायेगा। मगल २।२१।५२।४४ है, आयभाव २।९।३०।२२ से २।२४।१७।२३ तक है अत मगल आयभावमें, इसी प्रकार वुध नवममें, गुरु व्ययभावकी सन्धिमे, शुक्र अष्टम भावमे, शनि दशम भावकी सन्धिमे, राहु व्ययभावमें एव केतु रिपुभावमे माना जायेगा।

दशवर्ग विचार

ग्रहोके वलावलका ज्ञान करनेके लिए दशवर्गका साधन किया जाता है। दशवर्गमे गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्ताश, नवाश, दशाश, द्वादशाश, षोडशाश, त्रिंशाश और षष्टचश परिगणित किये गये है।

दो भावोंके योगार्धको सन्धि कहते हैं, सन्धिमें स्थित ग्रह निर्बल होता है। ग्रह सन्धिसे हीन हो तो पूर्वभावके फलको देता है और सन्धिसे अधिक हो तो आगामिभावोत्पन्न फलको उत्पन्न करता है। भावेशतुल्य वर्त्तमान भाव ही अपना पूर्ण फल देता है। भावसे हीन या अधिक होनेसे फल न्यूनाधिक होता है। ग्रहोंके भावकी प्रवृत्तिसे ही फलकी निष्पत्ति होती है और भावेशके तुल्य ग्रह पूर्ण फल देता है। हीनाधिक होनेसे फलमें ह्रास या वृद्धि होती जाती है।

ताजिकनीलकण्ठीके मतानुसार दोनों सन्धियोंके मध्यभागमें विद्यमान ग्रह बीचवाले भावका फल देता है।

गृह—जो ग्रह जिस राशिका स्वामी होता है, वह राशि उस ग्रहका गृह कहलाती है। राशियोंके स्वामी निम्न प्रकार है—

मेष, वृश्चिकका मगल, वृष, तुलाका शुक्र, मिथुन, कन्याका बुध, कर्कका चन्द्रमा, धनु, मीनका गुरु, सिहका सूर्य एव मकर, कुम्भका स्वामी शनि होता है।

होरा—१५ अशका एक होरा होता है, इस प्रकार एक राशिमे दो होरा होते है। विषम राशि—मेष, मिथुन आदिमें १५ अश तक सूर्यका होरा और १६ अशमे ३० अश तक चन्द्रमाका होरा। समराशि—वृष, कर्क आदिमे १५ अश तक चन्द्रमाका होरा, और १६ अशमे ३० अश तक सूर्य-का होरा होता है। जन्मपत्रीमें होरा लिखनेके लिए पहले लग्नमें देखना होगा कि किस ग्रहका होरा है, यदि सूर्यका होरा हो तो होरा-कुण्डलीकी ५ लग्नराशि और चन्द्रमाका होरा हो तो होराकुण्डलीकी ४ लग्नराशि होती है। होराकुण्डलीमें ग्रहोंके स्थापनके लिए ग्रहस्पष्टके राश्यादिसे विचार करना चाहिए। नीचे होराज्ञानके लिए होराचक्र दिया जाता है, इसमें सूर्य और चन्द्रमाके स्थानपर उनकी राशियाँ दी गयी है।

मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अ०
५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१५ अश
४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	३० अश

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ अर्थात् सिंह राशिके २३ अश २५ कला २७ विकलापर है। सिंह राशिके १५ अंश तक सूर्यका होरा, १६ अशसे आगे ३० अश तक चन्द्रमाका होरा होता है। अत यहाँ चन्द्रमाका होरा हुआ और होरालग्न ४ माना जायेगा।

ग्रह स्थापित करनेके लिए स्पष्ट ग्रहोंपर-से विचार करना है। पूर्वमें स्पष्टसूर्य ०।१०।७।३४ अर्थात् मेष राशिका १० अश ७ कला ३४ विकला

है। मेपराशिमे १५ अश तक सूर्यका होरा होता है, अत. सूर्य अपने होरा—५ मे हुआ। चन्द्रमाका स्पष्ट मान १।०।२४।३४—वृष राशिका ० अश २४ कला ३४ विकला है, वृप राशिमें १५ अश तक चन्द्रमाका होरा होता है। अतएव चन्द्रमा अपने होरा—४ में हुआ। मगलका स्पष्ट मान २।२१। ५२।४४—मिथुन राशिका २१ अश ५२ कला ४४ विकला है। मिथुन राशिमें १६ अशसे ३० अश तक चन्द्रमाका होरा होता है अत मगल चन्द्रमाके होरा—४ में हुआ। वुध ०।२३।२१।३१—मेप राशिका २३ अश २१ कला ३१ विकला है। मेप राशिमें १६ अशसे चन्द्रमाका होरा होता है अत वुध चन्द्रमाके होरा—५ में हुआ। इसी प्रकार वृहस्पति सूर्यके होरा—५ में, शुक्र सूर्यके होरा—५मे, शनि सूर्यके होरा—५में, राहु चन्द्रमाके होरा—४ में और केतु चन्द्रमाके होरा—४में आया।

होराकुण्डली चक्र

द्रेष्काण—१० अशका एक द्रेष्काण होता है, इस प्रकार एक राशिमे तीन द्रेष्काण—१ अशसे १० अश तक प्रथम द्रेष्काण, ११ से २० अश तक द्वितीय द्रेष्काण और २१ अशसे ३० अश तक तृतीय द्रेष्काण समझना चाहिए।

जिस किमी राशिके प्रथम द्रेष्काणमे ग्रह हो तो उमी राशिका, द्वितीय द्रेष्काणमे उस राशिसे पचम राशिका और तृतीय द्रेष्काणमे उस राशिसे नवम राशिका द्रेष्काण होता है। मरलतासे समझनेके लिए द्रेष्काण चक्र नीचे दिया जाता है—

द्रेष्काण चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अंश
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१०
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	३०

जन्मपत्रीमे द्रेष्काण कुण्डली बनानेकी प्रक्रिया यह है कि लग्न जिस द्रेष्काणमे हो, वही द्रेष्काण कुण्डलीकी लग्नराशि होगी, ग्रहस्थापन करनेके लिए ग्रह स्पष्ट मानके अनुसार प्रत्येक ग्रहका पृथक्-पृथक् द्रेष्काण निकाल कर प्रत्येक ग्रहको उसकी द्रेष्काण राशिमे स्थापित करना चाहिए।

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ अर्थात् सिंह राशिके २३ अंश २५ कला और २७ विकला है। यह लग्न सिंह राशिके तृतीय द्रेष्काण—मेष राशिकी हुई। अतएव द्रेष्काण कुण्डलीका लग्न मेष होगा।

ग्रहोके विचारके लिए प्रत्येक ग्रहका स्पष्ट मान लिया तो सूर्य ०।१०।७। ३४—मेष राशिका १० अश ७ कला और ३४ विकला है। मेषमे १० अश बीत जानेके कारण सूर्य मेषके द्वितीय द्रेष्काण—सिंह राशिका माना जायेगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४—वृष राशिका ० अश २४ कला और ३४ विकला है। वृषमे १० अश तक प्रथम द्रेष्काण वृष राशिका ही होता है। अत चन्द्रमा वृष राशिमे लिखा जायेगा। मगल २।२१।५२। ५४—मिथुन राशिका २१ अश ५२ कला और ५४ विकला है। मिथुन राशिमे २१ अशसे तृतीय द्रेष्काणका प्रारम्भ होता है, अत मगल मिथुनके तृतीय द्रेष्काण कुम्भका लिखा जायेगा। इसी प्रकार बुध धनु राशिका, गुरु मीन राशिका, शुक्र वृश्चिक राशिका, शनि मिथुन राशिका, राहु कर्क राशिका और केतु मकर राशिका माना जायेगा।

द्रेष्काण-कुण्डली चक्र
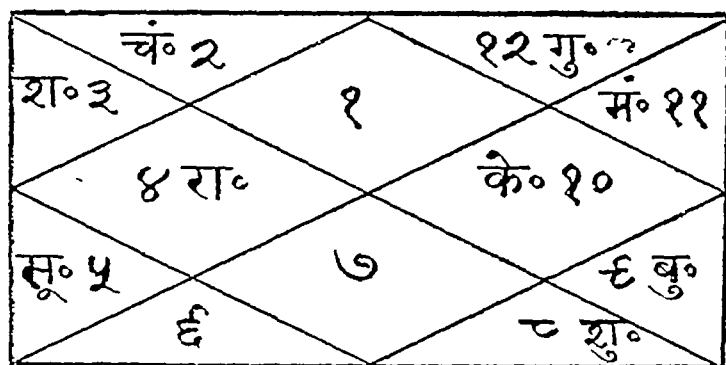
सप्ताश या सप्तमांश—एक राशिमें ३० अश होते हैं। इन अशोमे ७ का भाग देनेसे ४ अश १७ कला ८ विकलाका मप्तमाश होता है।

लग्न और ग्रहोके सप्तमाश निकालनेके लिए समराशिमें उस राशिकी सप्तम राशिमे और विपम राशिमें उसी राशिसे सप्तमाशकी गणना की जाती है।

सप्तमाश बोधक चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अश कलादि
१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	४।१७ ८
२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	८।३४।१७
३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	१२।५१।२५
४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	१७। ८।३४
५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	२१।२५।४२
६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	२५।४२।५१
७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	३०। ०। ०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७—सिंह राशिके २३ अश २५ कला २७ विकला है। सिंह राशिमें २१ अश २५ कला ४२ विकला तकका पाँचवाँ सप्ताश होता है, पर हमारी अभीष्ट लग्न इससे आगे है

अत छठा सप्तांश कुम्भ राशि माना जायेगा। इसलिए सप्तांश कुण्डली-की लग्न कुम्भ होगी।

ग्रह स्थापनके लिए प्रत्येक ग्रहके स्पष्ट मानमें विचार करना चाहिए। सूर्य ०।१०।७।३८ है, मेष राशिमें ८ अंश ३४ कला १७ विकला तक द्वितीय सप्तांश होता है और इससे आगे १२ अंश ५१ कला २५ विकला तृतीय सप्तांश होता है। सूर्य यहाँपर तृतीय सप्तांश—मिथुन राशिका हुआ। चन्द्रमा १।०।२८।३४—वृष राशिके ० अंश २८ कला और ३४ विकलाका है और वृष राशिका प्रथम सप्तांश ८ अंश १७ कला ८ विकला तक है अत चन्द्रमा वृषका प्रथम सप्तांश वृश्चिकका हुआ। इस प्रकार मंगलकी सप्तांश राशि वृश्चिक, बुधकी कन्या, गुरुकी मिथुन, शुक्रकी कुम्भ, शनिकी मिथुन, राहुकी मीन और केतुकी कन्या हुई।

सप्तमांश कुण्डली चक्र
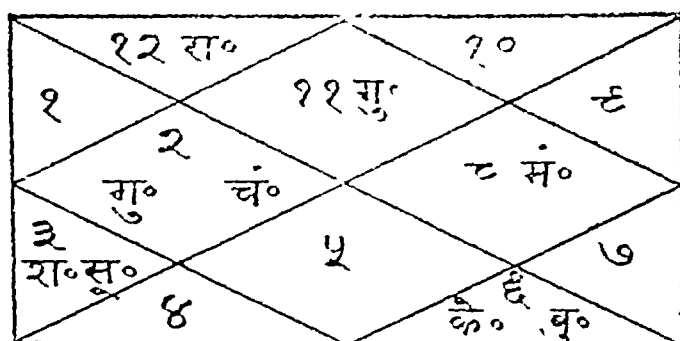
नवमांश—एक राशिके नौवें भागको नवमांश या नवांश कहते हैं, यह ३ अंश २० कलाका होता है। तात्पर्य यह है कि एक राशिमें नौ राशियोंके नवांश होते हैं, लेकिन बात जाननेकी यह रह जाती है कि ये नौ नवांश प्रति राशिमें किन-किन राशियोंके होते हैं। इसका नियम यह है कि मेषमें पहला नवांश मेषका, दूसरा वृषका, तीसरा मिथुनका, चौथा

कर्कका, पाँचवाँ सिंहका, छठा कन्याका, सातवाँ तुलाका, आठवाँ वृश्चिकका और नौवाँ धनु राशिका होता है। इस नौवें नवाशमें मेप राशिकी समाप्ति और वृप राशिका प्रारम्भ हो जाता है, अत वृप राशिमें प्रथम नवाश मेप राशिके अन्तिम नवाशसे आगेका होगा। इस प्रकार वृपमे पहला नवाश मकरका, दूसरा कुम्भका, तीसरा मीनका, चौथा मेपका, पाँचवाँ वृपका, छठा मिथुनका, सातवाँ कर्कका, आठवाँ सिंहका और नौवाँ कन्याका नवाश होता है। मिथुन राशिमें पहला नवाश तुलाका, दूसरा वृश्चिकका, तीसरा धनुका, चौथा मकरका, पाँचवाँ कुम्भका, छठा मीनका, सातवाँ मेपका, आठवाँ वृपका और नौवाँ मिथुनका नवाश होता है। इसी तरह आगे-आगे गिनकर अगली राशियोके नवाश जान लेना चाहिए।

गणित विधिसे नवाश निकालनेका नियम यह है कि अभीष्ट सख्यामें राशि अंकको ९ से गुणा करनेपर जो गुणनफल आवे, उमके अशोमे ३।२० का भाग देकर जो नवाश मिले उसे जोड देनेसे नवाश आ जायेगा। लेकिन १२ से अधिक होनेपर १२ का भाग देनेसे जो शेप रहे वही नवाश होगा।

नवाश बोधक-चक्र

मे	वृ	मि	क	सि	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी	अश क
१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	३।२०
२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	६।४०
३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	१०।०
४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	१३।२०
५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	१६।४०
६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	२०।०
७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	२३।२०
८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	२६।४०
९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	३०।०

नवांश कुण्डली बनानेकी विधि—लग्न स्पष्ट जिस नवांशमें आया हो वही नवांश कुण्डलीका लग्न माना जायेगा और ग्रहस्पष्ट-द्वारा ग्रहोंका ज्ञान कर जिस नवांशका जो ग्रह हो, उस ग्रहको राशिमें स्थापन करनेसे जो कुण्डली बनेगी, वही नवांश कुण्डली होगी।

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है। इसे नवांश बोधक चक्रमें देखनेसे सिंहका आठवाँ नवांश हुआ अतएव नवांश कुण्डलीकी लग्न राशि वृश्चिक मानी जायेगी, क्योंकि सिंहके आठवें नवमांशकी राशि वृश्चिक है।

ग्रहोंके स्थापनके लिए विचार किया तो सूर्य ०।१०।७।३४ है, इसे नवांश बोधक चक्रमें देखा तो यह मेषके चौथे नवांश—कर्क राशिका हुआ अत कर्कमें सूर्यको रखा जायेगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४ है, चक्रमें देखनेसे यह वृषके प्रथम नवांश मकर राशिका होगा। इसी प्रकार मंगल मिथुनका, बुध वृश्चिकका, गुरु कुम्भका, शुक्र कुम्भका, शनि तुलाका, राहु कन्याका, और केतु मीन राशिका लिखा जायेगा।

चर राशिका पहला नवांश, स्थिर राशिका पाँचवाँ और द्विस्वभाव राशिका अन्तिम वर्गोत्तम नवांश कहलाते हैं।

नवमांश कुण्डली चक्र
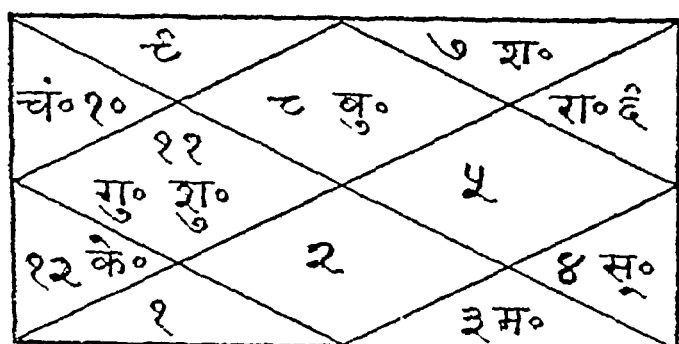
दशमांश विचार—एक राशिमें दश दशमांश होते हैं, अर्थात् ३ अंश-का एक दशमांश होता है।

विपम राशिमे उसी राशिसे और सम राशिमें नवम राशिसे दशमाशकी गणना की जाती है। दशमाग कुण्डली वनानेका नियम यह है कि लग्न-स्पष्ट जिस दशमाशमें हो, वही दशमाश कुण्डलीका लग्न माना जायेगा। और ग्रहस्पष्ट-द्वारा ग्रहोको ज्ञात कर जिस दशमाशका जो ग्रह हो उस ग्रहको उस राशिमें स्थापन करनेसे जो कुण्डली वनेगी, वही दशमाश कुण्डली होगी।

दशमाशका स्पष्ट वोध करनेके लिए आगे चक्र दिया जाता है।

दशमांश चक्र

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी	म० क० सख्या
०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	
१	१०	३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	३।० प्रथम
२	११	४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	६।० द्वितीय
३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	९।० तृतीय
४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	१२।० चतुर्थ
५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	१५।० पचम
६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	१८।० पष्ठ
७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	२१।० सप्तम
८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	२४।० अष्टम
९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	७	४	२७।० नवम
१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	७	५	३०।० दशम

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है, इसे दशमाश चक्रमें देखा तो मिहमें आठवां दशमाश मीन राशिका मिला। अत. दगमाश कुण्डलीकी लग्न राशि मीन होगी। ग्रहोके स्थापनके लिए सूर्य ०।१०।७।३४ का दशमाश मेपका चौथा हुआ, अर्थात् सूर्यकी दशमाश कुण्डलीमें कर्क राशि-

में स्थिति रहेगी। इसी प्रकार चन्द्रमाकी दशमाश राशि कन्या मगलकी मकर, बुधकी वृश्चिक, गुरुकी वृश्चिक, शुक्रकी मिथुन, शनिकी मिथुन, राहुकी मिथुन और केतुकी धनु होगी।

दशमाश कुण्डली चक्र
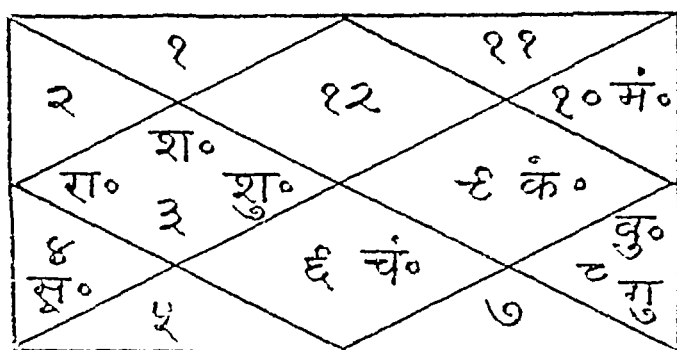
द्वादशाश—एक राशिमें १२ द्वादशाश होते हैं अर्थात् राशिके बारहवें भाग २½ अशका एक द्वादशाश होता है। द्वादशाश गणना अपनी राशि-से ली जाती है। जैसे मेषमें मेषसे, वृषमे वृषसे, मिथुनमें मिथुनसे आदि। तात्पर्य यह है कि जिस राशिमें द्वादशाश जानना हो, उसमें पहला द्वादशाश अपना, दूसरा आगेवाली राशिका, इसी प्रकार १२ द्वादशाश उस राशिके होंगे।

द्वादशाश कुण्डली बनानेकी विधि नवाश, दशमाश आदिकी कुण्डलियोंके समान है—अर्थात् लग्न स्पष्टमें द्वादशाश निकाल कर द्वादशाश कुण्डलीकी लग्न बना लेनी चाहिए, अनन्तर पहलेके समान सभी ग्रहोंकी राश्यादिके द्वादशाश निकालकर ग्रहोंको द्वादशाशकी राशिमें स्थापित कर देना चाहिए।

द्वादशांश बोधक चक्र

० मे	१ वृ	२ मि	३ क	४ सिं	५ क	६ तु	७ वृ	८ ध	९ म	१० कु	११ मी	अंश	म०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२।३०	१
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	५। ०	२
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३०	३
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१०। ०	४
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१२।३०	५
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५। ०	६
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१७।३०	७
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२०। ०	८
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३०	९
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२५। ०	१०
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२७।३०	११
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०। ०	१२

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७, द्वादशांश बोधक चक्रमें देखनेपर सिंहमें दसवाँ द्वादशांश वृष राशिका है। अत द्वादशांश कुण्डलीकी लग्न वृष राशि होगी। ग्रह स्थापनमें पहलेके समान किया जायेगा।

द्वादशांश कुण्डली
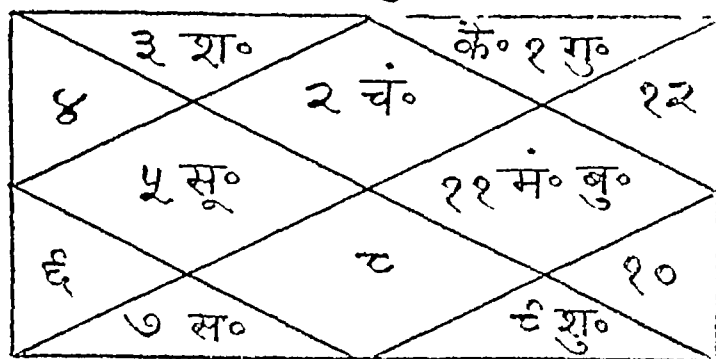
षोडशांश—एक राशिमें १६ षोडशांश होते हैं । एक षोडशांश १ अंश ५२ कला ३० विकलाका होता है । षोडशांशकी गणना चर राशियोंमें मेषादिसे, स्थिर राशियोंमें सिंहादिसे और द्विस्वभाव राशियोंमें धनु राशिसे की जाती है ।

षोडशांश कुण्डलीके बनानेकी विधि यह है कि लग्नस्पष्ट जिस षोडशांशमें आया हो, वही षोडशांश कुण्डलीका लग्न माना जायेगा और ग्रहोंके स्पष्टके अनुसार ग्रह स्थापित किये जायेंगे ।

षोडशांश ज्ञान करनेका चक्र

चर मे० क० तु० म०	स्थिर वृ० सिं० वृ० कु०	द्विस्वभाव मि० क० ध० मी०	अंशादि
१	५	९	१।५२।३०
२	६	१०	३।४५।०
३	७	११	५।३७।३०
४	८	१२	७।३०।०
५	९	१	९।२२।३०
६	१०	२	११।१५।०
७	११	३	१३।७।३०
८	१२	४	१५।०।०
९	१	५	१६।५२।३०
१०	२	६	१८।४५।०
११	३	७	२०।३७।३०
१२	४	८	२२।३०।०
१	५	९	२४।२२।३०
२	६	१०	२६।१५।०
३	७	११	२८।७।३०
४	८	१२	३०।०।०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है, लग्न सिंह राशिकी होनेके कारण स्थिर कहलायेगी। सिंहके २३ अंश २४ कला २७ विकलाका १३वाँ षोडशांश होगा, जिसकी राशि सिंह है अतः यहाँ षोडशांश कुण्डली की लग्नराशि सिंह होगी। ग्रहोंके राश्यादिको भी षोडशांश चक्रमें देखकर षोडशांशकी राशिमें स्थापित कर देना चाहिए।

षोडशांश कुण्डली चक्र
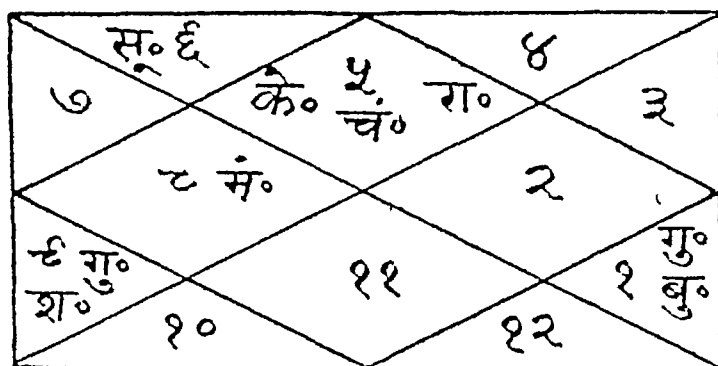
त्रिंशांश—विषम राशियों—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भमें १ला ५ अंश मंगलका, २रा ५ अंश शनिका, ३रा ८ अंश बृहस्पतिका, ४था ७ अंश बुधका और ५वाँ ५ अंश शुक्रका त्रिंशांश होता है। तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त विषम राशियोंमें यदि कोई ग्रह एकसे ५ अंश पर्यन्त रहे तो मंगलके त्रिंशांशमें कहा जायेगा। ६ठेसे १०वें अंश तक रहे तो शनिके, १०वेंसे १८वें अंश तक रहे तो बृहस्पतिके, १९वेंसे २५वें अंश तक रहे तो बुधके और २६वेंसे ३०वें अंश तक रहे तो शुक्रके त्रिंशांशमें वह ग्रह कहा जायेगा।

सम राशियाँ—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन-में १ला ५ अंश तक शुक्रका, २रा ७ अंश तक बुधका, ३रा ८ अंश तक

बृहस्पतिका, ४था ५ अंश तक शनिका और ५वाँ ५ अंश तक मंगलका त्रिशांश है।

राशिपद्धतिके अनुसार विषम राशियोमे ५ अंश तक मेषका, १० अंश तक कुम्भका, १८ अंश तक धनुका, २५ अंश तक मिथुनका और ३० अंश तक तुलाका त्रिशांश होता है।

त्रिशांश कुण्डली भी पूर्ववत् बनायी जायेगी।

विषम राशिका त्रिशांश चक्र

मे०	मिथुन	सिं०	तु०	धनु०	कुम्भ	अंश
१ म	१ मं०	१ मं०	१ मं०	१ मं०	१ मं०	५
११ श.	११ श०	११ श०	११ श०	११ श०	११ श०	१०
९ गु	९ गु०	९ गु०	९ गु०	९ गु०	९ गु०	१८
३ बु	३ बु०	३ बु०	३ बु०	३ बु०	३ बु०	२५
७ शु	७ शु०	७ शु०	७ शु०	७ शु०	७ शु०	३०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७-सिंह राशिके २३ अंश २५ कला २७ विकला है, यह सिंह राशिके १८ अंशमे आगे और २५ अंशके पीछे है

अतः मिथुनका त्रिशांश कहलायेगा । त्रिशांश कुण्डलीका लग्न मिथुन होगा । सूर्य ०।१०।७।३४—मेष राशिके १० अंशके ७ कला ३४ विकला हैं । मेष राशिमें १० अंशसे आगे १८ अंश तक धनु राशिका त्रिशांश होता है । अतः सूर्य धनु राशिका होगा ।

समराशिका त्रिशांश चक्र

वृ०	क०	क०	वृ०	म०	मी०	अंश
२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	१ से ५ तक
६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ से १२ तक
१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१३ से २० तक
१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	२१ से २५ तक
८ मं०	८ मं०	८ मं०	८ मं०	८ मं०	८ मं०	२६ से ३० तक

त्रिशांश कुण्डली चक्र
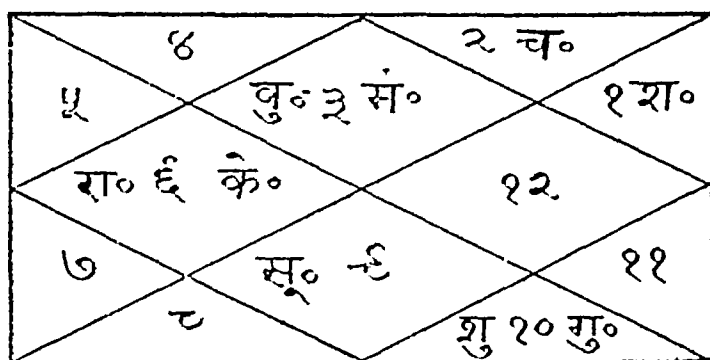
षष्ट्यंश—एक राशिमें ६० षष्ट्यंश होते हैं अर्थात् ३० कलाका एक षष्ट्यंश होता है ।

जिस ग्रह या लग्नका षष्ट्यंश साधन करना हो उस ग्रहकी राशिको छोडकर अंशोको कला बनाकर आगेवाली कलाओंको उसमें जोड देना चाहिए। इन योगफलवाली कलाओंमें ३० का भाग देनेसे जो लब्ध आवे उसमें एक और जोड दे। इस योगफलको आगे दिये गये षष्ट्यंश चक्रमें देखनेसे षष्ट्यंशकी राशि मिल जायेगी। विषम राशिवाले ग्रहका देवतांश विषम-देवतांशके नीचे और सम राशिवालेका सम देवतांशके नीचे मिलेगा।

षष्ट्यंश कुण्डली बनानेका उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है। यहाँ राशि अंकको छोडकर अंशोकी कला बनायी तो—२३।२५

१३८० + २५ = १४०५ ÷ ३० = ४६ शेष २५

लब्ध ४६ + १ = ४७वाँ षष्ट्यंश हुआ, चक्रमें देखा तो सिंह राशिका ४७-वाँ षष्ट्यंश मिथुन है अतः षष्ट्यंश कुण्डलीकी लग्न मिथुन होगी। इस चक्रसे बिना गणित किये भी षष्ट्यंशका बोध कोष्ठकके अन्तमें दिये गये अंशादिके द्वारा किया जा सकता है। प्रस्तुत लग्न सिंहके २३ अंश २५ कला २३ अंशसे आगे है। अतः २३।३० वाले कोष्ठकमें सिंहके नीचे मिथुन लिखा गया है अतः षष्ट्यंश लग्न मिथुन होगा।

ग्रहोंके स्थान पहलेके समान ही स्थापित करने चाहिए।

षष्ट्यंश कुण्डली चक्र

के० ४ गु०
२ चं०
५
३ श०
१
६
१२
७
९ सू०
बु० ११
८
रा० १० मं० शु०

षष्टयंश चक्र

विपम-देवतांश	स	मे	वृ	मि	क	सि	क	तु	वृ.	ध	म	कु	मी	अंश	मम-देवतांश
घोर	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	०।३०	इन्दुरेखा
राक्षस	२	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१।०	भ्रमण
देव	३	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१।३०	पयोधि
कुबेर	४	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२।०	सुधा
यक्ष	५	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२।३०	शीत
किन्नर	६	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	३।०	क्रूर
भ्रष्ट	७	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	३।३०	सौम्य
कुलघ्न	८	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	४।०	निमल
गरल	९	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	४।३०	दण्टायुध
अग्नि	१०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	५।०	कालाग्नि
माया	११	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	५।३०	प्रवीण
प्रेतपुरीप	१२	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	६।०	इन्दुमुख
अपाम्पति	१३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	६।३०	दंष्ट्राकराल
देवगणेश	१४	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	७।०	शीतल
काल	१५	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३०	मृदु

अहिभाग	१६	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	८। ०	सौम्य
अमृत	१७	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	८।३०	काल रूप
चन्द्र	१८	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	९। ०	पातक
मृद्वश	१९	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	९।३०	वशक्षय
कोमल	२०	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१०। ०	कुलनाश
हेरम्ब	२१	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१०।३०	विपप्रदग्ध
ब्रह्मा	२२	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	११। ०	पूर्णचन्द्र
विष्णु	२३	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११।३०	अमृत
महेश्वर	२४	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२। ०	सुधा
देव	२५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१२।३०	कण्टक
आर्द्र	२६	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१३। ०	यम
कलिनाश	२७	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१३।३०	घोर
क्षितीश्वर	२८	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१४। ०	दावाग्नि
कमलाकर	२९	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१४।३०	काल
मान्दी	३०	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५। ०	मृत्यु

मृत्युकर	३१	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१५।३०	मान्दी
काल	३२	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१६।०	कमलाकर
दावाग्नि	३३	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१६।३०	दि.तिज
घोर	३४	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१७।०	कलिनाश
यम	३५	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	१७।३०	आर्द्र
कण्टक	३६	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१८।०	देव
सुधा	३७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१८।३०	महेश्वर
अमृत	३८	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१९।०	विष्णु
पूर्णचन्द्र	३९	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१९।३०	ब्रह्मा
विषप्रदग्ध	४०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२०।०	हेरम्ब
कुलनाश	४१	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०।३०	कोमल
वंशक्षय	४२	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२१।०	मृदुंश
पातक	४३	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२१।३०	चन्द्र
काल	४४	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२२।०	अमृत
सौम्य	४५	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३०	अहिभाग

मृदु	४६	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२३।०	काल
शीतल	४७	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२३।३०	देवगणेश
दंष्ट्राकराल	४८	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	२४।०	अपापति
इन्दुमुख	४९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२४।३०	प्रेतपुरीप
प्रवीण	५०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२५।०	माया
कालाग्नि	५१	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	२५।३०	अग्नि
दण्डायुध	५२	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२६।०	गरल
निर्मल	५३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२६।३०	कुलघ्न
शुभाकर	५४	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२७।०	भ्रष्ट
क्रूर	५५	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२७।३०	किन्नर
अतिशीतल	५६	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२८।०	यक्ष
सुधा	५७	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२८।३०	कुबेर
पयोधि	५८	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२९।०	देव
भ्रमण	५९	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२९।३०	राक्षस
इन्दुरेखा	६०	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०।०	घोर

ग्रहोंका निसर्ग-मैत्री विचार

सूर्यके मंगल, चन्द्रमा और बृहस्पति मित्र, शुक्र और शनि शत्रु एव बुध सम हैं। चन्द्रमाके सूर्य और बुध मित्र, बृहस्पति मगल, शुक्र और शनि सम हैं। मगलके सूर्य, चन्द्रमा एव बृहस्पति मित्र, बुध शत्रु, शुक्र और शनि सम हैं। बुधके सूर्य और शुक्र मित्र, शनि, बृहस्पति और मगल सम एव चन्द्रमा शत्रु हैं। बृहस्पतिके सूर्य, मगल और चन्द्रमा मित्र, शनि सम एव शुक्र और बुध शत्रु हैं। शुक्रके शनि, बुध मित्र, चन्द्रमा, सूर्य शत्रु और बृहस्पति, मगल सम हैं। शनिके सूर्य, चन्द्रमा और मगल शत्रु, बृहस्पति सम एव शुक्र और बुध मित्र हैं।

निसर्ग मैत्री बोधक चक्र

ग्रह	मित्र	शत्रु	सम (उदासीन)
सूय	चन्द्र, मगल, गुरु	शुक्र, शनि	बुध
चन्द्र	रवि, बुध	×	चन्द्र, मगल, गुरु, शनि
मगल	रवि, चन्द्र, गुरु	बुध	शुक्र, शनि
बुध	सूर्य, शुक्र	चन्द्र	मगल, गुरु, शनि
बृहस्पति	सूर्य, चन्द्र, मगल	बुध, शुक्र	शनि
शुक्र	बुध, शनि	सूर्य, चन्द्र	मगल, गरु
शनि	बुध, शुक्र	सूर्य, चन्द्र मगल	गुरु

तात्कालिक मैत्री विचार

जो ग्रह जिस स्थानमे रहता है, वह उससे दूसरे, तीसरे, चौथे, दसवें, ग्यारहवें और बारहवें भावके ग्रहोंके साथ मित्रता रखता है—तात्कालिक

मित्र होता है और अन्य स्थानों—१, ५, ६, ७, ८, ९,—के ग्रह शत्रु होते हैं।

जन्मपत्री बनाते समय निसर्ग मैत्रीचक्र लिखनेके अनन्तर जन्मलग्न-कुण्डलीके ग्रहोंका उपर्युक्त नियमके अनुसार तात्कालिक मैत्री चक्र भी लिखना चाहिए।

पंचधा मैत्री विचार

नैसर्गिक और तात्कालिक मैत्री इन दोनोंके सम्मिश्रणसे पाँच प्रकारके मित्र, शत्रु होते हैं—(१) अतिमित्र (२) अतिशत्रु (३) मित्र (४) शत्रु और (५) उदासीन—सम।

तात्कालिक और नैसर्गिक दोनों जगह मित्र होनेसे अतिमित्र, दोनों जगह शत्रु होनेसे अतिशत्रु, एकमें मित्र और दूसरेमें सम होनेसे मित्र, एकमें सम और दूसरेमें शत्रु होनेसे शत्रु एवं एकमें शत्रु और दूसरेमें मित्र होनेसे सम–उदासीन ग्रह होते हैं।

जन्मपत्रीमें इस पंचधा मैत्रीचक्रको भी लिखना चाहिए।

पारिजातादि विचार

पारिजातादि ज्ञात करनेके लिए पहले दशवर्ग चक्र बना लेना चाहिए। इस चक्रकी प्रक्रिया यह है कि पहले जो होरा, द्रेष्काण, सप्तांश आदि बनाये हैं उन्हें एक साथ लिखकर रख लेना चाहिए। इस चक्रमें जो ग्रह अपने वर्ग अतिमित्रके वर्ग या उच्चके वर्गमें हो उसकी स्वक्षादि वर्गी संज्ञा होती है।

जिस जन्मपत्रीमें दो ग्रह स्वक्षादि वर्गी हों उनकी पारिजात संज्ञा, तीनकी उत्तम, चारकी गोपुर, पाँचकी सिंहासन, छहकी पारावत, सातकी देवलोक, आठकी ब्रह्मलोक, नौकी ऐरावत और दशकी श्रीधाम संज्ञा होती है। ये सब योग विशेष हैं, आगे इनका फल लिखा जायेगा।

२	३	४	५	६	७	८	९	१०	वर्गैक्य
पारिजात	उत्तम	गोपुर	सिंहासन	पारावत	देवलोक	ब्रह्मलोक	ऐरावत	श्रीधाम	योग विशेष

कारकांश कुण्डली बनानेकी विधि

सूर्यादि ७ ग्रहोंमें जिसके अंश सबसे अधिक हो वही आत्मकारक ग्रह होता है। यदि अश बराबर हो तो उनमें जिसकी कला अधिक हो वह, कलाकी भी समता होनेपर जिसकी विकला अधिक हो वह आत्मकारक होता है। विकलाओंमें भी समानता होनेपर जो बली ग्रह होगा, वही आत्मकारक उस कुण्डलीमें माना जायेगा। आत्मकारकसे अल्प अश-वाला भ्रातृकारक, उससे न्यून अशवाला मातृकारक, उससे न्यून अशवाला पुत्रकारक, उससे न्यून अशवाला जातिकारक और उससे न्यून अशवाला स्त्रीकारक होता है। किसी-किसी आचार्यके मतसे पितृकारक पुत्रकारकके स्थानमें माना गया है।

कारकाश कुण्डली निर्माणकी प्रक्रिया यह है कि आत्मकारक ग्रह जिस राशिके नवाशमें हो, उसको लग्न मानकर सभी ग्रहोको यथास्थान रख देनेसे जो कुण्डली होती है, उसीको कारकाश कुण्डली कहते हैं।

उदाहरण—ग्रह स्पष्ट चक्रमें सबसे अधिक अश बृहस्पतिके है, अत बृहस्पति आत्मकारक हुआ। इससे अल्प अशवाला बुध अमात्यकारक, इससे अल्प अशवाला शुक्र भ्रातृकारक, इससे अल्प अशवाला मगल मातृ-कारक, इससे अल्प अशवाला सूर्य पुत्रकारक, इससे अल्प अशवाला चन्द्र जातिकारक और इससे अल्प अशवाला शनि स्त्रीकारक होगा।

कुण्डली निर्माणके लिए विचार किया तो आत्मकारक बृहस्पति कुम्भके नवाशमें है अत कारकाश कुण्डलीकी लग्न राशि कुम्भ होगी।

जन्म-कुण्डलीमें ग्रह जिस-जिस राशिमें है, उसी-उसी राशिमें उन्हें स्थापित कर देनेमे कारकाश कुण्डली बन जायेगी।

स्वाश कुण्डलीके निर्माणकी विधि—स्वाश कुण्डलीका निर्माण प्राय कारकाश कुण्डलीके समान होता है। इसमें लग्न राशि कारकाश कुण्डली-की ही मानी जाती है, किन्तु ग्रहोका स्थापन अपनी-अपनी नवाश राशिमें किया जाता है। तात्पर्य यह है कि नवाश कुण्डलीमें ग्रह जिस-जिस राशिमें आये हैं स्वाश कुण्डलीमें भी उस-उस राशिमें रखे जायेंगे। उदाहरण—स्वाश कुण्डलीकी लग्न ११ राशि होगी।

स्वाशकुण्डली चक्र
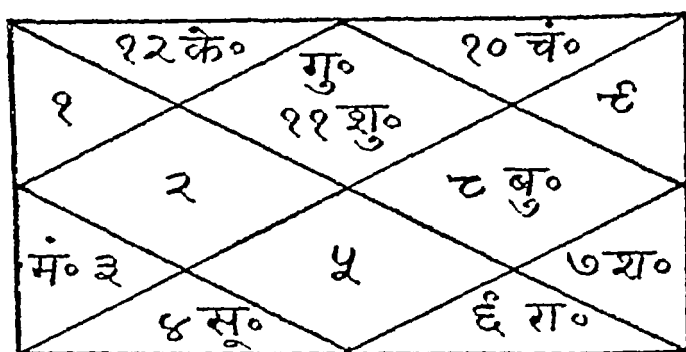
दशा विचार

अष्टोत्तरी, विशोत्तरी, योगिनी आदि कई प्रकारकी दशाएँ होती हैं। फल अवगत करनेके लिए प्रधान रूपसे विशोत्तरी दशाका ही ग्रहण किया गया है। जातक शास्त्रके मर्मज्ञोने ग्रहोंके शुभाशुभत्वका समय जाननेके लिए विशोत्तरीको ही प्रधान माना है। मारकेशका निर्णय भी विशोत्तरी दशासे ही किया जाता है, अत नीचे विशोत्तरी दशा बनानेकी विधि लिखी जाती है।

विशोत्तरी—इस दशामें १२० वर्षकी आयु मानकर ग्रहोका विभाजन

किया गया है। सूर्यकी दशा ६ वर्ष, चन्द्रमाकी १० वर्ष, भौमकी ७ वर्ष, राहुकी १८ वर्ष, बृहस्पतिकी १६ वर्ष, शनिकी १९ वर्ष, बुधकी १७ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष एवं शुक्रकी २० वर्षकी दशा बतायी गयी है।

जन्म-नक्षत्रानुसार ग्रहोंकी दशा यह होती है। कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढामें जन्म होनेसे सूर्यकी, रोहिणी, हस्त और श्रवणमें जन्म होनेसे चन्द्रमाकी, मृगशिर, चित्रा और धनिष्ठा नक्षत्रमें जन्म होनेसे मंगलकी, आर्द्रा, स्वाति और शतभिषामें जन्म होनेसे राहुकी, पुनर्वसु, विशाखा और पूर्वाभाद्रपदमें जन्म होनेसे बृहस्पतिकी, पुष्य, अनुराधा और उत्तराभाद्रपदमें जन्म होनेसे शनिकी, आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवतीमें जन्म होनेसे बुधकी, मघा, मूल और अश्विनीमें जन्म होनेसे केतुकी एवं भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढामें जन्म होनेसे शुक्रकी दशा होती है।

जन्मनक्षत्र-द्वारा ग्रहदशा बोधक चक्र

आदित्य	चन्द्र	भौम	राहु	जीव या गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्र०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ उ फा उ षा.	रो ह श्र	मृ चि ध	आर्द्रा स्वा श	पुन वि पू भा	पुष्य अनु उ भा	आश्ले ज्ये रे	म मू अश्वि	पू फा पू षा भ	नक्षत्र

दशा जाननेकी सुगम विधि—कृत्तिका नक्षत्रसे जन्मनक्षत्र तक गिनकर ९ का भाग देनेसे एकादि शेषमें क्रमसे आ०, चं०, भौ०, रा०, जी०, श०, बु०, के० और शु० की दशा होती है। उदाहरण—जन्मनक्षत्र मघा है। यहाँ कृत्तिकासे मघा तक गणना की तो ८ संख्या हुई, इसमें ९ का भाग दिया तो लब्ध कुछ नहीं मिला, शेष ८ ही रहे। आ०, च०, भौ० आदि क्रमसे आठ तक गिना तो आठवीं संख्या केतुकी हुई। अतः जन्मदशा केतुकी कहलायेगी।

दशासाधन[1]

भयात और भभोगको पलात्मक बनाकर जन्मनक्षत्रके अनुसार जिस ग्रहकी दशा हो, उसके वर्षोंसे पलात्मक भयातको गुणाकर पलात्मक भभोग-का भाग देनेसे जो लब्ध आये वह वर्ष और शेषको १२ से गुणा कर पला-त्मक भभोगसे भाग देनेसे जो लब्ध आये वह मास, और शेषको पुन ३०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आये वह दिन, शेषको पुन ६० से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आये वह घटी एव शेषको पुन ६०से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे लब्ध पल आयेंगे। यह वर्ष, मास, दिन, घटी और पल दशाके भुक्त वर्षादि कहलायेंगे। इनको दशा वर्षमें घटानेसे भोग्य वर्षादि आ जायेंगे।

विंशोत्तरी दशाका चक्र बनानेकी प्रक्रिया यह है कि पहले जिस ग्रहकी भोग्य दशा जितनी आयी है, उसको रखकर फिर क्रमसे सब ग्रहोंको स्थापित कर देंगे। बीच चक्रमें एक खाना सवत्के लिए रहेगा और नीचे एक खाना जन्मसमयके राश्यादि सूर्यके लिए रहेगा। नीचे खानेके सूर्य स्पष्टको भोग्य दशाके मासादिमें जोड देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेमें जोड देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेके अगले कोष्ठकमें रखना चाहिए। मध्यवाले कोष्ठकके सवत्को ग्रहोंके वर्षोंमें जोडकर आगे रखना चाहिए।

उदाहरण—भयात १६ घटी ३९ पल। भभोग ५८।४४

	६०		६०
	९६०		३४८०
	३९		४४
पलात्मक भयात	९९९	पलात्मक भभोग	३५२४

यहाँ जन्मनक्षत्र कृत्तिका है। जन्मनक्षत्र-द्वारा यह दशाबोधक चक्रमें

---

१ दशामान भयातघ्न भभोगेन हृत फलम्।
दशाया भुक्तवर्षाद्य भोग्य मानाद् विशोधितम्॥
—बृहत्पाराशर होरा, काशी १९५२ ई०, ४६।१६

कृत्तिका नक्षत्रकी जन्मदशा सूर्यकी लिखी गयी है। इस ग्रहकी ६ वर्षकी दशा होती है, अत पलात्मक भयातको ग्रह दशा वर्पसे गुणा किया—

९९९ भयात | ३५२४ भभोग

६

५९९४

३५२४)५९९४(१ वर्ष

३५२४

२४७०

१२

३५२४)२९६४०(८ मास

२८१९२

१४४८

३०

३५२४)४३४४०(१२ दिन

३५२४

८२००

७०४८

११५२

६०

३५२४)६९१२०(१९ घटी

३५२४

३३८८०

३१७१६

२१६४ × ६०

३५२४)१२९८४०(३६ पल

१०५७२

२४१२०

२११४४

२९७६

सूर्यके भुक्त वर्षादि = १।८।१२।१९।३६
इसे ग्रह वर्षमें-से घटाया तो—
६।०। ०। ०। ० ग्रह वर्ष
१।८।१२।१९।३६ भुक्त वर्षादि
४।३।१७।४०।२४ भोग्य वर्षादि

विंशोत्तरी दशा चक्र

आदित्य	चन्द्रमा	भौम	राहु	जीव	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्र०
४	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	०	मास
१७	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
४०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटी
२४	०	०	०	०	०	०	०	०	पल
संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्
२००१	२००५	२०१५	२०२२	२०४०	२०५६	२०७५	२०९२	२०९९	२११९
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१०	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७
७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७
३४	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८

अन्तर्दशा निकालनेकी विधि

प्रत्येक ग्रहकी महादशामें ९ ग्रहोंकी अन्तर्दशा होती है। जैसे सूर्यकी महादशामें पहली अन्तर्दशा सूर्यकी, दूसरी चन्द्रमाकी, तीसरी भौमकी, चौथी राहुकी, पाँचवी जीव (बृहस्पति)की, छठी शनिकी, सातवी बुधकी, आठवी केतुकी और नौवी शुक्रकी होती है। इसी प्रकार अन्य ग्रहोंमें समझना चाहिए। साराश यह है कि जिस ग्रहकी दशा हो उमसे आ०, च०, भौ० के क्रमानुसार अन्य नव ग्रहोंकी अन्तर्दशाएँ होती है।

अन्तर्दशा निकालनेका सरल नियम यह है कि दशा-दशाका परस्पर गुणा कर१०मे भाग देनेसे लब्ध, मास और शेषको तीनसे गुणा करनेसे दिन होगे।

अन्तर्दशा निकालनेका एक अन्य नियम यह भी है कि दशा-दशाका परस्पर गुणा करनेसे जो गुणनफल आवे उसमे इकाईके अकको छोड शेप अक मास और इकाईके अकको तीनसे गुणा करनेपर दिन आयेंगे ।

उदाहरण—सूर्यकी महादशामे अन्तर्दशा निकालनी है तो सूर्यके दशा वर्प ६ का सूर्यके ही दशा वर्पोसे गुणा किया तो

६ × ६ = ३६ – १० = ३ शेप ६

६ × ३ = १८ दिन अर्थात् ३ मास १८ दिन सूर्यकी दशा

मूर्यकी महादशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशा = ६ × १० = ६०

६० ÷ १० = ६ मास

सूर्यमे मगलकी—६ × ७ = ४२ – १० = ४ शेप २ × ३ = ६ दिन = ४ मास ६ दिन

सूर्यमे राहुकी—६ × १८ = १०८ – १० = १० शेप ८ × ३ = २४ = १० मास २४ दिन

सूर्यमे जीव—गुरुकी अन्तर्दशा—६ × १६ = ९६ – १० = ९ शेप ६ ६ × ३ = १८ दिन, ९ मास १८ दिन

मूर्यमे शनिकी अन्तर्दशा—६ × १९ = ११४ – १० = ११ शेप ४ ४ × ३ = १२ दिन, ११ मास १२ दिन

सूर्यमे वुधकी अन्तर्दशा—६ × १७ = १०२ – १० = १० शेप २, २ × ३ = ६ दिन, १० मास ६ दिन

सूर्यमें शुक्रकी अन्तर्दशा—६ × ७ = ४२ – = १० = ४ शेप २ × ३ = ६ दिन, ४ मास ६ दिन

सूर्यमे शुक्रकी अन्तर्दशा—६ × २० = १२० – १० = १२ १२ मास अर्थात् १ वर्प

चन्द्रमाकी अन्तर्दशामे नौ ग्रहोकी अन्तर्दशा—

१० × १० = १०० ÷ १० = १० मास = चन्द्रकी महादशामे चन्द्रकी अन्तर्दशा

१० × ७ = ७० − १० = ७ मास = चन्द्रमें भौमकी अन्तर्दशा
१० × १८ = १८० − १० = १८ मास = १ वर्ष ६ मास = चन्द्रमें राहुकी अन्तर्दशा
१० × १६ = १६० − १० = १६ मास = १ वर्ष ४ मास = चन्द्रमें जीवान्तर
१० × १९ = १९० − १० = १९ मास = १ वर्ष ७ मास = चन्द्रमें शन्यन्तर
१० × १७ = १७० − १० = १७ मास = १ वर्ष ५ मास = चन्द्रमें बुधान्तर
१० × ७ = ७० − १० = ७ मास = चन्द्रमें केत्वन्तर
१० × २० = २०० − १० = २० मास = १ वर्ष ८ मास = चन्द्रमें शुक्रान्तर
१० × ६ = ६० − १० = ६ मास = चन्द्रमें आदित्यान्तर

ग्रहोंकी अन्तर्दशाके चक्र नीचे दिये जाते हैं, इन चक्रों-द्वारा विना गणितके ही अन्तर्दशाका ज्ञान किया जा सकता है—

सूर्यान्तर्दशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मास
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दिन

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भौमान्तर्दशा चक्र

भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	वर्ष
४	०	११	१	११	४	२	४	७	मास
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दिन

राह्वन्तर्दशा चक्र

रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	च०	भौ०	ग्र०
२	२	२	२	१	३	०	१	१	वर्ष
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मास
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दिन

जीवान्तर्दशा चक्र

जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	ग्र०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	वर्ष
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मास
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दिन

शन्यन्तर्दशा चक्र

श०	बु०	के०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	ग्र०
३	२	१	३	०	१	१	२	२	वर्ष
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मास
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	दिन

बुधान्तर्दशा चक्र

बु०	के०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	ग्र०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	वर्ष
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	मास
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दिन

केत्वन्तर्दशा चक्र

के०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	०	१	०	वर्ष
४	२	४	७	४	०	११	१	११	मास
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	दिन

शुक्रान्तर्दशा चक्र

शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	ग्र०
३	१	१	१	३	२	३	२	१	वर्ष
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

जन्मपत्रीमें अन्तर्दशा लिखनेकी विधि

जन्मकुण्डलीमें जो महादशा आयी है पहले उसकी अन्तर्दशा बनायी जाती है। अन्तर्दशा चक्रोंमें जिस ग्रहका जो चक्र है पहले कोष्ठकमें विंशोत्तरीके समान उस चक्रके वर्षादिको लिख देना, मध्यमें संवत्‌का कोष्ठक और अन्तमें सूर्यका कोष्ठक रहेगा। सूर्यके राशि अंशको दशाके मास और दिनमें जोड़ना चाहिए। दिनसंख्यामें तीससे अधिक होनेपर तीसका भाग देकर लब्धको मासमें जोड़ देना चाहिए और माससंख्यामें १२ से अधिक होनेपर १२ का भाग देकर लब्धको वर्षमें जोड़ देना चाहिए। नीचे और ऊपरके कोष्ठकके जोड़नेके अनन्तर मध्यवालेमें संवत्‌के वर्षोंमें जोड़कर रख लेना चाहिए।

जिस ग्रहकी महादशा आयी है, उसका अन्तर निकालनेके लिए उसके भुक्त वर्षोंको अन्तर्दशाके ग्रहोंके वर्षोंमें-से घटाकर तब अन्तर्दशा लिखनी चाहिए।

प्रस्तुत उदाहरणमें सूर्यकी दशा आयी है। और इसके भुक्त वर्षादि १।८।१२।१९।३६ हैं। सूर्यकी महादशामें पहला अन्तर सूर्यका ३ मास १८ दिन, चन्द्रमाका ६ मास, भौमका ४ मास ६ दिन, इन तीनोंको जोडा—

३।१८ सूर्य
६। ० चन्द्र
४। ६ भौम
―――――
११।२४

१।८।१२ में-से
११।२४ को घटाया
―――――
६।१८

१०।२४ राहु
६।१८
―――――
४। ६ राहुका भोग्य हुआ।

यहाँपर राहुके पहले तक सूर्यादि ग्रहोंका काल शून्य माना जायेगा और आगे चक्रके अनुसार वर्षादि लिखे जायेंगे। आगे कुण्डलीमें सूर्य महादशाकी अन्तर्दशा लिखी जाती है।

सूर्यान्तर्दशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
०	०	०	४	९	११	१०	४	०	मास
०	०	०	६	१८	२०	६	६	०	दिन
सवत्	संवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्
२००१	२००१	२००१	२००१	२००१	२००२	२००३	२००३	२००४	२००५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	०	०	०	४	२	१	११	३	३
१०	१०	१०	१०	१६	४	१६	२२	२८	२८

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
संवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	मवत्
२००५	२००६	२००६	२००८	२००९	२०११	२०१२	२०१३	२०१४	२०१५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
३	१	८	२	६	१	६	१	९	३
२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८

विवरण—जिस प्रकार विंशोत्तरी दशा निकालनेमे ऊपरके वर्षादि मानको नीचेके राश्यादिमें जोडा गया था। अर्थात् विकलाओको पलोमें, कलाओको घटियोमें, अशोंको दिनोमें और राशियोको मासोमें जोडा था, इसी प्रकार अन्तर्दशा निकालते समय भी राशि और अशोको मास और दिनोंमें जोडा गया है। जैसे चन्द्रान्तर्दशा चक्रमें १०।०में ३।२८ को जोडा तो १।२८ आया है यहाँ १३ महीने योग आनेके कारण इसमें १२ का भाग दे दिया है और लब्ध एकको हासिलके रूपमें सवत्के कोष्ठमें खडी रेखाका चिह्न बना देना चाहिए। इसी प्रकार आगे ७।०में १।२८को जोडा तो ८।२८ आया, ८।२८को ६।०में जोडा तो २।२८ आया, एक हासिलको पुन. खडी रेखाके रूपमें ऊपर सवत्के स्थानेमें + इस प्रकार लिख दिया। इस तरह आगे-आगे जोडनेपर चन्द्रान्तर्दशाका पूरा चक्र बन जाता है।

सवत्वाले कोष्ठकको भरते समय वर्षोंको जोडा जाता है और हासिलवाली सख्या जो वर्षोंकी मिलती है, उसको भी जोड दिया जाता है। अन्तर्दशाके समान ही प्रत्यन्तर और सूक्ष्मान्तर आदि दशाएँ लिखी जाती हैं।

प्रत्यन्तर्दशा विचार

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रहकी महादशामे नौ गहोकी अन्तर्दशा होती है, उसी प्रकार एक अन्तर्दशामें नौ ग्रहोकी प्रत्यन्तर्दशा होती है, जैसे सूर्यकी महादशामे सूर्यकी अन्तर्दशा ३ मास १८ दिन है। इस ३ मास और १८ दिनमें उसी क्रम और परिमाणानुसार प्रत्यन्तर भी होता है। प्रत्यन्तर्दशा निकालनेका नियम यह है कि महादशाके वर्षोंको अन्तर और प्रत्यन्तर्दशाके वर्षोंसे गुणा कर ४० का भाग देनेपर जो दिनादि आयेंगे वही प्रत्यन्तर्दशाके दिनादि होंगे।

उदाहरण—सूर्यकी महादशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर्दशा निकालनी है—

सूर्यकी महादशा ६ वर्ष × च० की अन्तर्दशा १० वर्ष = ६ × १० = ६० × १० = ६०० − ४० = १५ दिन चन्द्रमाका प्रत्यन्तर, ६० × ७ = ४२० ÷ ४० = १०, २० × ३० = १० दिन ३० घटी मगलका प्रत्यन्तर; ६० × १८ = १०८० = १०८० − ४० = २७ दिन राहुका प्रत्यन्तर; ६० × १६ = ९६० − ४० = २४ द्रिन जीवका प्रत्यन्तर; ६० × १९ = ११४० − ४० = २८ दिन, ३० घटी शनिका प्रत्यन्तर, ६० × १७ = १०२० − ४० = २५ दिन, ३० घटी बुधका प्रत्यन्तर, ६० × ७ = ४२० ÷ ४० = १० दिन ३० घटी केतुका प्रत्यन्तर, ६० × २० = १२०० − ४० = ३० दिन = १ मास, शुक्रका प्रत्यन्तर
६० × ६ = ३६० ÷ ४० = ९ दिन आदित्यका प्रत्यन्तर।

सूर्यकी महादशामे सूर्यकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

सूर्य	च०	भौ०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८	दि०
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	घ०

सू० द० चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	१	०	मा०
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

सू० द० मंगलकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	दि०
२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	घ०

सू० द० राहुकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	१	०	०	०	मा०
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२४	१८	दि०
३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	घ०

सू० द० गुरुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	दि०
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ०

सू० द० शनिकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
१	१	०	१	०	०	०	१	१	मा०
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	दि०
९	२७	५७	०	६।	३०	५७	२८	३६	घ०

सू० द० बुधको अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	दि०
२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४५	२७	घ०

सू० द० केतुको अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	दि०
२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	घ०

सू० द० शुक्रको अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	१	१	१	१	०	मा०
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	दि०

चन्द्रमाको दशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	मा०
२५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

चं० द० मंगलको अन्तर्दशामे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	मा०
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	दि०
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	घ०

चं० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	म०	ग्र०
२	२	२	२	१	३	०	१	१	मा०
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	दि०
०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	घ०

चं० द० वृहस्पतिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	मा०
४	१६	८	२८	२०	२४	१०	२८	१२	दि०

चं० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
३	२	१	३	०	१	१	२	२	मा०
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	दि०
१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	घ०

चं० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	मा०
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	दि०
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	घ०

च० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	०	१	०	मा०
१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९	दि०
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	घ०

चन्द्रमाकी दशामे शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मा०
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	दि०

चं० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	मा०
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	दि०
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	घ०

मंगलकी दशामे मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि०
३४	२	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

मं० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्र०
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा०
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि०
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ०

मं० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

मं० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा०
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि०
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

मं० द० बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	क०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि०
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

मं० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि०
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

मं० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा०
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

मं० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि०
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ०

मंगलकी दशा चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा०
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

राहुकी दशामे राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	४	५	४	१	५	१	२	१	मा०
२५	९	३	१७	२६	१२	१८	२१	२६	दि०
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	घ०

रा० द० बृहस्पतिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
३	४	४	१	४	१	२	१	४	मा०
२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	९	दि०
१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६	घ०

रा० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
५	४	१	५	१	२	१	५	४	मा०
१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६	दि०
२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	घ०

रा० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	४	मा०
१०	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५	दि०
३	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१	घ०

रा० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	१	१	१	१	मा०
२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३	दि०
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	घ०

रा० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	१	३	२	५	४	५	५	२	मा०
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	दि०

रा० द० रविके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	दि०
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	घ०

रा० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	२	२	१	३	०	मा०
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

रा० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मा०
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	दि०
३	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	घ०

बृहस्पतिको दशामे बृहस्पतिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
३	४	३	१	४	१	२	१	३	मा०
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	दि०
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ०

गु० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
४	४	१	५	१	२	१	४	४	मा०
२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	दि०
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	घ०

गु० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
३	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	दि०
३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	घ०

गु० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मा०
१९	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	दि०
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	घ०

गु० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
५	१	२	१	४	४	५	४	१	मा०
१०	१८	२०	२६	२८	८	२	१६	२६	दि०

गु० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१४	२४	१६	१३	८	१५	१०	१६	१८	दि०
२४	०	४८	१२	२४	३६	४८	४८	०	घ०

गु० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मा०
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	दि०

गु० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मा०
१९	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	दि०
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	घ०

गु० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्र०
४	३	४	४	१	४	१	२	१	मा०
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	दि०
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	घ०

शनिकी दशा और शनिके ही अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	वु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
५	५	२	६	१	३	२	५	४	मा०
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	दि०
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

श० द० वुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

वु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	५	मा०
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	दि०
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

श० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	वृ०	श०	वु०	ग्र०
०	२	०	१	०	१	१	२	१	मा०
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६	दि०
१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

श० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	वु०	के०	ग्र०
६	१	३	२	५	५	६	५	२	मा०
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

श० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	दि०
६	३०	५७	१८	३६	९	२७	५७	०	घ०

श० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	३	२	१	३	०	मा०
१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

श० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

मं०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्र०
०	१	१	२	१	०	२	०	१	मा०
२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३	दि०
१६	५१	१२	१०	३१	१६	३०	५७	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

श० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
५	४	५	४	१	५	१	२	१	मा०
३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	दि०
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	घ०

श० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
४	४	४	१	५	१	२	१	४	मा०
१	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	दि०
३६	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	घ०

बुधकी दशा और बुधकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२	२०	२४	१३	१२	२०	१०	२५	१७	दि०
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

बु० दशा केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मा०
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	दि०
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

बु० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
५	१	२	१	५	४	५	८	१	मा०
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२८	२९	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

बु० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	१	१	१	०	१	मा०
१५	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१	दि०
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	घ०

बु० दशा चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मा०
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५	दि०
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	घ०

बु० दशा मगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मा०
२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१७	२१	दि०
४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

बु० द० राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	४	४	४	१	५	१	२	१	मा०
१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३	दि०
४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	घ०

बु० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
३	४	३	१	४	१	८	१	४	मा०
१८	९	२५	१७	१६	१०	८	१७	२	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

वृ० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
५	४	१	५	१	२	१	४	४	मा०
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	दि०
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

केतुकी दशामे केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि०
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

के० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा०
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

के० द० सूर्यके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि०
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ०

के० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा०
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

के० द० मगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२२	१९	२३	२०	८	२८	७	१२	दि०
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

के० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा०
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि०
२४	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ०

के० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

के० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा०
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि०
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

के० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
२०	२०	२१	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि०
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ०
३०	३०	०	०	०	०	०	०	३०	प०

शु० द० शुक्रके अन्तरमे प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	२	३	२	६	५	६	५	२	मा०
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	दि०

शु० द० रविके अन्तरमे प्रत्यन्तर

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मा०
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दि०

शु० द० चन्द्रमाके अन्तरमे प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	३	२	३	२	१	३	१	मा०
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	दि०

शु० द० मंगलके अन्तरमे प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	२	१	२	१	०	२	०	१	मा०
२४	३	२६	६	२९	२४	४०	२१	५	दि०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	घ०

शु० द० राहुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
५	४	५	५	२	६	१	३	२	मा०
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	दि०

शु० द० गुरुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
४	५	४	१	५	१	२	१	४	मा०
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	दि०

शु० द० शनिके अन्तरमे प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
६	५	२	६	१	३	२	५	५	मा०
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	दि०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	घ०

शु० द० बुधके अन्तरमे प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	५	४	५	मा०
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	दि०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	घ०

शु० द० केतुके अन्तरमे प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मा०
२४	१०	२१	५	२४	३	२५	६	२९	दि०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	घ०

अष्टोत्तरी दशा विचार

दक्षिण भारतमे अष्टोत्तरी दशाका विशेष प्रचार है। स्वरशास्त्रमे बताया गया है कि जिसका जन्म शुक्लपक्षमे हो उसका अष्टोत्तरी दशा-द्वारा और जिसका जन्म कृष्णपक्षमे हो उसका विंशोत्तरी दशा-द्वारा शुभाशुभ फल जानना चाहिए। दशा-द्वारा हमे किसी भी व्यक्तिके समयका परिज्ञान होता है।

अष्टोत्तरी (१०८ वर्षकी) दशामे सूर्यदशा ६ वर्ष, चन्द्रदशा १५वर्ष, भौमदशा ८ वर्ष, बुधदशा १७ वर्ष, शनिदशा १० वर्ष,, गुरुदशा १९ वर्ष, राहुदशा १२ वर्ष और शुक्रदशा २१ वर्षकी होती है।

जन्म नक्षत्र-द्वारा दशा ज्ञात करनेकी यह विधि है कि अभिजित् सहित आर्द्रादि नक्षत्रोको पापग्रहोमे चार-चार और शुभ ग्रहोमे तीन-तीन स्थापित करनेसे ग्रहदशा मालूम पड जाती है। सरलतासे अवगत करनेके लिए नीचे चक्र दिया जाता है।

जन्मनक्षत्रसे अष्टोत्तरी दशा ज्ञात करनेका चक्र

सू०	च०	म०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	ग्र०
आर्द्रा	म	ह	अनु	पू पा	ध	उ भा	कृत्ति	
पुन	पू फा	चि		उ पा	श	रे	रो०	जन्म-
पुष्य	उ फा	स्वा	ज्ये	अभि		अ		
आश्ले		वि	मू	श्र	पू भा	भ	मृ	नक्षत्र

अष्टोत्तरी दशा स्पष्ट करनेकी विधि

भयात्के पलोको दशाके वर्षोंसे गुणा कर भभोगके पलोका भाग देनेसे विंशोत्तरीके समान भुक्त वर्षादि मान आता है। इसे ग्रहवर्षोंमे-से घटानेपर भोग्य वर्षादि मान निकलता है।

उदाहरण—भयात १६।३९ भभोग ५८।४४

६० ६०

९६० + ३९ = ३४८० + ४४ =

पलात्मक भयात = ९९९ पलात्मक भभोग = ३५२४

इस उदाहरणमे जन्मनक्षत्र कृत्तिका होनेके कारण शुक्रकी दशामे जन्म हुआ है, अत शुक्रके दशा वर्षासे भयातके पलोको गुणा किया।

९९९ भयात | ३५२४ भभोग

२१ ग्रहवर्ष

२०९७९ – ३५२४

३५२४)२०९७९(५ वर्ष
१७६२०
३३५९
१२
३५२४)४०३०८(११ मास
३५२४
५०६८
३५२४
१५४४ × ३०
३५२४)४६३२०(१३ दिन
३५२४
११०८०
१०५७२
५०८

शुक्र दशाके भुक्त वर्षादि ५।११।१३।८, इन्हे समस्त दशाके वर्षोमे-से घटाया तो—

२१।०।०
५।११।१३
१५। ०।१७ भोग्य वर्षादि

अष्टोत्तरी दशा चक्र

शु०	सू०	च०	म०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्र०
१५	६	१५	८	१७	१०	१९	१२	वर्ष
०	०	०	०	०	०	०	०	मास
१७	०	०	०	०	०	०	०	दिन
संवत्	सवत्	संवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्
२००१	२०१६	२०२२	२०३७	२०४५	२०६२	२०७२	२०९१	२१०३
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१०	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७

अष्टोत्तरी अन्तर्दशा साधन

दशा-दशाका परस्पर गुणाकर १०८ का भाग देनेसे लब्ध वर्ष और शेपको, १२से गुणाकर १०८ का भाग देनेसे लब्ध मास, शेपको पुन ३०से गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध दिन एवं शेपको पुन ६०से गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध घटी होगी।

उदाहरण—शुक्रमे सूर्यका अन्तर निकालना है—

२१ × ६ = १२६ − १०८ = १ ल० वर्ष, १८ शेप

१८ × १२ = २१६ − १०८ = २ मास अर्थात् १ वर्ष २ मास हुआ।

यहाँ सरलताके लिए अन्तर्दशाके चित्र दिये जाते हैं—

अष्टोत्तरी अन्तर्दशा—सूर्यान्तर्दशा चक्र

सूर्य	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	१	०	१	वर्ष
४	१०	५	११	६	०	८	२	मास
०	०	१०	१०	२०	२०	०	०	दिन

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	ग्र०
२	१	२	१	२	१	२	०	वर्ष
१	१	४	४	७	८	११	१०	मास
०	१०	१०	२०	२०	०	०	०	दिन

भौमान्तर्दशा चक्र

भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	१	०	१	वर्ष
७	३	८	४	१०	६	५	१	मास
३	३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	दिन
२०	२०	४०	४०	०	०	०	०	घटी

बुधान्तर्दशा चक्र

बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	ग्र०
२	१	२	१	३	०	२	१	वर्ष
८	६	११	१०	३	११	४	३	मास
३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	३	दिन
२०	४०	४०	०	०	०	०	२०	घटी

शन्यन्तर्दशा चक्र

श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	ग्र०
०	१	१	१	०	१	०	१	वर्ष
११	८	१	११	६	४	८	६	मास
३	३	१	१०	२०	२०	२६	२६	दिन
२०	२०	०	०	०	०	४०	४०	घटी

गुर्वन्तर्दशा चक्र

गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	ग्र०
३	२	३	१	२	१	२	१	वर्ष
४	१	८	०	७	४	११	९	मास
३	१०	१०	२०	२०	२६	२६	३	दिन
२०	०	०	०	०	४०	४०	२०	घटी

राह्वन्तर्दशा चक्र

रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	ग्र०
१	२	०	१	०	१	१	२	वर्ष
४	४	८	८	१०	१०	१	१	मास
०	०	०	०	२०	२०	१०	१०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

शुक्रान्तर्दशा चक्र

शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्र०
४	१	२	१	३	१	३	२	वर्ष
१	२	११	६	३	११	८	४	मास
०	०	०	२०	२०	१०	१०	०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

योगिनी दशा

योगिनी दशा ३६ वर्षमे पूर्ण होती है, इसलिए कुछ ज्योतिर्विद् इसका फल ३६ वर्षकी आयु तक ही मानते हैं। लेकिन कुछ लोग ३६ वर्षके बाद इसकी पुनरावृत्ति मानते हैं। आजकल जन्मपत्रीमें विंशोत्तरी और योगिनी दशा नियमित रूपसे लगायी जाती है।

योगिनी दशाओके मगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी भद्रिका, उल्का, सिद्धा और सकटा ये नाम बताये गये हैं। इनकी वर्षसख्या भी क्रमश.

१, २, ३, ४, ५, ६, ७ और ८ हैं। इन दशाओंके स्वामी क्रमश चन्द्र, सूर्य, गुरु, भौम, बुध, शनि, शुक्र होते है। सकटा दशाके पूर्वार्द्ध (१ से ४ वर्ष तक) मे राहु और उत्तरार्द्ध (५ से ८ वर्ष तक)मे केतु स्वामी होता है।

जन्म नक्षत्रसे योगिनी दशा निकालनेके लिए जन्म-नक्षत्रसंख्यामें तीन जोडकर आठसे भाग देनेपर एकादि शेपमें क्रमश मगला,पिंगलादि दशा एव शून्य शेषमें सकटा दशा समझनी चाहिए।

स्पष्ट दशा साधन करनेके लिए विशोत्तरी दशाके समान भयातके पलोको दशाके वर्षोंसे गुणा कर भभोगके पलोका भाग देनेपर दशाके भुक्त वर्षादि आयेंगे। भुक्त वर्षादिको दशा वर्षमें-से घटानेपर भोग्य वर्षादि होंगे।

उदाहरण—भयात १६।३९ = ९९९ पल, भभोग ५८।४८ = ३५२८ पल।

इस उदाहरणमे जन्मनक्षत्र कृत्तिका है। अश्विनीसे कृत्तिका तक गणना करनेपर तीन संख्या हुई, अत ३ + ३ = ६

६ – ८ = ६ शेष। यहाँ मगलाको आदि कर ६ तक गिना तो उल्काकी दशा आयी। विना नक्षत्र-गणना किये जन्मनक्षत्रसे योगिनी दशा जाननेके लिए नीचे चक्र दिया जाता है—

जन्म-नक्षत्रसे योगिनी दशा बोधक चक्र

म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	दशा
च० १	सू० २	गु ३	म ४	बु ५	श ६	शु ७	रा के ८	स्वामी वर्ष
आर्द्रा चि० श्र०	पुन० स्वा० ध०	पु० वि० श०	आश्ले० अनु० पू० भा० अश्वि०	म० ज्ये० उ०भा भ०	पू०फा मू० रे० कृ०	उ फा पू पा रो०	ह० उ०पा० मृ०	जन्म नक्षत्र

भयातके पलोको उल्काके वर्षोंसे गुणा किया—

९९९ × ६ = ५९९४ – ३५२४ पलात्मक भभोग

३५२४)५९९४(१ वर्ष
३५२४
२४७० × १२
३५२४)२९६४०(८ मास
२८१९२
१४४८ × ३०
३५२४)४३४४०(१२ दिन
३५२४
८२००
७०४८

उल्का दशाके भुक्त वर्षादि १।८।१२ इसको ६ वर्षमें घटाया तो ४।३।१८ उल्का दशाके भोग्य वर्षादि हुए।

योगिनी दशाका चक्र विंशोत्तरी और अष्टोत्तरीके समान ही लगाया जाता है। आगे उदाहरणके लिए योगिनी दशा लिखी जा रही है।

योगिनीदशा चक्र

उ०	सि०	स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	दशा
४	७	८	१	२	३	४	५	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	मास
१८	०	०	०	०	०	०	०	दिन
सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्	सवत्
२००१	२००५	२०१२	२०२०	२०२१	२०२३	२०२६	२०३०	२०३५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	३	३	३	३	३	३	३	३
१०	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८

अन्तर्दशा साधन

दशा-दशाकी वर्षसंख्याको परस्पर गुणा कर ३६ से भाग देनेपर अन्तर्दशाके वर्षादि आते हैं। मंगला दशाकी अन्तर्दशा—

१ × १ = १ – ३६ = ० शेष १ × १२ = १२ ÷ ३६ = ० शेष १२
१२ × ३० = ३६० – ३६ = १० दिन

मंगलामें पिंगलाका अन्तर = १ × २ = २ – ३६ = ० ।
२ × १२ = २४ – ३६ = ०, शेष २४ × ३० = ७२० – ३६० = २० दिन

मंगलामें धान्याका अन्तर = १ × ३ = ३ – ३६ = ० शेष ३ × १२ = ३६ – ३६ = १ मास

मंगलामें भ्रामरीका अन्तर = १ × ४ = ४ – ३६ = ० शेष ४ = १२ = ४८ = ४८ – ३६ = १ शेष १२ × ३० = ३६० ÷ ३६ = १०, १ मास १० दिन

मंगलामें भद्रिकाका अन्तर = १ × ५ = ५ ÷ ३६ = ० शेष ५ × १२ = ६०

६० ÷ ३६ = १ शे०, २४ × ३० = ७२० – ३६ = २० दिन = १ मास २० दिन

मंगलामें उल्काका अन्तर = १ × ६ = ६ – ३६ = ० शे० ६ × १२ = ७२, ७२ – ३६ = २ मास

मंगलामें सिद्धाका अन्तर—१ × ७ = ७ – ३६ = ० शेष ७ × १२ = ८४

८४ ÷ ३६ = २ शेष १२ × ३० = ३६० – ३६ = १० २मास १० दिन

मंगलामें संकटाका अन्तर—१ × ८ = ८ – ३६ = ० शेष ८ × १२ = ९६ ÷ ३६ = २ शेष २४ × ३० = ७२० – ३६ = २० २ मास २० दिन

मगलामे अन्तर्दशा चक्र

म०	गिं०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	मि०	स०	दशा
०	०	०	१	१	१	०	०	वर्ष
०	०	१	१	१	२	२	२	मास
१०	२०	०	१०	२०	०	१०	२०	दिन

पिंगलामे अन्तर्दशा चक्र

पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	म०	म०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
१	२	२	३	४	४	५	०	मास
१०	०	१०	१०	०	२०	१०	२०	दिन

धान्यामे अन्तर्दशा चक्र

धा०	भ्रा०	भ०	उ०	मि०	स०	म०	पिं०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
३	४	५	६	७	८	१	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भ्रामरीमे अन्तर्दशा चक्र

भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	म०	पिं०	धा०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
५	६	८	९	१०	१	२	४	मास
१०	२०	०	१०	२०	१०	२०	०	दिन

भद्रिकामे अन्तर्दशा चक्र

भ०	उ०	सि०	स०	म०	पिं०	धा०	भ्रा०	द०
०	०	०	१	०	०	०	०	वर्ष
८	१०	११	१	१	३	५	६	मास
१०	०	२०	१०	२०	१०	०	२०	दिन

उल्कामे अन्तर्दशा चक्र

उ०	मि०	म०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	द०
१	१	१	०	०	०	०	०	वर्ष
०	२	४	२	४	६	८	१०	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

सिद्धामे अन्तर्दशा चक्र

मि०	म०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	द०
१	१	०	०	०	०	०	१	वर्ष
४	६	२	८	७	९	११	२	मास
१०	२०	१०	२०	०	१०	२०	०	दिन

सकटामे अन्तर्दशा चक्र

म०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	मि०	द०
१	०	०	०	०	१	१	१	वर्ष
९	२	५	८	१०	१	४	६	मास
१०	२०	१०	०	२०	१०	०	२०	दिन

वलविचार

जन्मपत्रीका यथार्थ फल ज्ञात करनेके लिए षड् वलका विचार करना नितान्त आवश्यक है। क्योकि ग्रह अपने वलावलानुसार ही फल देते है। ज्योतिष शास्त्रमें ग्रहोके स्थानवल, दिग्वल, कालवल, चेष्टावल, नैसर्गिक-वल और दृग्वल ये छह वल माने गये है।

स्थानवलमें उच्चवल, युग्मायुग्मवल, सप्तवर्गैक्यवल, केन्द्रवल, द्रेष्काण-वल ये पाँच सम्मिलित हैं। इन पाँचो वलोका योग करनेसे स्थान-वल होता है।

उच्चबलसाधन

स्पष्ट ग्रहमें-से ग्रहके नीचको घटाना चाहिए। घटानेसे जो आवे वह ६ राशिसे अधिक हो तो १२ राशिमे उसे घटा लेना चाहिए। शेषको विकला बना ले और उन विकलाओंमें १०८०० से भाग देनेपर लब्ध कलाएँ आयेंगी। शेषको ६० से गुणा कर, गुणनफलमें १०८००से भाग देनेपर लब्ध विकलाएँ होगी। इन कला-विकलाओंके अंशादि बना लें।

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ०।१०।७।३४ है, इसमें-से सूर्यके नीच राश्यंश-को घटाया तो ६।०।७।३४ आया। यहाँ राशि स्थानमें घटानेसे अधिक होनेके कारण इसे १२ राशिमें-से घटाया—

१२। ०। ०। ०
६। ०। ७।३४
―――――――
५।२९।५२।२६ शेष

५ × ३० = १५० + २९ = १७९ × ६० = १०७४० + ५२ = १०७९२ × ६० = ६४७५२० + २६ = ६४७५४६ − १०८०० = ५९ शेष ५३४६ × ६० = ३२०७६० − १०८०० = २९ लब्धि, यहाँ शेपका त्याग कर दिया। अत सूर्यका उच्चबल ०।५९।२९ हुआ।

चन्द्र स्पष्ट १। ०।३४।३४
नीच राश्यंश ७। ३। ०।२४
―――――――
५।२७।३४।१० शेष

५ × ३० = १५० + २७ = १७७ × ६० = १०६२० + २४ = १०६४४

१०६४४ × ६० = ६३८६४० + १० = ६३८६५० − १०८०० = ५९, शेष १४४० × ६० = ८६४०० − १०८०० = ८

अर्थात् ०।५९।८ चन्द्रमाका उच्चबल हुआ। इसी प्रकार अन्य

ग्रहोके उच्चवलका सावन कर जन्मपत्रीमे स्पष्ट उच्चवल चक्र लिखना चाहिए। नीचे प्रत्येक ग्रहके उच्च और नीच राश्यश दिये जाते हैं। समस्त ग्रहोके उच्चवल सरलतापूर्वक निकालनेके हेतु सारणियाँ दी जा रही है। इनपर-से समस्त ग्रहोके उच्चवलका सावन किया जा सकेगा।

उच्च-नीच राश्यश वोधक चक्र

सूर्य	चन्द्र	भौम	वुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
०	०	९	५	३	११	६	२	८	उच्च
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०	०	राश्यश
६	७	३	११	९	५	०	८	२	नीच
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०	०	राश्यश

युग्मायुग्मवल सावन

चन्द्र और शुक्र सम राशि—वृप, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर एव मीन या सम राशिके नवाशमें हो तो १५ कला वल होता है। यदि ये ग्रह सम राशि और सम नवाश दोनोमें हो तो ३० कला वल होता है और दोनोमे न हो तो शून्यकला वल होता है।

सूर्य, भौम, वुव, गुरु और शनि विपम राशि या विपम नवाशमे हो तो १५ कला वल, दोनोमें हो तो ३० कला वल और दोनोमे ही न हो तो शून्य कला युग्मायुग्म वल होता है।

उदाहरण—

सूर्य जन्मकुण्डलीमे मेप राशिका और नवाश कुण्डलीमे कर्क राशिका है। यहाँ मेप राशि विषम है और नवाश राशि सम है। अत सूर्यका युग्मायुग्म वल १५ कला हुआ।

चन्द्रमा जन्मकुण्डलीमें वृप राशि और नवाश कुण्डलीमे मकर राशिमें है, ये दोनो ही राशियाँ विपम है अत चन्द्रमाका युग्मायुग्म वल ३० कला हुआ।

भौम जन्मकुण्डलीमे मिथुन राशि और नवाश कुण्डलीमे भी मिथुन राशिका है। ये दोनो ही राशियाँ विषम है अत ३० कला युग्मायुग्म बल भौमका हुआ।

बुध जन्मकुण्डलीमे मेष राशि और नवाश कुण्डलीमे वृश्चिक राशिका है। मेष राशि विषम और वृश्चिक राशि सम है अत १५ कला बल भौमका हुआ। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका बल निकालकर चक्र बना देना चाहिए। कुण्डलीके बल साधन प्रकरणमे राहु-केतुका बल नही बताया गया।

उदाहरण कुण्डलीका युग्मायुग्मबल चक्र निम्न प्रकारसे है—

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अश
१५	३०	३०	१५	१५	१५	३०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

केन्द्रादि बल साधन

केन्द्र—प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावमे स्थित ग्रहोका बल एक अश, पणफर—द्वितीय, पचम, अष्टम और एकादश स्थानमे स्थित गहोका बल ३० कला एव आपोक्लिम—तृतीय, षष्ठ, नवम और द्वादश भावमे स्थित ग्रहोका बल १५ कला होता है।

उदाहरण—इष्ट उदाहरणकी जन्म-कुण्डलीमे सूर्य लग्नसे नवम स्थानमें, चन्द्रमा दशममे, भौम एकादशमें, बुध नवममें, गुरु द्वादशमें, शुक्र अष्टममें और शनि एकादशमें है। उपर्युक्त नियमके अनुसार सूर्यके आपोक्लिममे होनेसे उसका १५ कला बल, चन्द्रमाका केन्द्रमें होनेसे एक अश बल, भौमका पणफरमें होनेसे ३० कला बल, बुधका आपोक्लिममें होनेसे १५ कला बल, गुरुका भी आपोक्लिममें होनेसे १५ कला बल, शुक्रका पणफरमे होनेसे ३० कला बल और शनिका भी पणफरमें होनेसे ३० कला बल होगा।

उदाहरण कुण्डलीका केन्द्रादि बल-चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	१	०	०	०	०	०	अंश
१५	०	३०	१५	१५	३०	३०	कला
०	०	०	०	०	०	३	विकला

द्रेष्काण बलसाधन

पुरुष ग्रहो—सूर्य, भौम और गुरुका प्रथम द्रेष्काणमें १५ कला बल, स्त्रीग्रहो—शुक्र और चन्द्रमाका तृतीय द्रेष्काणमे १५ कला बल एव नपुसक ग्रहो—बुध और शनिका द्वितीय द्रेष्काणमें १५ कला बल होता है। जिस ग्रहका जिस द्रेष्काणमे बल बतलाया गया है, यदि उसमें ग्रह न रहे तो शून्य बल होता है।

उदाहरण—अभीष्ट उदाहरण कुण्डलीमे पूर्वोक्त द्रेष्काण विचारके अनुसार सूर्य द्वितीय द्रेष्काणमें, चन्द्रमा प्रथममें, भौम तृतीयमे, बुध तृतीयमे, गुरु तृतीयमें, शुक्र तृतीयमे और शनि प्रथममें है। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्यका शून्य बल, चन्द्रमाका शून्य, भौमका शून्य, बुधका शून्य, गुरुका शून्य, शुक्रका १५ कला और शनिका शून्य बल हुआ।

द्रेष्काण बल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	अंश
०	०	०	०	०	१५	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

सप्तवर्ग बल साधन

पहले गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश और सप्तांशका

साधन कर उक्त कुण्डली चक्र बनानेकी विधि उदाहरण सहित लिखी गयी है। इन सातों वर्गोंका साधन कर बल निम्न प्रकार सिद्ध करना चाहिए।

	अ०।क०।वि०
स्वगृही ग्रहका बल	०।३०।०
अतिमित्रगृही ग्रहका बल	०।२२।३०
मित्र ,, ,, ,, ,,	०।१५।०
सम ,, ,, ,, ,,	०। ७।३०
शत्रु ,, ,, ,, ,,	०। ३।४५
अतिशत्रु ,, ,, ,,	०। १।५२।३०

सब ग्रहोंके बलको जोड़कर ६० से भाग देनेपर अंशात्मक ऐक्य बल होता है।

उदाहरण—सूर्य जन्मकुण्डलीमें मेष राशिका है, अतः अतिमित्रके गृहमें होनेसे २२।३० बल गृहका प्राप्त हुआ।

चन्द्रमा—वृष राशिका होनेसे मित्र शुक्रके गृहमें है, इस कारण इसका गृह बल १५।० लिया जायेगा।

भौम—मिथुन राशिका होनेसे मित्र बुधके गृहमें है, अतः इसका गृह बल १५।० ग्रहण करना चाहिए। इस तरह समस्त ग्रहोंका गृहबल निकाल लेना चाहिए।

होरा बल—सूर्य अपने होरामें है, अतः इसका ३०।० बल, चन्द्रमा अपने होरामें है, अतः इसका ३०।० बल, भौमका चन्द्रमाके गृहमें होनेके कारण २२।३० बल, बुधका अपने सम चन्द्रमाके गृहमें रहनेके कारण ७।३० बल, गुरुका अपने अतिमित्र सूर्यके गृहमें रहनेके कारण २२।३०

---

१ यहाँ मित्रामित्रकी गणना पञ्चधा मैत्री चक्रके अनुसार ग्रहण करनी चाहिए।

वल, शुक्रका अपने सम सूर्यके गृहमे होनेके कारण ७।३० वल एव शनिका अपने सम सूर्यके गृहमें रहनेके कारण ७।३० होराका वल होगा।

द्रेष्काण वल—द्रेष्काण कुण्डलीमे अपनी राशिमे रहनेके कारण सूर्यका ३०।० वल, चन्द्रमाका समसज्ञक—उदासीन शुक्रकी राशिमें रहनेके कारण ७।३० वल, भौमका उदासीन शनिकी राशिमें रहनेके कारण ७।३० वल, वुधका मित्र गुरुकी राशिमें रहनेके कारण १५।० वल, गुरुका अपनी राशिमें रहनेके कारण ३०।० वल, शुक्रका मित्र मंगलकी राशिमें रहनेके कारण १५।० वल और शनिका अतिमित्र वुधकी राशिमें रहनेके कारण २२।३० द्रेष्काण वल होगा।

सप्ताश वल—सप्ताश कुण्डलीमें सूर्यका शत्रु वुधकी राशिमें रहनेके कारण ३।४५ सप्ताश वल, चन्द्रमाका मित्र शुक्रकी राशिमे रहनेके कारण १५।० वल, मगलका अपनी राशिमे रहनेके कारण ३०।० वल होगा। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका सप्ताश वल वना लेना चाहिए।

गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्ताश वल साधनके समान ही नवाश, द्वादशाश और त्रिशाश कुण्डलीमे स्थित ग्रहोका वल-साधन भी कर लेना चाहिए। इन सातो फलोके योगफलमे ६० का भाग देनेसे सप्तवर्गैक्य वल आयेगा।

पूर्वोक्त उच्चवल, सप्तवर्गैक्यवल, युग्मायुग्मवल, केन्द्रादिवल एव द्रेष्काणवल इन पाँचो वलोका योग स्थानवल होता है। जन्मपत्रीमें स्थानवल चक्र लिखनेके लिए उपर्युक्त पाँचो वलोके योगका चक्र लिखना चाहिए।

दिग्वलसाधन

शनिमे-से लग्नको, सूर्य और मगलमे-से चतुर्थ भावको, चन्द्रमा और शुक्रमें-से दशम भावको, वुध और गुरुमे-से सप्तम भावको घटाकर शेपमें राशि ६ का भाग देनेसे ग्रहोका दिग्वल आता है। यदि शेप ६ राशिसे अधिक हो तो १२ राशिमें-से घटाकर तव भाग देना चाहिए। दूसरा

नियम यह भी है कि शेपको विकलाओंमे १०८०० का भाग देनेमे कला, विकलात्मक, दिग्वल आ जाता है।

उदाहरण—सूर्य ०।१०।७।३४ मे-से चतुर्थ भाव ७।२४।४३।२१ जो भाव स्पष्टमे आया है, को घटाया तो—

०।१०।७।३४
७।२४।४३।२१
____
४।१५।२४।१३ शेप

४ × ३० = १२० + १५ = १३५ × ६० = ८१०० + २४ =
८१२४ × ६० = ४८७४४० + १३ = ४८७४५३
४८७४५३ ÷ १०८०० = ४५, शेप १४५३ × ६० =
८७१८० – १०८०० = ८, यहाँ शेपका त्याग कर दिया गया अत सूर्यका दिग्वल ४५।८ हुआ।

चन्द्रमाका—१।०।२४।३४ चन्द्रस्पष्टमे-से
१।२४।४३।२१ दशम भावको घटाया
११।५।४१।१३

यहाँ ६ राशिमे अधिक होनेके कारण १२ राशिमे-से घटाया।

१२।०।०।०
११।५।४१।१३
____
०।२४।१८।४७ शेप

० × ३० = ० + २४ = २४ × ६० = १४४० + १४५८
१४५८ × ६० = ८७४८० + ४७ = ८७५२७
८७५२७ – १०८०० = ८ शेप ११२७ × ६० = ६७६२०
६७६२० – १०८०० = ६। यहाँ शेपका प्रयोजन न होनेमे त्याग कर दिया गया।

८।६ चन्द्रमाका वल हुआ। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका दिग्वल वनाकर जन्मपत्रीमे दिग्वल चक्र लिखना चाहिए।

कालवलसाधन

नतोन्नतवल, पक्षवल, अहोरात्रत्रिभाग वल, वर्षेशादिवल, इन चारो वलोका योग कर देनेपर काल-वल आता है।

नतोन्नतवलसाधन—नत घट्यादिकोको दूना कर देनेसे चन्द्र, भौम और शनिका नतोन्नत वल एव उन्नत घट्यादिकोको दूना करनेसे सूर्य, गुरु एव शुक्रका नतोन्नत वल होता है। बुधका सदा १ अश नतोन्नत वल लिया जाता है। नतसाधनकी प्रक्रिया पहले लिखी जा चुकी है, इसे ३० घटीमे-से घटानेपर नतके समान पूर्व या पश्चिम उन्नत होता है।

उदाहरण—७।१९ पश्चिम नत है (इष्ट कालपर-से प्रथम नत-साधनके नियमानुसार आया है) इसे ३० घटीमे-से घटाया तो—३०।०

७।१९

उन्नत-पश्चिम २२।४१

उपर्युक्त नियममे सूर्यका नतोन्नत वल उन्नत-द्वारा वनाया जाता है अत २२।४१ × २ = ४५।२२ कलादि नतोन्नत वल सूर्य, गुरु और शुक्रका हुआ।

चन्द्र, भौम शनिका—७।१९ × २ = १४।३८ कलादि वल हुआ। बुधका एक अश माना जायेगा। अत इस उदाहरणका नतोन्नत वल-चक्र निम्न प्रकार वनेगा—

नतोन्नत वलचक्र

सू	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	१	०	०	०	अश
४५	१४	१४	०	४५	४५	१४	कला
२२	३८	३८	०	२२	२२	३८	विकला

पक्षवलसाधन—सूर्य चन्द्रमाके अन्तरके अशोमे ३ का भाग देनेसे शुभ ग्रहो—चन्द्र, बुध, गुरु और शुक्रका पक्षवल होता है, इसे ६० कलामे

घटानेसे पापग्रहो—सूर्य, मगल, शनि और पापयुक्त वुधका पक्षवल होता है।

उदाहरण—चन्द्रमा १। ०।२४।३४ मे-से
सूर्य ०।१०। ७।३४ को घटाया
२०।१७। ०

३)२०।१७(६ कला — ६।४५ शुभग्रहोका पक्षवल हुआ
१८
२×६०
१२०
१७
३)१३७(४५ विकला — ६०।०
१२ — ६।४५
१७ — ५३।१५ अशुभ
१५ — ग्रहोका पक्षवल होगा।
२

पक्षवल चक्र

सू०	च०	भौ०	वु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	अश
५३	६	५३	५३	६	६	५३	कला
१५	४५	१५	१५	४५	४५	१५	विकला

द्विवारात्रि त्र्यशवल—दिनका जन्म हो तो दिनमानका त्रिभाग करे और रातका जन्म हो तो रात्रिमानका त्रिभाग करे। यदि दिनके प्रथम भागमे जन्म हो तो वुधका, दूसरे भागमे सूर्यका और तीसरे भागमे शनिका एक अश वल होता है। रातके प्रथम भागमे जन्म हो तो सूर्यका, द्वितीय भागमे शुक्रका और तृतीय भागमे भौम एव गुरुका सदा एक अश वल होता है।

इससे विपरीत स्थितिमें शून्यबल समझना चाहिए। उदाहरण—दिनमान ३२।६ है और इष्टकाल २३।२२ है, दिनमान ३२।६ − ३ = १०।४२; १०।४२ का एक भाग, १०।४२ से २१।२४ तक दूसरा भाग एवं २१।२४ से ३२।६ तक तीसरा भाग होगा। अभीष्ट इष्टकाल तृतीय भागका है, अत शनिका एक अंश बल होगा। गुरुका सर्वदा एक अंश बल माना जाता है, अत उसका भी एक अंश बल ग्रहण करना चाहिए। बलचक्र नियम इस प्रकार होगा—

दिवारात्रि त्रिभाग बलचक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	१	०	१	अंश
०	०	०	०	०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

वर्षेशादि बल—इष्ट दिनका कलियुगाद्यहर्गण लाकर उसमें ३७३ घटाकर शेषमें २५२०का भाग देनेपर जो शेष आवे उसे दो जगह स्थापित करें। पहले स्थानमें ३६० का और दूसरे स्थानमें ३० का भाग दें। दोनों स्थानकी लब्धियोंको क्रमश तीन और दोसे गुणा करें, गुणनफलमें एक जोड दें। इस योगफलमें ७का भाग देनेपर प्रथम स्थानके शेषमें वर्षपति और द्वितीय स्थानके शेषमें मासपति होता है।

कलियुगाद्यहर्गणसाधनविधि—इष्ट शक वर्षमें ३१७९ जोड देनेसे कलिगत वर्ष होते हैं। कलिगत वर्षोंको १२से गुणा कर चैत्रादि गतमास जोड देना चाहिए। इस योगफलको तीन स्थानोंमें रखना चाहिए, प्रथम स्थानमें ७०से भाग देकर जो लब्ध आये उसे द्वितीय स्थानमें जोडे और इस योगफलमें ३३ का भाग देकर लब्धिको तृतीय स्थानमें जोड दें। पुन इस योगफलको ३० से गुणा कर गत तिथि जोड दें। इस योगफलको दो स्थानोंमें स्थापित करें। प्रथम स्थानकी संख्याको ११ से गुणा कर ७०३

का भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानकी सख्यामें घटानेसे कलियुगाद्यहर्गण होता है ।

उदाहरण—वि० स० २००१ शक १८६६ के वैशाख मास कृष्ण पक्ष द्वितीया तिथि, सोमवारका जन्म है ।

१८६६ + ३१७९ = ५०४५ कलियुगादि गतवर्ष

५०४५ × १२ = ६०५४० + १ = ६०५४१ गतमास

६०५४१ − ७० = ८६४	६०५४१	६०५४१ + १८६०
	८६४	= ६२४१
शेष ६१	६१४०५	
	− ३३	
	= १८६०	शेष २५

६२४०१ × ३० = १८७२०३० + १६ (तिथि शुक्ल प्रतिपदामे जोडनी चाहिए)

१८७२०४६ × ११ = २०५९२५०६	१८७२०४६
२०५९२५०६ − ७०३ =	२९२९२
२९२९२, शेष २४०	१८४२७५४

१८४२७५४ − ३७३ = १८४२३८१ − २५२० = ७३१, शेष २६१, यहाँ लब्धिका उपयोग न होनेसे शेषको दो स्थानोमे स्थापित किया ।

२६१ − ३६० = ० २६१ − ३० = ८, शेष २१

शेष = २६१ मासेश ८ × २ = १६ + १ = १७

१७ − ७ = २, शेष ३

वर्षेश = ० × ३ = ० + १ = १ − ७ = ०, शेष १

दिनेश साधन—जिस दिनका इष्ट काल हो, वही दिनेश होता है । प्रस्तुत उदाहरणमे सोमवारका इष्टकाल है, अत दिनेश चन्द्रमा होगा ।

कालहोरेशसाधन—सूर्य दक्षिण गोलमे हो तो इष्टकालमे चर घटीको जोडना और उत्तर गोलमे हो तो इष्टकालमें-से चर घटीको घटाना चाहिए। इस कालमे पूर्व देशान्तरको ऋण और पश्चिम देशान्तरको धन करनेसे वारप्रवृत्तिके समयसे इष्टकाल होता है। इस इष्टकालको दोमे गुणा कर ५ का भाग देनेपर जो शेष रहे उसे गुणनफलमे-से घटाना चाहिए। अब शेषमे एक जोडकर ७ का भाग देनेसे जो शेष आवे उसे दिनपतिसे आगे गणना करनेपर कालहोरेश आता है।

उदाहरण—इष्टकाल २३।२२, चर मिनिटादि २५।१७—यह पहले निकाला गया है। इसमे घट्यादि–२५—$\frac{१७}{६०}$ = २५ + $\frac{१७}{६०}$ = $\frac{१५१७}{६०}$ × $\frac{१}{२४}$ = $\frac{१५१७}{१४४०}$ = १ $\frac{७७}{१४४०}$ = $\frac{६०}{१}$ × $\frac{७७}{१४४०}$ = ३ $\frac{५}{२४}$ अर्थात् एक घटी ३ पल चर काल हुआ। यहाँ सूर्य मेष राशिका होनेके कारण दक्षिण गोलका है अत उपर्युक्त नियमानुसार इष्टकाल २३।२२ मे देशान्तर ८ मिनिट ४० से० के घटी पल बनाये तो { चर घटी १।३ को इष्टकाल २३।२२ मे जोडा देशान्तर २४।२५

२१$\frac{२}{३}$ पल हुए

०।२१, आरा रेखादेशसे पश्चिम होनेके कारण देशान्तर घटीका धन सस्कार किया।

२४।२५
०।२१

२४।४६ वारप्रवृत्तिसे इष्टकाल

२४।४६ × २ = ४९।३२ – ५ = ९ लब्धि, शेष ३।४७।४९।३२–३।४७ = ४५।४५ + १ = ४६।४५ – ७ = ६ लब्धि, शेष ४।४५, यहाँ वाराधिपति चन्द्रमासे ४ तक गिननेपर बृहस्पति कालहोरेश हुआ।

बल साधनका नियम यह है कि वर्षपति, मासपति, दिनपति और कालहोरापति ये क्रमश एक चरण वृद्धिसे बलवान् होते है। जैसे वर्षपतिका बल १५ कला, मासपतिका ३० कला, दिनपतिका ४५ कला और काल-

होरापतिका एक अश वल होता है।

प्रस्तुत उदाहरणमे वर्पपति रवि, मासपति मगल, दिनपति चन्द्रमा और कालहोरापति वृहस्पति हुआ। इन सभी ग्रहोका वल चरण-वृद्धि क्रममे नीचे दिया जाता है।

वर्पेशादि वल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	१	०	०	अश
१५	४५	३०	०	०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

जन्मपत्रीमे कालवल चक्र लिखनेके लिए नतोन्नतवल, पक्षवल, दिवा-रात्र्यगवल और वर्पेशादिवल इन चारोका जोड करना चाहिए।

अयनवल—इसका साधन करनेके लिए सूक्ष्म क्रान्तिका साधन करना परमावश्यक है। गणित क्रियाकी सुविधाके लिए नीचे १० अकोमे ध्रुवाक और ध्रुवान्तराक सारिणी दी जाती हैं।

सायन ग्रहके भुजाशोमे १०का भाग देनेसे जो लब्धि हो, वह गत-क्रान्ति खण्डाक होता है। अशादि शेपको ध्रुवान्तराकसे गुणा कर १०का भाग देनेसे जो लब्धि हो उसे गत खण्डमे जोडकर पुन १०का भाग देनेपर अशादि क्रान्ति स्पष्ट होती है। इस क्रान्तिकी दिशा सायन ग्रहके गोलानुसार अवगत करनी चाहिए।

तीन राशि—९० अशोकी भुजाका ध्रुवाक चक्र

अश	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०
	(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)	(९)
ध्रुवाक	४०	८०	११७	१५१	१८१	२०६	२२४	२३६	२४०
ध्रुवान्तराक	४०	४०	३७	३४	३०	२५	१८	१४	४

उदाहरण—सूर्य ०।१०।७।३४ अयनाश २३।४६ है।

०।१०।७।३४ स्पष्ट सूर्य

१।३।४६।० अयनाश

१।३।५३।३४ सायन सूर्य—इसके भुजाश निकालने हैं।

भुजाश बनानेका नियम यह है कि यदि ग्रह तीन राशिके भीतर हो तो वही, उसका भुजाश और तीन राशिसे अधिक और ६ राशिसे कम हो तो ६ राशिमे-से ग्रहको घटा देनेसे भुजाश, ६ राशिसे ग्रह अधिक और ९ राशिसे कम हो तो ग्रहमे-से ६ राशि घटानेसे भुजाश एव नौ राशिसे अधिक हो तो बारह राशिमें-से घटानेसे भुजाश होता है।

प्रस्तुत उदाहरणमे सूर्य ३ राशिके भीतर है। अत उसका भुजाश १।३।५३।३४ राश्यादि ही होगा।

गणित क्रियाके लिए राशिके अश बनाकर अशोमे जोड दिये तो ३३।५३।३४ अशादि भुजाश हुआ।

३३।५३।३४ – १० = ३ लब्धि, शेष ३।५३।३४, यहाँ लब्धि ३ है। अत तीन खण्डके नीचेवाला गत ध्रुवाक ११७ हुआ। इस लब्धि खण्डका ध्रुवान्तराक ३७ इस अकके शेषके अशादिको गुणा करना चाहिए।

३।५३।३४ × ३७ = १४५।४१।५८ – १० = १४।३४।११

११७ + १४।३४।११ = १३१।३४।११ – १० = १३।११।२५

सूर्यकी उत्तरा क्रान्ति हुई। इसी प्रकार समस्त ग्रहोकी क्रान्तिका साधन कर लेना चाहिए।

बुधकी उत्तरा या दक्षिणा क्रान्तिको सर्वदा २४ में जोडना चाहिए। शनि और चन्द्रकी दक्षिणा क्रान्ति हो तो २४ मे क्रान्तिको जोडना और उत्तरा हो तो २४ मे-से घटाना चाहिए। सूर्य, मगल, बुध और शुक्रकी क्रान्तिको दक्षिणा क्रान्ति होनेसे २४ में-से घटाना और उत्तरा क्रान्ति हो तो २४ में जोडना चाहिए। इस प्रकार धन-ऋणसे जो क्रान्ति आयेगी, उसमें ४८ का भाग देनेसे अयनबल होता है। सूर्यके अयनबलको द्विगुणित

कर देनेसे उसका स्पष्ट चेष्टाबल होता है।

उदाहरण—सूर्य उत्तरा क्रान्ति १३।११।२५ है, अत इसे २४ मे जोडा तो—१३।११।२५

२४

३७।११।२५ ÷ ४८ = ०।४६।१३

सूर्यका अयनबल

भौमादि पांच ग्रहोका मध्यम चेष्टाबल-साधन करनेका यह नियम है। पहले इष्टकालिक मध्यम ग्रह और स्पष्ट ग्रहके योगार्धको शीघ्रोच्चमे घटानेसे भौमादि पांच ग्रहोका चेष्टाकेन्द्र होता है। चेष्टाकेन्द्र ६ राशिसे अधिक हो तो उसे १२ राशिमे-से घटाकर शेष अशादिको दूनाकर ६ का भाग देनेपर कला-विकलादि रूप मध्यम चेष्टाबल होता है।

सूर्यका अयनबल और चन्द्रमाका पक्षबल हो मध्यम चेष्टाबल होता है।

सभी ग्रहोके अयनबल और मध्यम चेष्टाबलको जोड देनेपर स्पष्ट चेष्टाबल होता है।

मध्यम ग्रह बनानेका नियम

मध्यम ग्रह ग्रह-लाघव, सर्वानन्दकरण, केतकी, करणकुतूहल आदि करण ग्रन्थो-द्वारा अहर्गण साधन कर करना चाहिए। इस प्रकरणमे ग्रह-लाघव-द्वारा मध्यम ग्रह साधन करनेकी विधि दी जाती है।

अहर्गण बनानेका नियम—इष्ट शक सख्यामे-से १४४२ घटाकर शेपमे ११ का भाग देनेसे लब्धि चक्र सज्ञक होती है। शेपको १२ से गुणा कर उससे चैत्र शुक्ल प्रतिपदासे गतमास सख्या जोडकर दो स्थानोमे स्थापित करना चाहिए। प्रथम स्थानकी राशिमे द्विगुणित चक्र और दस जोडकर ३३ का भाग देनेसे लब्धितुल्य अधिमास होते है। इन्हे द्वितीय स्थानकी राशिमें जोडकर ३० से गुणाकर वर्तमान मासकी शुक्ल

प्रतिपदासे लेकर गत तिथि तथा चक्रका पष्ठांश जोडकर इस संख्याको दो स्थानोमे स्थापित कर देना चाहिए। प्रथम स्थानमे ६४ का भाग देनेसे लब्ध दिन आते हैं। इन्हे द्वितीय स्थानकी राशिमे घटानेसे शेष इष्ट-दिनकालिक अहर्गण होता है—

उदाहरण—शक १८६६ वैशाख कृष्ण २ का जन्म है।

१४४२ को घटाया

४२८ – ११ = ३८, शेप ६,

६ × १२ = ७२ + ० = ७२ ३८ चक्र

७२ ३८ × २ = ७६

७६ ७२ + ४ = ७६ × ३० = २२८० + १६

१०

३३) १५८ (४ अधि० २२९६ + ६ = २३०२ इसे दो स्थानोमे स्थापित किया

२३०२ – ६४ = ३५, शेप ६२ | २३०२ लब्ध
३५ दिन

२२६७ अहर्गण

मध्यम सूर्य, शुक्र और बुधकी साधन विधि—अहर्गणमें ७० का भाग देकर लब्ध अशादि फलको अहर्गणमे ही घटानेसे शेप अशादि रहता है, इसमें अहर्गणका १५ वा भाग कलादि फलको घटानेसे सूर्य, बुध और शुक्र अशादिक होते है।

मध्यम चन्द्र साधन—अहर्गणको १४मे गुणा करके जो गुणनफल हो उसमें उसीका १७वाँ भाग अशादि घटानेसे जो शेप रहे उसमे-से अहर्गणका १४०वाँ भाग कलादि घटानेसे शेप अशादिक मध्यम चन्द्र होता है।

मध्यम मगल साधन—अहर्गणको १०मे गुणाकर दो जगह रखना चाहिए। प्रथम स्थानमें १९का भाग देनेसे अशादि और दूसरे स्थानमे

७३का भाग देनेसे कलादि फल होता है। इन दोनोका अन्तर करनेसे अशादि मगल होता है।

मध्यम गुरु साधन—अहर्गणमे १२का भाग देकर अशादि फलमे अहर्गणके ७० वें भाग कलादि फलको घटानेसे अशादि गुरु होता है।

मध्यम शनि साधन—अहर्गणमे ३०का भाग देकर अशादि फल आता है अहर्गणमे १५६का भाग देनेसे कलादि फल होता है। इन दोनो फलोको जोडनेसे अशादि शनि होता है।

मध्यम राहु साधन—अहर्गणको दो स्थानोमे रखकर प्रथम स्थानमे १९का भाग देनेसे अशादि फल और दूसरे स्थानमे ४५का भाग देनेसे कलादि फल होता है। इन दोनो फलोके योगको १२ राशिमे घटानेसे राहु होता है और राहुमे ६ राशि जोडनेसे केतु आता है।

इस प्रकार अहर्गणोत्पन्न जो ग्रह आवें उनमे चक्र गुणित अपने ध्रुवकको घटानेसे और अपने क्षेपकको जोडनेसे सूर्योदयकालिक मध्यम ग्रह होते है। चन्द्रसाधनके लिए स्वदेश और स्वरेखादेशके अन्तर योजनमे ६का भाग देनेसे लब्ध कलादि फलको पश्चिम देशमे चन्द्रमामे जोडनेसे और पूर्व देशमें चन्द्रमामे घटानेसे वास्तविक मध्यम चन्द्रमा स्वदेशीय होता है।

ध्रुवक चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०	ग्र०
०	०	१	४	०	१	७	७	राशि
१	३	२५	३	२६	१४	१५	२	अश
४९	४६	३२	२७	१८	२	४२	५०	कला
११	११	०	०	०	०	०	०	विकला

क्षेपक चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०	ग्रह
११	११	१०	८	७	७	९	०	राशि
१९	१९	७	२९	७	२०	१५	२७	कला
४१	६	८	३३	१६	९	२१	३८	विकला
०	०	०	०	०	०	०	०	अश

उदाहरण—अहर्गण २२३७ है, मध्यम मंगल सावन करना है—

२२६७ × १० = २२६७०

२२६७० − १९ =

११९६।१८।५६ अशादि फल

२२६७० − ७२ = ३१०।३२ कलादि फल इसे अशादि करनेके लिए कलाओंमें ६० का भाग दिया तो ३१०।३२

६०)३१०(५।१०
३००
———
१०

अर्थात् ५।१०।३२

११९६।१८।५६

५।१०।३२

११९१।८।२४ इसके राश्यादि बनाये तो ३९।११।८।२४ हुए। यहाँ राशि स्थानमे १२ से अधिक है। अत १२ का भाग देकर शेप लब्धिको छोड दिया और शेपमात्रको ग्रहण कर लिया।

३।११।८।२४ अहर्गणोत्पन्न मध्यम मगल इसे प्रात कालीन बनानेके लिए—अहर्गण सावनमें जो चक्र ३८ आया है उसे मगलके ध्रुवकसे गुणा

किया तो—१।२५।३२।० × ३८ = १०।१०।१६।०

३।११।८।२४ अहर्गणोत्पन्न मगलमे-से

१०।१०।१६।० चक्र गुणित मगलके ध्रुवकको घटाया

५।०।५२।२४ मे

१०।७।८।० मगलका क्षेपक जोडा

३।८।०।२४ मध्यम मगल हुआ।

इसी प्रकार समस्त ग्रहोका मध्यम मान निकाल लेना चाहिए।

भौमादि ग्रहोका शीघ्रोच्च बनानेका नियम

बुध और शुक्रके शीघ्र केन्द्रमे मध्यम सूर्य युक्त करनेसे बुध और शुक्रका शीघ्रोच्च होता है। मगल, बृहस्पति और शनिका शीघ्रोच्च मध्यम सूर्य ही होता है।

प्रस्तुत मगलका शीघ्रोच्च १२।२४।५३।४७ जो कि मध्यम सूर्य है, माना जायेगा।

३।८।०।२४ मध्यम मगल

२।२१।५२।४४। स्पष्ट करते मगल ग्रहस्पष्ट साधन समय आया है।

५।२९।५३।८ योग

२।२९।५६।३४ योगार्ध

११।२४।५३।४७ मगलके शीघ्रोच्चमे-से

२।२९।५६।३४ योगार्धको घटाया

९। ४।५७।१३ मगलका चेष्टा केन्द्र हुआ।

यह छह राशिमे अधिक है। अत १२ मे-से घटाया तो—

१२। ०। ०। ०।

९। ४।५७।१३

२।२५।२।४७ × २ =

५।२५।५।४४ − ६ =

२२

५ × ३० = १५० + २० = १७०।५।३४ – ६ = २८।२० यह मगल-का मध्यम चेष्टाबल हुआ। इसमें मगलका अयनबल जोड़ देनेसे स्पष्ट चेष्टाबल आ जायेगा।

नैसर्गिक-बल-साधन—एकोत्तर अकोंमें पृथक्-पृथक् ७ का भाग देनेसे क्रमश शनि, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्यका नैसर्गिक बल होता है—एकमे ७ का भाग देनेसे शनिका, दोमें ७ का भाग देनेसे मगल-का, तीनमे ७ का भाग देनेसे बुधका, चारमें ७ का भाग देनेसे गुरुका, पाँचमें ७ का भाग देनेसे शुक्रका, छहमे ७ का भाग देनेसे सूर्यका नैसर्गिक बल होता है।

उदाहरण—१ ÷ ७ = ०, शेष १ × ६० = ६० – ८ = ७, शेष ४ × ६० = २४० – ७ = ३४ शनिका नैसर्गिक बल हुआ। इसी प्रकार सभी ग्रहोंका बल बना लेना चाहिए।

नैसर्गिक बल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
१	०	०	०	०	०	०	अंश
०	५१	१७	२५	३४	४२	८	कला
०	२६	९	४३	१७	५१	३४	विकला

दृग्बल—देखनेवाला ग्रह द्रष्टा और जिसे देखे वह ग्रह दृश्यसज्ञक होता है। द्रष्टाको दृश्यमे घटाकर एकादि शेषके अनुसार दृष्टि ध्रुवाश चक्र-में-से राशिका ध्रुवाक ज्ञात करना चाहिए। अशादि शेषको ध्रुवाकान्तरसे गुणा कर ३०का भाग दे लब्धिको गत ध्रुवाकमे धन, ऋण—गतसे ऐष्य अधिक हो तो धन, अल्प हो तो ऋण करके ४ का भाग देनेसे लब्धिरूप ग्रह दृष्टि होती है। शुभ ग्रहो—गुरु, शुक्र, चन्द्र और बुधकी दृष्टिके जोडमे ४ का भाग देनेसे जो आये उसे पहलेवाले ५ बलोंके योगमे जोड देनेसे षड्बलैक्य और पाप ग्रहों—सूर्य, मगल, शनि तथा पाप ग्रह युक्त बुधकी

दृष्टिके जोड़में ४ का भाग देनेपर जो आये उसे पहलेवाले ५ बलोंके योगमें घटानेसे षड्बलैक्य बल होता है।

दृष्टि ध्रुवाक चक्र

शेष राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०
ध्रुवाक	०	१	३	२	०	४	३	२	१	०	०	०

उदाहरण—सूर्यपर बुधकी दृष्टिका साधन करना है, अत यहाँ बुध द्रष्टा और सूर्य दृश्य होगा।

०।१०। ७।३४ दृश्यमें-से

०।२३।२१।३१ द्रष्टाको घटाया

११।१६।४६। ३ शेष, इसमें राशि संख्या ११ है, अत ११के नीचे ध्रुवाक शून्य मिला, आगेवाला ध्रुवाक भी शून्य है, अत दोनोंका अन्तर भी शून्यरूप होगा। अशादि १६।४६।३ × ० = ० − ३० = ०, ० + ० = ० ÷ ४ = ०, अत यहाँ सूर्यपर बुधकी दृष्टि शून्य रूप होगी।

इस प्रकार प्रत्येक ग्रहपर सातो ग्रहोकी दृष्टिका साधन कर शुभाशुभ ग्रहोकी अपेक्षासे दृष्टियोग निकालना चाहिए।

प्रत्येक ग्रहके पृथक्-पृथक् स्थानबल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, निसर्गबल और दृग्बल इन छहो बलोका योग कर देनेसे हर एक ग्रहका षड्बल आ जाता है।

ग्रहोके बलाबलका निर्णय

जिन ग्रहोका बलयोग—षड्बलैक्य तीन अशसे कम हो वे निर्बल और जिनका छह अशसे अधिक हो वे पूर्ण बलवान् और जिनका तीन अशसे अधिक और छह अशसे कम हो वे मध्यबली होते हैं।

अष्ट-वर्ग विचार

फल कहनेकी प्राय तीन विधियाँ प्रचलित है—जन्मलग्न-द्वारा, जन्मराशि—चन्द्रलग्न-द्वारा और नवांश कुण्डली-द्वारा। मनुष्यका जन्म जिस राशिमे होता है, वह राशि उसके जीवनमे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। जन्मलग्नसे शरीरका विचार, जन्मराशिसे मानसिक विचार, नवांश कुण्डलीसे जीवनकी विभिन्न समस्याओका विचार किया जाता है। जन्म-राशि-द्वारा जो फल कहनेकी विधि प्रचलित है, उसे गोचर विधि कहते है। लेकिन गोचरका फल स्थूल होता है। ज्योतिर्विदोंने गोचर विधिको सूक्ष्मता प्रदान करनेके लिए अष्टक वर्ग विधिको निकाला है।

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रह जन्मसमयकी स्थित राशिपर अपना शुभा-शुभ प्रभाव डालता है, उसी प्रकार जन्मलग्नका भी अपना शुभाशुभ फल होता है। तात्पर्य यह है कि सात ग्रह स्थित, राशियाँ और जन्मलग्न इन आठो स्थानोंमें सातो ग्रह और लग्नका प्रभाव इष्टानिष्ट रूपमें पडता है। सूर्य कुण्डली, सूर्याष्टकवर्ग, चन्द्र कुण्डली—चन्द्राष्टक वर्ग, मगल कुण्डली—मगलाष्टक वर्ग, बुध कुण्डली—बुधाष्टक वर्ग, गुरु कुण्डली—गुरु अष्टक वर्ग आदि सात ग्रह और लग्न इन आठोके अष्टक वर्ग बना लेना चाहिए। प्रत्येक ग्रह जन्म समयकी कुण्डलीमे अपने-अपने स्थानसे जिन-जिन स्थानोमे बल प्रदान करता है, उन स्थानोमे, इस शुभ फलदायित्वको रेखा या बिन्दु कहते है। किसी-किसी आचार्यने शुभफलका चिह्न रेखा माना है तो किसीने बिन्दु। साराश यह है कि शुभ फलको यदि रेखा-द्वारा व्यक्त किया जायेगा तो अशुभ फलको शून्य-द्वारा और शुभ फलको शून्य-द्वारा व्यक्त किया जायेगा तो अशुभ फलको रेखा-द्वारा। नीचे सामान्य अष्टक वर्ग चक्र दिये जाते है। जिस अष्टक वर्गमे जो ग्रह जिन-जिन स्थानोंमे बल प्रदान करते है, उन स्थानोकी सख्या दी गयी है। जैसे सूर्याष्टक वर्गमे चन्द्रमा जिस स्थानपर बैठा होगा, उससे तीसरे,

छठे, दसवें और ग्यारहवें भावमे शुभ फल देता है। शेषमे अशुभ फल देता है। इसी प्रकार अन्य स्थानोको समझना चाहिए।

रवि रेखा ४८

सू०	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३
२							
४							
७	६	२	५	६	७	२	४
८						४	
९			६				६
१०		४		९	१२	७	
११	१०		९			८	१०
		७	१०	११		९	
	११	८	११			१०	११
		९	१२			११	१२
		१०					
		११					

चन्द्र रेखा ४९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	४	४	५	६
७	६	५	४	७	५	६	१०
८	७	६	५	८	७	११	११
१०	१०	९	७	१०	९		
११	११	१०	८	११	१०		
		११	१०	१२	११		
			११				

भौम रेखा ३९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	३	१	३	६	६	१	१
५	६	२	५	१०	८	४	३
६	११	४	६	११	११	७	६
१०		७	११	१२	१२	८	१०
११		८				९	११
		१०				१०	
		११				११	

बुध रेखा ५४

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
५	२	१	१	६	१	१	१
६	४	२	३	८	२	२	२
९	६	४	५	११	३	४	४
११	८	७	६	१२	४	७	६
१२	१०	८	९		५	८	८
					८		
	११	९	१०		९	९	१०
		१०	११		११	१०	११
		११	१२			११	

गुरु रेखा ५६

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३			४		६	६	४
४	७	४		३			
७			५				५
	९	७	६	४	९	१२	६
८				७			
९		८			१०		७
	११	१०	९	८			९
१०			१०		११		
				१०			१०
११		११	११	११			११

शुक्र रेखा ५२

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२						
	३	५	५	८	२	४	२
१२							
	४	६	६	९	३	५	३
	५					८	
	८	९	९	१०	४	९	४
	९	११	११	११	५		५
					८		
	११					१०	
	१२	१२			९		८
					१०	११	९
					११		११

शनि रेखा ३९

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१		३	६	५	६	३	१
	३	५					३
२			८	६	११	५	
	६						४
४		६	९	११	१२	६	६
७	१	१०	१०	१२		११	१०
८	१	११	११				११
१०		१२	१२				
११							

लग्न रेखा ४९

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	
							६
६	१०	६	४	४	३	४	
१०	११	१०	६	५	४	६	१०
११		११	८	६	५	१०	११
१२			१०	७	८	११	
			११	९	९		
				११	११		

अष्टकवर्गाक फल

जन्मलग्न और जन्मकुण्डलीमे स्थित ग्रहोके स्थानोमे सूर्यादि ग्रहोके शुभाशुभ स्थानोको निकाल लेना चाहिए। रेखा या विन्दुओके स्थानोको शुभ और शेप स्थानोको अशुभ कहते है। शुभ स्थान अधिक होनेसे ग्रह बलवान् और अशुभ स्थानोके अधिक होनेसे ग्रह निर्बल माना जाता है। यथा सूर्यका बल अवगत करना है। जन्म समयमे वृश्चिक लग्न है और कुण्डली निम्न प्रकार है।

सूर्यका	स्थान	धनु	९,
चन्द्रका	स्थान	वृश्चिक	८,
मंगलका	स्थान	सिंह	५,
बुधका	स्थान	मकर	१०,
गुरुका	स्थान	मीन	१२,
शुक्रका	स्थान	मकर	१०,
शनिका	स्थान	मिथुन	३,
लग्नका	स्थान	वृश्चिक	८,

पचागमे	सूर्यका	स्थान	मकर	१०
,,	चन्द्र	,,	वृप	३
,,	मगल	,,	कुम्भ	११
,,	बुध	,,	मकर	१०
,,	गुरु	,,	मिथुन	३
,,	शुक्र	,,	धनु	९
,,	शनि	,,	कुम्भ	११

जन्मके सूर्यके स्थान धनुसे पचागके सूर्यके स्थान मकर तक गणना करनेसे दो सख्या आयी, जो विन्दु या रेखाकी है। अनन्तर सूर्यके स्थानसे चन्द्रमाके स्थानकी गणना की तो धनुसे वृषका स्थान छठाँ आया। रविरेखा-के कोष्ठकमे छठे स्थानमे विन्दु या रेखा है, अत यहाँ भी रेखा या विन्दुको रखा। पश्चात् सूर्यके धनु स्थानसे मगलके स्थान कुम्भको गणना की तो तीन सख्या आयी। तीन संख्या विन्दु या रेखाके विपरीत अशुभ भी है। अत मगल अशुभ हुआ। इसी प्रकार आगे बुधादिकी रेखाएँ निकाल लेनी चाहिए। यह रवि रेखाष्टक बनेगा। आगे चन्द्रमासे चन्द्र रेखाष्टक, मगलमे मगलरेखाष्टक, बुधसे बुधरेखाष्टक आदि रेखाष्टक बना लेने चाहिए। अब जिस ग्रहका बल जानना हो उसकी समस्त रेखाओको जोड लेना तथा उसके विपरीत विन्दुओको जोडना, अनन्तर दोनोका अन्तर कर ग्रहके बलाबल या शुभाशुभको समझ लेना चाहिए। यह रेखाष्टकका सरल विचार है, विस्तारसे अवगत करनेके लिए बृहत्पाराशर शास्त्रका वर्गाष्टकाध्याय देखना चाहिए।

■

तृतीयाध्याय

जन्मपत्री मानवके पूर्वजन्मके सचित कर्मोका मूर्त्तिमान रूप है, अथवा यो कह सकते है कि यह पूर्व जन्मके कर्मोको जाननेकी कुजी है। जिस प्रकार विशाल वट वृक्षका समावेश उसके बीजमे है, उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्तिके पूर्व जन्म-जन्मान्तरोंके कृतकर्म जन्मपत्रीमें अकित हैं। जो आस्तिक है, आत्माको नित्य पदार्थ स्वीकार करते है, वे इस बातको माननेमे इनकार नही कर सकते कि सचित एव प्रारब्ध कर्मोके फलको मनुष्य अपनी जीवन-नौकामें बैठकर क्रियमाणरूपी पतवारके द्वारा हेर-फेर करते हुए उपभोग करता है। अतएव जन्मपत्रीसे मानवके भाग्यका ज्ञान किया जाता है। यहा इतना स्मरण सदा रखना होगा कि क्रियमाण कर्मोके द्वारा पूर्वोपार्जित अदृष्टमे हीनाधिकता भी की जा सकती है। यह पहले भी कहा गया है कि ज्योतिषका प्रधान उपयोग अपने अदृष्टको ज्ञात कर उसमे सुधार करना है। यदि हम अपने भाग्यको पहलेसे जान जायें तो सजग हो उस भाग्यको उलट भी सकते है। परन्तु जो तीव्र अदृष्टका उदय होता है, वह टाला नही जा सकता, उसका फल अवश्य भोगना पडता है। अतएव जो आज साधारण जनतामे मिथ्या विश्वास फैला हुआ है कि ज्योतिषमे अमुक व्यक्तिका भाग्य अमुक प्रकारका बताया गया है, अतएव अमुक व्यक्ति अमुक प्रकारका होगा ही, यह गलत है। यदि क्रियमाणका पलडा भारी हो गया तो सचित अदृष्ट अपना फल देनेमें असमर्थ रहेगा। हाँ, क्रियमाण यथार्थ रूपमे सम्पन्न न किया जाये तो पूर्वोपार्जित अदृष्टका फल भोगना ही पडता है, इसलिए जन्मपत्रीमे ज्योतिषी-द्वारा जिस प्रकारका फलादेश बतलाया जाता है, वह ठीक घट भी सकता है और अन्यथा भी हो सकता है। फिर भी जीवनको उन्नति-

शील बनाने एव क्रियमाण-द्वारा अपने भविष्यको सुधारनेके लिए ज्योतिष ज्ञानकी आवश्यकता है। जन्मपत्रीके फलादेशको अवगत करनेके लिए प्रथम ग्रह और उनके सम्बन्धमें निम्न आवश्यक बातें जान लेना चाहिए। भाव, राशि और ग्रहकी स्थितिको देखकर फलका वर्णन करना एव ग्रहोंका स्वरूप ज्ञात कर उनके सम्बन्धमें फल अवगत करना चाहिए।

सूर्य—पूर्व दिशाका स्वामी, पुरुष, रक्तवर्ण, पित्त प्रकृति और पाप ग्रह है। सूर्य आत्मा, स्वभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालयका सूचक तथा पितृकारक है। पिताके सम्बन्धमे सूर्यसे विचार किया जाता है। नेत्र, कलेजा, मेरुदण्ड और स्नायु आदि अवयवोपर इसका विशेष प्रभाव पडता है। यह लग्नसे सप्तम स्थानमें बली माना गया है। मकरसे छह-राशि पर्यन्त चेष्टाबली है। इससे शारीरिक रोग, सिरदर्द, अपचन, क्षय, महाज्वर, अतिसार, मन्दाग्नि, नेत्रविकार, मानसिक रोग, उदासी-नता, खेद, अपमान एव कलह आदिका विचार किया जाता है।

चन्द्रमा—पश्चिमोत्तर दिशाका स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण और जल-ग्रह है। वातश्लेष्मा इसकी धातु और यह रक्तका स्वामी है। माता-पिता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमें चन्द्रमा बली और मकरसे छह राशिमे इसका चेष्टाबल होता है। इससे शारीरिक रोग, पाण्डुरोग, जलज तथा कफज रोग, पीनस, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रीजन्य रोग, मानसिक रोग, व्यर्थ भ्रमण, उदर एव मस्तिष्कका विचार किया जाता है। कृष्णपक्षकी षष्ठीसे शुक्लपक्षकी दशमी तक क्षीण चन्द्रमा रहनेके कारण पाप ग्रह और शुक्लपक्षकी दशमी-से कृष्णपक्षकी पचमी तक पूर्ण ज्योति रहनेसे शुभ ग्रह और बली माना जाता है। बली चन्द्रमा ही चतुर्थ भावमें अपना पूर्ण फल देता है।

मंगल—दक्षिण दिशाका स्वामी, पुरुष जाति, पित्त प्रकृति, रक्त-वर्ण और अग्नि तत्त्व है। यह स्वभावत पाप ग्रह है, धैर्य तथा पराक्रम-का स्वामी है। तीसरे और छठे स्थानमे बली और द्वितीय स्थानमे

निष्फल होता है। दशम स्थानमे दिग्बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। यह भ्रातृ और भगिनी कारक है।

बुध—उत्तर दिशाका स्वामी, नपुसक, त्रिदोप प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पाप ग्रहोके—सू० म० रा० के० श० के साथ रहनेसे अशुभ और शुभ ग्रहो—पूर्ण चन्द्रमा, गुरु शुक्रके साथ रहनेसे शुभ फलदायक होता है। यह ज्योतिप विद्या, चिकित्सा शास्त्र, शिल्प, कानून, वाणिज्य और चतुर्थ तथा दशम स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमें रहनेसे निष्फल होता है, इससे जिह्वा और तालु आदि उच्चारणके अवयवोका विचार किया जाता है। इससे वाणी, गुह्यरोग, सग्रहणी, बुद्धिभ्रम, मूक, आलस्य, वातरोग एव श्वेतकुष्ठ आदिका विचार विशेप रूपमे होता है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशाका स्वामी, पुरुप जाति, पीतवर्ण और आकाश तत्त्व है। यह लग्नमें बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। यह चर्बी और कफ धातुकी वृद्धि करनेवाला है। इससे पुत्र, पौत्र, विद्या, गृह, गुल्म एव सूजन (शोथ) आदि रोगोका विचार किया जाता है।

शुक्र—दक्षिण पूर्वका स्वामी, स्त्रीजाति, श्याम-गौर वर्ण एव कार्य-कुशल है। इस ग्रहके प्रभावसे जातकका रग गेहुँआ होता है। छठे स्थानमे यह निष्फल एव सातवेंमे अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिए कफ वीर्य आदि धातुओका कारक माना गया है। मदनेच्छा, गानविद्या, काव्य, पुष्प, आभरण, नेत्र, वाहन, शय्या, स्त्री, कविता आदिका कारक है। दिनमें जन्म होनेसे शुक्रसे माताका विचार किया जाता है। सासारिक सुखका विचार इसी ग्रहसे होता है।

शनि—पश्चिम दिशाका स्वामी, नपुसक, वात-श्लेष्मिक प्रकृति, कृष्णवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सप्तम स्थानमें बली और वक्रीग्रह या चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। इससे अँगरेज़ी विद्याका विचार किया जाता है। रातमे जन्म होनेपर शनि मातृ और पितृ कारक होता

है। इससे आयु, शारीरिक बल, उदारता, विपत्ति, योगाभ्यास, प्रभुता, ऐश्वर्य, मोक्ष, ख्याति, नौकरी एव मूर्च्छादि रोगोका विचार किया जाता है।

राहु—दक्षिण दिशाका स्वामी, कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। जिस स्थानपर राहु रहता है, यह उस स्थानकी उन्नतिको रोकता है।

केतु—कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। इससे चर्मरोग, मातामह, हाथ-पाँव और क्षुधाजनित कष्ट आदिका विचार किया जाता है।

विशेष—यद्यपि बृहस्पति और शुक्र दोनो शुभ ग्रह है, पर शुक्रसे सासारिक और व्यावहारिक सुखोका तथा बृहस्पतिसे पारलौकिक एव आध्यात्मिक सुखोका विचार किया जाता है। शुक्रके प्रभावसे मनुष्य स्वार्थी और बृहस्पतिके प्रभावमे परमार्थी होता है।

शनि और मगल ये दोनो भी पाप ग्रह हैं, पर दोनोमें अन्तर यही है कि शनि यद्यपि क्रूर ग्रह है, लेकिन उसका अन्तिम परिणाम सुखद होता है, यह दुर्भाग्य और यन्त्रणाके फेरमें डालकर मनुष्यको शुद्ध बना देता है। परन्तु मगल उत्तेजना देनेवाला, उमग और तृष्णासे परिपूर्ण कर देनेके कारण सर्वदा दु खदायक होता है। ग्रहोमे सूर्य और चन्द्रमा राजा, बुध युवराज, मगल सेनापति, शुक्र-गुरु मन्त्री एव शनि भृत्य है। सबल ग्रह जातकको अपने समान बनाता है।

ग्रहोंके छह प्रकारके बल

स्थानबल, दिग्बल, कालबल, नैसर्गिकबल, चेष्टाबल और दृग्बल ये छह प्रकारके बल है। यद्यपि पूर्वमे ग्रहोके बलाबलका विचार गणित प्रक्रिया-द्वारा किया जा चुका है, तथापि फलित ज्ञानके लिए इन बलोको जान लेना आवश्यक है।

स्थानबल—जो ग्रह उच्च, स्वगृही, मित्रगृही, मूल-त्रिकोणस्थ, स्व-नवांशस्थ अथवा द्रेष्काणस्थ होता है, वह स्थानबली कहलाता है।

चन्द्रमा शुक्र समराशिमे और अन्य ग्रह विषमराशिमे बली होते हैं।

दिग्बल—बुध और गुरु लग्नमे रहनेसे, शुक्र और चन्द्रमा चतुर्थमे रहनेसे, शनि सप्तममे रहनेसे एव सूर्य और मगल दशम स्थानमे रहनेसे दिग्बली होते हैं। यत लग्न पूर्व, दशम दक्षिण, सप्तम पश्चिम और चतुर्थ भाव उत्तर दिशामे होते हैं। इसी कारण उन स्थानोमे ग्रहोका रहना दिग्बल कहलाता है।

कालबल—रातमे जन्म होनेपर चन्द्र, शनि और मगल तथा दिनमे जन्म होनेपर सूर्य, बुध और शुक्र कालबली होते हैं। मतान्तरसे बुधको सर्वदा कालबली माना जाता है।

नैसर्गिकबल—शनि, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्य उत्तरोत्तर बली होते हैं।

चेष्टाबल—मकरसे मिथुन पर्यन्त किसी राशिमे रहनेसे सूर्य और चन्द्रमा तथा मगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होते हैं।

दृग्बल—शुभ ग्रहोंसे दृष्ट ग्रह दृग्बली होते हैं।

बलवान् ग्रह अपने स्वभावके अनुसार जिस भावमे रहता है, उस भावका फल देता है। पाठकोको राशिस्वभाव और ग्रहस्वभाव इन दोनोका समन्वय कर फल अवगत करना चाहिए।

ग्रहोकी दृष्टि

सभी ग्रह अपने स्थानसे तीसरे और दसवें भावको एक चरण दृष्टिसे, पाँचवें और नवें भावको दो चरण दृष्टिसे, चौथे और आठवें भावको तीन चरण दृष्टिसे एव सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखते हैं। किन्तु मगल चौथे और आठवें भावको, गुरु पाँचवें और नवें भावको एव शनि तीसरे और दसवें भावको भी पूर्ण दृष्टिसे देखते हैं।

ग्रहोंके उच्च और मूलत्रिकोणका विचार

सूर्यका मेपके १० अशपर, चन्द्रमाका वृपके ३ अशपर, मगलका मकरके २८ अशपर, वुधका कन्याके १५ अशपर, वृहस्पतिका कर्कके ५ अशपर, शुक्रका मीनके २७ अशपर और शनिका तुलाके २० अशपर परमोच्च होता है[1]। प्रत्येक ग्रह अपने स्थानसे सप्तम राशिमें इन्ही अशोपर नीचका होता है। राहु वृप राशिमे उच्च और वृश्चिक राशिमे नीच एव केतु वृश्चिक राशिमें उच्च और वृप राशिमे नीचका होता है।

उच्चग्रहकी अपेक्षा मूलत्रिकोणमे ग्रहोका प्रभाव कम पडता है, लेकिन स्वक्षेत्री—अपनी राशिमें रहनेकी अपेक्षा मूलत्रिकोण वली होता है। पहले लिखा गया है कि सूर्य सिहमे स्वक्षेत्री है—सिहका स्वामी है, परन्तु सिहके १ अशसे २० अश तक सूर्यका मूलत्रिकोण[2] और २१ से ३० अश तक स्वक्षेत्र कहलाता है। जैसे किसीका जन्मकालीन सूर्य सिहके १५वें अशपर है तो यह मूलत्रिकोणका कहलायेगा, यदि यही सूर्य २२वे अशका होता तो स्वक्षेत्री कहलाता। चन्द्रमाका वृपराशिके ३ अश तक परमोच्च है और इसी राशिके ४ अशसे ३० अश तक मूलत्रिकोण है। मगलका मेपके १८ अश तक मूलत्रिकोण है, और इससे आगे स्वक्षेत्र है। वुधका कन्याके १५ अश तक उच्च, १६ अशसे २० अश तक मूलत्रिकोण और २१ से ३० अश तक स्वक्षेत्र है। गुरुका धनराशिके १ अशसे १३ अश तक मूलत्रिकोण और १४ से ३० अश तक स्वगृह होता है। शुक्रका तुलाके १ अशसे १० अश तक मूलत्रिकोण और ११से ३० अश तक स्वक्षेत्र है। शनि-

---

१ अजवृपभमृगाङ्गनाकुलीरा झपवणिजौ च दिवाकारादितुङ्गाः।
दशशिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः ॥
—वृहज्जातक, राशिभेदाध्याय, श्लो० १३

२ वर्गोत्तमाश्चरगृहादिपु पूर्वमध्यपर्यन्तगा. शुभफला नवभागसज्ञाः। सिहो वृप. प्रथमपष्ठहयाङ्गतौलिकुम्भास्त्रिकोणभवनानि भवन्ति सूर्यात् ॥ वृह, श्लो० १४

का कुम्भके १ अंशसे २० अंश तक मूलत्रिकोण और २१से ३० अंश तक स्वक्षेत्र है। राहुका वृषमे उच्च, मेषमे स्वगृह और कर्कमे मूलत्रिकोण है।

द्वादश भावो—स्थानोका परिचय

जन्मकुण्डलीके द्वादश भावोके नाम पहले लिखे गये है। यहाँ द्वादश भावोकी संज्ञाएँ और उनसे विचारणीय बातोका उल्लेख किया जाता है। केन्द्र १।४।७।१०, पणफर २।५।८।११, आपोक्लिम ३।६।९।१२, त्रिकोण ५।९, उपचय ३।६।१०।११, चतुरस्र ४।८, मारक २।७, नेत्रत्रिक संज्ञक ६।८।१२ स्थान है।

प्रथम भावके नाम—आत्मा, शरीर, लग्न, होरा, देह, वपु, कल्प, मूर्त्ति, अग, तनु, उदय, आद्य, प्रथम, केन्द्र, कण्टक और चतुष्टय है।

विचारणीय बातें—रूप, चिह्न, जाति, आयु, सुख, दुःख, विवेक, शील, मस्तिष्क, स्वभाव, आकृति आदि है। इसका कारक रवि है, इसमे मिथुन, कन्या, तुला और कुम्भ राशियाँ बलवान् मानी जाती है। लग्नेशकी स्थितिके बलाबलानुसार कार्यकुशलता, जातीय उन्नति-अवनतिका ज्ञान किया जाता है।

द्वितीय भावके नाम—पणफर, द्रव्य, स्व, वित्त, कोश, अर्थ, कुटुम्ब और धन है।

विचारणीय बातें—कुल, मित्र, आँख, कान, नाक, स्वर, सौन्दर्य, गान, प्रेम, सुखभोग, सत्यभाषण, संचित पूँजी (सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि), क्रय एव विक्रय आदि है।

तृतीय भावके नाम—आपोक्लिम, उपचय, पराक्रम, सहज, भ्रातृ और दुश्चिक्य है।

विचारणीय बातें—नौकर-चाकर, सहोदर, पराक्रम, आभूषण, दासकर्म, साहस, आयुष्य, शौर्य, धैर्य, दमा, खाँसी, क्षय, श्वास, गायन, योगाभ्यास आदि है।

चतुर्थ भावके नाम—केन्द्र, कण्टक, सुख, पाताल, तुर्य, हिबुक, गृह, सुहृद्, वाहन, यान, अम्बु, बन्धु, नीर आदि हैं।

विचारणीय बातें—मातृ-पितृ सुख, गृह, ग्राम, चतुष्पद, मित्र, शान्ति, अन्त करणकी स्थिति, मकान, सम्पत्ति, बाग-बगीचा, पेटके रोग, यकृत्, दया, औदार्य, परोपकार, कपट, छल एव निधि है। इस स्थानमे कर्क, मीन और मकर राशिका उत्तरार्ध बलवान् होता है। चन्द्रमा और बुध इस स्थानके कारक हैं। यह स्थान विशेषत माताका है।

पंचम भावके नाम—पचम, सुत, तनुज, पणफर, त्रिकोण, बुद्धि, विद्या, आत्मज और वाणी हैं।

विचारणीय बातें—बुद्धि, प्रबन्ध, सन्तान, विद्या, विनय, नीति, व्यवस्था, देवभक्ति, मातुल-सुख, नौकरी छूटना, धन मिलनेके उपाय, अनायास बहुत धन-प्राप्ति, जठराग्नि, गर्भाशय, हाथका यश, मूत्रपिण्ड एव वस्ती है। इसका कारक गुरु है।

षष्ठ भावके नाम—आपोक्लिम, उपचय, त्रिक, शत्रु, रिपु, द्वेष, क्षत, वैरी, रोग और नष्ट हैं।

विचारणीय बातें—मामाकी स्थिति, शत्रु, चिन्ता, शका, जमीन्दारी, रोग, पीडा, व्रणादिक, गुदास्थान एव यश आदि हैं। इसके कारक शनि और मगल है।

सप्तम भावके नाम—केन्द्र, मदन, सौभाग्य, जामित्र और काम हैं।

विचारणीय बातें—स्त्री, मृत्यु, मदन-पीडा, स्वास्थ्य, कामचिन्ता, मैथुन, अगविभाग, जननेन्द्रिय, विवाह, व्यापार, झगडे एव बवासीर रोग आदि है। इसमें वृश्चिक राशि बलवान् होती है।

अष्टम भावके नाम—पणफर, चतुरस्र, त्रिक, आयु, रन्ध्र और जीवन हैं।

विचारणीय बातें—व्याधि; आयु, जीवन, मरण, मृत्युके कारण, मान-

सिक चिन्ता, समुद्र-यात्रा, ऋणका होना, उतरना, लिंग, योनि, अण्डकोप आदिके रोग एव सकट प्रभृति है। इस स्थानका कारक शनि है।

नवम भावके नाम—धर्म, पुण्य, भाग्य और त्रिकोण है।

विचारणीय बातें—मानसिक वृत्ति, भाग्योदय, शील, विद्या, तप, धर्म, प्रवास, तीर्थयात्रा, पिताका सुख एवं दान आदि है। इसके कारक रवि और गुरु है।

दशम भावके नाम—व्यापार, आस्पद, मान, आज्ञा, कर्म, व्योम, गगन, मध्य, केन्द्र, ख और नभ है।

विचारणीय बातें—राज्य, मान, प्रतिष्ठा, नौकरी, पिता, प्रभुता, व्यापार, अधिकार, ऐश्वर्य-भोग, कीर्त्तिलाभ एव नेतृत्व आदि हैं। इसमे मेप, सिंह, वृप, मकरका पूर्वार्द्ध एव धनका उत्तरार्द्ध बलवान् होता है। इसके कारक रवि, बुध, गुरु एव शनि है।

एकादश भावके नाम—पणफर, उपचय, लाभ, उत्तम और आय है।

विचारणीय बातें—गज, अश्व, रत्न, मागलिक कार्य, मोटर, पालकी सम्पत्ति एवं ऐश्वर्य आदि है। इसका कारक गुरु है।

द्वादश भावके नाम—रिष्फ, व्यय, त्रिक, अन्तिम और प्रान्त्य है।

विचारणीय बातें—हानि, दान, व्यय, दण्ड, व्यसन एव रोग आदि हैं। इस स्थानका कारक शनि है।

फल प्रतिपादनके लिए कतिपय नियम

जिस भावमे जो राशि हो, उस राशिका स्वामी ही उस भावका स्वामी या भावेश कहलाता है। छठे, आठवें और बारहवें भावके स्वामी जिन भावो—स्थानोमे रहते हैं, अनिष्टकारक होते हैं। किसी भावका स्वामी

स्वगृही हो तो उस स्थानका फल अच्छा होता है। ग्यारहवें भावमे सभी ग्रह शुभ फलदायक होते हैं। किसी भावका स्वामी पापग्रह हो और वह लग्नसे तृतीय स्थानमें पडे तो अच्छा होता है किन्तु जिस भावका स्वामी शुभ ग्रह हो और वह तीसरे स्थानमे पडे तो मध्यम फल देता है। जिस भावमे शुभ ग्रह रहता है, उस भावका फल उत्तम और जिसमे पापग्रह रहता है, उस भावके फलका ह्रास होता है।

१।४।५।७।९।१० स्थानोमे शुभ ग्रहोका रहना शुभ है। ३।६।११ भावोमें पाप ग्रहोका रहना शुभ है। जो भाव अपने स्वामी, शुक्र, बुध या गुरु-द्वारा युक्त अथवा दृष्ट हो एव अन्य किसी ग्रहसे युक्त और दृष्ट न हो तो वह शुभ फल देता है। जिस भावका स्वामी शुभ ग्रहसे युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा जिस भावमे शुभ ग्रह बैठा हो या जिस भावको शुभ ग्रह देखता हो उस भावका शुभ फल होता है। जिस भावका स्वामी पाप ग्रहसे युक्त अथवा दृष्ट हो या पाप ग्रह बैठा हो तो उस भावके फलका ह्रास होता है।

भावाधिपति मूलत्रिकोण, स्वक्षेत्रगत, मित्रगृही और उच्चका हो तो उस भावका फल शुभ होता है।

किसी भावके फल-प्रतिपादनमे यह देखना आवश्यक है कि उस भावका स्वामी किस भावमे बैठा है और किस भावके स्वामीका किस भावमे बैठे रहनेमे क्या फल होता है। सूर्य, मगल, शनि और राहु क्रमसे अधिक-अधिक पाप ग्रह है। ये ग्रह अपनी—पाप ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे विशेष पापी एव शुभकी राशि, मित्रकी राशि और अपने उच्चमे रहनेसे अल्प पापी होते हैं। चन्द्रमा, बुध, शुक्र, केतु और गुरु ये क्रमसे अधिक-अधिक शुभ ग्रह है। ये शुभ ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे अधिक शुभ तथा पाप ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे अल्प शुभ होते है। केतु फल विचार करनेमे प्राय पाप ग्रह माना गया है। ८।१२ भावोमें सभी ग्रह अनिष्टकारक होते है।

गुरु छठे भावमे शत्रुनाशक, शनि आठवें भावमे दीर्घायुकारक एव मगल दसवें स्थानमे उत्तम भाग्यविधायक होता है। राहु, केतु और अष्टमेश जिस भावमे रहते है, उस भावको विगाडते है, गुरु अकेला द्वितीय, पचम और सप्तम भावमे होता है तो धन, पुत्र और स्त्रीके लिए सर्वदा अनिष्टकारक होता है। जिस भावका जो ग्रह कारक माना गया है, यदि वह अकेला उस भावमे हो तो उस भावको विगाडता है।

जन्मसमयमे मेषादि द्वादश राशियोमे नवग्रहोका फल

रवि—मेष राशिमे रवि हो तो जातक आत्मवली, स्वाभिमानी, प्रतापी, चतुर, पित्तविकारी, युद्धप्रिय, साहसी, महत्त्वाकाक्षी, शूरवीर, गम्भीर, उदार, वृषमे हो तो स्वाभिमानी, व्यवहारकुशल, शान्त, पापभीरु, मुख-रोगी, स्त्रीद्वेषी, मिथुनमे हो तो विवेकी, विद्वान्, वुद्धिमान्, मधुरभाषी, नम्र, प्रेमी, धनवान्, ज्योतिषी, इतिहासप्रेमी, उदार, कर्कमे हो तो कीर्ति-मान, लब्ध-प्रतिष्ठ, कार्यपरायण, चंचल, साम्यवादी, परोपकारी, इतिहासज्ञ, कफरोगी, सिंहमे हो तो योगाभ्यासी, सत्सगी, पुरुपार्थी, धैर्यशाली, तेजस्वी, उत्साही, गम्भीर, क्रोधी, वनविहारी, कन्यामे हो तो मन्दाग्निरोगी, शक्ति-हीन, लेखन-कुशल, दुर्वल, व्यर्थवकवादी, तुला राशिमे हो तो आत्मवल-हीन, मन्दाग्निरोगी, परदेशाभिलाषी, व्यभिचारी, मलीन, वृश्चिकमे हो तो गुप्त उद्योगी, उदररोगी, लोकमान्य, क्रोधी, साहसी, लोभी, चिकित्सक, धन राशिमे हो तो वुद्धिमान्, योगमार्गरत, विवेकी, धनी, आस्तिक, व्यव-हारकुशल, दयालु, शान्त, मकरमे हो तो चचल, झगडालू, वहुभाषी, दुराचारी, लोभी, कुम्भमे हो तो स्थिरचित्त, कार्यदक्ष, क्रोधी, स्वार्थी एवं मीनमे रवि हो तो ज्ञानी, विवेकी, योगी, प्रेमी, वुद्धिमान्, यशस्वी, व्यापारी और श्वसुरसे लाभान्वित होता है।

चन्द्रमा—मेषमे चन्द्रमा हो तो दृढशरीर, स्थिर सम्पत्तिवान्, शूर, बन्धुहीन, कामी, उतावला, जल-भीरु, वृषमें हो तो सुन्दर, प्रसन्नचित्त,

कामी, दानी, कन्या सन्ततिवान्, शान्त, कफरोगी, मिथुनमे हो तो रति-कुशल, भोगी, मर्मज्ञ, विद्वान्, नेत्रचिकित्सक, कर्कमें हो तो सन्ततिवान्, सम्पत्तिवाली, श्रेष्ठ बुद्धि, जलविहारी, कामी, कृतज्ञ, ज्योतिषी, उन्माद रोगी, सिंहमे हो तो दृढदेही, दाँत तथा पेटका रोगी, मातृभक्त, अल्प-सन्ततिवान्, गम्भीर, दानी, कन्या राशिमें हो तो सुन्दर, मधुरभाषी, सदाचारी, वीर, विद्वान्, सुखी, तुला राशिमें हो तो दीर्घदेही, आस्तिक, अन्नदाता, धनवान, जमीन्दार, परोपकारी, वृश्चिक राशिमे हो तो नास्तिक, लोभी, बन्धुहीन, परस्त्रीरत, धनु राशिमे हो तो वक्ता, सुन्दर, शिल्पज्ञ, शत्रुविनाशक, मकर राशिमे हो तो प्रसिद्ध, धार्मिक, कवि, क्रोधी, लोभी, सगीतज्ञ, कुम्भ राशिमे हो तो उन्मत्त, सूक्ष्मदेही, मद्यपायी, आलसी, शिल्पी, दु खी एव मीन राशिमे चन्द्रमा हो तो शिल्पकार, सुदेही, शास्त्रज्ञ, धार्मिक, अतिकामी और प्रसन्नमुख जातक होता है।

मगल—मेष राशिमे मगल हो तो सत्यवक्ता, तेजस्वी, शूरवीर, नेता, साहसी, दानी, राजमान्य, लोकमान्य, धनवान्, वृष राशिमे हो तो पुत्र-द्वेषी, प्रवासी, सुखहीन, पापी, लडाकू प्रकृति, वचक, मिथुन राशिमें हो तो शिल्पकार, परदेशवासी, कार्यदक्ष, सुखी, जनहितैषी, कर्कमें हो तो सुखाभिलाषी, दीन, सेवक, कृपक, रोगी, दुष्ट, सिंह राशिमे हो तो शूरवीर, सदाचारी, परोपकारी, कार्यनिपुण, स्नेहशील, कन्या राशिमें हो तो लोक-मान्य, व्यवहारकुशल, पापभीरु, शिल्पज्ञ, सुखी, तुला राशिमें हो तो प्रवासी, वक्ता, कामी, परधनहारी, वृश्चिक राशिमें हो तो व्यापारी, चोरोका नेता, पातकी, शठ, दुराचारी, धनु राशिमें हो तो कठोर, शठ, क्रूर, परिश्रमी, पराधीन, मकर राशिमें हो तो ख्यातिप्राप्त, पराक्रमी, नेता, ऐश्वर्यशाली, सुखी, महत्त्वाकाक्षी, कुम्भ राशिमें हो तो आचारहीन, मत्सरवृत्ति, सट्टेसे धननाशक, व्यसनी, लोभी एव मीन राशिमें मगल हो तो रोगी, प्रवासी, मान्त्रिक, बन्धु-द्वेषी, नास्तिक, हठी, धूर्त और वाचाल जातक होता है।

बुध—मेष राशिमे बुध हो तो कृशदेही, चतुर, प्रेमी, नट, सत्य-प्रिय, रतिप्रिय, लेखक, ऋणी, वृषमें हो तो शास्त्रज्ञ, व्यायामप्रिय, धन-वान्, गम्भीर, मधुरभाषी, विलासी, रतिशास्त्रज्ञ; मिथुन राशिमें हो तो मधुरभाषी, शास्त्रज्ञ, लब्ध-प्रतिष्ठ, वक्ता, लेखक, अल्पसन्ततिवान्, विवेकी, सदाचारी, कर्क राशिमे हो तो वाचाल, गवैया, स्त्रीरत, कामी, परदेशवासी, प्रसिद्ध कार्यकारी, परिश्रमी, सिंह राशिमे हो तो मिथ्याभाषी, कुकर्मी, ठग, कामुक, कन्या राशिमे हो तो वक्ता, कवि, साहित्यिक, लेखक, सम्पादक, सुखी, तुला राशिमे हो तो शिल्पज्ञ, चतुर, वक्ता, व्यापारदक्ष, आस्तिक, कुटुम्बवत्सल, उदार, वृश्चिक राशिमे हो तो व्यसनी, दुराचारी, मूर्ख, ऋणी, भिक्षुक; धनु राशिमे हो तो उदार, प्रसिद्ध, राज-मान्य, विद्वान्, लेखक, सम्पादक, वक्ता, मकर राशिमे हो तो कुलहीन, दुश्शील, मिथ्याभाषी, ऋणी, मूर्ख, डरपोक, कुम्भ राशिमे हो तो कुटुम्ब-हीन, दुःखी, अल्पधनी एवं मीन राशिमे हो तो सदाचारी, भाग्यवान्, प्रवासमे सुखी, धन-सग्रही, कार्यदक्ष, मिष्टभाषी, सहनशील, स्वाभिमानी जातक होता है।

गुरु—मेष राशिमे गुरु हो तो वादी, वकील, ऐश्वर्यशाली, तेजस्वी, प्रसिद्ध, कीर्तिमान्, विजयी, वृष राशिमे हो तो आस्तिक, पुष्ट शरीर, सदाचारी, धनवान्, चिकित्सक, विद्वान्, बुद्धिमान्, मिथुनमे हो तो विज्ञान-विशारद, अनायास धन प्राप्त करनेवाला, लोक-मान्य, लेखक, व्यवहार-कुशल, कर्कमे हो तो सदाचारी, विद्वान्, सत्यवक्ता, महायशस्वी, साम्य-वादी, सुधारक, योगी, लोकमान्य, सुखी, धनी, नेता, सिंहमे हो तो सभा-चतुर, शत्रुजित्, धार्मिक, प्रेमी, कार्यकुशल, कन्यामे हो तो सुखी, भोगी, विलासी, चित्रकला निपुण, चंचल, तुलामे हो तो बुद्धिमान्, व्यापार-कुशल, कवि, लेखक, सम्पादक, बहुपुत्रवान्, सुखी, वृश्चिकमे हो तो शास्त्रज्ञ, कार्यकुशल, राजमन्त्री, पुण्यात्मा, धनु राशिमे हो तो धर्माचार्य, दम्भी, धूर्त, रतिप्रेमी, मकरमे हो तो द्रव्यहीन, प्रवासी, व्यर्थ परिश्रमी, चंचलचित्त,

धूर्त; कुम्भमे हो तो डरपोक, प्रवासी, कपटी, रोगी एव मीनमे हो तो लेखक, शास्त्रज्ञ, राजमान्य, गर्वहीन, शान्त, दयालु, व्यवहार-कुशल, साहित्य-प्रेमी जातक होता है।

शुक्र—मेषमे शुक्र हो तो विश्वासहीन, दुराचारी, परस्त्रीरत, झगड़ालू, वेश्यागामी, वृषमे हो तो सुन्दर, ऐश्वर्यवान्, दानी, सात्त्विक, सदाचारी, परोपकारी, अनेक शास्त्रज्ञ, मिथुनमें हो तो चित्रकलानिपुण, साहित्यिक, कवि, साहित्य-स्रष्टा, प्रेमी, सज्जन, लोकहितैषी, कर्क राशिमें हो तो धार्मिक, ज्ञाता, सुन्दर, सुख और धनका इच्छुक, नीतिज्ञ, सिंहमें हो तो अल्पसुखी, उपकारी, चिन्तातुर, शिल्पज्ञ, कन्यामें हो तो सभापण्डित, अतिकामी, सुखी, भोगी, रोगी, वीर्यहीन, सट्टे-द्वारा धननाशक, तुलामें हो तो प्रवासी, यशस्वी, कार्यदक्ष, विलासी, कलानिपुण, वृश्चिकमें हो तो कुकर्मी, नास्तिक, क्रोधी, ऋणी, दरिद्री, गुह्य रोगी, स्त्रीद्वेषी, धनुमे हो तो स्वोपार्जित द्रव्य-द्वारा पुण्य करनेवाला, विद्वान्, सुन्दर, लोकमान्य, राजमान्य, सुखी, मकरमे हो तो बलहीन, कृपण, हृदय-रोगी, दु खी, मानी, कुम्भमें हो तो चिन्ताशील, रोगसे सन्तप्त, धर्महीन, परस्त्रीरत, मलीन एव मीनराशिमें शुक्र हो तो शिल्पज्ञ, शान्त, धनी, कार्यदक्ष, कृषि कर्मका मर्मज्ञ या ज़मीन्दार और जौहरी जातक होता है।

शनि—मेष राशिमें शनि हो तो आत्मबलहीन, व्यसनी, निर्धन, दुराचारी, लम्पट, कृतघ्न, वृषमे हो तो असत्यभाषी, द्रव्यहीन, मूर्ख, वचन-हीन, मिथुनमें हो तो कपटी, दुराचारी, पाखण्डी, निर्धनी, कामी, कर्कमे हो तो बाल्यावस्थामे दु खी, मातृरहित, प्राज्ञ, उन्नतिशील, विद्वान्, सिंहमें हो तो लेखक, अध्यापक, कार्यदक्ष, कन्यामे हो तो बलवान्, मितभाषी, धनवान्, सम्पादक, लेखक, परोपकारी, निश्चितकार्यकर्त्ता, तुलामें हो तो सुभाषी, नेता, यशस्वी, स्वाभिमानी, उन्नतिशील, वृश्चिकमें हो तो स्त्रीहीन, क्रोधी, कठोर, हिंसक, लोभी, धनुमें हो तो व्यवहारज्ञ, पुत्रकी कीर्त्तिसे प्रसिद्ध, सदाचारी, वृद्धावस्थामे सुखी, मकरमे हो तो मिथ्याभाषी, आस्तिक, परि-

श्रमी, भोगी, शिल्पकार, प्रवासी, कुम्भमे हो तो व्यसनी, नास्तिक, परिश्रमी एव मीनमे हो तो हतोत्साही, अविचारी, शिल्पकार जातक होता है।

राहु—मेषमें राहु हो तो जातक पराक्रमहीन, आलसी, अविवेकी, वृषमे हो तो सुखी, चचल, कुरूप, मिथुनमे हो तो योगाभ्यासी, गवैया, बलवान्, दीर्घायु, कर्कमे हो तो उदार, रोगी, धनहीन, कपटी, पराजित, सिहमे हो तो चतुर, नीतिज्ञ, सत्पुरुष, विचारक, कन्यामे हो तो लोकप्रिय, मधुरभाषी, कवि, लेखक, गवैया, तुलामे हो तो अल्पायु, दन्तरोगी, मृत-धनाधिकारी, कार्यकुशल, वृश्चिकमे हो तो धूर्त, निर्धन, रोगी, धन-नाशक, धनुमें राहु हो तो अल्पावस्थामे सुखी, दत्तक जानेवाला, मित्र-द्रोही, कुम्भमे राहु हो तो मितव्ययी, कुटुम्बहीन, दाँतका रोगी, विद्वान्, लेखक, मितभाषी एव मीनमे राहु हो तो आस्तिक, कुलीन, शान्त, कला-प्रिय और दक्ष होता है।

केतु—मेष राशिमें केतु हो तो चचल, बहुभाषी, सुखी, वृषमे हो तो दु खी, निरुद्यमी, आलसी, वाचाल, मिथुनमें हो तो वातविकारी, अल्प सन्तोषी, दाम्भिक, अल्पायु, क्रोधी, कर्कमे हो तो वातविकारी, भूत-प्रेत पीडित, दु खी, सिहमें हो तो बहुभाषी, डरपोक, असहिष्णु, सर्प दशन-का भय, कलाविज्ञ, कन्यामें हो तो सदा रोगी, मूर्ख, मन्दाग्निरोगी, व्यर्थ-वादी, तुलामे हो तो कुष्ठरोगी, कामी, क्रोधी, दु खी, वृश्चिकमें हो तो क्रोधी, कुष्ठरोगी, धूर्त्त, वाचाल, निर्धन, व्यसनी, धनुमें हो तो मिथ्यावादी, चंचल, धूर्त्त, मकरमें हो तो प्रवासी, परिश्रमशील, तेजस्वी, पराक्रमी, कुम्भमें हो तो कर्णरोगी, दु खी, भ्रमणशील, व्ययशील, साधारण धनी एव मीनमे केतु हो तो कर्णरोगी, प्रवासी, चचल और कार्यपरायण जातक होता है।

द्वादश भावोमे रहनेवाले नवग्रहोका फल

सूर्य—लग्नमे सूर्य हो तो जातक स्वाभिमानी, क्रोधी, पित्त-वातरोगी,

चचल, प्रवासी, कृशदेही, उन्नत नासिका और विशाल ललाटवाला, शूरवीर, अस्थिर सम्पत्तिवाला एव अल्पकेशी, द्वितीयमें[1] हो तो मुखरोगी, सम्पत्तिवान्, भाग्यवान्, झगडालू, नेत्र-कर्ण-दन्तरोगी, राजभीरु एव स्त्रीके लिए कुटुम्बियोसे झगडनेवाला, तृतीयमें हो तो पराक्रमी, प्रतापशाली, राज्यमान्य, कवि, बन्धुहीन, लब्धप्रतिष्ठ एव बलवान्, चतुर्थमें हो तो चिन्ताग्रस्त, परमसुन्दर, कठोर, पितृधननाशक, भाइयोंसे वैर करनेवाला, गुप्त विद्याप्रिय एव वाहनसुख हीन, पचममे हो तो रोगी, अल्पसन्ततिवान्, सदाचारी, बुद्धिमान्, दु खी, शीघ्र क्रोधी एव वचक, छठे स्थानमे हो तो शत्रुनाशक, तेजस्वी, वीर्यवान्, मातुलकष्टकारक, बलवान्, श्रीमान्, न्यायवान्, निरोगी, सातवें स्थानमे हो तो स्त्रीक्लेशकारक, स्वाभिमानी, कठोर, आत्मरत, राज्यसे अपमानित एव चिन्तायुक्त, आठवें भावमे हो तो पित्तरोगी, चिन्तायुक्त, क्रोधी, धनी, सुखी और धैर्यहीन एव निर्बुद्धि, नवें भावमे हो तो योगी, तपस्वी, सदाचारी, नेता, ज्योतिषी, साहसी, वाहनसुख युक्त एवं भृत्य सुख सहित, दशम स्थानमे हो तो प्रतापी, व्यवसायकुशल, राजमान्य, लब्ध-प्रतिष्ठ, राजमन्त्री, उदार, ऐश्वर्यसम्पन्न एव लोकमान्य, ग्यारहवें भावमें हो तो धनी, बलवान्, सुखी, स्वाभिमानी, मितभाषी, तपस्वी, योगी, सदाचारी, अल्पसन्तति एव उदररोगी और बारहवें हो तो उदासीन, वाम नेत्र तथा मस्तक रोगी, आलसी, परदेशवासी, मित्र-द्वेषी एव कृशशरीर होता है।

चन्द्रमा—लग्नमे हो तो जातक बलवान्, ऐश्वर्यशाली, सुखी, व्यवसायी, गान-वाद्यप्रिय एव स्थूलशरीर; द्वितीय स्थानमे हो तो मधुरभाषी, सुन्दर, भोगी, परदेशवासी, सहनशील, शान्तिप्रिय एव भाग्यवान्, तृतीय स्थानमे हो तो प्रसन्नचित्त, तपस्वी, आस्तिक, मधुरभाषी, कफरोगी एव

---

१ भाव गणना लग्नसे होती है—लग्नको प्रथम मानकर बाँयी ओर द्वितीयादि भावोंकी गणना की जाती है।

प्रेमी, चतुर्थ स्थानमे हो तो दानी, मानी, सुखी, उदार, रोगरहित, रागद्वेप वर्जित, कृपक, विवाहके पश्चात् भाग्योदयी, जलजीवी एव बुद्धिमान्, पाँचवे स्थानमे हो तो चचल, कन्यासन्ततिवान्, सदाचारी, सट्टेसे धन कमानेवाला एव क्षमाशील, छठे स्थानमे हो तो कफरोगी, अल्पायु, आमवत, खर्चीलि स्वभाववाला, नेत्ररोगी एव भृत्यप्रिय; सातवें स्थानमें हो तो सभ्य, धैर्यवान्, नेता, विचारक, प्रवासी, जलयात्रा करनेवाला, अभिमानी, व्यापारी, वकील, कीर्त्तिमान्, शीतलस्वभाववाला एव स्फूर्तिवान्, आठवें भावमें हो तो विकार-ग्रस्त, प्रमेहरोगी, कामी, व्यापारसे लाभवाला, वाचाल, स्वाभिमानी, बन्धनसे दु खी होनेवाला एव ईर्ष्यालु, नवें भावमे हो तो सन्तति-सम्पत्ति युक्त, सुखी, धर्मात्मा, कार्यशील, प्रवासप्रिय, न्यायी, चचल, विद्वान्, विद्याप्रिय, साहसी एव अल्पभ्रातृवान्, दसवें भावमें हो तो कार्यकुशल, दयालु, निर्बल वुद्धि, व्यापारी, कार्यपरायण, सुखी, यशस्वी, विद्वान्, कुल-दीपक, सन्तोपी, लोकहितैपी, मानी, प्रसन्नचित्त एव दीर्घायु, ग्यारहवें भावमे हो तो चचल वुद्धि, गुणी, सन्तति और सम्पत्तिसे युक्त, सुखी, लोकप्रिय, यशस्वी, दीर्घायु, मन्त्रज्ञ, परदेशप्रिय और राज्यकार्यदक्ष एव वारहवें भावमें चन्द्रमा हो तो नेत्ररोगी, चचल, कफरोगी, क्रोधी, एकान्तप्रिय, चिन्ताशील, मृदुभापी एव अधिक व्यय करनेवाला होता है।

मंगल—लग्नमे मगल हो तो जातक क्रूर, साहसी, चपल, विचाररहित, महत्त्वाकाक्षी, गुप्तरोगी, लौह धातु एव व्रणजन्य कष्टसे युक्त एव व्यवसायहानि, द्वितीय स्थानमे हो तो कटुभापी, धनहीन, निर्बुद्धि, पशुपालक, कुटुम्ब क्लेशवाला, चोरसे भक्ति, धर्मप्रेमी, नेत्र-कर्ण रोगी तथा कटु-तिक्तरस प्रिय, तृतीय भावमे हो तो प्रसिद्ध, शूरवीर, धैर्यवान, साहसी, सर्वगुणी, वन्धुहीन, वलवान्, प्रदीप्त जठराग्निवाला, भ्रातृकष्टकारक एव कटुभापी, चतुर्थमे मगल हो तो वाहन सुखी, सन्ततिवान्, मातृसुखहीन, प्रवासी, अग्निभय युक्त, अल्पमृत्यु या अपमृत्यु प्राप्त करने

वाला, कृपक, बन्धुविरोधी एवं लाभयुक्त; पाँचवें भावमे हो तो उग्रबुद्धि, कपटी, व्यसनी, रोगी, उदररोगी, कृशशरीरी, गुप्तागरोगी, चचल, बुद्धिमान् एवं सन्तति-क्लेश युक्त, छठे भावमे हो तो प्रबल जठराग्नि, बलवान्, धैर्यशाली, कुलवन्त, प्रचण्ड शक्ति, शत्रुहन्ता, ऋणी, पुलिस अफसर, दाद रोगी, क्रोधी, व्रण और रक्तविकार युक्त एव अधिक व्यय करनेवाला, सातवे स्थानमें हो तो स्त्री-दुःखी, वातरोगी, राजभीरु, शीघ्र कोपी, कटुभापी, धूर्त, मूर्ख, निर्धन, घातकी, धननाशक एव ईर्ष्यालु, आठवें भावमे हो तो व्याधिग्रस्त, व्यसनी, मद्यपायी, कठोरभापी, उन्मत्त, नेत्ररोगी, शस्त्रचोर, अग्निभीरु, सकोची, रक्तविकारयुक्त एव धनचिन्ता युक्त, नौवें भावमे हो तो द्वेपी, अभिमानी, क्रोधी, नेता, अधिकारी, ईर्ष्यालु, अल्प लाभ करनेवाला, यशस्वी, असन्तुष्ट एव भ्रातृविरोधी, दसवें भावमें हो तो धनवान्, कुलदीपक, सुखी, यशस्वी, उत्तम वाहनोंसे सुखी, स्वाभिमानी एव सन्तति कष्टवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो कटुभापी, दम्भी, झगडालू, क्रोधी, लाभ करनेवाला, साहसी, प्रवासी, न्यायवान् एवं धैर्यवान् और बारहवें भावमें मगल हो तो नेत्र रोगी, स्त्रीनाशक, उग्र, ऋणी, झगडालू, मूर्ख, व्ययशील एव नीच प्रकृतिका पापी होता है।

बुध—लग्नमें बुध हो तो जातक दीर्घायु, आस्तिक, गणितज्ञ, विनोदी, उदार, वैद्य, विद्वान्, स्त्री-प्रिय, मिष्टभापी एव मितव्ययी, द्वितीयमें हो तो वक्ता, सुन्दर, सुखी, गुणी, मिष्टान्नभोजी, दलाल या वकीलका पेशा करनेवाला, मितव्ययी, सग्रही, सत्कार्यकारक एव साहसी, तीसरे भावमे हो तो कार्यदक्ष, परिश्रमी, भीरु, लेखक, सामुद्रिकशास्त्रका ज्ञाता, सम्पादक, कवि, सन्ततिवान्, विलासी, अल्प भ्रातृवान्, चंचल, व्यवसायी, यात्राशील, धर्मात्मा, मित्रप्रेमी एव सद्गुणी, चतुर्थमें हो तो पण्डित, भाग्यवान्, वाहन-सुखी, दानी, स्थूलदेही, आलसी, गीतप्रिय, उदार, बन्धुप्रेमी, विद्वान्, लेखक, नीतिज्ञ एव नीतिवान्, पचममें हो तो प्रसन्न, कुशाग्रबुद्धि, गण्य-मान्य, सुखी, सदाचारी, वाद्यप्रिय, कवि, विद्वान् एव उद्यमी, छठे स्थानमें

हो तो विवेकी, वादी, कलहप्रिय, आलसी, रोगी, अभिमानी, परिश्रमी, दुर्बल, कामी एव स्त्री-प्रिय, सातवें भावमे हो तो सुन्दर, विद्वान्, कुलीन, व्यवसायकुशल, धनी, लेखक, सम्पादक, उदार, सुखी, धार्मिक, अल्पवीर्य, दीर्घायु, अष्टम भावमे हो तो दीर्घायु, लब्धप्रतिष्ठ, अभिमानी, कृषक, राजमान्य, मानसिक दुःखी, कवि, वक्ता, न्यायाधीश, मनस्वी, धनवान् एव धर्मात्मा, नवम भावमे हो तो सदाचारी, कवि, गवैया, सम्पादक, लेखक, ज्योतिषी, विद्वान्, धर्मभीरु, व्यवसायप्रिय एव भाग्यवान्, दसवें भावमें हो तो सत्यवादी, विद्वान्, लोकमान्य, मनस्वी, व्यवहारकुशल, कवि, लेखक, न्यायी, भाग्यवान्, राजमान्य, मातृ-पितृ-भक्त एव जमीदार, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, योगी, सदाचारी, धनवान्, प्रसिद्ध, विद्वान्, गायनप्रिय, सरदार, ईमानदार, सुन्दर, पुत्रवान्, विचारवान् एव शत्रुनाशक और बारहवें भावमे बुध हो तो विद्वान्, आलसी, अल्पभाषी, शास्त्रज्ञ, लेखक, वेदान्ती, सुन्दर, वकील एव धर्मात्मा होता है।

गुरु—लग्नमें गुरु हो तो जातक ज्योतिषी, दीर्घायु, कार्यपरायण, विद्वान्, कार्यकर्त्ता, तेजस्वी, स्पष्टवक्ता, स्वाभिमानी, सुन्दर, सुखी, विनीत, धनी, पुत्रवान्, राजमान्य एव धर्मात्मा, द्वितीय भावमे हो तो सुन्दर शरीरी, मधुरभाषी, सम्पत्ति और सन्ततिवान्, राजमान्य, लोकमान्य, सुकार्यरत, सदाचारी, पुण्यात्मा, भाग्यवान्, शत्रुनाशक, दीर्घायु एव व्यवसायी, तृतीय भावमे हो तो जितेन्द्रिय, मन्दाग्नि, शास्त्रज्ञ, लेखक, प्रवासी, योगी, आस्तिक, ऐश्वर्यवान्, कामी, स्त्रीप्रिय, व्यवसायी, विदेश-प्रिय, पर्यटनशील एव वाहनयुक्त, चतुर्थमे हो तो भोगी, सुन्दरदेही, कार्य-रत, उद्योगी, ज्योतिर्विद्, सन्तानरोधक, राजमान्य, लोकमान्य, मातृ-पितृभक्त, यशस्वी एव व्यवहारज्ञ, पाँचवें भावमे हो तो आस्तिक, ज्यो-तिषी, लोकप्रिय, कुलश्रेष्ठ, सट्टेसे धन प्राप्त करनेवाला, सन्ततिवान एव नीतिविशारद, छठे भावमें हो तो मधुरभाषी, ज्योतिषी, विवेकी, प्रसिद्ध, विद्वान्, सुकर्मरत, दुर्बल, उदार, लोकमान्य, निरोगी एवं प्रतापी, सातवें

भावमें हो तो भाग्यवान्, विद्वान्, वक्ता, प्रधान, नम्र, ज्योतिषी, धैर्यवान, प्रवासी, सुन्दर, स्त्रीप्रेमी एवं परस्त्रीरत, आठवें भावमें हो तो दीर्घायु, शीलसम्पन्न, सुखी, शान्त, मधुरभाषी, विवेकी, ग्रन्थकार, कुलदीपक, ज्योतिषप्रेमी, लोभी, गुप्तरोगी एवं मित्रो-द्वारा धननाशक, नौवें भावमें हो तो तपस्वी, यशस्वी, भक्त, योगी, वेदान्ती, भाग्यवान्, विद्वान्, राजपूज्य, पराक्रमी, बुद्धिमान्, पुत्रवान् एवं धर्मात्मा, दसवें भावमें हो तो सत्कर्मी, सदाचारी, पुण्यात्मा, ऐश्वर्यवान्, साधु, चतुर, न्यायी, प्रसन्न, ज्योतिषी, सत्यवादी, शत्रुहन्ता, राजमान्य, स्वतन्त्र विचारक, मातृ-पितृभक्त, लाभवान्, धनी एवं भाग्यवान्, ग्यारहवें भावमें हो तो सुन्दर, निरोगी, लाभवान्, व्यवसायी, धनिक, सन्तोषी, अल्पसन्ततिवान्, राजपूज्य, विद्वान्, बहुस्त्रीयुक्त, सद्व्ययी और पराक्रमी एवं द्वादश भावमें गुरु हो तो आलसी, मितभाषी, सुखी, मितव्ययी, योगाभ्यासी, परोपकारी, उदार, शास्त्रज्ञ, सम्पादक, सदाचारी, लोभी, यात्री एवं दुष्ट चित्तवाला होता है। गुरुके सम्बन्धमें इतना विशेष है कि २।५।७।११ भावमें अकेला गुरु हानिकारक होता है अर्थात् उन भावोंको नष्ट करता है।

शुक्र—लग्नमें शुक्र हो तो जातक दीर्घायु, सुन्दरदेही, ऐश्वर्यवान्, सुखी, मधुरभाषी, प्रवासी, विद्वान्, भोगी, विलासी, कामी एवं राजप्रिय, द्वितीय भावमें हो तो धनवान्, मिष्टान्नभोजी, यशस्वी, लोकप्रिय, जौहरी, सुखी, समयज्ञ, कुटुम्बयुक्त, कवि, दीर्घजीवी, साहसी एवं भाग्यवान्, तृतीय भाव में हो तो सुखी, धनी, कृपण, आलसी, चित्रकार, पराक्रमी, विद्वान्, भाग्यवान्, एवं पर्यटनशील, चतुर्थ भावमें हो तो सुन्दर, बलवान्, परोपकारी, आस्तिक, सुखी, व्यवहारदक्ष, विलासी, भाग्यवान्, पुत्रवान् एवं दीर्घायु, पाँचवें भावमें हो तो सुखी, भोगी, सद्गुणी, न्यायवान्, आस्तिक, दानी, उदार, विद्वान्, प्रतिभाशाली, वक्ता, कवि, पुत्रवान्, लाभयुक्त, व्यवसायी एवं शत्रुनाशक, छठे भावमें हो तो स्त्रीसुखहीन, बहुमित्रवान्, दुराचारी, मूत्ररोगी, वैभवहीन, दुःखी, गुप्तरोगी, स्त्रीप्रिय,

शत्रुनाशक एव मितव्ययी, सातवें भावमें हो तो स्त्रीसे सुखी, उदार, लोकप्रिय, धनिक, चिन्तित, विवाह के बाद भाग्योदयी, साधुप्रेमी, कामी, अल्प-व्यभिचारी, चचल, विलासी, गानप्रिय एव भाग्यवान्, आठवें भावमे हो तो विदेशवासी, निर्दयी, रोगी, क्रोधी, ज्योतिषी, मनस्वी, दु खी, गुप्तरोगी, पर्यटनशील एव परस्त्रीरत, नौवें भाव मे हो तो आस्तिक, गुणी, गृहसुखी, प्रेमी, दयालु, पवित्र तीर्थयात्राओका कर्त्ता, राजप्रिय एव धर्मात्मा, दसवें भावमे हो तो विलासी, ऐश्वर्यवान्, न्यायवान्, ज्योतिषी, विजयी, लोभी, धार्मिक, गानप्रिय, भाग्यवान्, गुणवान् एव दयालु, ग्यारहवें भावमें शुक्र हो तो विलासी, वाहनसुखी, स्थिरलक्ष्मीवान्, लोकप्रिय, परोपकारी, जौहरी, धनवान्, गुणज्ञ, कामी एव पुत्रवान् और बारहवें भावमे शुक्र हो तो न्यायशील, आलसी, पतित, धातुविकारी, स्थूल, परस्त्रीरत, बहुभोजी, धनवान्, मितव्ययी एव शत्रुनाशक होता है।

शनि—लग्नमें शनि मकर तथा तुलाका हो तो धनाढ्य, सुखी, अन्य राशियोका हो तो दरिद्री, द्वितीय भावमे हो तो मुखरोगी, साधु-द्वेषी, कटुभाषी और कुम्भ या तुलाका शनि हो तो धनी, कुटुम्ब तथा भ्रातृवियोगी, लाभवान, तृतीय भावमे हो तो निरोगी, योगी, विद्वान्, शीघ्र कार्यकर्त्ता, मल्ल, सभाचतुर, विवेकी, शत्रुहन्ता, भाग्यवान् एव चचल, चतुर्थमें हो तो बलहीन, अपयशी, कृशदेही, शीघ्रकोपी, कपटी, धूर्त, भाग्यवान्, वातपित्तयुक्त, एव उदासीन, पांचवें भावमें हो तो वातरोगी, भ्रमणशील, विद्वान्, उदासीन, सन्तानयुक्त, आलसी एव चंचल, छठे भावमे हो तो शत्रुहन्ता, भोगी, कवि, योगी, कण्ठरोगी, श्वासरोगी, जाति विरोधी, व्रणी, बलवान् एव आचारहीन, सातवें भावमे हो तो क्रोधी, धन-सुखहीन, भ्रमणशील, नीच कर्मरत, आलसी, स्त्रीभक्त, विलासी एव कामी, आठवें भावमें हो तो कपटी, वाचाल, कुष्ठरोगी, डरपोक, धूर्त, गुप्तरोगी, विद्वान्, स्थूलशरीरी एव उदार प्रकृति, नवे भावमें हो तो रोगी, वातरोगी, भ्रमणशील, वाचाल, कृशदेही, प्रवासी, भीरु, धर्मात्मा, साहसी, भ्रातृहीन एव शत्रुनाशक, दसवें

भावमें हो तो नेता, न्यायी, विद्वान्, ज्योतिषी, राजयोगी, उपकारी, चतुर महत्त्वाकांक्षी, निरोगी, परिश्रमी, भाग्यवान्, उदरविकार, राजमान्य एवं धनवान्, ग्यारहवें भावमें हो तो दीर्घायु, कामी, चंचल, शिल्पी, सुखी, योगाभ्यासी, नीतिवान्, परिश्रमी, व्यवसायी, विद्वान्, पुत्रहीन, कन्याप्रज, रोगहीन एवं बलवान् और बारहवें भावमें हो तो अपस्मार, उन्मादका रोगी, व्यर्थ व्यय करनेवाला, व्यसनी, दुष्ट, कटुभाषी, अविश्वासी, मातुलकष्टदायक एवं आलसी होता है।

राहु—लग्नमें राहु हो तो जातक दुष्ट, मस्तकरोगी, स्वार्थी, राजद्वेषी, नीचकर्मरत, मनस्वी, दुर्बल, कामी एवं अल्पसन्ततियुक्त, द्वितीय भावमें हो तो परदेशगामी, अल्प सन्तति, कुटुम्बहीन, कठोरभाषी, अल्प धनवान्, संग्रहशील एवं मात्सर्ययुक्त; तृतीय भावमें हो तो योगाभ्यासी, पराक्रमशून्य, दृढ़विवेकी, अरिष्टनाशक, प्रवासी, बलवान्, विद्वान् एवं व्यवसायी, चतुर्थ भावमें राहु हो तो असन्तोषी, दुःखी, मातृक्लेश युक्त, क्रूर, कपटी, उदरव्याधियुक्त, मिथ्याचारी एवं अल्पभाषी, पांचवें भावमें राहु हो तो उदररोगी, मतिमन्द, धनहीन, कुलधननाशक, भाग्यवान्, कार्यकर्ता एवं शास्त्रप्रिय, छठे भावमें हो तो विधर्मियोंद्वारा लाभ, निरोगी, शत्रुहन्ता, कमरदर्द पीड़ित, अरिष्टनिवारक, पराक्रमी एवं बड़े-बड़े कार्य करनेवाला, सातवें भावमें हो तो स्त्रीनाशक, व्यापारमें हानिदायक, भ्रमणशील, वातरोगजनक, दुष्कर्मी, चतुर, लोभी एवं दुराचारी, आठवें भावमें हो तो पुष्टदेही, गुप्तरोगी, क्रोधी, व्यर्थभाषी, मूर्ख, उदररोगी एवं कामी, नौवें भावमें हो तो प्रवासी, वातरोगी, व्यर्थ परिश्रमी, तीर्थाटनशील, भाग्योदयसे रहित, धर्मात्मा एवं दुष्टबुद्धि, दसवें भावमें हो तो आलसी, वाचाल, अनियमित कार्यकर्त्ता, मितव्ययी, सन्ततिक्लेशी तथा चन्द्रमासे युक्त राहुके होनेपर राजयोग कारक, ग्यारहवें भावमें हो तो मन्दमति, लाभहीन, परिश्रमी, अल्पसन्ततियुक्त, अरिष्टनाशक, व्यवसाययुक्त, कदाचित् लाभदायक एवं कार्य सफल करनेवाला और बारहवें भावमें हो तो

विवेकहीन, मतिमन्द, मूर्ख, परिश्रमी, सेवक, व्ययी, चिन्ताशील एव कामी होता है।

केतु—लग्नमें केतु हो तो चचल, भीरु, दुराचारी, मूर्ख तथा वृश्चिक राशिमे हो तो सुखकारक, धनी, परिश्रमी, द्वितीयमें हो तो राजभीरु, विरोधी एव मुखरोगी, तृतीय स्थानमें हो तो चचल, वातरोगी, व्यर्थवादी, भूत-प्रेतभक्त, चतुर्थमे हो तो चचल, वाचाल, कार्यहीन, निरुत्साही एव निरुपयोगी, पाँचवें स्थानमें हो तो कुवुद्धि, कुचाली, वातरोगी, छठे भावमें हो तो वात-विकारी, झगडालू, भूत-प्रेतजनित रोगोंसे रोगी, मितव्ययी, सुखी एव अरिष्टनिवारक, सातवें भावमें हो तो मतिमन्द, मूर्ख, शत्रुभीरु एव सुखहीन, आठवें भावमें हो तो दुर्वुद्धि, तेजहीन, दुष्टजनसेवी, स्त्रीद्वेषी एव चालाक, (नौवें भावमें हो तो सुखाभिलाषी, व्यर्थ परिश्रमी, अपयशी,) दसवें भावमें हो तो पितृद्वेषी, दुर्भागी, मूर्ख, व्यर्थ परिश्रमशील एवं अभिमानी, ग्यारहवें भावमें हो तो बुद्धिहीन, निजका हानिकर्त्ता, वातरोगी एव अरिष्टनाशक और वारहवें भावमें हो तो चचल वुद्धि धूर्त, ठग, अविश्वासी एवं जनताको भूत-प्रेतोकी जानकारी-द्वारा ठगनेवाला होता है।

उच्च राशिगत ग्रहोका फल

रवि उच्च राशिमें हो तो धनवान्, विद्वान्, सेनापति, भाग्यवान्, एव नेता, चन्द्रमा हो तो माननीय, मिष्टान्नभोजी, विलासी, अलकारप्रिय एवं चपल, मगल हो तो शूरवीर, कर्त्तव्यपरायण एवं राजमान्य, बुध हो तो राजा, वुद्धिमान्, लेखक, सम्पादक, राजमान्य, सुखी, वशवृद्धिकारक एव शत्रुनाशक, गुरु हो तो सुशील, चतुर, विद्वान्, राजप्रिय, ऐश्वर्यवान्, मन्त्री, शासक एव सुखी, शुक्र हो तो विलासी, गीत-वाद्यप्रिय, कामी एव भाग्यवान्, शनि हो तो राजा, जमीन्दार, भूमिपति, कृपक

एव लब्ध-प्रतिष्ठ, राहु हो तो सरदार, धनवान्, शूरवीर एवं लम्पट और केतु हो तो राजप्रिय, सरदार एव नीच प्रकृतिका जातक होता है।

मूल-त्रिकोण राशिमे गये हुए ग्रहोका फल

रवि मूल त्रिकोणमे हो तो जातक धनी, पूज्य एवं लब्ध-प्रतिष्ठ; चन्द्र हो तो धनवान्, सुखी, सुन्दर एव भाग्यवान्, मगल हो तो क्रोधी, निर्दयी, दुष्ट, चरित्रहीन, स्वार्थी, साधारण धनी, लम्पट एव नीचोंका सरदार, बुध हो तो धनवान्, राजमान्य, महत्त्वाकांक्षी, सैनिक, डॉक्टर, व्यवसायकुशल, प्रोफेसर एव विद्वान्, गुरु हो तो तपस्वी, भोगी, राजप्रिय एवं कीर्तिवान्, शुक्र हो तो जागीरदार, पुरस्कारविजेता एव कामिनीप्रिय, शनि हो तो शूरवीर, सैनिक, उच्च सेना अफसर, जहाज चालक, वैज्ञानिक अस्त्र-शस्त्रोका निर्माता एव कर्त्तव्यपरायण और राहु हो तो धनी, लुब्धक एव वाचाल होता है।

स्वक्षेत्रगत ग्रहोका फल

रवि स्वगृही—अपनी ही राशिमें—हो तो सुन्दर, व्यभिचारी, कामी एव ऐश्वर्यवान्, चन्द्रमा हो तो तेजस्वी, रूपवान्, धनवान् एव भाग्यवान्; मंगल हो तो बलवान्, ख्यातिप्राप्त, कृषक एव जमीन्दार, बुध हो तो विद्वान्, शास्त्रज्ञ, लेखक एव सम्पादक, गुरु हो तो काव्य-रसिक, वैद्य एव शास्त्रविशारद, शुक्र हो तो स्वतन्त्र प्रकृति, धनी एव विचारक, शनि हो तो पराक्रमी, कष्टसहिष्णु एवं उग्र प्रकृति और राहु हो तो सुन्दर, यशस्वी एव भाग्यवान् जातक होता है।

एक स्वगृही हो तो जातक अपनी जातिमें श्रेष्ठ, दो हो तो कर्त्तव्य-शील, धनवान्, पूज्य, तीन हो तो राजमन्त्री, धनिक, विद्वान्; चार हो तो श्रीमन्त, सम्मान्य, सरदार, नेता एव पांच हो तो राजतुल्य राज्याधिकारी होता है।

मित्रक्षेत्रगत ग्रहोंका फल

सूर्य—मित्रकी राशिमें हो तो जातक यशस्वी, दानी, व्यवहारकुशल, चन्द्र हो तो सुखी, धनवान्, गुणज्ञ, मंगल हो तो मित्र-प्रिय, धनिक, बुध हो तो शास्त्रज्ञ, विनोदी, कार्यदक्ष, गुरु हो तो उन्नतिशील, बुद्धिमान्; शुक्र हो तो पुत्रवान्, सुखी एवं शनि हो तो परान्नभोजी, धनवान्, सुखी और प्रेमिल होता है।

एक ग्रह मित्रक्षेत्री हो तो दूसरेके द्रव्यका उपयोगकर्त्ता; दो हो तो मित्रके द्रव्यका उपभोक्ता, तीन हो तो स्वोपार्जित धनका उपभोक्ता, चार हो तो दाता, पाँच हो तो सेनानायक, सरदार, नेता, छह हो तो सर्वोच्च नेता, सेनापति, राजमान्य, उच्च पदासीन एवं सात हो तो जातक राजा या राजाके तुल्य होता है।

शत्रुक्षेत्रगत ग्रहोंका फल

रवि शत्रुक्षेत्री—शत्रुग्रहकी राशिमें हो तो जातक दुःखी, नौकरी करनेवाला; चन्द्रमा हो तो मातासे दुःखी, हृद्रोगी, मंगल हो तो विकलांगी, व्याकुल, दीन-मलीन, बुध हो तो वासनायुक्त, साधारणतः सुखी, कर्त्तव्यहीन, गुरु हो तो भाग्यवान्, चतुर; शुक्र हो तो नौकर दासवृत्ति करनेवाला और शनि हो तो दुःखी होता है।

नीचराशिगत ग्रहोंका फल

सूर्य नीच राशिमें हो तो जातक पापी, बन्धुसेवा करनेवाला, चन्द्रमा हो तो रोगी, अल्प धनवान् और नीच प्रकृति, मंगल हो तो नीच, कृतघ्न; बुध हो तो बन्धुविरोधी, चंचल, उग्र प्रकृति, गुरु हो तो खल, अपवादी, अपयशभागी; शुक्र हो तो दुःखी और शनि हो तो दरिद्री, दुःखी होता है।

तीन ग्रह नीचके हो तो जातक मूर्ख, तीन ग्रह अस्तगत हो तो दास और तीन ग्रह शत्रुराशि गत हो तो दुःखी तथा जीवनके अन्तिम भागमें सुखी होता है।

नवग्रहोंकी दृष्टिका फल

सूर्य—प्रथम भावको सूर्य पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक रजोगुणी, नेत्ररोगी, सामान्य धनी, साधुसेवी, मन्त्रज्ञ, वेदान्ती, पितृभक्त, राजमान्य और चिकित्सक; द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन तथा कुटुम्बसे सामान्य सुखी, नेत्ररोगी, पशु व्यवसायी, संचित धननाशक, परिश्रमसे थोड़े धनका लाभ करनेवाला और कष्टसहिष्णु, तृतीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलीन, राजमान्य, बड़े भाईके सुखसे रहित, उद्यमी, शासक, नेता और पराक्रमी, चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो २२-२३ वर्ष पर्यन्त सुखहानि प्राप्त करनेवाला, सामान्यतः मातृसुखी, २२ वर्षकी आयुके पश्चात् वाहनादि सुखोंको प्राप्त करनेवाला और स्वाभिमानी, पंचम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रथम सन्तान नाशक, पुत्रके लिए चिन्तित, मन्त्रशास्त्रज्ञ, विद्वान्, सेवावृत्ति और २०-२१ वर्षकी अवस्थामें सन्तान प्राप्त करनेवाला, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुभयकारक, दुःखी, वामनेत्ररोगी, ऋणी और मातुलको नष्ट करनेवाला, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जीवन-भर ऋणी, २२-२३ वर्षकी आयुमें स्त्रीनाशक, व्यापारी, उग्र स्वभाववाला और प्रारम्भमें दुःखी तथा अन्तिम जीवनमें सुखी, आठवें भावको देखता हो तो बवासीर रोगी, व्यभिचारी, मिथ्याभाषी, पाखण्डी और निन्दित कार्य करनेवाला, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धर्मभीरु, बड़े भाई और सालेके सुखसे रहित, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, धनी, मातृनाशक तथा उच्च राशिका सूर्य हो तो माता, वाहन और धनका पूर्ण सुख प्राप्त करनेवाला, ग्यारहवें भावको

पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन लाभ करनेवाला, प्रसिद्ध व्यापारी, प्रथम सन्तानननाशक, बुद्धिमान्, विद्वान्, कुलीन और धर्मात्मा एव बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रवासो, नेत्ररोगी, कान या नाकपर तिल या मस्सेका चिह्न धारक, शुभ कार्योंमें व्यय करनेवाला, मामाको कष्टकारक एव सवारीका शौकीन होता है।

चन्द्रमा—लग्नको चन्द्रमा पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक प्रवासी, व्यवसायी, भाग्यवान्, शौकीन, कृपण और स्त्रीप्रेमी, द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अधिक सन्ततिवाला, सामान्य सुखी, ८-१० वर्षकी अवस्थामे शारीरिक कष्ट युक्त, धन हानिकारक, जलमे डूबनेकी आशका-वाला और चोट, घाव, खरोंच आदिके दु खको प्राप्त करनेवाला; तृतीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धार्मिक, प्रवासी, अधिक बहन तथा कम भाईवाला, २४ वर्षकी अवस्थासे पराक्रमी, सत्संगति प्रिय और मिलनसार, चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो २४ वर्षकी अवस्थासे सुखी होनेवाला, राजमान्य, कृपक, वाहनादि सुखका धारक और मातृसेवी; पचम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्यवहारकुशल, बुद्धिमान्, प्रथम पुत्र सन्तान प्राप्त करनेवाला और कलाप्रिय, षष्ठ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शान्त, रोगी, शत्रुओसे कष्ट पानेवाला, गुप्त रोगोसे आक्रान्त, व्यय अधिक करनेवाला और २४ वर्षकी अवस्थामें जलसे हानि प्राप्त करनेवाला, सप्तम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, सुखी, सुन्दर स्त्री प्राप्त करनेवाला, सत्यवादो, व्यापारसे धन सचित करनेवाला, और कृपण, अष्टम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पितृधन नाशक, कुटुम्बविरोधी, नेत्ररोगी और लम्पट, नवम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो, धर्मात्मा, भाग्यशाली, भ्रातृहीन और बुद्धिमान्, दशम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पशु-व्यवसायी, धर्मान्तरमें दीक्षित होनेवाला, पितृविरोधी और चिडचिडे स्वभावका, एकादश भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो लाभ प्राप्त करनेवाला, कुशल व्यवसायी, अधिक कन्या सन्ततिवाला

और मित्रप्रेमी एव द्वादश भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रु-द्वारा धन खर्च करनेवाला, चिन्तायुक्त, राजमान्य एव अन्तिम जीवनमें सुखी होता है।

भौम—लग्न भावको मगल पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उग्र प्रकृति, प्रथम भार्याका २१ या २८ वर्षकी अवस्थामे नाश करनेवाला, राजमान्य और भूमिसे धन प्राप्त करनेवाला, द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो ववासीर रोगी, स्वल्पधनी, कुटुम्बसे पृथक् रहनेवाला, परिश्रमी और खिन्न चित्त रहनेवाला, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वडे भाईके सुखसे रहित, पराक्रमी, भाग्यवान् और एक विधवा वहनवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो माता-पिताके सुखसे रहित, शारीरिक कष्टधारक, २८ वर्षकी अवस्था तक दु खी पश्चात् सुखी और परिश्रमसे जी चुरानेवाला, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अनेक भाषाओका ज्ञाता, विद्वान्, सन्तान कष्टवाला, उपदश रोगी और व्यभिचारी, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, मातुल कष्टकारक, रुधिर विकारी और कीर्त्तिवान्, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो परस्त्रीरत, कामी, प्रथम भार्याका २१ या २८ वर्षकी आयुमें वियोगजन्य दु.ख प्राप्त करनेवाला, और मद्यपायी, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन कुटुम्व नाशक, ऋण ग्रस्त, परिश्रमी, दु खी और भाग्यहीन, नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बुद्धिमान्, धनवान्, पराक्रमी और धर्ममे अरुचि रखनेवाला, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राज्यसेवी, मातृ-पितृ कष्टकारक, सुखी और भाग्यवान्, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनवान्, सन्तानकष्टमे पीडित और कुटुम्बके दु खमे दु खी एव वारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुमार्गगामी, मातुलनाशक, ववासीर और भगन्दर रोगी, शत्रुनाशक और उग्रप्रकृति होता है।

बुध—लग्नभावको बुध पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक गणितज्ञ, सुन्दर, व्यापारी, व्यवहारकुशल, मिलनसार और लब्धप्रतिष्ठ, द्वितीय

भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्यापारसे धन लाभ करनेवाला, कुटुम्ब-विरोधी, स्वतन्त्र विचारक, हठी और अभिमानी, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यवान, प्रवासी, भ्रातृसुख युक्त, सत्सगी और धार्मिक, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राज्यसे लाभ प्राप्त करनेवाला, भूमि तथा वाहनके सुखसे परिपूर्ण, श्रेष्ठ बुद्धिवाला और विद्वान्; पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो गुणवान्, विद्वान्, धनवान, शिल्पकार और प्रथम पुत्र उत्पन्न करनेवाला, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वातरोगी, कुमार्गव्ययी, शत्रुओसे पीडित और अन्तिम जीवनमें धन सचय करनेवाला, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिमे देखता हो तो सुन्दर, सुशीला भार्यावाला, व्यापारी, गणितज्ञ, चतुर और कार्यदक्ष, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भ्रमणशील, दु खी, कुटुम्बविरोधी एवं प्रवासी, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो हँसमुख, धनोपार्जन करनेवाला, भ्रातृ-द्वेषी, राजाओसे मिलनेवाला, गायनप्रिय और विलासी, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, कीर्त्तिमान्, सुखी, कुलीन और कुलदीपक, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनार्जन करनेवाला, सन्तानसे युक्त, विद्वान् और कलाविशारद एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो मिथ्याभाषी, कुलकलंकी, मद्यपायी, नीच प्रकृति ओर व्यसनी होता है ।

गुरु—लग्नभावको बृहस्पति पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक धर्मात्मा, कीर्त्तिवान्, कुलीन, विद्वान् और पतिव्रता—शुभाचरणवाली स्त्रीका पति; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पितृ-धन नाशक, धनार्जन करने-वाला, कुटुम्बी, मित्रवर्गमे श्रेष्ठ और राजमान्य, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यवान्, पराक्रमी, भ्रातृ-सुखयुक्त, प्रवासी और शुभाचरण करनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो श्रेष्ठ विद्याव्यसनी, भूमि-पति, वाहन-सुखयुक्त और माता-पिताके पूर्ण सुखको प्राप्त करनेवाला, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनिक, ऐश्वर्यवान्, विद्वान्,

व्याख्याता, पाँच पुत्रवाला और कलाप्रिय, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्याधिग्रस्त, धन नष्ट करनेवाला, क्रोधी और धूर्त, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, धनवान्, कीर्तिवान् और भाग्यशाली, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजभय, चिन्तित, आठ वर्षकी अवस्थामें मृत्युतुल्य कष्ट भोगनेवाला और २६ वर्षकी आयुमें कारागारजन्य कष्ट पानेवाला, नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलीन, भाग्यवान्, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, स्वतन्त्र, सन्तानयुक्त, दानी और व्रतोपवास करनेवाला, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, सुखी, धन-पुत्रादिसे युक्त, भूमिपति और ऐश्वर्यवान्, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बुद्धिमान्, पाच पुत्रोंका पिता, विद्वान्, कलाप्रिय, स्नेही और ७० वर्षकी अवस्थासे अधिक जीवित रहनेवाला एव बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो रजोगुणी, दु खी, धन खर्च करनेवाला और निर्बुद्धि होता है।

शुक्र—लग्नस्थानको शुक्र पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक सुन्दर, शौकीन, परस्त्रीरत, भाग्यशाली और चतुर, दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन तथा कुटुम्बसे सुखी, धनार्जन करनेवाला, परिश्रमी और विलासी, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शासक, अधिक भाई-बहनवाला, अल्पवीर्य और २५ वर्षकी आयुमें भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुखी, सुन्दर, समाजसेवी, भाग्यशाली, आज्ञाकारी और राजसेवी, पाचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो विद्वान्, धनी, एक कन्या तथा तीन या पाच पुत्रोंका पिता, प्रेमी और बुद्धिमान्, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराक्रमी, शत्रुनाशक, कुमार्गगामी, वीर्यविकारी, श्वेत कुष्ठयुक्त और वाचाल, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कामी, व्यभिचारी, लम्पट, सुन्दर भार्याको प्राप्त करनेवाला और २५ वर्षकी अवस्थामें स्वाधीन जीवन व्यतीत करनेवाला, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रमेह रोगी, दु खी,

निर्धन, कुटुम्बरहित, साधु-सेवारत और कफ तथा वात रोगसे पीड़ित, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलदीपक, ग्रामाधिपति, शत्रुजयी, धर्मात्मा, कीर्त्तिवान् और विलक्षण, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यशाली, धनी, प्रवासी, राजसेवी और भूमि-पति, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो नाना प्रकारसे लाभ करनेवाला, नेता, प्रमुख, परस्त्रीरत और कवि एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वीर्य-रोगी, विवाहादि कार्योंमें व्यय करनेवाला, शत्रुओंसे पीड़ित, चिन्तित और स्त्री-द्वेषी जातक होता है।

शनि—लग्नस्थानको शनि पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक श्याम वर्णवाला, नीच स्त्रीरत, स्वस्त्रीसे विमुख और लम्पट, दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो ३६ वर्षकी अवस्था तक धननाशक, कुटुम्ब-विरोधी, १९ वर्षकी अवस्थामें शारीरिक कष्ट प्राप्त करनेवाला और नाना रोगोंका शिकार, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखे तो पराक्रमी, अधार्मिक, भाइयोंके सुखसे रहित, नीच संगतिप्रिय और बुरे कार्य करनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखे तो प्रथम वर्षमें शारीरिक कष्ट पानेवाला, राजमान्य, ३५ या ३६ वर्षकी अवस्थामें राज्याधिकारमें वृद्धि प्राप्त करनेवाला और लब्धप्रतिष्ठ, पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सन्तानहानि, नीच-विद्या-विशारद, नीचजनप्रिय और नीचकार्यरत, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, मातुलकष्टकारक, नेत्ररोगी, प्रमेह रोगी, धर्मसे विमुख और कुमार्गरत, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कलह-प्रिय, ३६ वर्षकी अवस्थामें मृत्युतुल्य कष्ट पानेवाला, धननाशक और मलीन स्वभाववाला, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुटुम्ब-विरोधी, राज्यहानिवाला, पिताके धनका ३६ वर्षकी आयु तक नाश करने-वाला और रोगी, नौवें भावको देखता हो तो देशाटन करनेवाला, भाइयोंसे विरोध करनेवाला, प्रवासी, धन प्राप्त करनेवाला, नीच कर्मरत, पराक्रमी, धर्महीन और निन्दक, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पिताके

सुखसे रहित, माताके लिए कष्टकारक, भूमिपति, राज्यमान्य और सुखी, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वृद्धावस्थामें पुत्रका सुख पानेवाला, नाना भापाओका ज्ञाता और साधारण व्यापारमे लाभ प्राप्त करनेवाला एव वारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अशुभ कार्योंमे धन खर्च करनेवाला, मातुलको कष्टदायक, शत्रुनाशक और सामान्य लाभ करनेवाला होता है।

राहु—लग्नभावको राहु पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शारीरिक रोगी, वातविकारी, उग्रस्वभाववाला, खिन्न चित्तवाला, उद्योगरहित और अधार्मिक; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुटुम्ब-सुखहीन, धननाशक, पत्थरकी चोटसे दु खी होनेवाला और चचल प्रकृति, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिमे देखता हो तो पराक्रमी, पुरुपार्थी और पुत्रसन्तान-रहित, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उदररोगी, मलीन और साधारण सुखी, पांचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यशाली, धनी, व्यवहारकुशल और सन्तानसुखी, छठे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, वीर, गुदा स्थानमे फोडोके दु खसे पीडित, व्ययशील, नेत्रपर खरोचके निशानवाला, पराक्रमी और वलवान्, सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनी, विपयी, कामी और नीच-सगतिप्रिय; आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराधीन, धननाशक, कण्ठरोगसे पीडित, धर्महीन, नीचकर्मरत और कुटुम्बसे पृथक् रहनेवाला, नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वडे भाईके सुखसे रहित, ऐश्वर्यवान्, भोगी, पराक्रमी और सन्ततिवान्, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो मातृसुखहीन, पितृकष्टकारक, राजमान्य और उद्योगशील, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सन्ततिकष्टसे पीडित, नीच-कर्मरत और अल्पलाभ करानेवाला एव वारहवें भावको पूर्ण दृष्टिमे देखता हो तो गुप्तरोगी, शत्रुनाशक, कुमार्गमें धन व्यय करनेवाला और दरिद्री होता है। केतुकी दृष्टिका फल राहुके समान है।

ग्रहोकी युतिका फल

रवि-चन्द्र एक स्थानपर हो तो जातक लोहा, पत्थरका व्यापारी, शिल्पकार, वास्तु एव मूर्त्तिकलाका मर्मज्ञ, रवि-मंगल एक साथ हो तो शूरवीर, यशस्वी, मिथ्याभाषी, परिश्रमी एव अध्यवसायी, रवि-बुध हो तो मधुरभाषी, विद्वान्, ऐश्वर्यवान्, भाग्यशाली, कलाकार, लेखक, सशोधक एव विचारक; रवि-गुरु एक साथ हो तो आस्तिक, उपदेशक, राजमान्य एव ज्ञानवान्, रवि-शुक्र एक साथ हो तो चित्रकार, नेत्ररोगी, विलासी, कामुक एवं अविचारक; रवि-शनि एक साथ हो तो अल्पवीर्य, धातुओका ज्ञाता, आस्तिक, चन्द्र-मंगल एक साथ हो तो विजयी, कुशल वक्ता, धीर, शूरवीर, कलाकुशल एव साहसी, चन्द्र-बुध एक साथ हो तो धर्मप्रेमी, विद्वान्, मनोज्ञ, निर्मल बुद्धि एव सशोधक, चन्द्र-गुरु एक साथ हो तो शील-सम्पन्न, प्रेमी, धार्मिक, सदाचारी एव सेवावृत्तिवाला, चन्द्र-शुक्र एक साथ हो तो व्यापारी, सुखी, भोगी एव धनी, चन्द्र-शनि एक साथ हो तो शीलहीन, धनहीन, मूर्ख एव वञ्चक, मंगल-बुध एक साथ हो तो धनिक, वक्ता, वैद्य, शिल्पज्ञ एव शास्त्रज्ञ, मंगल-गुरु एक साथ हो तो गणित, शिल्पज्ञ, विद्वान् एव वाद्यप्रिय, मगल-शुक्र एक साथ हो तो व्यापारकुशल, धातुसशोधक, योगाभ्यासी, कार्यपरायण एवं विमान-चालक, मंगल शनि एक साथ हो तो कपटी, धूर्त, जादूगर, ढोगी एव अविश्वासी, बुध-गुरु एक साथ हो तो वक्ता, पण्डित, सभाचतुर, प्रख्यात, कवि, काव्य-स्रष्टा एवं सशोधक, बुध-शुक्र एक साथ हो तो मुन्शी, विलासी, सुखी, राजमान्य, रतिप्रिय एव शासक, बुध-शनि एक साथ हो तो कवि, वक्ता, सभापण्डित, व्याख्याता एव कलाकार, गुरु-शुक्र एक साथ हो तो भोक्ता, सुखी, बलवान्, चतुर एव नीतिवान्, गुरु-शनि एक साथ हो तो लोकमान्य, कार्यदक्ष, धनाढ्य, यशस्वी, कीर्तिवान् एव आदरपात्र और शुक्र-शनि एक साथ हो तो चित्रकार, मल्ल, पशुपालक,

शिल्पी, रोगी, वीर्यविकारी एव अल्पधनी जातक होता है।

तीन ग्रहोकी युतिका फल

रवि-चन्द्र-मगल एक साथ हो तो जातक शूरवीर, धीर, ज्ञानी बली, वैज्ञानिक, शिल्पी एव कार्यदक्ष, रवि-चन्द्र-बुध एक साथ हो तो तेजस्वी, विद्वान्, शास्त्रप्रेमी, राजमान्य, भाग्यशाली एव नीतिविशारद, रवि-चन्द्र-गुरु एक साथ हो तो योगी, ज्ञानी, मर्मज्ञ, सौम्यवृत्ति, सुखी, स्नेही, विचारक, कुशल कार्यकर्त्ता एव आस्तिक, रवि-चन्द्र-शुक्र एक साथ हो तो हीनवीर्य, व्यापारी, सुखी, निस्सन्तान या अल्पसन्तान, लोभी एव साधारण धनी, रवि-चन्द्र-शनि एक साथ हो तो अज्ञानी, धूर्त, वाचाल, पाखण्डी, अविवेकी, चचल एव अविश्वासी, रवि-मगल-बुध एक साथ हो तो साहसी, निष्ठुर, ऐश्वर्यहीन, तामसी, अविवेकी, अहकारी एव व्यर्थ बकवादी, रवि-मगल-गुरु एक साथ हो तो राजमान्य, सत्यवादी, तेजस्वी, धनिक, प्रभावशाली एव ईमानदार, रवि-मगल-शुक्र एक साथ हो तो कुलीन, कठोर, वैभवशाली, नेत्ररोगी एव प्रवीण, रवि-मगल-शनि एक साथ हो तो धन-जनहीन, दुखी, लोभी एव अपमानित होनेवाला, रवि-बुध-गुरु एक साथ हो तो विद्वान्, चतुर, शिल्पी, लेखक, कवि, शास्त्र-रचयिता, नेत्ररोगी, वातरोगी एव ऐश्वर्यवान्, रवि-बुध-शुक्र एक साथ हो तो दुखी, वाचाल, भ्रमणशील, द्वेषी एव घृणित कार्य करनेवाला, रवि-बुध शनि एक साथ हो तो कलाद्वेषी, कुटिल, धननाशक, छोटी अवस्थामें सुन्दर पर ३६ वर्षकी अवस्थामे विकृतदेही एव नीचकर्मरत, रवि गुरु शुक्र एक साथ हो तो परोपकारी, सज्जन, राजमान्य, नेत्रविकारी, लब्धप्रतिष्ठ एव सफल कार्य सचालक, रवि-गुरु-शनि एक साथ हो तो चरित्रहीन, दुखी, शत्रुपीड़ित, उद्विग्न, कुष्टरोगी एव नीच सगतिप्रिय, रवि-शुक्र-शनि एक साथ हो तो दुश्चरित्र, नीचकार्यरत, घृणित रोगसे पीडित एव लोक-तिरस्कृत, चन्द्र-मगल-बुध एक साथ हो तो कठोर, पापी, धूर्त, क्रूर

एव दुष्टस्वभाववाला, चन्द्र-बुध-गुरु एक साथ हो तो धनी, सुखी, प्रसन्न-चित्त, तेजस्वी, वाक्पटु एव कार्यकुशल, चन्द्र बुध-शुक्र एक साथ हो तो धन-लोभी, ईर्ष्यालु, आचारहीन, दाम्भिक, मायावी और धूर्त, चन्द्र-बुध-शनि एक साथ हो तो अशान्त, प्राज्ञ, वचनपटु, राजमान्य एव कार्यपरायण, चन्द्र-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो सुखी, सदाचारी, धनी, ऐश्वर्यवान्, नेता, कर्त्तव्यशील एवं कुशाग्रबुद्धि, चन्द्र-गुरु-शनि एक साथ हो तो नीतिवान्, नेता, सुबुद्धि, शास्त्रज्ञ, व्यवसायी, अध्यापक एव वकील, चन्द्र-शुक्र-शनि एक साथ हो तो लेखक, शिक्षक, सुकर्मरत, ज्योतिषी, सम्पादक, व्यवसायी एवं परिश्रमी, मंगल-बुध-गुरु एक साथ हो तो कवि, श्रेष्ठ पुरुष, गायन-निपुण, स्त्रीसुखसे युक्त, परोपकारी, उन्नतिशील, महत्त्वाकाक्षी एव जीवनमें बडे-बडे कार्य करनेवाला, मंगल बुध-शुक्र एक साथ हो तो कुलहीन, विकलागी, चपल, परोपकारी एव जल्दबाज, मगल-बुध-शनि एक साथ हो तो व्यसनी, प्रवासी, मुखरोगी एव कर्त्तव्यच्युत, मगल-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो राजमित्र, विलासी, सुपुत्रवान्, ऐश्वर्यवान्, सुखी एवं व्यवसायी, मगल-गुरु शनि एक साथ हो तो पूर्ण ऐश्वर्यवान्, सम्पन्न, सदाचारी, सुखी एव अन्तिम जीवनमें महान् कार्य करनेवाला और गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो शीलवान्, कुलदीपक, शासक, उच्चपदाधिकारी, नवीन कार्य सस्थापक एव आश्रयदाता होता है।

चार ग्रहोकी युतिका फल

रवि-चन्द्र-मगल-बुध एक साथ हो तो जातक लेखक, मोही, रोगी, कार्यकुशल एव चतुर, रवि-चन्द्र-मगल-गुरु एक साथ हो तो भूपति, धनी, नीतिज्ञ एव सरदार, रवि-चन्द्र-मंगल-शुक्र एक साथ हो तो धनी, तेजस्वी, नीतिमान्, कार्यदक्ष, विनोदी एव गुणज्ञ, रवि-चन्द्र-मंगल-शनि एक साथ हो तो नेत्ररोगी, शिल्पकार, स्वर्णकार, धनी, धैर्यवान् एव शास्त्रज्ञ, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु एक साथ हो तो सुखी, सदाचारी, प्रख्यात, पण्डित एव

धनी, पराक्रमी, मलिन, परस्त्रीरत एवं व्यवहारशून्य, रवि-चन्द्र-बुध गुरु-शुक्र एक साथ हो तो मत्री, धनवान्, वलवान्, यशस्वी एव प्रतापवान्, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शनि एक साथ हो तो भिक्षुक, डरपोक, उग्रस्वभाववाला, परान्नभोजी एव पापी, रवि-चन्द्र-बुध शुक्र-शनि एक साथ हो तो दरिद्री, पुत्रहीन, रोगी, दीर्घदेही एव आत्मघाती, रवि-चन्द्र-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो स्त्रीमुखयुक्त, वली, चतुर, निर्भय, जादूगर एव अस्थिर चित्त-वृत्ति, रवि-मगल-बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो सेनानायक, सरदार, परकामिनी-रत, विनोदी, सुखी, प्रतापी एवं वीर, रवि-मगल-बुध-गुरु-शनि एक साथ हो तो रोगी, नित्योद्वेगी, मलिन एवं अल्पधनी, रवि-बुध-गुरु-शुक्र शनि एक साथ हो तो ज्ञानी, धर्मात्मा, शास्त्रज्ञ, विद्वान् एव भाग्यवान्, चन्द्र-मगल बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो सज्जन, सुखी, विद्वान्, वलवान्, लेखक, सशोधक एव कर्त्तव्यशील, चन्द्र-मगल-बुध-शुक्र शनि एक साथ हो तो दु खी, रोगी, परोपकारी, स्थिरचित्त एव यशस्वी, चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो पूज्य, यन्त्रकर्त्ता (नवीन मशीन वनानेवाला), लोकमान्य, राजा या तत्तुल्य ऐश्वर्यवान् एव नेत्ररोगी और मंगल-बुध गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो सदा प्रसन्नचित्त, सन्तोषी, एव लब्धप्रतिष्ठ होता है।

षड्ग्रह योग-फल

रवि-चन्द्र-मगल बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो तीर्थयात्रा करनेवाला, सात्त्विक, दानी, स्त्री पुत्रयुक्त, धनी, अरण्य-पर्वत आदिमें निवास करनेवाला एव सत्कीर्तिमान्, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो शिररोगी, परदेशी, उन्माद प्रकृतिवाला, देवभूमिमें निवास करनेवाला एवं शिथिल चारित्र धारक, रवि-मगल-बुध-गुरु शुक्र-शनि एक साथ हो तो बुद्धिमान्, भ्रमणशील, परसेवी, बन्धुद्वेषी एव रोगी, रवि-चन्द्र मंगल-बुध गुरु-शनि एक साथ हो तो कुष्ठरोगी, भार्य्योंसे निन्दित, दुःखी, पुत्ररहित एव परसेवी,

रवि-चन्द्र-मगल गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो मन्त्री, नेता, मान्य, नीच-कर्मरत, क्षय तथा पीनसके रोगसे दु खी एव स्वल्पधनी, रवि-चन्द्र-मगल-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो शान्त, उदार, धनी मानी एव शासक और चन्द्र मगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हो तो धनिक, धर्मात्मा, ऐश्वर्य-वान् एव चरित्रवान् होता है। किसी भी ग्रहके साथ मगल-बुधका योग, वक्ता, वैद्य, कारीगर और शास्त्रज्ञ होनेकी सूचना देता है।

द्वादश भाव विचार

लग्न विचार—पहले ही कहा गया है कि प्रथम भावसे शरीरकी आकृति, रूप आदिका विचार किया जाता है। इस भावमे जिस प्रकारकी राशि और ग्रह होगे जातकका शरीर भी वैसा ही होगा। शरीरकी स्थिति-के सम्बन्धमे विचार करनेके लिए ग्रह और राशियोके तत्त्व नीचे लिखे जाते है।

सूर्य	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व	सम (कद)
चन्द्र	जलग्रह	जलतत्त्व	दीर्घ ,,
भौम	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व	ह्रस्व
बुध	जलग्रह	पृथ्वीतत्त्व	सम
गुरु	जलग्रह	आकाश या तेजतत्त्व	मध्यम या ह्रस्व
शुक्र	जलग्रह	जलतत्त्व	,,
शनि	शुष्कग्रह	वायुतत्त्व	दीर्घ

राशि सज्ञाएँ

मेष	अग्नि	पादजल ($\frac{1}{4}$)	ह्रस्व	(२४ अश)
वृष	पृथ्वी	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	ह्रस्व	(२४ अश)
मिथुन	वायु	निर्जल (०)	सम	(२८ अश)
कर्क	जल	पूर्णजल (१)	सम	(३२ अश)

सिंह	अग्नि	निर्जल	(०)	दीर्घ	(३६ अंश)
कन्या	पृथ्वी	निर्जल	(०)	दीर्घ	(४० अंश)
तुला	वायु	पादजल	($\frac{1}{8}$)	दीर्घ	(४० अंश)
वृश्चिक	जल	पादजल	($\frac{1}{8}$)	दीर्घ	(३६ अंश)
धनु	अग्नि	अर्द्धजल	($\frac{1}{2}$)	सम	(३२ अंश)
मकर	पृथ्वी	पूर्णजल	(१)	सम	(२८ अंश)
कुम्भ	वायु	अर्द्धजल	($\frac{1}{2}$)	ह्रस्व	(२४ अंश)
मीन	जल	पूर्णजल	(१)	ह्रस्व	(२० अंश)

उपर्युक्त संज्ञाओंपर-से शारीरिक स्थिति ज्ञात करनेके नियम

१—लग्न जलराशि हो और उसमें जलग्रहकी स्थिति हो तो जातकका शरीर मोटा होगा।

२—लग्न और लग्नाधिपति जलराशिगत होनेसे शरीर खूब स्थूल होगा।

३—यदि लग्न अग्निराशि हो और अग्निग्रह उसमें स्थित हो तो मनुष्य बली होता है, पर शरीर देखनेमें दुबला मालूम पड़ता है।

४—अग्नि या वायुराशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वी राशिगत हो तो हड्डियाँ साधारणतया पुष्ट और मजबूत होती हैं, और शरीर ठोस होता है।

५—यदि अग्नि या वायुराशि लग्न हो, लग्नाधिपति जलराशिगत हो तो शरीर स्थूल होता है।

६—यदि लग्न वायुराशि हो और उसमें वायु ग्रह स्थित हो तो जातक दुबला, पर तीक्ष्ण बुद्धिवाला होता है।

७—यदि लग्न पृथ्वीराशि हो और उसमें पृथ्वीग्रह स्थित हो तो मनुष्य नाटा होता है।

८—पृथ्वीराशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वीराशिगत हो तो शरीर स्थूल और दृढ होता है।

९—पृथ्वीराशि लग्न हो और उसका अधिपति जलराशिमे हो तो शरीर साधारणतया स्थूल होता है।

लग्नकी राशि ह्रस्व, दीर्घ या मम जिम प्रकारकी हो, उसीके अनुसार जातकके शरीरकी ऊँचाई समझनी चाहिए। शरीरकी आकृति निर्णयके लिए निम्न नियम उपयोगी है—

(१) लग्नराशि कैसी है? (२) लग्नमें ग्रह है तो कैसा है? (३) लग्नेश कैमा ग्रह है? और किस राशिमे है? (४) लग्नेशके साथ कैमे ग्रह है? (५) लग्नपर किसकी दृष्टि है? (६) लग्नेश अष्टम या द्वादश भावमें तो नही है? (७) गुरु लग्नमे है अथवा लग्नको देखता है। कैमी राशिमे वृहस्पतिकी स्थिति है।

इन सात नियमो-द्वारा विचार करनेपर ज्ञात हो जायेगा कि जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु तत्त्वोमे किसकी विशेपता है। अन्तमे अन्तिम निर्णयके लिए पहलेवाले नौ नियमोका आश्रय लेकर निश्चय करना चाहिए।

लग्नेश और लग्नराशिके स्वरूपके अनुसार जातकके रूप-रगका निश्चय करना चाहिए। मेप लग्नमे लालमिश्रित सफेद, वृपमें पीला मिश्रित सफेद, मिथुनमें गहरा लालमिश्रित सफेद, कर्कमे नीला, सिहमे धूसर, कन्यामें घनश्याम रग, तुलामें कृष्णवर्ण लाली लिये, वृश्चिकमे वादामी, धनुमें पीत वर्ण, मकरमे चितकबरी, कुम्भमे आकाश सदृश नीला और मीनमे गौरवर्ण होता है।

सूर्यसे रक्त-श्याम, चन्द्रसे गौरवर्ण, मगलसे समवर्ण, वुधसे दूर्वादलके समान श्यामल, गुरुसे काचन वर्ण, शुक्रसे श्यामल, शनिसे कृष्ण, राहुसे कृष्ण और केतुसे धूम्र वर्णका जातकको समझना चाहिए। लग्न तथा लग्नेशपर पापग्रहकी दृष्टि होनेसे मनुष्य कुरूप होता है, वुध-शुक्र एक साथ

कही भी हो तो गौरवर्ण न होते हुए भी सुन्दर होता है। शुभग्रह युत या दृष्ट लग्न होनेपर जातक सुन्दर होता है। रवि लग्नमे हो तो आँखें सुन्दर नही होती, चन्द्रमा लग्नमे हो तो गौरवर्ण होते हुए भी सुडौल नही होता। मगल लग्नमे हो तो शरीर सुन्दर होता है, पर चेहरेपर सुन्दरतामे अन्तर डालनेवाला कोई निशान होता है। बुध लग्नमे हो तो चमकदार सॉवला रग होता है तथा कम या अधिक चेचकके दाग होते है। बृहस्पति लग्नमे हो तो गौर रग, सुडौल शरीर होता है, किन्तु कम आयुमे ही वृद्ध बना देता है, बाल जल्द सफेद होते है, ४५ वर्षकी उम्रमे ही दाँत गिर जाते है। मेदवृद्धिसे पेट बडा हो जाता है। शुक्र लग्नमे हो तो शरीर सुन्दर और आकर्षक होता है। शनि लग्नमे हो तो मनुष्यके रूपमे कमी होती है और राहु-केतुके लग्नमे रहनेसे चेहरेपर काले दाग होते है।

शरीरके रूपका विचार करते समय ग्रहोकी दृष्टिका अवश्य आश्रय लेना चाहिए। लग्नमें कुरूपता करनेवाले क्रूर ग्रहोके रहनेपर भी लग्न स्थानपर शुभ ग्रहकी दृष्टि होनेसे जातक सुन्दर होता है। इसी प्रकार पापग्रहोकी दृष्टि होनेसे जातककी सुन्दरतामे कमी आती है।

शरीरके अगोका विचार

अगोके परिमाणका विचार करनेके लिए ज्योतिषशास्त्रमे लग्नस्थान गत राशिको सिर, द्वितीय स्थानकी राशिको मुख और गला, तृतीय स्थानकी राशिको वक्षस्थल और फेफडा, चतुर्थ स्थानकी राशिको हृदय और छाती, पचम स्थानकी राशिको कुक्षि और पीठ, षष्ठ स्थानकी राशिको कमर और आँतें, सप्तम स्थानकी राशिको नाभि और लिङ्गके बीचका स्थान, अष्टम स्थानकी राशिका लिङ्ग और गुदा, नवम स्थानकी राशिको ऊरु और जघा, दशम स्थानकी राशिको ठेहुना, एकादश स्थानकी राशिको पिंडुलियाँ और द्वादश स्थानकी राशिको पैर समझना चाहिए।

जिस अगपर विचार करना हो उस अगकी राशि जिस प्रकारकी ह्रस्व

या दीर्घ हो तथा उस अगसज्ञक राशिमे रहनेवाला जैसा ग्रह हो, उस अगको वैसा ही ह्रस्व या दीर्घ अवगत करना चाहिए। अग-ज्ञानके लिए कुछ नियम निम्न प्रकार है—

(१) अगकी राशि कैसी है। (२) उस राशिमे ग्रह कैसा है। (३) अग निर्दिष्ट राशिका स्वामी किस प्रकारकी राशिमे पडा है। (४) अग निर्दिष्ट राशिमे कोई गह है तो वह किस प्रकारकी राशिका स्वामी है। यदि अगस्थान राशिमें एकसे अधिक ग्रह हो तो जो सबसे बलवान् हो उससे विचार करना चाहिए।

कालपुरुष

ज्योतिषशास्त्रमें फलनिरूपणके हेतु काल—समयको पुरुष माना गया है और इसके आत्मा, मन, बल, वाणी एव ज्ञान आदिका कथन किया है। बताया है कि इस कालपुरुषका सूर्य आत्मा[१], चन्द्रमा मन, मगल बल, बुध वाणी, गुरु ज्ञान, शुक्र सुख, राहु मद और शनि दु ख है। जन्म समयमें आत्मादिकारक ग्रह बली हो तो आत्मा आदि सबल, और दुर्बल हो तो निर्बल समझना चाहिए, पर शनिका फल विपरीत होता है। शनि दु ख-कारक माना गया है, अत यह जितना हीन बल रहता है, उतना उत्तम होता है।

तात्कालिक लग्नके पीछेकी छ राशियाँ जो उदित रहती है, वे काल या जातकके वाम अग तथा अनुदित—क्षितिजसे नीचे अर्थात् लग्नसे आगे-की छ राशियाँ दक्षिण अग कहलाती है।

यदि लग्नमें प्रथम द्रेष्काण (त्र्यश) हो तो लग्न १ मस्तक, २, १२ नेत्र, ३, ११ कान; ४, १० नाक, ५, ९ गाल, ६, ८ ठुड्डी और सप्तम

१ आत्मा रविः शीतकरस्तु चेत. सत्त्व धराजः शशिजोऽथ वाणी।
गुरु· सितो ज्ञानसुखे मद च राहु. शनि कालनरस्य दु खम्॥
—सारावली, बनारस १९५३ ई०, अ० ४ श्लो० १

भाव मुख होता है। द्वितीय द्रेष्काण हो तो लग्न १ ग्रीवा, २, १२ कन्धा, ३, ११ दोनो भुजाएँ, ४, १० पजरी, ५, ९ हृदय, ६, ८ पेट और सप्तम भाव नाभि है। तृतीय द्रेष्काण लग्नमे हो तो लग्न १ वस्ति, २, १२ लिंग और गुदामार्ग, ३, ११ दोनो अण्डकोश, ४, १० जाँघ, ५, ९ घुटना, ६, ८ दोनो घुटनोके नीचेका हिस्सा और सप्तम भाव पैर होता है। इस प्रकार लग्नके द्रेष्काणके अनुसार अग विभागको अवगत कर फलादेश समझना चाहिए।

जिस अग स्थित भावमे पाप ग्रह हो उसमें व्रण (घाव), जिसमे शुभ ग्रह हो उसमें चिह्न कहना चाहिए। यदि ग्रह अपने गृह या नवाशमें हो तो व्रण या चिह्न जन्मके समय (गर्भसे ही) से समझना चाहिए, अन्यथा अपनी-अपनी दशाके समयमे व्रण या चिह्न प्रकट होते है।

सूर्य और चन्द्रमाको ज्योतिषमे राजा माना गया है[1]। बुध युवराज, मगल सेनापति, गुरु और शुक्र मन्त्री एव शनिको भृत्य माना है। जन्म समय जो ग्रह सबल होता है, जातकका भविष्य उसके अनुसार निर्मित होता है।

द्वादश राशियोमे-से सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु और मकर इन छ राशियोका भगणाधिपति सूर्य और कुम्भ, मीन, मेष, वृष, मिथुन और कर्कका भगणाधिपति चन्द्रमा है। सूर्यके भगणार्ध चक्रमें अधिक ग्रह हो तो जातक तेजस्वी और चन्द्रके चक्रमे हो तो मृदु स्वभाव जातक होता है।

---

१ राजा रवि शशधरस्तु बुध कुमार

सेनापति क्षितिसुत सचिवौ सितेज्यौ।

भृत्यस्तयोश्च रविज सबला नराणा

कुर्वन्ति जन्मसमये निजमेव रूपम्॥

—सारावली, बनारस १९५३ ई०, अध्याय ४, श्लो० ७

जिस[1] जातकके जन्मलग्नमें मगल हो और सप्तम भावमे गुरु या शुक्र हो उसके सिरमे व्रण—दाग होता है। जव जन्मलग्नमे मगल, शुक्र और चन्द्रमा हो तो व्यक्तिको जन्मसे दूसरे या छठे वर्प सिरमे चोट लगनेसे घावका चिह्न प्रकट होता है। जन्मलग्नमे शुक्र और आठवें स्थानमे राहु हो तो मस्तक या वायें कानमे चिह्न होता है। यदि लग्नमे वृहस्पति, सप्तम स्थानमे राहु और आठवें स्थानमें पाप ग्रह हो तो व्यक्तिके वायें हाथमे चिह्न होता है। लग्नमें गुरु या शुक्र और अष्टममे पाप ग्रह हो तो भी वायें हाथमे चिह्न समझना चाहिय। ग्यारहवें, तीसरे और छठें भावमे शुक्र युक्त मगल हो तो वामपार्श्वमें व्रणका चिह्न होता है।

लग्नमे मगल और त्रिकोण—५।९ मे शुक्रकी दृष्टिसे युक्त शनि हो तो लिंग या गुदाके समीप तिलका चिह्न होता है। पचम या नवम भावमें शुक्र और वुध हो, अष्टम स्थानमें गुरु और चतुर्थ या लग्नमे शनि हो तो

---

१ जनुषि लग्नगतो वसुधासुतो मदनगोऽपि गुरु कविरेव वा।
भवति तस्य शिरो व्रणलाञ्छित निगदित यवनेन महात्मना॥
भवति लग्नगते क्षितिनन्दने भृगुसुतेऽपि विधाविह जन्मिनाम्।
शिरसि चिह्नमुदाहृतमादिभिर्मुनिवरैर्द्विरसाब्दममासत.॥
भार्गवे जनुरङ्गस्थे चाष्टमे सिंहिकासुते।
मस्तके वामकर्णे वा चिह्नदर्शनमादिशेत्॥
मदनसदनमध्ये सिंहिकानन्दने वा,
सुरपतिगुरुणा चेदङ्गराशौ युते नु।
प्रकथितमिह चिह्न चाष्टमे पापखेटे,
कविरपि गुरुरङ्ग वामवाहो मुनीन्द्रै.॥
लाभारिसहजे भौमे व्यये वा शुक्रसयुते।
वामपार्श्वे गत चिह्न विज्ञेय व्रणज वुधैः॥
सुतालये भाग्यनिकेतने वा कवियदा चाष्टमगौ ज्ञजीवौ।
शनौ चतुर्थे तनुभावगे वा तदा सचिह्न जठर नरस्य॥
—भावकुतूहल, वम्बई सन् १८२५ ई०, अध्याय २ श्लो० १६ २२

पेट पर चिह्न होता है। द्वितीय स्थानमें शुक्र, अष्टम स्थानमे सूर्य और तृतीयमे मगल हो तो जातकके कटि प्रदेशमे चिह्न होता है। चतुर्थ स्थानमे राहु-शुक्र दोनोमे-से एक ग्रह स्थित हो और लग्नमे शनि या मगल स्थित हो तो पैरके तलवेमें चिह्न होता है। बारहवें भावमे बृहस्पति, नवम भावमे चन्द्रमा और तृतीय तथा एकादशमें बुध हो तो गुदा स्थानमे चिह्न होता है।

जातकके शरीरमे तिल, मस्सा, चिह्न आदिका विचार लग्न राशि, लग्नस्थित द्रेष्काण राशि एव शीर्षोदय राशि आदिके द्वारा भी किया जाता है।

जन्मसमयके वातावरणका परिज्ञान

जन्मसमयमें मेष, वृष लग्न हो तो घरके पूर्व भागमे शय्या, मिथुन हो तो घरके अग्निकोणमे, कर्क, सिंह लग्न हो तो घरके दक्षिण भागमें, कन्या लग्न हो तो घरके नैऋत्यकोणमें, तुला, वृश्चिक लग्न हो तो घरके पश्चिम भागमे, धनु राशिका लग्न हो तो घरके वायुकोणमे, मकर, कुम्भ लग्न हो तो घरके उत्तर भागमें एव मीन राशिका लग्न हो तो घरके ईशान भागमें प्रसूतिकाकी शय्या जाननी चाहिए।

जो ग्रह सबमे बलवान् हो अथवा १।४।७।१० में स्थित हो उस ग्रह-की दिशामें सूतिका गृहका द्वार ज्ञात करना चाहिए। रविकी पूर्व दिशा, चन्द्रकी वायव्य, मगलकी दक्षिण, बुधकी उत्तर, गुरुकी ईशान, शुक्रकी आग्नेय, शनिकी पश्चिम और राहुकी नैऋत्य दिशा है।

जन्मसमय लग्नमे शीर्षोदय ३।५।६।७।८।११ राशियोका नवाश हो तो मस्तककी तरफसे जन्म, लग्नमे उभयोदय राशि—मीनका नवाश हो तो प्रथम हाथ निकला होगा, और लग्नमे पृष्ठोदय १।२।३।४।९।१० राशियोका नवाश हो तो पाँवकी ओरसे जन्म जानना चाहिए।

लग्न और चन्द्रमाके बीचमें जितने ग्रह स्थित हो उतनी हो उपसूति-

काओकी सख्या जाननी चाहिए । मीन, मेप लग्नमे जन्म हो तो दो, वृप, कुम्भमें जन्म हो तो चार, कर्क, सिहमे हो तो पाँच; शेप लग्नो—मिथुन, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु और मकर लग्न हो तो तीन उपसूतिकाएँ जाननी चाहिए ।

अरिष्ट विचार

उत्पत्तिके ममय जातकके ग्रहारिष्ट, गण्डारिष्ट और पातकी अरिष्टका विचार करना चाहिए ।

१—लग्नमें चन्द्रमा, वारहवेंमे शनि, नौवेंमे सूर्य और अष्टममे मगल हो तो अरिष्ट होता है ।

२—लग्नमे पापग्रह हो और चन्द्रमा पापग्रहके साथ स्थित हो तथा शुभग्रहोकी दृष्टि लग्न और चन्द्रमा दोनोपर न हो तो अरिष्ट समझना चाहिए ।

३—वारहवें भावमे क्षीण चन्द्रमा स्थित हो और लग्न एवं अष्टममे पापग्रह स्थित हो तो वालकको अरिष्ट होता है ।

४—क्षीण चन्द्रमापर पापग्रह या राहुकी दृष्टि हो तो वालकको अरिष्ट होता है ।

५—चन्द्रमा ४।७।८ में स्थित हो और उसके दोनो ओर पापग्रह स्थित हो तो वालकको अरिष्ट होता है ।

६—चन्द्रमा ६।८।१२ में हो और उसपर राहुकी दृष्टि हो तो अरिष्ट होता है ।

७—चन्द्रमा कर्क, वृश्चिक और मीन राशिका हो तथा राशिके अन्तिम नवाशमे हो, शुभग्रहोकी दृष्टि चन्द्रमापर न हो एव पचम स्थान-पर पापग्रहोकी दृष्टि हो अथवा पापग्रह स्थित हो तो वालकको अरिष्ट होता है ।

८—मेप राशिका चन्द्रमा २३ अशका अष्टम स्थानमें हो तो २३ वर्पके

भीतर जातककी मृत्यु होती है। वृषके २१ अशका, मिथुनके २२ अशका, कर्कके २२ अशका, सिहके २१ अशका, कन्याके १ अशका, तुलाके ४ अश का, वृश्चिकके २१ अशका, धनुके १८ अशका, मकरके २० अशका, कुम्भ के २० अशका एव मीनके १० अशका चन्द्रमा अरिष्ट करनेवाला होता है।

९—पापग्रहसे युक्त लग्नका स्वामी ७वें स्थानमे स्थित हो तो एक वर्ष तक परम अरिष्ट होता है।

१०—जन्मराशिका स्वामी पापग्रहसे युक्त होकर आठवें स्थानमे हो तो अरिष्ट होता है।

११—शनि, सूर्य, मगल आठवें अथवा बारहवें स्थानमे हो तो जातक-को एक महीने तक परम अरिष्ट होता है।

१२—लग्नमें राहु तथा छठे या आठवें भावमे चन्द्रमा हो तो जातक-को अत्यन्त अरिष्ट होता है।

१३—लग्नेश आठवें भावमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो चार महीने तक जातकको अरिष्ट होता है।

१४—शुभ तथा पापग्रह ३।६।९।१२ स्थानोमें निर्बली होकर स्थित हो तो ६ मास तक जातकको अरिष्ट होता है।

१५—पापग्रहोंकी राशियां १।५।८।१०।११ स्थानोमे हो तथा सूर्य, चन्द्र, मगल, पांचवें स्थानमे हो तो जातकको ६ महीनेका अरिष्ट होता है।

१६—पापग्रह छठे, आठवें स्थानमें स्थित हो और अस्त पापग्रहोंकी दृष्टि भी हो तो एक वर्षका अरिष्ट होता है।

१७—चन्द्र, बुध दोनो केन्द्रमे स्थित हो और अस्त शनि या मगल उनको देखते हो तो एक वर्षके भीतर मृत्यु होती है।

१८—शनि, रवि और मगल छठे, आठवें भावमें गये हो तो जातक को एक वर्ष तक अरिष्ट होता है।

१९—अष्टमेश लग्नमें और लग्नेश अष्टम भावमें गया हो तो पांच वर्ष तक अरिष्ट होता है।

२०—कर्क या सिंह राशिका शुक्र ६।८।१२ मे स्थित हो तथा पाप-ग्रहोंसे देखा जाता हो तो छठे वर्षमे मृत्यु जानना।

२१—लग्नमे सूर्य, शनि और मंगल स्थित हो और क्षीण चन्द्रमा सातवें भावमें हो तो सातवें वर्षमे मृत्यु होती है।

२२—सूर्य, चन्द्र और शनि इन तीनो ग्रहोका योग ६।८।१२ स्थानो मे हो तो ९ वर्ष तक जातकको अरिष्ट रहता है।

२३—चन्द्रमा सातवें भावमे और अष्टमेश लग्नमें स्थित हो तो ९ वर्ष तक अरिष्ट रहता है। परन्तु इस योगमे शनिकी दृष्टि अष्टमेशपर आवश्यक है।

२४—चन्द्रमा और लग्नेश ६।७।८।१२ स्थानोमे स्थित हो तो १२ वर्ष तक अरिष्ट रहता है।

२५—चन्द्र और लग्नेश शनि एव सूर्यसे युत हो तो १२ वर्ष तक अरिष्ट रहता है।

गण्ड-अरिष्ट

आश्लेषाके अन्त और मघाके आदिके दोषयुक्त कालको रात्रिगण्ड, ज्येष्ठा और मूलके दोषयुक्त कालको दिवागण्ड एव रेवती और अश्विनीके दोषयुक्त कालको सन्ध्यागण्ड कहते है। अभिप्राय यह है कि आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती नक्षत्रकी अन्तिम चार घटियाँ तथा मघा, मूल और अश्विनी नक्षत्रके आदिकी चार घटियाँ गण्डदोष युक्त मानी गयी है। इस समयमे उत्पन्न होनेवाले बालकोको अरिष्ट होता है। मतान्तरसे ज्येष्ठाके अन्तकी एक घटी और मूलके आदिकी दो घटीको अभुक्त मूल कहा गया है। इन तीन घटियोके भीतर जन्म लेनेवाले बालकको विशेष अरिष्ट होता है।

यहाँ स्मरण रखनेकी बात यह है कि बालकका प्रात काल अथवा सन्ध्याके सन्धि समयमे जन्म हो तो सान्ध्यगण्ड विशेष कष्टदायक, रात्रि-

कालमे जन्म हो तो रात्रिगण्डदोप विशेप कष्टदायक एव दिनमे जन्म होने-पर दिवागण्ड कष्टकारक होता है। मान्व्यगण्ड वालकके लिए, रात्रिगण्ड माताके लिए और दिवागण्ड पिताके लिए कष्टदायक होता है।

अरिष्टभग योग

१—शुक्ल पक्षमें रात्रिका जन्म हो और छठे, आठवें स्थानमे चन्द्रमा स्थित हो तो सर्वारिष्ट नाशक योग होता है।

२—शुभग्रहोकी राशि और नवमाश २।७।९।१२।३।६।४ मे हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

३—जन्मराशिका स्वामी १।४।७।१०। स्थानोमे स्थित हो अथवा शुभग्रह केन्द्रमें गये हो तो अरिष्टनाश होता है।

४—सभी ग्रह ३।५।६।७।८।११ राशिय मे हो तो अरिष्टनाश होता है।

५—चन्द्रमा अपनी राशि, उच्चराशि तथा मित्रके गृहमें स्थित हो तो सर्वारिष्ट नाश करता है।

६—चन्द्रमासे दसवें स्थानमे गुरु, वारहवेंमें बुध, शुक्र और वारहवें स्थानमें पापग्रह गये हो तो अरिष्टनाश होता है।

७—कर्क तथा मेप राशिका चन्द्रमा केन्द्रमें स्थित हो और शुभ ग्रहसे दृष्ट हो तो सर्वारिष्ट नाश करता है।

८—कर्क, मेप और वृप राशि लग्न हो तथा लग्नमें राहु हो तो अरिष्ट भग होता है।

९—सभी ग्रह १।२।४।५।७।८।१०।११ स्थानोमे गये हो तो अरिष्ट-नाश होता है।

१०—पूर्ण चन्द्रमा शुभग्रहकी राशिका हो तो अरिष्टभग होता है।

११—शुभग्रहके वर्गमे गया हुआ चन्द्रमा ६।८ स्थानमें स्थित हो तो सर्वारिष्टनाश होता है।

१२—चन्द्र और जन्म-लग्नको शुभग्रह देखते हो तो अरिष्ट भग होता है।

१३—शुभग्रहकी राशिके नवाशमे गया हुआ चन्द्रमा १।४।५।७।९। १० स्थानोमे स्थित हो और शुक्र उसको देखता हो तो सर्वारिष्ट नाश होता है।

१४—वलवान् शुभग्रह १।४।७।१० स्थानोमे स्थित हो और ग्यारहवें भावमे सूर्य हो तो सर्वारिष्ट नाश होता है।

१५—लग्नेश वलवान् हो और शुभग्रह उसे देखते हो तो अरिष्टनाश होता है।

१६—मगल, राहु और शनि ३।६।११ स्थानोमे हो तो अरिष्टनाशक होते है।

१७—वृहस्पति १।४।७।१० स्थानोमे हो या अपनी राशि ९।१२ मे हो अथवा उच्च राशिमे हो तो सर्वारिष्टनाशक होता है।

१८—सभी ग्रह १।३।५।७।९।११ राशियोमे स्थित हो तो अरिष्ट-नाशक होते है।

१९—सभी ग्रह मित्रग्रहोकी राशियोमे स्थित हो तो अरिष्टनाश होता है।

२०—सभी ग्रह शुभग्रहोके वर्गमें या शुभग्रहोके नवाशमे स्थित हो तो अरिष्टनाशक होते है।

जारज योग

१—१।४।७।१० स्थानोमे कोई भी ग्रह नही हो, सभी ग्रह २।६।८। १२ स्थानमे स्थित हो, केन्द्रके स्वामीका तृतीयेशके साथ योग हो, छठे या आठवें स्थानका स्वामी चन्द्र-मगलसे युक्त होकर चतुर्थ स्थानमे स्थित हो, छठे और नौवें स्थानके स्वामी पापग्रहोसे युक्त हो, द्वितीयेश, तृतीयेश, पचमेश और षष्ठेश लग्नमे स्थित हो, लग्नमे पापग्रह, सातवेंमे शुभ-

गह और दसवें भावमें शनि हो, लग्नमे चन्द्रमा, पचम स्थानमे शुक्र और तीसरे स्थानमें भौम हो, लग्नमें सूर्य, चतुर्थमे राहु हो, लग्नमें राहु, मगल और सप्तम स्थानमे सूर्य, चन्द्रमा स्थित हो, सूर्य, चन्द्र दोनो एक राशिमे स्थित हो और उनको गुरु नही देखता हो एव सप्तमेश धनस्थानमे पाप-ग्रहसे युक्त और भौमसे दृष्ट हो तो जातक जारज होता है।

वधिर योग

१—शनिसे चतुर्थ स्थानमे बुध हो और षष्ठेश ६।८।१२वें भावमें स्थित हो।

२—पूर्ण चन्द्र और शुक्र ये दोनो शत्रुग्रहसे युक्त हो।

३—रात्रिका जन्म हो, लग्नसे छठे स्थानमें बुध और दसवें स्थानमे शुक्र हो।

४—बारहवें भावमे बुध, शुक्र दोनो हो।

५—३।५।९।११ भावोमे पापग्रह हो और शुभग्रहोकी दृष्टि इनपर नही हो।

६—षष्ठेश ६।१२वें स्थानमें हो और शनिकी दृष्टि न हो।

मूक योग

१—कर्क, वृश्चिक और मीन राशिमे गये हुए बुधको अमावस्याका चन्द्रमा देखता हो।

२—बुध और षष्ठेश दोनो एक साथ स्थित हो।

३—गुरु और षष्ठेश लग्नमे स्थित हो।

४—वृश्चिक और मीन राशिमे पापग्रह स्थित हो एव किसी भी राशिके अन्तिम अशोमें व वृष राशिमें चन्द्र स्थित हो और पापग्रहोसे दृष्ट हो तो जीवन-भरके लिए मूक तथा शुभग्रहोसे दृष्ट हो तो पाँच वर्षके उप-रान्त बालक बोलता है।

५—क्रूरग्रह सन्धिमें गये हो, चन्द्रमा पापग्रहोसे युक्त हो तो भी गूँगा होता है।

६—शुक्लपक्षका जन्म हो और चन्द्रमा, मगलका योग लग्नमे हो।

७—कर्क, वृश्चिक और मीन राशिमे गया हुआ बुध, चन्द्रसे दृष्ट हो, चौथे स्थानमें सूर्य हो और छठे स्थानको पापग्रह देखते हो।

८—द्वितीय स्थानमे पापग्रह हो और द्वितीयेश नीच या अस्तगत होकर पापग्रहोसे दृष्ट हो एव रवि, बुधका योग सिह राशिमे किसी भी स्थानमे हो।

९—सिह राशिमे रवि, बुध दोनो एक साथ स्थित हो तो जातक मूक होता है।

नेत्ररोगी योग

१—वक्रगतिस्थ ग्रहकी राशिमे छठे स्थानका स्वामी हो तो नेत्ररोगी होता है।

२—लग्नेश ३।६।१।८ राशियोमे हो और बुध, मगल देखते हो। लग्नेश तथा अष्टमेश छठे स्थानमें हो तो बाये नेत्रमें रोग होता है।

३—छठे और आठवें स्थानमें शुक्र हो तो दक्षिण नेत्रमे रोग होता है।

४—धनेश शुभग्रहसे दृष्ट हो एव लग्नेश पापग्रहसे युक्त हो तो सरोग नेत्र होते है।

५—दूसरे और बारहवें स्थानके स्वामी शनि, मगल और गुलिकसे युक्त हो तो नेत्रमें रोग होता है।

६—नेत्र स्थान २।१२ के स्वामी तथा नवाशका स्वामी पापग्रहकी राशिके हो तो नेत्ररोगसे पीडित होता है।

७—लग्न तथा आठवें स्थानमे शुक्र हो और उसपर क्रूरग्रहकी दृष्टि हो तो नेत्ररोगसे पीडित होता है।

८—शयनावस्थामे गया हुआ मगल लग्नमे हो तो नेत्रमे पीडा होती है।

९—शुक्रसे ६।८।१२वें स्थानमे नेत्र-स्थानका स्वामी हो तो नेत्ररोगी होता है।

१०—पापग्रहसे दृष्ट सूर्य ५।९ मे हो तो निस्तेज नेत्र होते हैं।

११—चन्द्रसे युक्त शुक्र ६।८।१२वें स्थानमे स्थित हो तो निशान्ध—रतौंधी रोगसे पीडित होता है।

१२—नेत्र-स्थान (२।१२) के स्वामी शुक्र, चन्द्रसे युक्त हो लग्नमे स्थित हो तो निशान्ध योग होता है।

१३—मगल या चन्द्रमा लग्नमे हो और शुक्र, गुरु उसे देखते हो या इन दोनोमे कोई एक ग्रह देखता हो तो जातक काना होता है।

१४—सिंह राशिका चन्द्रमा सातवें स्थानमे मगलसे दृष्ट हो या कर्क राशिका रवि सातवें स्थानमें मगलसे दृष्ट हो तो जातक काना होता है।

१५—चन्द्र और शुक्रका योग सातवें या बारहवें स्थानमे हो तो बायीं आँखका काना होता है।

१६—बारहवें भावमे मगल हो तो वाम नेत्रमे एव दूसरे स्थानमें शनि हो तो दक्षिण नेत्रमे चोट लगती है।

१७—लग्नेश और धनेश ६।८।१२वें भावमे हो और चन्द्र, सूर्य सिंह राशिके लग्नमे स्थित हो तथा शनि इनको देखता हो तो नेत्र ज्योतिहीन होते हैं।

१८—लग्नेश सूर्य, शुक्रसे युत होकर ६।८।१२वें स्थानमे गया हो, नेत्र स्थान (२।१२) के स्वामी और लग्नेश ये दोनो सूर्य, शुक्रसे युत होकर ६।८।१२वें स्थानमें हो तो जन्मान्ध जातक होता है।

१९—चन्द्र-मगलका योग ६।८।१२वें स्थानमे हो तो गिरनेसे जातक अन्धा होता है। गुरु और चन्द्रमाका योग ६।८।१२वें भावमे हो तो ३० वर्षकी आयुके पश्चात् अन्धा होता है।

२०—चन्द्र और सूर्य दोनो तीसरे स्थानमे अथवा १।४।७।१०वें स्थानमे हो या पापग्रहकी राशिमे गया हुआ मगल १।४।७।१०वें स्थानमे हो तो रोगसे अन्धा होता है।

२१—मकर या कुम्भका सूर्य ७वें स्थानमे हो या शुभग्रह ६।८।१२वें स्थानमे गये हो और उनको क्रूरग्रह देखते हो तो जातक अन्धा होता है।

२२—शुक्र और लग्नेश ये दोनो दूसरे और वारहवे स्थानके स्वामीसे युक्त हो और ६।८।१२वे स्थानमे स्थित हो तो जातक अन्धा होता है।

२३—चौथे, पाँचवेंमे पापग्रह हो या पापग्रहसे दृष्ट चन्द्रमा ६।८।१२वें स्थानमे हो तो जातक २५ वर्षकी आयुके वाद काना होता है।

२४—चन्द्र और सूर्य दोनो शुभग्रहोसे अदृष्ट होते हुए बारहवें स्थानमे स्थित हो या सिंह राशिका शनि या शुक्र लग्नमे हो तो जातक म०यावस्थामे अन्धा होता है।

२५—शनि, चन्द्र, सूर्य ये तीनो क्रमश १२।२।८ मे स्थित हो तो नेत्रहीन तथा छठे स्थानमें चन्द्र, आठवेंमे रवि और मगल वारहवेंमे हो तो वात और कफ रोगसे जातक अन्धा होता है।

सुख विचार—लग्नेश निर्बल होकर ६।८।१२वें भावमे हो तो सुखकी कमी तथा ६।८।१२वें भावोके स्वामी कमज़ोर होकर लग्नमे बैठे हो तो सुखकी कमी समझना चाहिए। षष्ठेश और व्ययेश अपनी राशिमे हो तो भी जातकको सुखका अभाव या अल्पसुख होता है। लग्नेशके निर्बल होनेसे शारीरिक सुखोका अभाव रहता है। लग्नमे क्रूरग्रह शनि और मगलके रहनेसे शरीर रोगी रहता है।

साहस विचार—लग्नेश वलवान् हो या ३।६।११वें भावोमे क्रूरग्रहोकी राशियाँ हो तो जातक साहसी अन्यथा साहसहीन होता है।

नौकरी योग—व्ययेश १।२।४।५।९।१० भावोंमें-से किसी भी भावमें हो तो नौकरी योग होता है। इस योगके होनेपर ३।६।११ भावोंमें सौम्य ग्रह—बलवान् चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र, केतु हो या इन ग्रहोंकी राशियाँ हो तो दीवानी महकमेकी नौकरीका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें क्रूर-ग्रहोंकी राशियाँ हों और इन भावोंमें-से किसी भी भावमें स्वगृही ग्रह हो तो पुलिस अफसरका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें-से किन्हीं भी दो भावोंमें क्रूरग्रहोंकी राशियाँ हों और शेष स्थानोंमे सौम्य ग्रहोंकी राशियाँ हों, तथा इन स्थानोंमे भी कोई ग्रह स्वगृही हो और लग्नेश बलवान् हो तो जज या न्यायाधीशका योग होता है। ३।६।११ भावोंमे क्रूर ग्रहोंकी राशियाँ हों और इन भावोंमे कोई ग्रह उच्चका हो तो मजिस्ट्रेट होनेका योग होता है।

राज योग

जिस जन्मकुण्डलीमे तीन अथवा चार ग्रह अपने उच्च या मूल-त्रिकोणमें बली हो तो प्रतापशाली व्यक्ति मन्त्री या राज्यपाल होता है। जिस जातकके पाँच अथवा छह ग्रह उच्च या मूलत्रिकोणमे हो तो वह दरिद्रकुलोत्पन्न होनेपर भी राज्यशासनमे प्रमुख अधिकार प्राप्त करता है।

पापग्रह उच्च स्थानमे हो अथवा ये ही ग्रह मूलत्रिकोणमें हो तो व्यक्तिको शासन-द्वारा सम्मान प्राप्त होता है।

जिस व्यक्तिके जन्मसमय मेष लग्नमे चन्द्रमा, मंगल और गुरु हो अथवा इन तीनों ग्रहोंमें-से दो ग्रह मेष लग्नमें हो तो निश्चय ही वह व्यक्ति शासनमें अधिकार प्राप्त करता है। मेष लग्नमें उच्चराशिके ग्रहों-द्वारा दृष्ट गुरु स्थित होनेसे शिक्षामन्त्री पद प्राप्त होता है। मेषलग्नमे उच्चका सूर्य हो, दशममे मंगल हो और नवमभावमे गुरु स्थित हो तो व्यक्ति प्रभावक मन्त्री या राज्यपाल होता है।

गुरु[1] अपने उच्च (कर्क) मे तथा मगल मेपमें होकर लग्नमें स्थित हो अथवा मेप लग्नमे ही मगल और गुरु दोनो हो तो व्यक्ति गृहमन्त्री अथवा विदेशमन्त्री पदको प्राप्त करता है। मेप लग्नमे जन्मग्रहण करनेवाला व्यक्ति निर्वल ग्रहोके होनेपर पुलिस अधिकारी होता है। यदि इस लग्नके व्यक्तिकी कुण्डलीमें क्रूर ग्रह—शनि, रवि और मगल उच्च या मूलत्रिकोणके हो और गुरु नवम भावमे हो तो रक्षामन्त्रीका पद प्राप्त होता है।

एकादश भावमे चन्द्रमा,[2] शुक्र और गुरु हो, मेपमे मगल हो, मकरमे शनि हो और कन्यामे वुध हो तो व्यक्तिको राजाके समान सुख प्राप्त होता है। उक्त प्रकारकी ग्रहस्थितिमे मेप या कन्या लग्नका होना आवश्यक है।

कर्क लग्न हो और उसमे पूर्ण चन्द्रमा स्थित हो, सप्तम भावमे वुध हो; पष्ठ भावमे सूर्य हो, चतुर्थमे शुक्र, दशममे गुरु और तृतीय भावमे शनि-मगल हो तो जातक शासनाधिकारी होता है। दशम भावमे मगल और गुरु एक साथ हो और पूर्ण चन्द्रमा कर्क राशिमे अवस्थित हो तो जातक मण्डलाधिकारी या अन्य किसी पदको प्राप्त करता है।

जन्म-समयमे वृप लग्न हो और उसमे पूर्ण चन्द्रमा स्थित हो तथा कुम्भमे शनि, सिंहमे सूर्य एव वृश्चिकमे गुरु हो तो अधिक सम्पत्ति, वाहन

---

१ स्वोच्चे गुराववनिजे क्रियगे विलग्ने, मेपोदये च सकुजे वचसामधीशे।
भूपो भवेदिह स यस्य विपक्षसैन्य तिष्ठेन्न जातु पुरत· सविवा वयस्याः॥
—सारावली, वनारस, सन् १९५३, राजयोगाध्याय, श्लो० ८

२ निशाभर्ता चाये भृगुतनयदेवेड्यसहित.,
कुज. प्राप्त स्वोच्चे मृगमुखगत सूर्यतनय.।
विलग्ने कन्याया शिशिरकरसूनुर्यदि भवेत्,
तदावश्य राजा भवति वहुविज्ञानकुशल॥
—वही, श्लो० ९

एव प्रभुताकी उपलब्धि होती है। जन्मकुण्डलीमे उच्चराशिका चन्द्रमा और मगल शासनाधिकारी बनाते हैं।

जन्मस्थानमें मकर लग्न हो और लग्नमे शनि स्थित हो तथा मीनमे चन्द्रमा, मिथुनमे मगल, कन्यामे बुध एव धनुमे गुरु स्थित हो तो जातक प्रतापशाली शासनाधिकारी होता है। यह उत्तम राजयोग है। मीन लग्न होनेपर लग्नस्थानमें चन्द्रमा, दशममे शनि और चतुर्थमें बुधके रहनेसे एम० एल० ए० का योग बनता है। यदि उक्त योगमे दशम स्थानमें गुरु हो और उसपर उच्चग्रहकी दृष्टि हो तो एम० पी० का योग बनता है।

जातककी मीन लग्न[2] हो और लग्नमे चन्द्रमा, मकरमे मगल, सिंहमे सूर्य और कुम्भमे शनि स्थित हो तो वह उच्च शासनाधिकारी होता है। मकर लग्नमे मगल और सप्तम भावमे पूर्ण चन्द्रमाके रहनेसे जातक विद्वान् शासनाधिकारी होता है। यदि स्वोच्च स्थित[3] सूर्य चन्द्रमाके साथ लग्नमें स्थित हो तो जातक महनीय पद प्राप्त करता है। यह योग ३२ वर्षकी अवस्थाके अनन्तर घटित होता है। उच्च राशिका सूर्य मगलके साथ रहनेसे जातक भूमि प्रबन्धके कार्योंमे भाग लेता है। खाद्यमन्त्री या भूमि-

---

१ मृगे मन्दे लग्ने कुमुदवनबन्धुश्च तिमिग-
स्तथा कन्यां त्यक्त्वा बुधभवनसंस्थ कुतनय. ।
स्थितो नार्यां सौम्यो धनुषि सुरमन्त्री यदि भवेत्,
तदा जातो भूप सुरपतिसम. प्राप्तमहिमा ॥
—सारावली, राजयोगाध्याय, श्लो० १२

२ उदयति मीने शशिनि नरेन्द्र. सकलकलाढ्य द्विनिसुत उच्चे ।
मृगपतिसंस्थे दशशतरश्मौ घटधरगे स्यात् निकरपुत्रे ॥—वही, श्लो० १३

३. कर्क्युदयस्थो दिनकृद्रत्नाधाराभि.न.
मिनस्थितनय मकरनयनानन्दजनक ।
सूर्यात्सुतस्था नयनजलमिरोपिप सतत
रिपुस्त्रीणामग्निज्वलति हृदयेऽत्र सुतराम् ॥ — वही, श्लो० १५

सुवार मन्त्री होनेके लिए जन्म-कुण्डलीमे मंगल या शुक्रका उच्च होना या मूलत्रिकोणमें स्थित रहना आवश्यक है।

तुला राशिमें शुक्र, मेप राशिमे मगल और कर्क राशिमें गुरु स्थित हो तो राज योग होता है। इस योगके होनेसे प्रादेशिक शासनमे जातक भाग लेता है और उसका यश सर्वत्र व्याप्त रहता है। मकर जन्मलग्न-वाला जातक तीन उच्चग्रहोके रहनेमे राजमान्य होता है।

धनुमें चन्द्रमासहित गुरु हो, मगल मकर राशिमें स्थित हो अथवा बुध अपने उच्चमें स्थित होकर लग्नगत हो तो जातक शासनाधिकारी या मन्त्री होता है। धनुके पूर्वार्धमे सूर्य और चन्द्रमा तथा स्वोच्चगत शनि लग्नमे स्थित हो और मगल भी स्वोच्चमे हो तो जातक महाप्रतापी अधि-कारी होता है।

सब ग्रह बली होकर[1] अपने-अपने उच्चमे स्थित हो और अपने मित्रसे दृष्ट हो तथा उनपर शत्रुकी दृष्टि न हो तो जातक अत्यन्त प्रभावशाली मन्त्री होता है। चन्द्रमा परमोच्चमे स्थित हो और उसपर शुक्रकी दृष्टि हो तो जातक निर्वाचनमें सर्वदा सफल होता है। इस योगके होनेपर पाप ग्रहोका आपोक्लिम स्थानमे रहना आवश्यक है।

जन्मलग्नेश और जन्मराशीश दोनो केन्द्रमें हो तथा शुभग्रह और मित्रमे दृष्ट हो, शत्रु और पापग्रहोकी दृष्टि न हो तथा जन्मराशीशसे नवम स्थानमें चन्द्रमा स्थित हो तो राजयोग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति एम० एल० ए० या एम० पी० बनता है।

---

१. अत्युच्चस्था रुचिरवपुषः सर्व एव ग्रहेन्द्रा
मित्रैर्दृष्टा यदि रिपुदृशा गोचरं न प्रयाताः।
कुर्युर्नूनं प्रसभमरिभिर्गर्जितैर्वारणाग्र्यैः
सेनाश्वीयैश्चलति चलितैर्यस्य भूः पार्थिवेन्द्रम्॥ —वही श्लो० ३२

यदि पूर्ण चन्द्रमा[1] जलचर राशिके नवांशमें चतुर्थ भावमे स्थित हो और शुभ-ग्रह अपनी राशिके लग्नमे हो तथा केन्द्र स्थानोमे पापग्रह न हो तो जातक शासनाधिकारी होता है। इस योगमे जन्म ग्रहण करनेवाला व्यक्ति गुप्तचर या राजदूतके पदपर प्रतिष्ठित होता है।

बुध अपने उच्च[2]मे स्थित होकर लग्नमे हो और मीन राशिमें गुरु एवं चन्द्रमा स्थित हो तथा मगलसहित शनि मकरमे हो और मिथुनमें शुक्र हो तो जातक शासनके प्रबन्धमे भाग लेता है। उक्त योगके होनेसे निर्वाचन कार्यमें सर्वदा सफलता प्राप्त होती है। उक्त योग पचास वर्षकी अवस्थामें ही अपना यथार्थ फल देता है।

मेष लग्न[3] हो, सिंहमें सूर्यसहित गुरु, कुम्भमे शनि, वृषमें चन्द्रमा, वृश्चिकमे मगल एव मिथुनमें बुध स्थित हो तो राजयोग बनता है। इस प्रकारके योगके होनेसे व्यक्ति किसी आयोगका अध्यक्ष होता है।

गुरु, बुध और शुक्र ये तीनो शनि, रवि और मगलसहित अपने-अपने स्थान या केन्द्रमे हो और चन्द्रमा स्वोच्चमे स्थित हो तो जातक इंजीनियर या इसी प्रकारका अन्य अधिकारी होता है। यह योग जितना प्रबल होता है, उसका फलादेश भी उतना ही अधिक प्राप्त होता है।

यदि शुक्र, गुरु और बुधको पूर्ण चन्द्रमा देखता हो, लग्नेश पूर्ण बली

---

१. उदकचरनवांशके सुखस्थ कमलरिपु सकलाभिराममूर्त्ति ।
उदयति त्रिदशे शुभे स्वलग्ने भवति नृपो यदि केन्द्रगा न पापा ॥
—सारावली, राज० श्लो० २६

२. बुध स्वोच्चे लग्ने तिमियुगलगावीड्यशशिनौ,
मृगे मन्द सारो मिथुनगृहगो दानवगुरुः ।
य एवं कुर्वाणः क्षितिनृपदलितध्वंसनिरता,
निरालोकं लोकं चलितगजसंघातरजसा ॥ —वही, श्लो० २२

३. कार्मुके त्रिदशनायकमन्त्री भानुजो वणिजि चन्द्रसमेतः ।
नगगनु तनो यदि लग्ने भूपतिर्भवति सोऽतुलकीर्तिः ॥ —वही, श्लो० २४

हो तथा द्विस्वभाव लग्नमें वर्गोत्तम नवांश हो तो राज योग होता है। इस योगके होनेसे जातक सरकारी उच्चपद प्राप्त करता है।

वर्गोत्तम नवांशमें तीन या चार ग्रह हों और शुभ ग्रह केन्द्रमे स्थित हों तो जातक उच्चपद प्राप्त करता है। सेनापति होनेका योग भी उक्त ग्रहोंसे बनता है। एक भी ग्रह अपने उच्च या वर्गोत्तम नवांशमे हो तो व्यक्तिको राजकर्मचारीका पद प्राप्त होता है।

यदि समस्त ग्रह शीर्षोदय[1] राशियोंमे स्थित हों तथा पूर्ण चन्द्रमा कर्क राशिमे शत्रुवर्गसे भिन्न वर्गमें शुभ ग्रहसे दृष्ट लग्नमे स्थित हो तो व्यक्ति धन-वाहनयुक्त शासनाधिकारी होता है।

जन्मराशीश चन्द्रमासे उपचय—३, ६, १०, ११ मे हो और शुभ राशि या शुभ नवांशमे केन्द्रगत शुभग्रह हो तथा पापग्रह निर्बल हो तो प्रतापी शासनाधिकारी होता है। इसके समक्ष बडे-बडे प्रभावक व्यक्ति नतमस्तक होते हैं।

✓जिस ग्रहकी उच्च राशि लग्नमे हो, वह ग्रह यदि अपने नवांश या मित्र अथवा उच्चके नवांशमें केन्द्रगत शुभग्रहसे दृष्ट हो तो जन्मकुण्डलीमे राजयोग होता है। मकरके उत्तरार्द्धमे बलवान् शनि, सिंहमे सूर्य, तुलामें शुक्र, मेषमें मगल, कर्कमें चन्द्रमा और कन्यामें बुध हो तो राजयोग बनता है। इस योगके होनेसे जातक प्रभावशाली शासक होता है। राजनीतिमें उसकी सर्वदा विजय होती है।

लग्नेश केन्द्रमें अपने मित्रोंसे दृष्ट हो और शुभ ग्रह लग्नमें हों तो जातककी कुण्डलीमें राजयोग होता है। इस योगके होनेसे न्यायाधीशका

---

१ शीर्षोदयर्क्षेषु गता. समस्ता नो चारिवर्गे स्वगृहे शशाङ्क।
सौम्येक्षितोऽन्यूनकलो विलग्ने दद्यान्मही रत्नगजाश्वपूर्णाम्॥
—वही, श्लो० ३०

पद प्राप्त होता है। वृष लग्न[1] हो और उसमें गुरु तथा चन्द्रमा स्थित हो, बली लग्नेश त्रिकोणमें हो तथा उसपर बलवान् रवि, शनि एवं मंगल-की दृष्टि न हो तो सर्वदा चुनावमें विजय प्राप्त होती है। उक्त ग्रहवाले व्यक्तिको कभी भी कोई चुनावमें पराजित नहीं कर सकता है।

जन्मके समयमें सब ग्रह अपनी राशि, अपने नवांश या उच्च नवांशमें मित्रोंसे दृष्ट हो तथा चन्द्रमा पूर्ण बली हो तो जातक उच्च पदाधिकारी होता है। उक्त ग्रहयोगके होनेसे राजदूतका पद भी प्राप्त होता है।

वर्गोत्तम नवांशगत उच्च राशि स्थित पूर्ण चन्द्रमाको जो-जो शुभग्रह देखता है, उसकी महादशा या अन्तर्दशामें मन्त्रीपद प्राप्त होता है। यदि जन्मलग्नेश और जन्मराशीश बली होकर केन्द्रमें स्थित हो और जलचर राशिगत चन्द्रमा त्रिकोणमें हो तो जातक राज्यपालका पद प्राप्त करता है। जन्मसमयमें[2] सब ग्रह अपनी राशिमें, मित्रके नवांश या मित्रकी राशिमें तथा अपने नवांशमें स्थित हो तो जातक आयोगाध्यक्ष होता है। उक्त योग भी राजयोग है, इसके रहनेसे सम्मान, वैभव एवं धन प्राप्त होता है।

जन्मकुण्डलीमें समस्त ग्रह अपने-अपने परमोच्चमें हों और बुध अपने उच्चके नवांशमें हो तो जातक चुनावमें विजयी होता है तथा उसे राज-नीतिमें यश एवं उच्चपद प्राप्त होता है। उक्त ग्रहके रहनेसे राष्ट्रपतिका

---

१ सुरपतिगुरु नेन्दुर्लग्ने वृषे समवस्थितौ,
यदि बलयुतो लग्नेशश्च त्रिकोणगृहं गतः।
रविशनिकुजैर्वीर्योपेतैर्न युक्तनिरीक्षितौ,
भवति स नृपः कीर्त्या युक्तो हताखिलकण्टकः ॥ —मा०, रा० श्लो० ३६

२ स्वगृहे मित्रभागेषु स्वांशे वा मित्रराशिषु।
कुर्वन्ति च नरं सर्वे सार्वभौमं नराधिपम् ॥
परमोच्चगताः सर्वे स्वोच्चांशे यदि सोमजः।
धर्मात्याधिपतिं कुर्युः सर्वदानवनन्दितम् ॥ —वही, पद्य ४३-४४

पद भी प्राप्त होता है। चतुर्थ भावमें सप्तर्षि गत नक्षत्र, लग्नमे गुरु, सप्तममे शुक्र, दशममे अगस्त्य नक्षत्र हो तो भी राष्ट्रपतिका पद प्राप्त होता है।

पूर्ण चन्द्रमा अपने नवांश अथवा अपनी राशि या स्वोच्च राशिमें हो तथा वृहस्पति केन्द्रमें शुक्रसे दृष्ट हो और लग्नमे स्थित होकर अपने नवांशको देखता हो तो राष्ट्रपतिका पद प्राप्त होता है। पूर्ण चन्द्रमापर सब ग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक दीर्घजीवी होता है और अधिक समय तक शासनाधिकारका उपभोग करता है।

उच्चाभिलाषी[1]—मीनके अन्तिम अंशस्थ सूर्य यदि त्रिकोणमे हो, चन्द्रमा कर्कमे हो तथा वृहस्पति भी यदि कर्कमे हो तो जातक राज्यपाल या मन्त्री होता है। यदि छह ग्रह निर्मलकिरणयुक्त सबल होकर अपने नवांशमें स्थित हो तो मण्डलाधिकारी होनेका योग होता है।

यदि समस्त शुभग्रह वलवान्, परिपूर्ण किरण होकर लग्नमे स्थित हो और पापग्रह अस्त होकर उनके साथ न हो तो जातक प्रतिष्ठित पद प्राप्त करता है। इस योगके होनेसे सम्मान अत्यधिक प्राप्त होता है।

समस्त शुभ[2] ग्रह पणफर स्थानमें हो और पापग्रह द्विस्वभाव राशिमें हो तो जातक रक्षामन्त्री होता है। लग्नेश[3] लग्नमे हो अथवा मित्रकी राशिमे मित्रसे दृष्ट हो तो जातक राज्यमे किसी उच्चपदको प्राप्त करता है। यदि उक्त योगमें शुभ राशि लग्नमे हो तो जातकको शिक्षामन्त्रीका पद प्राप्त होता है।

---

१ उच्चाभिलाषी सविता त्रिकोणे स्वर्क्षे शशी जन्मनि यस्य जन्तोः।
न शास्ति पृथ्वीं बहुरत्नपूर्णां बृहस्पतिः कर्कटके यदि स्यात्॥
—सा० रा०, श्लो० ४८

२. शुभपणफरगाः शुभप्रदा उभयगृहे यदि पापसञ्चयाः।
स्वभुजहतरिपुर्महीपतिः सुरगुरुतुल्यमतिः प्रकीर्त्तितः॥ —वही, श्लो० ५१

३ विलग्ननाथः खलु लग्नसस्थः सुहृद्गृहे मित्रदृशा यदि स्थितः।
करोति नाथं पृथिवीतलस्य दुर्वारवैरिघ्नमहोदये शुभे॥ —वही, ५२

पूर्ण चन्द्रमा यदि मेष राशिके नवांशमें स्थित हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो, अन्य ग्रहोंकी दृष्टि न हो तथा कोई भी ग्रह बीचमें न हो तो जातक शासनाधिकारी होता है। पूर्ण चन्द्रमा लग्नसे ३, ६, १०, ११वें स्थानोंमें गुरुसे दृष्ट हो अथवा चन्द्रराशीश १० या ७वें भावमें गुरुसे दृष्ट हो तथा अन्य किसी भी ग्रहकी दृष्टि न हो तो जातककी कुण्डलीमें राजयोग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्ति राजनीतिमें सफलता प्राप्त करता है।

पूर्ण चन्द्रमा[1] उच्चमें हो और उसके ऊपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो तो राजयोग होता है। पूर्ण चन्द्रमा सूर्यके नवांशमें हो और समस्त शुभग्रह केन्द्रमें हो तथा पापग्रहोंका योग न हो तो भी राजयोग होता है। चन्द्र, बुध और मंगल उच्चस्थान या अपने-अपने नवांशमें हो तथा ये तृतीय और द्वादश भावमें स्थित हो और चन्द्रमासहित गुरु पंचम भावमें स्थित हो तो जातक प्रतापी मन्त्री होता है। कोई भी तीन ग्रह अपने उच्च, नवांश या स्वराशिमें स्थित हो और उनपर शुभग्रहकी दृष्टि हो तो जातक एम० एल० ए० होता है। तीन शुभग्रहोंके उच्चराशिस्थ होनेपर जातकको मन्त्रीपद प्राप्त होता है। गुरु और चन्द्रमाके उच्च होनेपर शिक्षामन्त्री तथा मंगल, गुरु और चन्द्रमा इन तीनोंके उच्च होनेपर मुख्यमन्त्रीका पद प्राप्त होता है। चार ग्रहोंके उच्च होनेपर केन्द्र या अन्य बड़ी सभामें उच्चपद प्राप्त होता है।

यदि जन्मसमयमें सभी ग्रह योगकारक हो तो जातक राष्ट्रपति होता है। दो-तीन ग्रहोंके योगकारक होनेसे राज्यपाल होनेका योग आता है। एक ग्रह भी अपने पंचमांशमें हो तो एम० एल० ए० का योग बनता है। वृष राशिस्थ चन्द्रमाको जन्मसमयमें बृहस्पति देखता हो तो जातक समस्त

[1] उडुपतिरतिपूर्णो मेषभागं प्रपन्नो यदि बलसमुपेतः पश्यति व्योमचारी।
उदयभवनसंस्थः पापदृग्भिर्न चैव भवति मनुजनाथः सार्वभौमः सुदेहः॥
—वही, श्लो० ५६

पृथिवीका शासक होता है और राजनीतिमे उसकी कीर्ति वढती है।

अपने उच्च, त्रिकोण या स्वराशिमे स्थित होकर कोई भी ग्रह चन्द्रमाको देखता हो तो मन्त्रीपद प्राप्त करनेमे कठिनाई नही होती। उक्त योग राजयोग कहा जाता है और इसके रहनेसे व्यक्ति राजनीतिमे सफलता प्राप्त करता है।

यदि चन्द्रमा अपनी राशि या द्रेष्काणमे स्थित हो तो व्यक्ति मण्डल-पति होता है। शुभग्रहोके पूर्ण वलवान् होनेपर यह योग अधिक शक्ति-शाली होता है। जन्मसमयमे सूर्य अपने नवाशमे और चन्द्रमा अपनी राशिमे स्थित हो तो जातक महादानी और उच्च पदाधिकारी होता है।

लग्नमे शनि और सप्तम भावमें नवोदित वृहस्पति हो और उसपर शुक्रकी दृष्टि हो तो व्यक्ति मुखिया होता है। पंचायतका प्रधान भी वनता है। शुक्र, रवि, चन्द्रमा तीनो एक स्थानमें गुरुसे दृष्ट हो तो व्यक्ति गाँव-का मुखिया होता है और उसका सम्मान सर्वत्र किया जाता है।

शुक्र, वुध और मगल ये तीनो ग्रह लग्नमे स्थित हो और चन्द्रमासे युक्त ग्रह सप्तम भावमे हो तथा उनपर शनिकी दृष्टि हो तो जातक यशस्वी शासक वनता है। पूर्ण वली वृहस्पति मगलके नवाशमे हो और उसपर मगलकी ही दृष्टि हो तथा मेप स्थित सूर्य दशम भावमे स्थित हो तो जातक मन्त्रीपद प्राप्त करता है। भूमिका प्रवन्ध एव भूमिसे आमदनी-की व्यवस्था भी उक्त योगवाला करता है। इजीनियर वननेवाले योगोमे भी उक्त योगकी गणना की गयी है।

शुक्र, चन्द्र और रवि तृतीय भावमे हो, मगल सप्तम भावमे स्थित हो, गुरु नवममें स्थित हो और लग्नमे वर्गोत्तम नवाश स्थित हो तो जातक मन्त्री होता है। यह योग गुरुकी महादशा और मगलकी अन्तर्दशामे घटित होता है। जन्मसमयमे वुध, गुरु और शुक्र वली होकर नवम भावमें स्थित हो और मित्रग्रहोकी दृष्टि इनपर हो तो जातक उच्च शासना-धिकारी होता है। नवम भावमे तीन या चार उच्चग्रहोके रहनेसे राजनीति-

में पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। चन्द्रमा तृतीय या दशम भावमें स्थित हो और गुरु अपने उच्चमें हो तो सर्वसम्पत्तियुक्त शासनाधिकार प्राप्त होता है।

उच्चका गुरु केन्द्रस्थानमे और शुक्र दशम भावमें स्थित हो तो व्यक्ति राजनीतिमें सफलता प्राप्त करता है। चुनावमे उसे सर्वदा विजय मिलती है। पूर्ण चन्द्रमा कर्कमे हो तथा वली, बुध, गुरु और शुक्र अपने नवाशमें स्थित होकर चतुर्थ भावमे हो और इन ग्रहोपर सूर्यकी दृष्टि हो तो साधारण व्यक्ति भी मन्त्रीपद प्राप्त करता है। इस व्यक्तिके तेज एव बौद्धिक प्रखरताके कारण बडे-बडे महानुभाव इससे प्रभावित रहते है और समस्त कार्योमें इसे सफलता प्राप्त होती है। मूलत्रिकोण स्थित सूर्य दशम भावमे हो और शुक्र, गुरु तथा चन्द्र स्वराशिमें स्थित होकर तीसरे, छठे और ग्यारहवें भावोमे स्थित हो तो जातक उच्चश्रेणीका राजनीति-विशारद होता है। उसे चुनावमें स्वय ही सफलता प्राप्त होती है।

वली सूर्य यदि गुरुके साथ अपने उच्चमें स्थित होकर दशम भावमे हो, शुक्र अपने नवाशमे वली होकर नवम भावमें स्थित हो; लग्नमे शुभ-वर्ग या शुभग्रह स्थित हो और उनपर बुधकी दृष्टि हो तो व्यक्ति चुनावमें विजय प्राप्त करता है। इस योगके होनेसे उसे मन्त्रीपद भी प्राप्त होता है। पूर्ण चन्द्रमा वृषमें हो और उसको तुलराशि स्थित शुक्र पूर्ण दृष्टि-से देख रहा हो तथा बुध चतुर्थ भावमे स्थित हो तो जातक एम० एल० ए० होता है। मगल अपने उच्चमे हो और उसपर रवि, चन्द्र एव गुरुकी दृष्टि हो तो जातक उत्तम सुख प्राप्त करता है। उक्त योगके रहनेसे एम० पी० भी जातक होता है। मगल उच्च राशिका दशम भावमे हो तो जातक तेजस्वी होता है। इस प्रकारके मगल योगसे जातक भूमि-व्यवस्थापक भी बनता है।

एक राशिके अन्तरसे छह राशियोमें समस्त ग्रह हो तो चक्रयोग होता है। इसमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति मन्त्रीपद प्राप्त करता है। यदि समस्त

ग्रह १०।७।४।१ भावोंमे हो तो नगरयोग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति निश्चयत मन्त्रीपद प्राप्त करता है।

समस्त शुभग्रह १।४।७ मे हो और मगल, रवि तथा शनि ३।६।११ भावमे हो तो जातकको न्यायी योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति चुनावमे सर्वदा विजयी होता है। समस्त शुभग्रह ९।११वें भावमे हो तो कलश नामक योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति राज्यपाल या राष्ट्रपति होता है।

यदि तीन ग्रह ३।५।११वें भावमे हो, दो ग्रह षष्ठ भावमे और शेष दो ग्रह सप्तम भावमे हो तो पूर्णकुम्भ नामक योग होता है। इस योग-वाला व्यक्ति उच्च शासनाधिकारी अथवा राजदूत होता है।

लग्नमे बलवान् शुभग्रह स्थित हो तथा अन्य शुभग्रह १।२।९वे भावमे स्थित हो और शेष ग्रह ३।६।१०।११वें भावमे स्थित हो तो जातक प्रतिष्ठितपद प्राप्त करता है। स्वराशिस्थ बृहस्पति चतुर्थ भावमे और पूर्ण चन्द्रमा ९वें भावमे तथा शेष ग्रह १।३वें भावमे स्थित हो तो जातक बुद्धिमान्, धनी और वाहनोसे युक्त होता है।

उच्चराशिका चन्द्रमा लग्नमे, गुरु धन भावमे, शुक्र तुलामे, बुध कन्यामे, मगल मेषमे और सूर्य सिंह राशिमें स्थित हो तो जातक एम० एल० ए० होता है। चन्द्रमा और रवि दशम भावमे, शनि लग्नमे, गुरु चतुर्थमे और शुक्र, बुध तथा मगल ११वें भावमे हो तो व्यक्ति अत्यन्त शक्तिशाली मन्त्री होता है।

मकरसे भिन्न लग्नमें बृहस्पति हो तो व्यक्तिको मोटर आदि उत्तम सवारीकी प्राप्ति होती है। लग्नमे मगल, दशममे शनि-रवि, सप्तममे गुरु, नवममे शुक्र, एकादशमे बुध और चतुर्थ भावमे चन्द्रमा हो तो व्यक्ति यशस्वी शासक होता है। क्षीण चन्द्रमा भी उच्चस्थ हो तो व्यक्तिको राजनीतिमे प्रवीण बनाता है। पूर्ण चन्द्रमा उच्चराशिका होनेपर व्यक्ति-को उत्तम और प्रतिष्ठित पद प्राप्त होता है। अन्य ग्रह बलहीन हो तो भी

केवल चन्द्रमाके शक्तिशाली होनेसे व्यक्तिकी शक्तिका विकास होता है।

गुरु और शुक्र अपने-अपने उच्चमे स्थित होकर १।२।४।७।९।१०।११ वें भावमे स्थित हो तो व्यक्ति राज्यपाल होता है। इस योगके रहनेसे जातक मुख्यमन्त्रीका भी पद प्राप्त करता है।

शुभ ग्रह दिग्वल और स्थानवलसे युक्त होकर केन्द्रमे स्थित हो और उनपर पापग्रहकी दृष्टि न हो तो जातक प्रतिष्ठित शासनाधिकारी होता है।

वलवान् गुरु लग्नमें, शुक्लपक्षकी अष्टमीके अनन्तरका चन्द्रमा ११वें भावमे वुधसे दृष्ट हो और चन्द्रमासे द्वितीय स्थानमे सूर्य हो तो जातक मुख्यमन्त्री होता है। वाहन, धन एव वैभव आदि विपुल सामग्री उसे प्राप्त होती है। उच्चका गुरु और चन्द्र मुख्यमन्त्री वनानेवाले योगोंमें सर्व प्रधान है।

मेष लग्नमें रवि, चन्द्र और मगल हो, वृषमें शुक्र, शनि और वुध हो तथा धनुराशिस्थ गुरु नवम भावमें स्थित हो अथवा सूर्य पूर्ण वली होकर अपने परमोच्चमे स्थित हो तो जातक यशस्वी और प्रतापी होता है। राजनीतिमें उसके दाँव-पेंचको समझनेवाले वहुत ही कम व्यक्ति होते हैं।

गुरुसे दृष्ट रवि, चन्द्रमासे दृष्ट शुक्र, मगलसे दृष्ट शनि चर राशियोंमें स्थित हो तो जातक रक्षामन्त्री या गृहमन्त्रीका पद प्राप्त करता है। कन्या लग्नमें वुध, मीनमे गुरु, तृतीय स्थानमें वली मगल, षष्ठ भावमें शनि और चतुर्थ स्थानमें शुक्र स्थित हो तो जातक चुनावमे निश्चयत सफलता प्राप्त करता है। सभी प्रकारके चुनावोमे वह विजयी होता है।

मकर लग्नमें शनि, सप्तममें सूर्य, अष्टममें शुक्र, वृश्चिक राशिमे मगल और कर्क राशिमे चन्द्रमा स्थित हो तो जातक उच्च शासनाधिकार प्राप्त करता है। मकरमें शनि, सप्तममें चन्द्र और गुरु, कन्यामें वुध और शुक्र अथवा कन्यामे स्थित वुध शुक्रद्वारा दृष्ट हो तो जातक मण्डलाधिकारी होता है।

शनि, मगल और रवि ३।६।११वें भावमें स्थित हो, सिंहका गुरु एकादश भावमें स्थित हो और उसपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक शामनाधिकारी होता है।

जन्मसमयमें चन्द्रमा कुम्भके १५वें अंशमे, गुरु धनुके २०वें अशमे; सूर्य या बुध सिंहके १५वें अशमें, चन्द्रमा मकरके ५वे अशमे, गुरु कर्कके ५वे अशमे, मगल मेपके ७वें अश या मिथुनके २१वें अशमें स्थित हो तो जातक राजाके तुल्य प्रतापी होता है। यदि समस्त ग्रह चन्द्रमामे ३।६।१०।११वें भावमे स्थित हो तथा मगलसे गुरु, चन्द्र और सूर्य क्रमश ३।५।९वे स्थानमे स्थित हो तो जातक कुबेरके तुल्य धनी होता है। गुरुसे शनि, सूर्य और चन्द्रमा क्रमश २।४।१०वें स्थानमे स्थित हो और शेप ग्रह ३।११वें भावमें हो तो निश्चयत जातकको शासनाधिकार प्राप्त होता है।

रज्जु योग

सब ग्रह चर राशियोमे हो तो रज्जुयोग होता है। इस योगमे उत्पन्न मनुष्य भ्रमणशील, सुन्दर, परदेश जानेमे सुखी, क्रूर, दुष्टस्वभाव एव स्थानान्तरमे उन्नति करनेवाला होता है।

मुसल योग

समस्त ग्रह स्थिर राशियोमें हो तो मुसल योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला जातक मानी, ज्ञानी, धनी, राजमान्य, प्रसिद्ध, बहुत पुत्र-वाला, एम० एल० ए० एव शासनाधिकारी होता है।

नल योग

समस्त ग्रह द्विस्वभाव राशियोमे हो तो नलयोग होता है। इस योग-वाला जातक हीन या अधिक अगवाला, धनसग्रहकारी, अतिचतुर, राज-नैतिक दाव-पेचोमे प्रवीण एव चुनावमे सफलता प्राप्त करता है।

माला योग

बुध, गुरु और शुक्र ४।७।१०वें स्थानमे हो और शेष ग्रह इन स्थानोसे भिन्न स्थानोमे हो तो माला योग होता है। इस योगके होनेसे जातक धनी, वस्त्राभूषण युक्त, भोजनादिसे सुखी, अधिक स्त्रियोसे प्रेम करनेवाला एव एम० पी० होता है। पचायतके निर्वाचनमे भी उसे पूर्ण सफलता मिलती है।

सर्प योग

रवि, शनि और मगल ४।७।१०वें स्थानमे हो और चन्द्र, गुरु, शुक्र और बुध इन स्थानोसे भिन्न स्थानोमे स्थित हो तो सर्प योग होता है। इस योगके होनेसे जातक कुटिल, निर्धन, दुःखी, दीन, भिक्षाटन करनेवाला, चन्दा मांगकर खा जानेवाला एव सर्वत्र निन्दा प्राप्त करनेवाला होता है।

गदा योग

समीपस्थ दो केन्द्र १।४ या ७।१० मे समस्त ग्रह हो तो गदा नामक योग होता है। इस योगवाला जातक धनी, धर्मात्मा, शास्त्रज्ञ, संगीतप्रिय और पुलिस विभागमे नौकरी प्राप्त करता है। इस योगवाले जातकका भाग्योदय २८ वर्षकी अवस्थामे होता है।

शकट योग

लग्न और सप्तममे समस्त ग्रह हो तो शकट योग होता है। इस योगवाला रोगी, मूर्ख, ड्रायवर, स्वार्थी एव अपना काम निकालनेमें बहुत प्रवीण होता है।

पक्षी योग

चतुर्थ और दशम भावमे समस्त ग्रह हो तो विहग—पक्षी योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला जातक राजदूत, गुप्तचर, भ्रमणशील,

ढीठ, कलहप्रिय एव सामान्यत धनी होता है। शुभ ग्रह उक्त स्थानोंमें हो और पाप ग्रह ३।६।११वें स्थानमें हो तो जातक न्यायाधीश और मण्डलाधिकारी होता है।

शृंगाटक योग

समस्त ग्रह १।५।९ वें स्थानमे हो तो शृंगाटक योग होता है। इस योगवाला जातक सैनिक, योद्धा, कलहप्रिय, राज कर्मचारी, सुन्दर पत्नीवाला एवं कर्मठ होता है। वीरताके कार्योमें इसे सफलता प्राप्त होती है। इस योगवालेका भाग्य २३ वर्षकी अवस्थासे उदय हो जाता है।

हल योग

समस्त ग्रह २।६।१०वें स्थान या ३।७।११वें स्थान अथवा ४।८।१२वें स्थानमे हो तो हल योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला जातक बहु-भक्षी, दरिद्र, कृषक, दुखी, और भाई-बन्धुओंसे युक्त होता है। कृषि-सम्बन्धी शिक्षामे इस जातकको विशेष सफलता प्राप्त होती है।

वज्र योग

समस्त शुभ ग्रह लग्न और सप्तम स्थानमे स्थित हो अथवा समस्त पापग्रह चतुर्थ और दशम भावमे स्थित हो तो वज्र योग होता है। इस योगवाला बाल्य और वार्धक्य अवस्थामे सुखी, शूर-वीर, सुन्दर, निस्पृह, मन्द भाग्यवाला, पुलिस या सेनामे नौकरी करनेवाला एव खल प्रकृति-वाला होता है।

यव योग

समस्त पाप ग्रह लग्न और सप्तम भावमे हो अथवा समस्त शुभ ग्रह चतुर्थ और दशम भावमे हो तो यव योग होता है। इस योगवाला जातक व्रत-नियम-सुकर्ममें तत्पर, मध्यावस्थामे सुखी, धन-पुत्रसे युक्त, दाता, स्थिरबुद्धि एव चौबीस वर्षकी अवस्थासे सुख-सम्पत्ति प्राप्त करनेवाला होता है।

कमल योग

समस्त ग्रह १।४।७।१०वें स्थानमे हो तो कमल योग होता है। इस योगका जातक धनी, गुणी, दीर्घायु, यशस्वी, सुकृत करनेवाला, विजयी, मन्त्री या राज्यपाल होता है। कमल योग बहुत ही प्रभावक योग है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति शासनाधिकारी अवश्य बनता है। यह सभीके ऊपर शासन करता है। बड़े-बड़े व्यक्ति उससे सलाह लेते हैं।

वापी योग

समस्त ग्रह केन्द्र स्थानोको छोड पणफर २।५।८।११वें स्थान तथा आपोक्लिम ३।६।९।१२वें भावमे हो तो वापी योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति धनसग्रहमे चतुर, सुखी, पुत्र-पौत्रादिसे युक्त, कला-प्रिय और मण्डलाधिकारी होता है।

यूप योग

लग्नसे लगातार चार स्थानोमे सब ग्रह हो तो यूप योग होता है। इस योगवाला आत्मज्ञानी, यज्ञकर्त्ता, स्त्रीसे सुखी, बलवान्, व्रत-नियमको पालन करनेवाला और विशिष्ट व्यक्तित्वसे युक्त होता है। यूप योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति पचायती होता है अर्थात् पचायतके फैसले करनेमे उसे अधिक सफलता प्राप्त होती है। जिस स्थानपर आपसी विवाद उप-स्थित होते हैं, उस स्थानपर वह उपस्थित हो यथार्थ निर्णय कर देनेका प्रयास करता है।

शर योग

चतुर्थ स्थानसे आगेके चार स्थानोमे ग्रह स्थित हो तो शर योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति जेलका निरीक्षक, शिकारी, कुत्सित कर्म करने-वाला, पुलिस अधिकारी एव नीच कर्मरत दुराचारी होता है। सैनिक कर्मचारियोंकी जन्मपत्रीमें भी यह योग होता है।

शक्ति योग

सप्तम भावसे आगेके चार भावोमे समस्त ग्रह हो तो शक्ति योग होता है। इस योगके होनेसे जातक धनहीन, निष्फल जीवन, दु खी, आलसी, दीर्घायु, दीर्घसूत्री, निर्दय और छोटा व्यापारी होता है। शक्ति-योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति छोटे स्तरकी नौकरी भी करता है।

दण्ड योग

दशम भावसे आगेके चार भावोमे समस्त ग्रह हो तो दण्ड योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति निर्धन, दु खी और सब प्रकारसे नीच कर्म करनेवाला होता है। इसे जीवनमें कभी सफलता प्राप्त नही होती है।

नौका योग

लग्नसे लगातार सात स्थानोमे सातो ग्रह हो तो नौका योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति नौसेनाका सैनिक, स्टीमर या जलीय जहाजका चालक, कप्तान, पनडुब्बीमे प्रवीण और मोती सीप आदि निकालनेकी कलामे प्रवीण होता है। धनिक होता है, पर अपनी कजूस प्रकृतिके कारण बदनाम रहता है।

कूट योग

चतुर्थ भावसे आगेके सात स्थानोमे सभी ग्रह हो तो कूट योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति जेल कर्मचारी, धनहीन, शठ, क्रूर, पुल या भवन बनानेकी कलामे प्रवीण होता है।

छत्र योग

सप्तम भावसे आगेके सात स्थानोमे समस्त ग्रह हो तो छत्र योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति धनी, लोकप्रिय, राजकर्मचारी, उच्चपदाधिकारी, सेवक, परिवारके व्यक्तियोका भरण-पोषण करनेवाला एव अपने कार्यमे ईमानदार होता है।

चाप योग

दशम भावसे आगेके सात स्थानोमे सभी ग्रह हो तो चाप योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति जेलर, गुप्तचर, राजदूत, चौर, वनका अधिकारी, भाग्यहीन और झूठ बोलनेवाला होता है। इस योगका एक प्रभाव यह भी होता है कि पुलिस विभागसे अवश्य सम्बन्ध रहता है। तन्त्र-मन्त्रको सिद्धि भी इस योगवाले व्यक्तिको विशेष रूपसे होती है।

चक्र योग

लग्नसे आरम्भ कर एकान्तरसे छह स्थानोमे—प्रथम, तृतीय, पचम, सप्तम, नवम और एकादश भावमे सभी ग्रह हो तो चक्र योग होता है। इस योगवाला जातक राष्ट्रपति या राज्यपाल होता है। चक्र योग राज योगका ही एक रूप है, इसके होनेसे व्यक्ति राजनीतिमे दक्ष होता है और उसका प्रभुत्व बीस वर्षकी अवस्थाके पश्चात् बढने लगता है।

समुद्र योग

द्वितीय भावमे एकान्तर कर छह राशियोमे २।४।६।८।१०।१२वें स्थानमे समस्त ग्रह हो तो समुद्र योग होता है। इस योगके होनेसे जातक धनी, राजमान्य, भोगी, लोकप्रिय, पुत्रवान् और वैभवशाली होता है।

गोल योग

समस्त ग्रह एक राशिमे हो तो गोल योग होता है। इस योगवाला बली, पुलिस या सेनामें नौकरी करनेवाला, दीन, मलीन, विद्या-ज्ञान शून्य एव चालाकीमे कार्य करनेवाला होता है।

युग योग

दो राशियोमे समस्त ग्रह हो तो युगयोग होता है। इस योगवाला पाखण्डी, निर्धन, समाजसे बाहर, माता-पिताके सुखसे रहित, धर्महीन एव अस्वस्थ रहता है।

शूल योग

तीन राशियोमे समस्त ग्रह हो तो शूल योग होता है। यह योग जातकको तीक्ष्ण स्वभाव, आलसी, निर्धन, हिंसक, शूर, युद्धमे विजयी और राजकर्मचारी वनाता है।

केदार योग

चार राशियोमें समस्त ग्रह हो तो केदार योग होता है। इस योग-के होने से जातक उपकारी, कृपक, सुखी, सत्यवक्ता, धनवान् और भूमि तथा कृपिके सम्बन्धमें नये कार्य करनेवाला होता है।

पाश योग

पांच राशियोमे समस्त ग्रह हो तो पाश योग होता है। इस योगके होनेसे जातक वहुत परिवारवाला, प्रपची, वन्धनभागी, कारागृहका अधिपति, गुप्तचर, पुलिस या सेनाकी नौकरी करनेवाला होता है।

दाम योग

छह राशियोमे समस्त ग्रह हो तो दाम योग होता है। इस योगके होनेसे जातक परोपकारी, परम ऐश्वर्यवान्, प्रसिद्ध, पुत्र-रत्नादिसे पूर्ण होता है। दाम योग राजनीतिमें पूर्ण मफलता नही देता है।

वीणा योग

सात राशियोमे समस्त ग्रह स्थित हो तो वीणा योग होता है। इस योगवाला जातक गीत, नृत्य, वाद्यसे स्नेह करता है। धनी, नेता और राजनीतिमे सफल सचालक वनता है।

गजकेसरी योग

लग्न अथवा चन्द्रमासे यदि गुरु केन्द्रमे हो और केवल शुभ ग्रहोसे दृष्ट या युत हो तथा अस्त, नीच और शत्रु राशिमें गुरु न हो तो गज-केसरी योग होता है। इस योगवाला जातक मुख्य मन्त्री वनता है।

अमलकीर्ति योग

लग्न या चन्द्रमासे दगम भावमे केवल शुभ ग्रह हो तो अमलकीर्ति योग होता है। इस योगमे उत्पन्न मनुष्य राजमान्य, भोगी, दानी, बन्धुओं-का प्रिय, परोपकारी, वर्मात्मा और गुणी होता है।

पर्वत योग

यदि सप्तम और अष्टम भावमे कोई ग्रह नही हो अथवा ग्रह हो भी तो कोई शुभ ग्रह हो तथा मव शुभ ग्रह केन्द्रमे हो तो पर्वत नामक योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति भाग्यवान्, वक्ता, शास्त्रज्ञ, प्राध्यापक, हास्य-व्यग्य लेखक, यगस्वी, तेजस्वी और मुखिया होता है। मुख्यमन्त्री बनानेवाले योगोमे भी पर्वत योगकी गणना है।

काहल योग

लग्नेश वली हो, सुखेश और बृहस्पति परस्पर केन्द्रगत हो अथवा सुखेश और दशमेश एक साथ उच्च या स्वराशिमे हो तो काहल योग होता है। उस योगमे उत्पन्न व्यक्ति वली, साहसी, धूर्त, चतुर और राजदूत होता है। काहल योग राजनैतिक अभ्युदयका भी सूचक है।

चामर योग

लग्नेश अपने उच्चमे होकर केन्द्रमे हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो अथवा शुभ ग्रह लग्न, नवम, दशम और सप्तम भावमे हो तो चामर योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला राजमान्य, मन्त्री, दीर्घायु, पण्डित, वक्ता और समस्त कलाओंका ज्ञाता होता है।

शंख योग

लग्नेश वली हो और पचमेश तथा षष्ठेश परस्पर केन्द्रमे हो अथवा भाग्येश वली हो तथा लग्नेश और दशमेश चर राशिमे हो तो शंख योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति दयालु, पुण्यात्मा, बुद्धिमान्, सुकर्मा

और चिरजीवी होता है। मन्त्री या मुख्यमन्त्रीके पद भी इसे प्राप्त होते है।

भेरी योग

नवमेश वली हो और १।२।७।१२वे भावमे सव ग्रह हो अथवा भाग्येश वली हो और शुक्र, गुरु और लग्नेश केन्द्रमे हो तो भेरी योग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्ति सुखी, उन्नतिशील, कीर्तिवान्, गुणी, आचारवान् और सभी प्रकारके अभ्युदयोको प्राप्त करनेवाला होता है।

मृदग योग

लग्नेश वली हो और अपने उच्च या स्वगृहमे हो तथा अन्य ग्रह केन्द्र स्थानोमे स्थित हो तो मृदग योग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्ति शासनाधिकारी होता है।

श्रीनाथ योग

सप्तमेश दशम भावमे स्वोच्चका हो और दशमेश नवमेशसे युक्त हो तो श्रीनाथ योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति एम० एल० ए०, एम० पी० तथा मन्त्री वनता है।

शारद योग

दशमेश पचममें, वुध केन्द्रमें और रवि अपनी राशिमे हो अथवा चन्द्रमा-से ९वें भावमे गुरु या वुध हो तथा मगल एकादश भावमे स्थित हो तो शारद योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला धन, स्त्री-पुत्रादिसे युक्त, सुखी, विद्वान्, राजमान्य और धर्मात्मा होता है।

मत्स्य योग

लग्न और नवम भावमे शुभ ग्रह तथा पचममे शुभ और अशुभ दोनो प्रकारके ग्रह और चतुर्थ, अष्टममे पापग्रह हो तो मत्स्य योग होता है।

कूर्म योग

शुभ ग्रह ५।६।७वें भावमें और पापग्रह १।३।११वें स्थानमे अपने-अपने उच्चमें हो तो कूर्मयोग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति राज्यपाल, मन्त्री, धीर, धर्मात्मा, मुखिया, गुणी, यशस्वी, उपकारी, सुखी और नेता होता है।

खड्ग योग

नवमेश द्वितीयमे और द्वितीयेश नवम भावमें तथा लग्नेश केन्द्र या त्रिकोणमें हो तो खड्ग योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति बुद्धिमान्, शास्त्रज्ञ, कृतज्ञ, चतुर, धनी, वैभव-युक्त और शासनाधिकारी होता है।

लक्ष्मी योग

लग्नेश बलवान् हो और भाग्येश अपने मूलत्रिकोण, उच्च या स्वराशि-मे स्थित होकर केन्द्रस्थ हो तो लक्ष्मी योग होता है। इस योगवाला जातक पराक्रमी, धनी, यशस्वी, मन्त्री, राज्यपाल एव गुणी होता है।

कुसुम योग

स्थिर राशि लग्नमें हो, शुक्र केन्द्रमें हो और चन्द्रमा त्रिकोणमें शुभ ग्रहोंसे युक्त हो तथा शनि दशम स्थानमें हो तो कुसुम योग होता है। इस योगमे उत्पन्न व्यक्ति सुखी, भोगी, विद्वान्, प्रभावशाली, मन्त्री, एम० पी०, एम० एल० ए० आदि होता है।

कलानिधि योग

बुध शुक्रसे युत या दृष्ट गुरु २।५वें भावमें हो या बुध शुक्रकी राशिमें स्थित हो तो कलानिधि योग होता है। इस योगवाला गुणी, राजमान्य, सुखी, स्वस्थ, धनी और विद्वान् होता है।

कल्पद्रुम योग

लग्नेश तथा लग्नेश जिस राशिमे हो उस राशिका स्वामी तथा वह जिस राशिमे हो उसका स्वामी और उनके नवाशपति ये सब यदि केन्द्र, त्रिकोण या अपने-अपने उच्चमे हो तो कल्पद्रुम योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति ३२ वर्षको अवस्थासे जीवनके अन्तिम क्षण तक मन्त्री पदपर प्रतिष्ठित रहता है। सेनाध्यक्षका पद भी कल्पद्रुम योगवाले व्यक्ति-को प्राप्त होता है।

लग्नाधि योग

लग्नसे ७।८वें स्थानमें शुभग्रह हो और उनपर पापग्रहकी दृष्टि या योग न हो तो लग्नाधि नामक योग होता है। इस योगवाला व्यक्ति महान् विद्वान्, महात्मा, सुखी और धन-सम्पत्ति युक्त होता है। राजनीतिमे भी यह व्यक्ति अद्भुत सफलता प्राप्त करता है। लग्नाधि योगके होनेपर जातकको सासारिक सभी प्रकारके सुख और ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं।

अधि योग

चन्द्रमासे ६।७।८वें भावमें समस्त शुभग्रह हो तो अधियोग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला मन्त्री, सेनाध्यक्ष, राज्यपाल आदि पदोको प्राप्त करता है। अधियोगके होनेसे व्यक्ति अध्ययनशील होता है और वह अपनी वुद्धि तथा तेजके प्रभावसे समस्त व्यक्तियोको आकृष्ट करता है।

सुनफा योग

सूर्यको छोडकर चन्द्रमासे द्वितीय स्थानमें कोई शुभ ग्रह हो तो सुनफा योग होता है। इस योगके होनेसे जातक सुखी होता है, उसे धन-धान्य-ऐश्वर्य आदि प्राप्त होते हैं।

अनफा योग

चन्द्रमासे द्वादश भावमे समस्त शुभग्रह हो तो अनफा योग होता है।

इस योगके होनेपर व्यक्ति चुनाव कार्योंमे सफलता प्राप्त करता है। यह अपने भुजबलसे धन, यश और प्रभुत्वका अर्जन करता है।

दुरधरा योग

चन्द्रमासे द्वितीय और द्वादश भावमे समस्त शुभग्रह हो तो दुरधरा योग होता है। इस योगके प्रभावसे जातक दानी, धनवाहनयुक्त, नौकर-चाकरसे विभूषित, राजमान्य एवं प्रतिष्ठित होता है।

केमद्रुम योग

यदि चन्द्रमाके साथमे या उससे द्वितीय, द्वादश स्थानमे तथा लग्नसे केन्द्रमे सूर्यको छोडकर अन्य कोई ग्रह नही हो तो केमद्रुम योग होता है। इस योगमें जन्म लेनेवाला व्यक्ति दरिद्र और निन्दित होता है।

महाराज योग

लग्नेश पचममें पचमेश लग्नमे हो, आत्मकारक और पुत्रकारक दोनो लग्न या पचममें हो, अपने उच्च, राशि या नवाशमें तथा शुभग्रहसे दृष्ट हो तो महाराज योग होता है। इस योगमे जन्म लेनेवाला व्यक्ति निश्चयत राज्यपाल या मुख्यमन्त्री होता है।

धन-सुख योग

दिनमे जन्म होनेपर चन्द्रमा अपने या अधिमित्रके नवाशमें स्थित हो और उसे गुरु देखता हो तो धन-सुख योग होता है। इसी प्रकार रात्रिमें जन्म होनेपर चन्द्रमाको शुक्र देखता हो तो धन-सुख योग होता है। यह नामानुसार फल देता है।

द्वादश भावोमे लग्नेशका फल

लग्नेश लग्नमें हो तो जातक नीरोग, दीर्घायु, बलवान्, जमीदार, कृषक और परिश्रमी, द्वितीयमें हो तो धनवान्, लब्धप्रतिष्ठ, दीर्घजीवी, स्थूल, सत्कर्मनिरत, नायक, नेता और कृतज्ञ, तृतीयमें हो तो सद्बन्धु-

युत, उत्तम मित्रवान्, धार्मिक, दानी, शूर, बलवान्, समाजमे आदर पानेवाला और साहसी, चौथे भावमें हो तो राजप्रिय, दीर्घजीवी, माता-पिताकी भक्ति करनेवाला, अल्पभोजी, पितासे धन पानेवाला, पुरुषार्थी और कार्यरत, पांचवे भावमे हो तो सुन्दर पुत्रवाला, त्यागी, लब्धप्रतिष्ठ, धनिक, विनीत, विद्वान्, दीर्घायु और कर्तव्यनिष्ठ, छठे भावमे हो तो बलवान्, कृपण, धनवान्, शत्रुनाशक, नीरोग और सत्कार्यरत, सातवें भावमें हो तो तेजस्वी, शीलवान्, सुशीला, गुणवती एव सुन्दरी भार्याका पति और भाग्यवान्, आठवें भावमे हो तो कृपण, धन-सग्रहकर्त्ता, दीर्घजीवी, लग्नेश यदि क्रूर ग्रह हो तो कटुवक्ता, क्षीणशरीरी तथा सौम्य ग्रह हो तो पुष्ट देहवाला और नीरोग, नौवें भावमे हो तो पुण्यवान्, पराक्रमी, तेजस्वी, स्वाभिमानी, सुशील, विनीत, धार्मिक, व्रती और लब्धप्रतिष्ठ, दसवे भावमे हो तो विद्वान्, सुशील, गुरुजन-सेवामे रत, राज्यसे लाभ प्राप्त करनेवाला और समाज-प्रसिद्ध, ग्यारहवें भावमे हो तो श्रेष्ठ, आजीविकावाला, सुखी, प्रसिद्ध, तेजस्वी, बली, परिश्रमी और साधारण धनी, एव बारहवें भावमे हो तो कठोर प्रकृति, व्यर्थ बकवाद करनेवाला, प्रसन्नचित्त, धोखेबाज, प्रवासी, रोगी और अविश्वासी होता है।

द्वितीय भाव विचार

इस भावका विचार द्वितीयेश, द्वितीय भावकी राशि और इस स्थानपर दृष्टि रखनेवाले ग्रहोंके सम्बन्धसे करना चाहिए। द्वितीयेश शुभग्रह हो या द्वितीय भावमे शुभग्रहकी राशि और उसमें शुभग्रह बैठा हो तथा शुभग्रहोंकी द्वितीय भावपर दृष्टि हो तो व्यक्ति धनी होता है। नीचे कुछ धनी योग दिये जाते हैं—

१—भाग्येश और लाभेशका योग
२—भाग्येश और दशमेशका योग
३—भाग्येश और चतुर्थेशका योग
४—भाग्येश और पंचमेशका योग
५—भाग्येश और लग्नेशका योग
६—भाग्येश और धनेशका योग

७—दशमेश और लाभेशका योग ८—दशमेश और चतुर्थेशका योग
९—दशमेश और लग्नेशका योग १०—दशमेश और पचमेशका योग
११—दशमेश और द्वितीयेशका योग १२—लाभेश और धनेशका योग
१३—लाभेश और चतुर्थेशका योग १४—लाभेश और लग्नेशका योग
१५—लाभेश और पचमेशका योग १६—लग्नेश और धनेशका योग
१७—लग्नेश और चतुर्थेशका योग १८—लग्नेश और पचमेशका योग
१९—धनेश और चतुर्थेशका योग २०—धनेश और पचमेशका योग
२१—चतुर्थेश और पचमेशका योग।

उपर्युक्त २१ योगवाले ग्रह २।४।५।७ भावोमे हो तो पूर्ण फल, ८।१२ भावोमें हो तो आधा फल और छठे भावमे हो तो चतुर्थांश फल देते हैं, अन्य स्थानोमे निष्फल बताये गये हैं।

दारिद्र योग[१]

१—षष्ठेश और धनेशका योग २—षष्ठेश और लग्नेशका योग
३—षष्ठेश और चतुर्थेशका योग ४—व्ययेश और चतुर्थेशका योग
५—व्ययेश और धनेशका योग ६—व्ययेश और लग्नेशका योग
७—षष्ठेश और दशमेशका योग ८—व्ययेश और दशमेशका योग
९—षष्ठेश और पचमेशका योग १०—षष्ठेश और सप्तमेशका योग
११—व्ययेश और पचमेशका योग १२—व्ययेश और सप्तमेशका योग
१३—षष्ठेश और भाग्येशका योग १४—व्ययेश और भाग्येशका योग
१५—षष्ठेश और तृतीयेशका योग १६—व्ययेश और तृतीयेशका योग
१७—षष्ठेश और लाभेशका योग १८—व्ययेश और लाभेशका योग
१९—षष्ठेश और अष्टमेशका योग २०—व्ययेश और अष्टमेशका योग
२१—षष्ठेश और व्ययेशका योग

---

[१] देखें—जातकतत्त्व और जातकपारिजात।

ये दारिद्र योग धनस्थानमे हो तो पूर्ण फल, व्ययस्थानमे हो तो पादोन $\frac{3}{4}$ फल और अन्य स्थानोमें हो तो अर्द्ध फल देते है।

उपर्युक्त धनी और दरिद्र योगोका विचार करनेसे जितने जो-जो योग आवें उन्हे पृथक् लिख लेना चाहिए। यदि धनी योग कुण्डलीमे अधिक हो और दरिद्र योग कम हो तो जातक धनवान और दरिद्र योग अधिक तथा धनी योग कम हो तो जातक दरिद्री या अल्प धनी होता है। इन योगोमे रहस्यपूर्ण बात यह है कि बलवान् धनी योग कम हो और निर्बल दारिद्र योग अधिक हो तो जातक धनी, एवं दारिद्र योग बलवान् हो और उनकी अपेक्षा निर्बल धनी योग अधिक हो तो जातक धनी होते हुए भी कुछ समयके लिए दरिद्री-जैसा जीवन यापन करता है। धनी और निर्धनी-का विचार करते समय देश, काल तथा जातिका विचार अवश्य कर लेना चाहिए। यदि किसी धनी घरानेमे पैदा हुए जातककी कुण्डलीमे धनी योग हो तो जातक लक्षाधीश या योगके बलाबलानुसार कोट्यधीश होता है। यदि वही योग किसी साधारण घरके जन्मे व्यक्तिकी कुण्डलीमें हो तो वह अपनी स्थितिके अनुसार धनी होता है।

जिसकी जन्मकुण्डलीमे दो बलवान् धनी योग हो वह सहस्राधिपति, तीन हो वह लक्षाधिपति, चार या पाँच हो वह कोट्यधिपति होता है। इससे अधिक धनी योग होनेपर जातक विपुल सम्पत्तिका स्वामी होता है।

धनी योगोसे एक दरिद्री योग अधिक हो तो अल्पधनी, दो अधिक हो तो दरिद्री और तीन अधिक हो तो भिक्षुक या तत्सदृश होता है।

धनी योगोके अभावमे एक दरिद्री योग हो तो जातक दरिद्री, दो हो तो जीवन-भर धनके कष्टसे पीडित और तीन हो तो भिक्षुक होता है।

दारिद्र योगोके अभावमें एक धनी योग होनेपर जातक खाता-पीता सुखी, दो धनी योगोके होनेपर आश्रयदाता, लक्षाधीश एव तीन या इससे अधिक योगोके होनेपर जातक बहुत बडा धनी होता है। परन्तु योगोके बलाबलका विचार कर लेना नितान्त आवश्यक है।

१—राहु लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, अष्टम, नवम, एकादश और द्वादश भावोंमें-से किसी भावमें स्थित हो एवं मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, वृश्चिक और मीन इन राशियोंमें-से किसी भी राशिमें स्थित हो तो जातक धनी होता है।

२—चन्द्र और गुरु एक साथ किसी भी स्थानमें बैठे हों तो जातक धनी होता है। सूर्य, बुध एक साथ सप्तम भावके अलावा अन्य स्थानोंमें हों तो जातक बड़ा व्यापारी होता है।

३—कारक ग्रहोंकी दशामें जन्म हुआ हो तो जातक जन्मसे धनी अन्यथा निर्धन होता है। जब कारक ग्रहकी दशा आती है, उस समय जातक अवश्य धनी होता है।

दिवालिया योग

१—अष्टमेश ४।५।९।१० स्थानोंमें हो और लग्नेश निर्बल हो तो जातक दिवालिया होता है। योगकारक ग्रहके ऊपर राहु एवं रविकी दृष्टि पड़नेसे योग अधूरा रह जाता है।

२—लाभेश व्ययमें हो या भाग्येश और दशमेश व्ययमें हों तो दिवालिया होता है। यदि पंचममें शनि तुलाराशिका हो तो भी यह योग बनता है।

३—द्वितीयेश ९।१०।११ भावोंमें हो तो दिवालिया योग होता है, परन्तु द्वितीयेश गुरुके दशम और मंगलके एकादश भावमें रहनेसे यह योग खण्डित हो जाता है।

४—लग्नेश वक्री होकर ६।८।१२वें भावमें स्थित हो तो भी जातक दिवालिया होता है।

जमींदारी योग

१—चतुर्थेश दशममें और दशमेश चतुर्थमें हो।

२—चतुर्थेश २ या ११वें भावमे हो। चतुर्थ स्थानकी राशि चर हो और उसका स्वामी भी चर राशिमे हो।

३—पचमेश लग्नेश, तृतीयेश, चतुर्थेश, षष्ठेश, सप्तमेश, नवमेश और द्वादशेशके साथ हो तो ज़मीदारीके साथ व्यापार भी जातक करता है।

४—चतुर्थेश, दशमेश और चन्द्रमा वलवान् हो और ये ग्रह परस्परमें मित्र हो तो जातक ज़मीदार होता है।

ससुरालसे धन-प्राप्तिके योग

१—सप्तमेश और द्वितीयेश एक साथ हो और उनपर शुक्रकी पूर्ण दृष्टि हो।

२—चतुर्थेश सप्तमस्थ हो और शुक्र चतुर्थस्थ हो तथा इन दोनोमे मित्रता हो।

३—सप्तमेश और नवमेश आपसमे सम्वद्ध हो तथा शुक्रके साथ हो।

४—वलवान् धनेश, सप्तमेश शुक्रसे युत हो।

अकस्मात् धन-प्राप्तिके साधनोका विचार पचम भावसे किया जाता है। यदि पचम स्थानमे चन्द्रमा वैठा हो और शुक्रकी उसपर दृष्टि हो तो लाट्रीसे धन मिलता है। यदि द्वितीयेश और चतुर्थेश शुभग्रहकी राशिमे शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट होकर वैठे हो तो भूमिमें गडी हुई सम्पत्ति मिलती है। एकादशेश और द्वितीयेश चतुर्थ स्थानमें हो और चतुर्थेश शुभग्रहकी राशिमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो जातकको अकस्मात् धन मिलता है। यदि लग्नेश द्वितीय स्थानमे और द्वितीयेश ग्यारहवें स्थानमे हो तथा एकादशेश लग्नमे हो तो इस योगके होनेसे जातकको भूगर्भसे सम्पत्ति मिलती है। लग्नेश शुभग्रह हो और धन स्थानमे स्थित हो या धनेश आठवें स्थानमें स्थित हो तो गडा हुआ धन मिलता है।

धनेशका द्वादश भावोंमे फल

धनेश लग्नमें हो तो कृपण, व्यवसायी, कुकर्मरत, धनिक, विख्यात, सुखी, अतुलित ऐश्वर्यवान् और लब्धप्रतिष्ठ, द्वितीय भावमे हो तो धनवान्, धर्मात्मा, लोभी, चतुर, धनार्जन करनेवाला, व्यापारी, यशस्वी और दानी, तृतीय भावमे हो तो व्यापारी, कलहकर्त्ता, कलाहीन, चोर, चचल, अविनयी और ठग, चौथे भावमें हो तो पितासे लाभ करनेवाला, सत्यवादी, दयालु, दीर्घायु, मकानवाला, व्यापारमे लाभ करनेवाला और परिश्रमी, पाँचवें भावमे हो तो पुत्र-द्वारा धनार्जन करनेवाला, सत्कार्य-निरत, प्रसिद्ध, कृपण और अन्तिम जीवनमें दुःखी, छठे भावमे हो तो धन-सग्रहमे तत्पर, शत्रुहन्ता, भू-लाभान्वित, कृपक, प्रसिद्ध और सेवा-कार्यरत, सातवें भावमे हो तो भोगविलासवती धनसग्रह करनेवाली श्रेष्ठ रमणीका भर्ता, भाग्यवान्, स्त्री-प्रेमी और चपल, आठवें भावमे हो तो पाखण्डी, आत्मघाती, अत्यन्त भाग्यशाली, परोपकारी, भाग्यपर विश्वास करनेवाला और आलसी, नौवें भावमें हो तो दानी, प्रसिद्ध पुरुष, धर्मात्मा, मानी और विद्वान्, दसवें भावमे हो तो राजमान्य, धन लाभ करनेवाला, भाग्यशाली, देशमान्य और श्रेष्ठ आचारवाला, ग्यारहवें भावमे हो तो प्रसिद्ध व्यापारी, परम धनिक, प्रख्यात, विजयी, ऐश्वर्यवान् और भाग्य-शाली एव बारहवें भावमे हो तो जातक निन्द्य ग्रामवासी, कृपक, अल्प-धनी, प्रवासी और निन्द्य साधनो-द्वारा आजीविका करनेवाला होता है। उपर्युक्त भावोंमे जो धनेशका फल कहा गया है, वह शुभग्रहका है। यदि धनेश क्रूर ग्रह हो या पापी हो तो विपरीत फल समझना चाहिए। किन्तु क्रूर धनेश ३।६।११वें भावोंमे स्थित हो तो जातक श्रेष्ठ होता है।

व्यापारका विचार करनेके लिए सप्तम भावसे सहायता लेनी चाहिए। वाणिज्यका कारक बुध है, अतएव बुध, सप्तम भाव और द्वितीय इन तीनो-की स्थिति एव बलाबलानुसार व्यापारके सम्बन्धमें फल समझना चाहिए। यदि बुध सप्तममें हो और सप्तमेश द्वितीय स्थानमें हो या द्वितीयेश बुधके

साथ सप्तम भावमे हो तो जातक प्रसिद्ध व्यापारी होता है। बुध और शुक्र इन दोनोका योग द्वितीय या सप्तममे हो तथा इन ग्रहोपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो भी जातक व्यापारी होता है। यदि द्वितीयेश शुभग्रहोकी राशिमे स्थित हो तथा बुध या सप्तमेशसे दृष्ट हो तो जातक व्यापारी होता है। जिसकी जन्मकुण्डलीमे उच्चका बुध सप्तममे बैठा हो तथा द्वितीय भवनपर द्वितीयेशकी दृष्टि हो अथवा गुरु पूर्ण दृष्टिसे द्वितीयेशको देखता हो तो जातक प्रसिद्ध व्यापारी होता है।

तृतीय भाव विचार

तृतीय भावमे प्रधानत भाई और बहनोका विचार किया जाता है, लेकिन ग्यारहवें भावसे बडे भाई और बडी बहनका एव तृतीय भावसे छोटे-भाई और छोटी बहनका विचार होता है। मगल भ्रातृकारक ग्रह है। भ्रातृ सुखके लिए निम्न योगोका विचार कर लेना आवश्यक है। (क) तृतीय स्थानमे शुभग्रह रहनेसे, (ख) तृतीय भावपर शुभग्रहकी दृष्टि होनेसे, (ग) तृतीयेशके बली होनेसे, (घ) तृतीय भावके दोनो ओर द्वितीय और चतुर्थमे शुभग्रहोके रहनेसे, (ङ) तृतीयेशपर शुभग्रहोकी दृष्टि रहनेसे, (च) तृतीयेशके उच्च होनेसे और (छ) तृतीयेशके साथ शुभग्रहोके रहनेसे भाई-बहनका सुख होता है।

तृतीयेश या मगलके युग्म—समसख्यक वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीनमे रहनेसे कई भाई-बहनोका सुख होता है। यदि तृतीयेश और मगल १२वे स्थानमे हो, उसपर पापग्रहोकी दृष्टि हो अथवा मगल तृतीय स्थानमे हो और उनपर पापग्रहकी दृष्टि हो या पापग्रह तृतीयमे हो तथा उसपर पापग्रहोकी दृष्टि हो या तृतीयेशके आगे-पीछे पापग्रह हो या द्वितीय और चतुर्थमें पापग्रह हो तो भाई-बहनकी मृत्यु होती है। तृतीयेश या मगल ३।६।१२वें भावमे हो और शुभग्रहसे दृष्ट नही हो तो भाईका सुख नही होता है। तृतीयेश राहु या केतुके साथ ६।८।१२वें भावमें हो

तो भ्रातृ-सुखका अभाव होता है।

ग्यारहवें स्थानका स्वामी पापग्रह हो या उस भावमें पापग्रह बैठे हो और शुभग्रहसे दृष्ट न हो तो बड़े भाईका सुख नही होता है। तृतीय स्थानमें पापग्रहका रहना अच्छा है, पर भ्रातृ-सुखके लिए अच्छा नही है।

भ्रातृ-सख्या

१—द्वितीय तथा तृतीय स्थानमें जितने ग्रह रहें, उतने अनुज और एकादश तथा द्वादश स्थानमें जितने ग्रह हो उतने ज्येष्ठ भ्राता होते है। यदि इन स्थानोंमें ग्रह नही हो तो इन स्थानोपर जितने ग्रहोंकी दृष्टि हो उतने अग्रज और अनुजोंका अनुमान करना। परन्तु स्वक्षेत्री ग्रहोके रहनेसे अथवा उन भावोंपर अपने स्वामीकी दृष्टि पड़नेसे भ्रातृसख्यामें वृद्धि होती है।

२—भ्रातृसख्या जाननेकी विधि यह भी है कि जितने ग्रह तृतीयेशके साथ हो, मगलके साथ हो, तृतीयेशपर दृष्टि रखनेवाले हो और तृतीयस्थ हो उतनी ही भ्रातृसख्या होती है। यदि उपर्युक्त ग्रह शत्रुगृही, नीच और अस्तगत हो तो भाई अल्पायुके होते हैं। यदि ये ग्रह मित्रगृही, उच्च या मूल त्रिकोणके हो तो दीर्घायुके होते हैं। अभिप्राय यह है कि भाईके सम्बन्धमें (१) तृतीय स्थानसे, (२) तृतीयेशसे, (३) मगलसे, (४) तृतीयमें सम्बन्धित ग्रहसे, (५) तृतीयस्थके नवाश पतिसे, (६) मगलके सम्बन्धी ग्रहोंसे, (७) तृतीयेशके साथ योग करनेवाले ग्रहोंसे, (८) एकादशेशसे, (९) एकादशस्थ ग्रहसे तथा उसकी स्थितिपरसे, (१०) एकादश स्थानके नवाशसे तथा उस नवाशके स्वामीकी स्थितिपरसे, (११) एकादशेशकी स्थिति तथा उसके सम्बन्ध आदिपरसे एव (१२) एकादश और मगलके सम्बन्ध तथा दृष्टिपरसे विचार करना चाहिए।

यदि लग्नेश और तृतीयेश परस्पर मित्र हो तो भाई-बहनोंका परस्पर प्रेम रहता है तथा लग्नेश और तृतीयेश शुभभावगत हो तो भी भाइयोंमें परस्पर प्रेम रहता है।

अन्य विशेष योग

१—लग्न और लग्नेशमे ३।११ स्थानोमे बुध, चन्द्र, मगल और गुरु स्थित हो तो अधिक भाई तथा केतु स्थित हो तो वहनें अधिक होती है।

२—तृतीयेश शुभग्रहसे युक्त १।४।७।१० स्थानोमे हो तो भाइयोका सुख होता है।

३—तृतीयेश जितनी मख्यक राशिके नवाशमे गया हो उतनी भाई-वहनोकी मख्या होती है।

४—नवम भावमे जितने स्त्रीग्रह हो उतनी वहनें और जितने पुरुष-ग्रह हो उतने भाई होते है।

५—तृतीय भावमे गये हुए ग्रहके नवाशकी सख्या जितनी हो उतने भाई-वहन जानने चाहिए।

६—तृतीयेश और मगल ६।८।१२ स्थानोमें हो तो भ्रातृहीन समझना चाहिए।

७—तृतीय भावमें पापग्रह हो अथवा पापग्रहसे दृष्ट हो तो भ्रातृ हानि करनेवाला योग होता है।

८—भ्रातृकारक ग्रह पापग्रहोके वीचमे हो या तीसरे भावपर पाप-ग्रहोकी पूर्ण दृष्टि हो तो भाईका अभाव-सूचक योग होता है।

आजीविका विचार

तृतीय स्थानसे आजीविकाका भी विचार किया जाता है। किसी-किसीका मत है कि लग्न, चन्द्रमा और सूर्य इन तीनो ग्रहोमे-से जो अधिक बलवान् हो, उससे दसवें स्थानके नवाशाधिपतिके स्वरूप, गुण, धर्मानुसार आजीविका ज्ञात करनी चाहिए।

विचार करनेपर दसवें स्थानका नवाशाधिपति सूर्य हो तो डाक्टरी,

वैद्यकमे या दवाओके व्यापारसे एव सोना, मोती, ऊनी वस्त्र, घी, गुड, चीनी आदि वस्तुओके व्यापारसे जातक आजीविका करता है। ज्योतिषमे एक मत यह भी है कि घास, लकडी और अनाजका व्यापारी भी उपर्युक्त योगमे जातक होता है। मुकद्दमा लडनेमे इसकी अभिरुचि अधिक रहती है।

चन्द्र हो तो शख, मोती, प्रवाल आदि पदार्थोके व्यापारसे, मिट्टीके खिलौने, सीमेण्ट, चूना, बालू, ईट आदिके व्यापारसे, खेती, शराबकी दूकान, तेलकी दूकान एव वस्त्रकी दूकानसे जीविका करता है।

मगल हो तो मेनसिल, हरताल, सुरमा प्रभृति पदार्थोके व्यापारसे, बन्दूक, तोप, तलवारके व्यापारसे या सैनिक वृत्तिसे, सुनार, लुहार, बढई, खटीक आदिके पेशे द्वारा एव बिजलीके कारखानेमें नौकरी करके अथवा मशीनरीके कार्य-द्वारा जातक आजीविका उत्पन्न करता है।

बुध हो तो क्लर्क, लेखक, कवि, चित्रकार, जिल्दसाज, शिक्षक, ज्योतिषी, पुस्तक विक्रेता, यन्त्रनिर्माणकर्त्ता, सम्पादक, सशोधक, अनुवादक, और वकीलके पेशे-द्वारा आजीविका जातक करता है। मतान्तरसे साबुन, अगरबत्ती, पुष्पमालाएँ, कागजके खिलौने आदि बनानेके कार्यो-द्वारा जातक आजीविका अर्जन करता है।

गुरु हो तो शिक्षक, अनुष्ठान करनेवाला, धर्मोपदेशक, प्रोफेसर, न्यायाधीश, वकील, वैरिस्टर और मुख्तार आदिके पेशे-द्वारा जातक आजीविका करता है। लवण, सुवर्ण एव खनिज पदार्थोका व्यापारी भी हो सकता है। किसी-किसीका मत है कि हाथी, घोडोका व्यापार भी यह जातक करता है।

शुक्र हो तो चांदी, लोहा, सोना, गाय, भैस, हाथी, घोडा, दूध, दही, गुड, शृंगारिक वस्तुएँ, सुगन्धित चीजे एव हीरा, माणिक्य आदि मणियोके व्यापारसे जातक जीविका करता है। मतान्तरसे सिनेमा, नाटक आदिमे

पार्ट खेलने और शरावके व्यापारसे भी आजीविका जातक करता है।

शनि हो तो चपरासी, पोस्टमैन, हलकारा तथा जिनको रास्तेमे चलना-फिरना पडे वैसा काम करनेवाला, चोरी, हिंसा, नौकरी आदि-द्वारा पेशा करनेवाला, प्रेस, खेती, वागवानी, मन्दिरमें नौकरी और दूतका कार्य करना प्रभृति कामोंसे आजीविका करनेवाला जातक होता है। कुछ लोग दशम स्थानकी राशिके स्वभावानुसार आजीविका निर्णय करते हैं।

तृतीयेशका द्वादश भावोमे फल

लग्न स्थानमे तृतीयेश हो तो जातक वावदूक, लम्पट, सेवक, क्रूर-प्रकृति, स्वजनोंसे द्वेष करनेवाला, अल्पधनी, भाइयोंसे अन्तिम अवस्थामे शत्रुता करनेवाला और झगडालू प्रकृतिका, द्वितीय भावमे हो तो भिक्षुक, धनहीन, अल्पायु, वन्धुविरोधी तथा द्वितीयेश शुभ ग्रह हो तो वलवान्, भाग्य-वान्, देशमान्य और कुलमे प्रसिद्ध, तृतीय भावमे हो तो सज्जनोंसे मित्रता करनेवाला, धार्मिक, राज्यसे लाभान्वित होनेवाला तथा शुभग्रह तृतीयेश हो तो बन्धु-बान्धवोंसे सुखी, बलवान्, मान्य और क्रूर ग्रह हो तो भाइयों-को कष्टदायक, सेवक, चतुर्थ भावमें हो तो काकाको सुख देनेवाला, माता-पिताके साथ विरोध करनेवाला, अकीर्त्तिवान्, लालची और धननाश करने-वाला, पाँचवें भावमे हो तो परोपकारी, दीर्घायु, सुपुत्रवान्, भाइयोके सुखसे समन्वित, बुद्धिमान्, मित्रोकी सहायता देनेवाला और जातिमें प्रमुख, छठे स्थानमे हो तो वन्धु-विरोधी, नेत्ररोगी, जमीदार, भाइयोको सुखदायक और मान्य, सातवें भावमे तृतीयेश शुभ ग्रह हो तो अति रूपवती, सौभाग्य-वती स्त्रीका पति, स्त्रीसे सुखी, विलासी और भाग्यवान् तथा पापग्रह तृतीयेश हो तो व्यभिचारिणी स्त्रीका पति और नीच कर्मरत, आठवें भाव-मे क्रूर ग्रह तृतीयेश हो तो भाइयोको कष्ट, मित्रोकी हानि, वान्धवोसे विरोध तथा शुभग्रह तृतीयेश हो तो भाइयोंसे सामान्य सुख, मित्रोसे प्रेम करनेवाला और जातिमे प्रतिष्ठा पानेवाला, नौवें भावमे क्रूर ग्रह तृतीयेश

हो तो बन्धुजित्, मित्रोका द्वेषी, भाइयों-द्वारा अपमानित और साधारण जीवन व्यतीत करनेवाला तथा शुभग्रह हो तो पुण्यात्मा, भाइयोंसे सम्मानित और मित्रोंसे मान्य, दसवें भावमे हो तो राजमान्य, भाग्यशाली, उत्तम बन्धु-बान्धवोंसे सहित और यशस्वी, ग्यारहवें भावमे हो तो श्रेष्ठ बन्धुवाला, राजप्रिय, सुखी, धनी और उद्योगशील एव बारहवें भावमे हो तो मित्रोंका विरोधी, बान्धवोंसे दूर रहनेवाला, प्रवासी और विचित्र प्रकृतिवाला होता है।

चतुर्थ भाव विचार

चतुर्थ भावपर शुभग्रहोंकी दृष्टि होनेसे या इस स्थानमे शुभग्रहोंके रहनेसे मकानका सुख होता है। चतुर्थेश पुरुषग्रह बली हो तो पिताका पूर्ण सुख और निर्बल हो तो अल्पसुख तथा चतुर्थेश स्त्रीग्रह बली हो तो माताका सुख पूर्ण और निर्बल हो तो माताका सुख अल्प होता है। चन्द्रमा बली हो तथा लग्नेशको जितने शुभ ग्रह देखते हो जातकके उतने ही मित्र होते है। चतुर्थ स्थानपर चन्द्र, बुध और शुक्रकी दृष्टि हो तो बाग-बगीचा, चतुर्थ स्थान बृहस्पतिसे युत या दृष्ट होनेसे मन्दिर, बुधसे युत या दृष्ट होनेपर रंगीन महल, मगलसे युत या दृष्ट होनेसे पक्का मकान और शनिसे युत या दृष्ट होनेसे सीमेण्ट और लोहे युक्त मकानका सुख होता है।

लग्नमें शुभ ग्रह हो तथा चतुर्थ और लग्न स्थानपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तो जातक सुखी होता है। जन्मकुण्डलीमे पांच ग्रह स्वराशियोंके हो तो जातक परम सुखी होता है। लग्नेश और चतुर्थेश तथा लग्न और चतुर्थ पापग्रह युत या दृष्ट हो तो जातक दुखी अन्यथा सुखी होता है। पाचवेंमे बुध, राहु और सूर्य, चौथेमें भौम और आठवेंमे शनि हो तो जातक दुखी होता है।

कतिपय सुख योग

१—चतुर्थेशको गुरु देखता हो। २—चतुर्थ स्थानमे शुभग्रहकी राशि तथा शुभग्रह स्थित हो। ३—चतुर्थेश शुभग्रहोके मध्यमें स्थित हो। ४—वलवान् गुरु चतुर्थेशसे युत हो। ५—चतुर्थेश शुभग्रहसे युत होकर १।४।७।१०।५।९ स्थानोमें स्थित हो। ६—लग्नेश उच्च या स्वराशिमे हो। ७—लग्नेश मित्रग्रहके द्रेष्काणमे हो अथवा शुभग्रहोसे दृष्ट या युत हो। ८—चन्द्रमा शुभग्रहोके मध्यमे हो। ९—सुखेश शुभग्रहकी राशिके नवाशमे हो और वह २।३।६।१०।११वें स्थानमे स्थित हो तो जातक सुखी होता है।

दु खयोग

१—लग्नमे पापग्रह हो। २—चतुर्थ स्थानमे पापग्रह हो और गुरु अल्पवली हो। ३—चतुर्थेश पापग्रहसे युत हो तो धनी व्यक्ति भी दु खी होता है। ४—चतुर्थेश पापग्रहके नवाशमे सूर्य, मगलसे युत हो। ५—सूर्य, मगल नीच या पापग्रहकी राशिके होकर चतुर्थमे स्थित हो। ६—अष्टमेश ११वें भावमे गया हो। ७—लग्नमें शनि, आठवें राहु, छठे स्थानमे भौम स्थित हो। ८—पापग्रहोके मध्यमे चन्द्रमा स्थित हो। ९—लग्नेश वारहवें स्थानमे, पापग्रह दसवें स्थानमे और चन्द्र-मगलका योग किसी भी स्थानमे हो तो जातक दु खी होता है।

इस भावके विशेप योग

कारकाश कुण्डलीमे चतुर्थ स्थानमे चन्द्र, शुक्रका योग हो, राहु, शनिका योग हो, केतु-मगलका योग हो अथवा उच्च राशिका ग्रह स्थित हो तो श्रेष्ठ मकान जातकके पास होता है। कारकाश कुण्डलीमे चौथे स्थानमें गुरु हो तो लकडीका मकान, सूर्य हो तो फूसकी कुटिया एव वुध हो तो साधारण स्वच्छ मकान जातकके पास होता है।

लग्नेश चतुर्थ भावमे और चतुर्थेश लग्नमे गया हो तो जातकको गृहलाभ होता है। चतुर्थेश बलवान् होकर १।४।७।१० स्थानोमें शुभ ग्रहसे दृष्ट या युत होकर स्थित हो अथवा चतुर्थेश जिस राशिमें गया हो उस राशिके स्वामीका नवांशाधिपति १।४।७।१० स्थानोमें हो तो घरका लाभ होता है। धनेश और लाभेश चतुर्थ भावमे स्थित हो तथा चतुर्थेश लाभ भाव या दशममे स्थित हो तो जातकको धन-सहित घर मिलता है।

लग्नेश और चतुर्थेश दोनो चतुर्थ भावमे शुभग्रहोंसे दृष्ट या युत हो तो घरका लाभ अकस्मात् होता है।

लग्नेश, धनेश और चतुर्थेश इन तीनो ग्रहोमें जितने ग्रह १।४।५।७। ९।१० स्थानोमे गये हो उतने ही घरोंका स्वामी जातक होता है। उच्च, मूलत्रिकोणी और स्वक्षेत्रीयमें क्रमश तिगुने, दूने और डेढ गुने समझने चाहिए।

जातकके गोद—दत्तक जानेके योग

(क) कर्क या सिंह राशिमे पापग्रहके होनेसे, (ख) चन्द्रमा या रविको पापग्रहोंसे युत या दृष्ट होनेसे, (ग) चतुर्थ और दशम स्थानमें पापग्रहोंके जानेसे, (घ) मेष, सिंह, धनु और मकर इन राशियोमें किसी भी राशिके चतुर्थ या दशम भावमें जानेसे, (ङ) चन्द्रमासे चतुर्थ स्थानमें पापग्रहोके रहनेसे, (च) रविसे नवम या दशम स्थानोमे पापग्रहोके जानेसे और (छ) चन्द्र अथवा रविके शत्रु क्षेत्रीय ग्रहोसे युत होनेसे जातक दत्तक—गोद जाता है।

किसी-किसीका मत है कि चतुर्थसे विद्याका और पचमसे बुद्धिका विचार करना चाहिए। विद्या और बुद्धिमें घनिष्ठ सम्बन्ध है। दशमसे विद्याजनित यशका तथा विश्वविद्यालयोंकी उच्च परीक्षाओंमे उत्तीर्णता प्राप्त करनेका विचार किया जाता है।

१—चन्द्र-लग्न एवं जन्मलग्नसे पचम स्थानका स्वामी बुध, गुरु

और शुक्रके साथ १।४।५।७।९।१० स्थानोमे बैठा हो तो जातक विद्वान् होता है।

२—चतुर्थ स्थानमे चतुर्थेश हो अथवा शुभग्रहोकी दृष्टि हो या वहाँ शुभग्रह स्थित हो तो जातक विद्याविनयी होता है।

३—चतुर्थेश ६।८।१२ स्थानोमे हो या पापग्रहके साथ हो या पापग्रहसे दृष्ट हो अथवा पापराशिगत हो तो विद्याका अभाव समझना चाहिए।

चतुर्थेशका द्वादश भावोमे फल

चतुर्थेश लग्नमे हो तो जातक पितृभक्त, काकासे वैर करनेवाला, पिताके नामसे प्रसिद्धि पानेवाला, कुटुम्बकी ख्याति करनेवाला और मान्य, द्वितीयमें हो तो पिताके धनसे वञ्चित, कुटुम्बविरोधी, झगडालू और अल्पसुखी, तीसरे स्थानमे हो तो पिताको कष्ट देनेवाला, मातासे झगडा करनेवाला, कुटुम्बियोके साथ रूखा व्यवहार करनेवाला और अपनी सन्तान-द्वारा प्रसिद्धि पानेवाला, चौथे स्थानमें हो तो राजा तथा पितासे सम्मान पानेवाला, पिताके धनका उपभोग करनेवाला, स्वधर्मरत, कर्त्तव्य-निष्ठ, धन-धान्यसे परिपूर्ण और सुखी, पाँचवें भावमे हो तो दीर्घायु, राजमान्य, पुत्रवान्, सुखी, विद्वान्, कुशाग्रबुद्धि और पिता-द्वारा अर्जित धनमे आनन्द लेनेवाला, छठे स्थानमे हो तो धनसंचयकर्त्ता, पराक्रमी, स्नेही तथा चतुर्थेश क्रूर ग्रह होकर छठे स्थानमे हो तो पितासे वैर करने-वाला, पिताके धनका दुरुपयोग करनेवाला और व्यसनी, सातवें भावमें क्रूरग्रह चतुर्थेश हो तो ससुरका विरोधी, ससुरालके सुखसे वञ्चित तथा शुभग्रह चतुर्थेश हो तो ससुरालसे धन-मान प्राप्त करनेवाला और स्त्री-सुखसे पूर्ण, आठवें भावमें क्रूर स्वभावका चतुर्थेश हो तो रोगी, दरिद्री, दुष्कर्मकर्त्ता, अल्पायु, दु खी तथा सौम्य ग्रह हो तो मध्यमायु, सामान्यत स्वस्थ और उच्च विचारका, नौवें भावमे हो तो विद्वान्, सत्सगतिमें रहनेवाला, पिताका परम भक्त, धर्मात्मा और तीर्थस्थानोकी यात्रा करने-

वाला, दसवें स्थानमें चतुर्थेश पापग्रह हो तो पिता जातककी माताको त्यागकर अन्य स्त्रीसे विवाह करनेवाला तथा शुभग्रह हो तो पिता प्रथम स्त्रीका बिना त्याग किये अन्य स्त्रीसे विवाह करनेवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो पिताकी सेवा करनेवाला, धनी, प्रवासी, लोकमान्य और आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करनेवाला एवं बारहवें भावमें हो तो विदेशवासी, माता-पिताका सामान्य सुख पानेवाला और गृह-सुखसे वंचित अथवा जीवनमें दो-तीन घरोंका मालिक होता है। यदि चतुर्थेश क्रूर ग्रह होकर ग्यारहवें और बारहवें भावमें स्थित हो तो जातक जारज—अन्य पितासे उत्पन्न हुआ होता है। बली, सौम्य ग्रह चतुर्थेश चौथे, पाँचवें और सातवें भावमें हो तो जातक जीवनमें सब प्रकारसे सुखी होता है।

पंचम भाव विचार

१—पंचम स्थानका स्वामी बुध, शुक्रसे युत या दृष्ट हो, २—पंचमेश शुभग्रहोंसे घिरा हो, ३—बुध उच्चका हो, ४—बुध पंचम स्थानमें हो, ५—पंचमेश जिस नवांशमें हो उसका स्वामी केन्द्रगत हो और शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो जातक समझदार, बुद्धिमान् और विद्वान् होता है। पंचमेश जिस स्थानमें हो उस स्थानके स्वामीपर शुभग्रहकी दृष्टि हो अथवा दोनों तरफ शुभग्रह बैठे हों तो जातक सूक्ष्म बुद्धिवाला होता है। यदि लग्नेश नीच या पापयुक्त हो तो जातककी बुद्धि अच्छी नहीं होती है। पंचम स्थानमें शनि और राहु हो और शुभग्रहोंकी पंचमपर दृष्टि न हो, पंचमेशपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो और बुध द्वादश स्थानमें हो तो जातककी स्मरण-शक्ति अच्छी नहीं होती है। पंचमेश शुभ युत या दृष्ट हो अथवा पंचम स्थान शुभ युत या दृष्ट हो और बृहस्पतिसे पंचम स्थानका स्वामी १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो स्मरण-शक्ति तीक्ष्ण होती है। गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो, बुध पंचम भावमें हो, पंचमेश बलवान् होकर १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो जातक बुद्धिमान्

होता है। पचमेश १।४।७।१० स्थानोमे हो तो जातककी स्मरण-शक्ति अत्यन्त प्रवल होती है।

१—दमवें भावका स्वामी लग्नमे या ग्यारहवें भावका स्वामी ग्यारहवें भावमे हो तो जातक कवि होता है।

२—स्वगृही, वलवान्, मित्रगृही या उच्च राशिका पचमेश १।४।५।७।९।१० स्थानोंमे स्थित हो या पचमेश दसवें अथवा ग्यारहवें भावमे स्थित हो तो सस्कृतज्ञ विद्वान् होता है।

३—वुध शुक्रका योग द्वितीय, तृतीय भावमे हो, वुध १।४।५।७।९।१० स्थानोमें हो, कर्क राशिका गुरु धन स्थानमे हो, गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो, धनेश सूर्य या मगल हो और वह गुरु या शुक्रसे दृष्ट हो, गुरु स्वराशिके नवाशमे हो एव कारकाश कुण्डलीमे पाँचवें भावमे वुध या गुरु हो तो जातक फलित ज्योतिपका जाननेवाला होता है।

४—कारकाश लग्नसे द्वितीय, तृतीय और पचम भावमे केतु और गुरु स्थित हो, धनस्थानमे चन्द्र और मगलका योग हो तथा वुधकी दृष्टि हो, धनेश अपनी उच्च राशिमे हो, गुरु लग्न और शनि आठवें भावमे हो, गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे, शुक्र अपनी उच्च राशि और वुध धनेश हो या धन भावमे गया हो, द्वितीय स्थानमे शुभग्रहसे दृष्ट मगल हो एव कारकाश कुण्डलीमे ४।५ स्थानोमे वुध या गुरु हो तो जातक गणितज्ञ होता है। जिम व्यक्तिकी जन्मपत्रीमें गणितज्ञ योग होता है वह ज्योतिपी, अकाउण्टेण्ट, इजीनियर, ओवरसीयर, मुनीम, खजानची, रेवेन्यूअफसर एव पैमाइश करनेवाला होता है।

५—रविसे पचम स्थानमे मगल, शुक्र, शनि और राहु इन चारोमे-से कोई भी दो या तीन ग्रह स्थित हो, लग्नमें चन्द्रमा स्थित हो, पचम भाव और पचमेश पापग्रहसे युक्त या दृष्ट हो तो जातक अँगरेजी भापाका जानकार होता है।

६—शनिसे गुरु सातवें स्थानमें हो या शनि गुरुसे नवम, पचमका सम्बन्ध हो या ये ग्रह मेप, तुला, मिथुन, कुम्भ और सिंह राशिके हो अथवा शनि-गुरु १-७,२-८,३-९,५-११ में हो तो जातक वकील, बैरिस्टर, प्रोफेसर एव न्यायाधीश होता है।

७—कारकाश कुण्डलीमें पाँचवें भावमें पापग्रहसे युत चन्द्र, गुरु स्थित हो तो नवीन ग्रन्थ लिखनेवाला जातक होता है।

सन्तान विचार

सन्तानका विचार जन्मकुण्डलीमें पचम स्थान और जन्मस्थ चन्द्रमाके पचम स्थानसे होता है। बृहस्पति सन्तानकारक ग्रह है।

१—पचम भाव, पचमाधिपति और बृहस्पति शुभग्रह-द्वारा दृष्ट अथवा युत रहनेसे सन्तानयोग होता है।

२—लग्नेश पाँचवें भावमें हो और बृहस्पति बलवान् हो तो सन्तानयोग होता है।

३—बलवान् बृहस्पति लग्नेश-द्वारा देखा जाता हो तो प्रबल सन्तानयोग होता है।

४—सन्तान स्थानपर मगल और शुक्रकी एक पाद, द्विपाद या त्रिपाद दृष्टि आवश्यक है।

५—केन्द्रत्रिकोणाधिपति शुभग्रह हो और उनमें-से पचममें कोई ग्रह अवश्य हो तथा पचमेश ६।८।१२वें भावमें न हो, पापयुक्त, अस्त एव शत्रुराशिगत न हो तो सन्तान-सुख होता है।

६—पचम स्थानमें वृष, कर्क और तुलामें-से कोई राशि हो, पचममें शुक्र या चन्द्रमा स्थित हो अथवा इनकी दृष्टि पचमपर हो तो बहुपुत्र योग होता है।

७—लग्न या चन्द्रमासे पचम स्थानमे शुभग्रह स्थित हो, पचम स्थान शुभग्रहोसे दृष्ट हो या पचमेशसे दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है।

८—लग्नेश, पचमेश एक साथ हो या परस्पर दृष्ट हो अथवा दोनो स्वगृही, मित्रगृही या उच्चके हो तो प्रवल सन्तानयोग होता है।

९—लग्नेश, पंचमेश शुभग्रहके साथ होकर केन्द्रगत हो और द्वितीयेश वली हो तो सन्तानयोग होता है।

१०—लग्नेश और नवमेश दोनो सप्तमस्थ हो अथवा द्वितीयेश लग्नस्थ हो तो सन्तानयोग होता है।

११—पचमेशके नवाशका स्वामी शुभग्रहसे युत और दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है। लग्नेश और पचमेश १।४।७।१० स्थानोमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो सन्तानयोग होता है।

१२—पचमेश और गुरु वलवान् हो तथा लग्नेश पचम भावमे हो, सप्तमेशके नवाशका स्वामी, लग्नेश तथा धनेश और नवमेश इन तीनोसे दृष्ट हो तो सन्तानप्राप्तिका योग होता है।

१३—पचम भावमें २।४।६।८।१०।१२ राशियाँ और इन्ही राशियोके नवाश शनि, वुध, शुक्र या चन्द्रमासे युत हो तो कन्याएँ अधिक तथा पचम भावमें १।३।५।७।९।११ राशियाँ तथा इन राशियोके नवाशाधिपति मगल, शनि और शुक्रसे दृष्ट हो तो पुत्र अधिक होते है।

१४—पचमेश धनमें अथवा आठवें भावमे गया हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१५—ग्यारहवें भावमे वुध, शुक्र या चन्द्रमा इन तीनोमे-से एक भी ग्रह गया हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१६—वुध, चन्द्र और शुक्र इन तीनो ग्रहोमें-से एक भी ग्रह पाँचवें भावमें हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१७—पंचम भावमें मेष, वृष और कर्क राशिमें केतु गया हो तो सन्तानकी प्राप्ति होती है।

सन्तान प्रतिबन्धक योग

१—तृतीयेश और चन्द्रमा १।४।७।१०।५।१२ स्थानोंमें हों तो सन्तान नहीं होती।

२—सिंह राशिमें गये हुए शनि, मंगल पंचम भावमें स्थित हो और पंचमेश छठे भावमें गया हो तो सन्तान नहीं होती।

३—बुध और लग्नेश ये दोनों लग्नके बिना अन्य केन्द्र स्थानोंमें हों तो सन्तानका अभाव होता है।

४—५।८।१२वें भावमें पापग्रह गये हों तो वंशविच्छेदक योग होता है। लग्नमें चन्द्रमा, गुरुका योग हो तथा सातवें भावमें शनि या मंगल हो तो सन्तानका अभावसूचक योग होता है।

५—पाँचवें भावमें चन्द्रमा तथा ८।१२वें भावमें सम्पूर्ण पापग्रह स्थित हों; सातवें भावमें बुध, शुक्र चतुर्थमें पापग्रह और पंचम भावमें गुरु स्थित हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है।

६—लग्नमें पापग्रह, चतुर्थमें चन्द्रमा, पंचममें लग्नेश स्थित हो और पंचमेश अल्प बली हो तो वंशविच्छेदक योग होता है।

७—सातवें भावमें शुक्र, दसवें भावमें चन्द्रमा और चतुर्थ भावमें तीन-चार पापग्रह स्थित हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है।

८—लग्नमें मंगल, आठवेंमें शनि और पाँचवें भावमें सूर्य हो तो वंश-नाशक योग होता है।

विलम्बसे सन्तानप्राप्ति योग

१—लग्नेश, पंचमेश और नवमेश ये तीनों ग्रह शुभग्रहसे युत होकर

६।८।१२वें भावमे गये हो तो विलम्बसे सन्तान होती है।

२—दशम भावमें सभी शुभग्रह और पचम भावमें सभी पापग्रह हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है, अत विलम्बसे सन्तान होती है।

३—पापग्रह अथवा गुरु चतुर्थ या पचम भावमे गया हो और अष्टम भावमे चन्द्रमा हो तो तीस वर्षकी आयुमे सन्तान होती है।

४—पापग्रहकी राशि लग्नमे पापग्रह युक्त हो, सूर्य निर्बल हो और मगल सम राशि (२।४।६।८।१०।१२) मे स्थित हो तो तीस वर्षकी आयुके पश्चात् सन्तान होती है।

५—कर्क राशिमे गया हुआ चन्द्रमा पापग्रहसे युक्त व दृष्ट हो और सूर्यको शनि देखता हो तो ६०वें वर्षमें पुत्रकी प्राप्ति होती है। ग्यारहवें भावमे राहु हो तो वृद्धावस्थामे पुत्र होता है।

६—पचममे गुरु हो और पचमेश शुक्रसे युक्त हो तो ३२ या ३३ वर्ष की अवस्थामें पुत्र होता है।

७—पचमेश और गुरु १।४।७।१० स्थानोमें हो तो ३६ वर्षकी आयुमें सन्तान होती है।

८—नवम भावमें गुरु हो और गुरुसे नौवें भावमें शुक्र लग्नेशसे युत हो तो ४० वर्षकी अवस्थामे पुत्र होता है।

९—राहु, रवि और मगल ये तीनो पचम भावमे हो तो सन्तान-प्रतिबन्धक योग होता है।

१०—पचमेश नीच राशिमे हो, नवमेश लग्नमें और बुध, केतु पचम भावमें गये हो तो कष्टसे पुत्रकी प्राप्ति होती है।

स्त्रीकी कुण्डलीमें निम्न योगोके होनेसे सन्तानका अभाव होता है।

१—सूर्य लग्नमे और शनि सप्तममें हो। २—सूर्य और शनि सप्तम भावमे, चन्द्रमा दसवें भावमे स्थित हो तथा बृहस्पतिसे दोनो ग्रह अदृष्ट

हो। ३—षष्ठेश, रवि और शनि ये तीनो ग्रह षष्ठ स्थानमें हो और चन्द्रमा सप्तम स्थानमें हो तथा बुधसे अदृष्ट हो। ४—शनि, मगल छठे और चौथे स्थानमे हो। ५—६।८।१२ भावोके स्वामी पचम भावमे हो या पचमेश ३।८।१२ भावोमे हो, पचमेश नीच या अस्तगत हो तो सन्तान योगका अभाव पुरुष और स्त्रीकी कुण्डलीमे समझना चाहिए। ४।९।१०। १२ इन राशियोका वृहस्पति पचम भावमे हो तो प्राय सन्तानका अभाव समझना चाहिए। तृतीयेश १।२।३।५ भावोमे-से किसी भावमे हो तथा शुभग्रहसे युत और दृष्ट न हो तो सन्तानका अभाव समझना चाहिए।

पचमेश और द्वितीयेश निर्बल हो और पचम स्थानपर पापग्रहकी दृष्टि हो ओ सन्तानका अभाव रहता है। लग्नेश, सप्तमेश, पचमेश और गुरु निर्बल हो तो सन्तानका अभाव रहता है। पचम स्थानमे पापग्रह हो और पचमेश नीच हो तथा शुभग्रहोसे अदृष्ट हो, वृहस्पति दो पापग्रहो-के बीचमें हो एव पचमेश जिस राशिमें हो उससे ६।८।१२ भावोमें पापग्रहो-के रहनेसे सन्तानका अभाव होता है।

सन्तान-सख्या विचार

१—पचममे जितने ग्रह हो और इस स्थानपर जितने ग्रहोकी दृष्टि हो उतनी सख्या सन्तानकी समझनी चाहिए। पुरुषग्रहोके योग और दृष्टिसे पुत्र और स्त्रीग्रहोके योग और दृष्टिसे कन्या-सख्याका अनुमान करना चाहिए।

२—तुला तथा वृष राशिका चन्द्रमा ५।९ भावोमें गया हो तो एक पुत्र होता है। पचममें राहु या केतु हो तो एक पुत्र होता है।

३—पचममे सूर्य शुभग्रहसे दृष्ट हो तो तीन पुत्र होते है। पचममे विषम राशिका चन्द्र शुक्रके वर्गमें हो या चन्द्र, शुक्रसे युत हो तो बहुपुत्र होते है।

४—पचमेशकी किरण[1]-संख्याके समान सन्तान-सख्या जाननी चाहिए।

५—गुरु, चन्द्र और सूर्य इन तीनो ग्रहोके स्पष्ट राश्यादि जोडनेपर जितनी राशिसख्या हो उतनी सन्तान-सख्या जानना। पचम भावसे या पचमेशसे शुक्र या चन्द्रमा जिस राशिमें गये हो उस राशि पर्यन्तकी सख्या-के वीचमें जितनी राशिसख्या हो उतनी सन्तान-सख्या जाननी चाहिए। पचम भावसे या पचमेशसे शुक्र या चन्द्रमा जिस राशिमे स्थित हो उस राशि पर्यन्तको सख्याके वीच जितनी राशियाँ हो उतनी ही सन्तान-सख्या समझनी चाहिए।

६—५वें भावमे गुरु हो, रवि स्वक्षेत्री हो, पचमेश पचममें हो तो पाँच सन्तानें होती है।

७—कुम्भ राशिका शनि पचम भावमें गया हो तो ५ पुत्र होते है। मकर राशिमें ६ अश ४० कलाके भीतरका शनि हो तो ३ पुत्र होते है। पचम भावमे मगल हो तो ३ पुत्र, गुरु हो तो ५ पुत्र, सूर्य, मगल दोनो हो तो ४ पुत्र, सूर्य, गुरु हो तो ६ सन्तानें, मगल, गुरु हो तो ८ सन्तानें एव सूर्य, मगल, गुरु ये तीनो ग्रह हो तो ९ सन्तानें होती हैं। पचम भावमे चन्द्रमा गया हो तो ३ कन्याएँ, शुक्र हो तो ५ कन्याएँ और शनि गया हो तो ७ कन्याएँ होती है।

८—लग्नमे राहु, ५वेंमे गुरु और ९वेंमे शनि हो तो ६ पुत्र, ९वेंमे शनि और नवमेश पचममे हो तो ७ पुत्र, गुरु ५।९वें भावमे और धनेश १०वें भावमे तथा पचमेश वलवान् हो, उच्च राशिमे गया हुआ पचमेश लग्नेशसे युत हो और गुरु शुभग्रहसे युत हो तो १० पुत्र, द्वितीयेश और

---

[1] सूर्य उच्च राशिका हो तो १०, चन्द्र हो तो ६, भौम ५, बुध ५, गुरु ७, शुक्र ८ और शनिकी ५ किरणें होती है। उच्चवलका साधनकर पचमेशकी किरणें निकाल लेनी चाहिए।

पचमेशका योग पचम भावमें हो तो ६ पुत्र, परमोच्च राशिका गुरु हो, द्वितीयेश राहुसे युत हो और नवमेश ९वें भावमें गया हो तो ९ पुत्र एव ५वें भावमें शनि हो तो दूसरा विवाह करनेसे सन्तान होती है।

९—कर्क राशिका चन्द्रमा पचम भावमे गया हो तो अल्पसन्तान योग होता है। पचमेश नीचका होकर ६।८।१२वें भावमे स्थित हो और पापग्रहसे युत हो तो काकवन्ध्या योग होता है, पचमेश नीचका होकर शनिसे युत हो तो भी काकवन्ध्या योग होता है।

पचमेशका द्वादश भावोमे फल

पचमेश लग्नमे हो तो जातक प्रसिद्ध पुत्रवाला, शास्त्रज्ञ, सगीत-विशारद, सुकर्मरत, विद्वान्, विचारक और चतुर, द्वितीय भावमें हो तो धनहीन, काव्यकला जाननेवाला, कष्टसे भोजन प्राप्त करनेवाला, आजीविका रहित और चालाक, तृतीयमें हो तो मधुर-भाषी, प्रसिद्ध, पुत्रवान्, आश्रयदाता और नीतिज्ञ, चौथेमे हो तो गुरुजन-भक्त, माता-पिताकी सेवा करनेवाला, कुटुम्बका सवर्द्धन करनेवाला और सुन्दर सन्तानका पिता, पाँचवें भावमे हो तो श्रेष्ठ सच्चरित्र पुत्रोका पिता, धनिक, लब्धप्रतिष्ठ, चतुर, विद्वान् और समाजमान्य, छठे भावमे हो तो पुत्रहीन, रोगी, धनहीन, शस्त्रप्रिय और दुःखी, सातवें भावमें हो तो सुन्दरी, सुशीला, सन्तानवती, मधुरभाषिणी भार्याका पति, आठवें भावमें हो तो कठोर वचन बोलनेवाला, मन्दभागी, स्थानके कष्टसे दुःखी और कष्ट भोगनेवाला, नौवें भावमें हो तो विद्वान्, सगीतप्रिय, राजमान्य, सुन्दर, रसिक और सुबोध, दसवें भावमे हो तो राजमान्य, सत्कर्मरत, माताके सुखसे सहित और ऐश्वर्यवान, ग्यारहवें भावमें हो तो पुत्रवान्, कलाविद्, राजमान्य, सत्कर्मरत, गायक और धन धान्यसे परिपूर्ण एव बारहवें भावमें हो तो पुत्रवान्, सुखी तथा क्रूर ग्रह चमेश हो तो सन्तान-रहित, दुःखी और प्रवासी होता है।

षष्ठभाव विचार

छठे स्थानमें पापग्रहोका रहना प्राय शुभ होता है। किन्तु इस स्थानमें रहनेवाले निर्वल पापग्रह शत्रुपीडाके सूचक है। षष्ठेश छठे भावमें हो तो स्वजातिके लोग ही शत्रु होते है। पचमेश ६।१२ भावमे हो और लग्नेशको दृष्टि हो तो शत्रुपीडा जातकको होती है।

१—चतुर्थेश और एकादशेश लग्नेशके शत्रु हो तो मातासे वैर होता है। चतुर्थेश पापग्रहसे युत या दृष्ट हो या चतुर्थेश लग्नेशसे छठे भावमे स्थित हो अथवा चतुर्थेश छठे भावमे वैठा हो तो मातासे जातकका वैर होता है।

२—लग्नेश और दशमेशकी परस्पर शत्रुता हो, दशमेश लग्नेशसे छठे स्थानमें वैठा हो या दशमेश छठे भावमे स्थित हो तो जातककी पितासे अनवन रहती है। पचमेश ६।८।१२ भावोमे हो तो जातक पितासे शत्रुता करता है।

३—लग्नेश और सप्तमेश दोनो आपसमे शत्रु हो तो स्त्रीसे जातककी सदा खट-पट रहती है।

छठे स्थानमे राहु, शनि और मगलमे-से कोई ग्रह हो और छठे स्थानपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक विजयी और शत्रुनाशक होता है।

रोगविचार

यद्यपि लग्न स्थानसे कुछ रोगोका विचार किया गया है, किन्तु छठे स्थानसे भी कतिपय रोगोका विचार किया जाता है, अत कुछ योग नीचे दिये जाते हैं—

१—षष्ठेश सूर्यसे युत १।८ भावोमे हो तो मुख या मस्तकपर घाव निकलता है।

२—षष्ठेश चन्द्रमासे युत १।८ भावोमे हो तो मुख या तालूपर व्रण होता है। मगलसे युत होकर १।८ में हो तो कण्ठमें घाव, वुधसे युत होकर

१।८ में हो तो हृदयमें व्रण, गुरुसे युत होकर १।८ में हो तो नाभिके नीचे व्रण, शुक्रसे युत होकर १।८ मे हो तो नेत्रके नीचे व्रण, शनिसे युत होकर १।८ मे हो तो पैरमे व्रण एव राहु और केतुसे युत होकर १।८ मे हो तो मुखपर घाव होता है।

३—वारहवें भावमे गुरु और चन्द्रका योग हो और वुव ३।६।१ भावो-मे हो तो गुदाके समीप व्रण होता है।

४—मगल और शनिका योग छठे या वारहवें भावमे हो और शुभ-ग्रह न देखते हो तो गण्डमाला (कण्ठमाला) रोग होता है।

५—पापग्रहसे युत या दृष्ट पष्ठेश जिस स्थानमें हो उस स्थानके स्वामीकी दशामे तथा उस राशि-द्वारा साकेतिक अगमें घाव जातकको होता है।

६—लग्नेश और रविका योग ६।८।१२ भावोमे-से किसी भावमे हो तो गलगण्ड दाहयुक्त, चन्द्रमा और लग्नेश ६।८।१२ भावमे हो तो जलोत्पन्न गलगण्ड, लग्नेश, पष्ठेश और चन्द्रमामे-से कोई भी ६।८।१२ भावोमे-से किसी भी भावमे हो तो कफजनित गलगण्ड होता है।

७—लग्नेश और वुधका योग ६।८।१२वें भावमे हो तो पित्तरोगी, गुरु और लग्नेशका योग ६।८।१२वें भावमें हो तो वातरोगी एव शुक्र और लग्नेशका योग ६।८।१२वें भावमे हो तो जातक क्षयरोगी होता है। यहाँ स्मरण रखनेकी एक वात यह है कि इन योगोपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टि-का होना आवश्यक है। क्रूर ग्रहकी दृष्टिके अभावमे योग पूर्ण फल नही देते हैं।

८—मगल और शनि लग्नस्थान या लग्नेशको देखते हो तो श्वास, क्षय, कास रोग, कर्क राशिमें वुध स्थित हो तो कास, क्षय रोग, शनि युक्त चन्द्रमाकी दृष्टि मगलपर हो तो सग्रहणी रोग, चतुर्थ स्थानमे गुरु, रवि और शनि ये तीनो ग्रह स्थित हो तो हृदयरोगी एव लाभेश छठे स्थानमे स्थित

हो तो अनेक रोगोसे पीडित जातक होता है ।

९—सूर्य, मगल, शनि जिस स्थानमे हो उस स्थानवाले अगमे रोग होता है तथा सूर्य, मगल और शनिसे देखा गया भाव रोगाक्रान्त होता है ।

१०—शुक्रके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे वीर्य-सम्बन्धी रोग होते हैं ।

११—मगलके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेमे रक्त-सम्बन्धी रोग होते हैं ।

१२—बुधके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे कुष्ट रोग होता है ।

१३—सूर्यके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे चर्मरोग होते है ।

१४—चन्द्रमाके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेमे मानसिक रोग होते हैं ।

१५—गुरुके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे मृगी, अपस्मार आदि रोग होते है । मतिविभ्रम भी इस योगके होनेसे देखा गया है ।

१६—सूर्य मगल और शुक्रका योग तथा अष्टमेश और लग्नेशका योग जातकको रोगी बनाता है ।

१७—छठे स्थानपर शनिकी पूर्ण दृष्टि हो तो जातकको राजयक्ष्मा होता है । चन्द्र और शनि एक साथ कर्क राशिमे स्थित हो या छठे भावमे स्थित होकर बुधसे दृष्ट हो तो जातकको कुष्ट रोग होता है ।

षष्ठेशका द्वादश भावोमे फल

षष्ठेश लग्न भावमें हो तो जातक नीरोग, कुटुम्बको कष्ट देनेवाला, शत्रुनाशक, निरुत्साही, निरुद्यमी, चचल, धनी, अन्तिम अवस्थामे आलसी पर मध्यम वयमें परिश्रमी और अभिमानी, द्वितीय भावमे हो तो दुष्ट

बुद्धिवाला, चालाक, सग्रह करनेवाला, उत्तम स्थानवाला, प्रख्यात रोगी और अस्त व्यस्त रहनेवाला, तृतीय भावमे हो तो कुटुम्बियोसे मनमुटाव रखनेवाला, सग्राहक, द्वेषवुद्धि करनेवाला, स्वार्थी, अभिमानी, नीरोग और चतुर, चौथे भावमे हो तो पितामें द्वेष करनेवाला, नीच बुद्धि, अभिमानी, अभक्ष्य-भक्षक, और लालची, पाँचवें भावमें हो तो माताका भक्त, शत्रुओसे पीडित, साधारण रोगी, बवासीर और मस्तिष्क रोगसे पीडित, छठे भावमे हो तो नीरोग, कृपण, शत्रुहन्ता, अरिष्टनाशक, सुखी, साधारण धनी तथा क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो नाना रोगोका शिकार, अभिमानी और कुटुम्बियोको शत्रु समझनेवाला, सातवें भावमे क्रूर ग्रह षष्ठेश हो तो भार्या कुरूपा, लडाकू, अभिमानिनी और व्यभिचारिणी होती है तथा शुभग्रह षष्ठेश हो तो सन्तानहीन, रूपवती, गुणवती स्त्रीका पति, आठवें भावमें हो तो स्त्री-मृत्युके साधनोका ग्रहोके स्वरूपानुसार अनुमान करना चाहिए तथा जातक रोगी, अनेक व्याधियोंसे पीडित, दु खी और शत्रुओके द्वारा कष्ट पानेवाला, नौवें भावमें हो तो नीरोग, सम्माननीय, धर्मात्मा और मित्रोसे युक्त, दसवें भावमें हो तो पितासे स्नेह करनेवाला, पिता रोगी रहनेवाला, माताकी सेवा करनेवाला, नीरोग, वलवान्, ऐश्वर्यवान् और साहसी, किन्तु षष्ठेश क्रूर ग्रह हो तो इसके विपरीत फल मिलता है, ग्यारहवें भावमें हो तो शत्रुओसे कष्ट, मवेशीके व्यापारसे लाभ और नीरोग तथा षष्ठेश क्रूर हो तो रोगी, शत्रुओसे दु खी और अभिमानी एव वारहवें भावमें हो तो रोगी, दु खी और व्यापारमे धनार्जन करनेवाला होता है ।

सातवें भावका विचार

सप्तम स्थानसे विवाहका विचार प्रधानत किया जाता है । विवाहके प्रतिवन्धक योग निम्न हैं—

१—सप्तमेश शुभ युक्त न होकर ६।८।१२ भावमें हो अथवा नीचका

या अस्तगत हो तो विवाह नही होता है अथवा विधुर होता है ।

२—सप्तमेश बारहवें भावमे हो तथा लग्नेश और जन्मराशिका स्वामी सप्तममें हो तो विवाह नही होता ।

३—षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश सप्तममे हो तथा ये ग्रह शुभग्रहसे युत या दृष्ट न हो अथवा सप्तमेश ६।८।१२वें भावका स्वामी हो तो स्त्री-सुख जातकको नही होता है ।

४—यदि शुक्र और चन्द्रमा साथ होकर किसी भावमें बैठे हो और शनि एव भौम उनसे सप्तम भावमें हो तो विवाह नही होता ।

५—लग्न, सप्तम और द्वादश भावमे पापग्रह बैठे हो और पचमस्थ चन्द्रमा निर्वल हो तो विवाह नही होता ।

६—७।१२वें स्थानमें दो-दो पापग्रह हो तथा पचममे चन्द्रमा हो तो जातकका विवाह नही होता ।

७—सप्तममे शनि और चन्द्रमाके सप्तम भावमे रहनेसे जातकका विवाह नही होता, यदि विवाह होता भी है तो स्त्री वन्ध्या होती है ।

८—सप्तम भावमें पापग्रहके रहनेसे मनुष्यको स्त्रीसुखमे वाधा होती है ।

९—शुक्र और वुध सप्तममे एक साथ हो तथा सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि हो तो विवाह नहीं होता, किन्तु शुभग्रहोकी दृष्टि रहनेसे वडी आयुमें विवाह होता है ।

१०—यदि लग्नसे सप्तम भावमे केतु हो और शुक्रकी दृष्टि उसपर हो तो स्त्रीसुख कम होता है ।

११—शुक्र मगल ५।७।९वें भावमे हो तो विवाह नही होता ।

१२—लग्नमे केतु हो तो, भार्यामरण तथा सप्तममें पापग्रह हो और सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि भी हो तो जातकको स्त्रीसुख कम होता है ।

विवाह योग

१—सप्तम भाव शुभयुत या दृष्ट होनेसे तथा सप्तमेशके बलवान् होनेसे विवाह होता है।

२—शुक्र स्वगृही या कन्या राशिका हो तो विवाह होता है।

३—सप्तमेश लग्नमें हो या सप्तमेश शुभग्रहसे युत होकर ११वें भावमें हो तो विवाह होता है।

४—जितने अधिक बलवान् ग्रह सप्तमेशसे दृष्ट होकर सप्तम भावमें गये हों उतनी ही जल्दी विवाह होता है।

५—द्वितीयेश और सप्तमेश १।४।७।१०।५।९वें स्थानमें हो तो विवाह होता है।

६—मंगल तथा रविके नवांशमें बुध, गुरु गये हों या सप्तम भावमें गुरुका नवांश हो तो विवाह होता है।

७—लग्नेश लग्नमें हो, लग्नेश सप्तम भावमें हो, सप्तमेश या लग्नेश द्वितीय भावमें हो तो विवाह योग होता है।

८—सप्तम और द्वितीय स्थानपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तथा द्वितीयेश और सप्तमेश शुभ राशिमें हो तो विवाह होता है।

९—लग्नेश दशममें हो और उसके साथ बलवान् बुध हो एवं सप्तमेश और चन्द्रमा तृतीय भावमें हो तो जातकका विवाह होता है।

१०—गुरु अपने मित्रके नवांशमें हो तो विवाह होता है।

११—सप्तममें चन्द्रमा या शुक्र अथवा दोनोंके रहनेसे विवाह होता है।

१२—यदि लग्नसे सप्तम भावमें शुभग्रह हो या सप्तमेश शुभग्रहसे युत होकर द्वितीय, सप्तम या अष्टममें हो तो जातकका विवाह होता है।

१३—विवाह प्रतिबन्धक योगोंके न रहनेपर विवाह होता है।

विवाह-स्त्रीसंख्या विचार

१—सप्तममें बृहस्पति और बुधके रहनेसे एक स्त्री होती है। सप्तममें

मगल या रवि हो तो एक स्त्री होती है।

२—लग्नेश और सप्तमेश इन दोनो ही के लग्न या सप्तममें रहनेसे दो स्त्रियाँ होती हैं। यदि लग्नेश और सप्तमेश दोनो ही स्वगृही हो तो जातकका एक विवाह होता है।

३—सप्तमेश और द्वितीयेश शुक्रके साथ अथवा पापग्रहके साथ होकर ६।८।१२वें भावमे हो तो एक स्त्रीकी मृत्युके वाद दूसरा विवाह होता है।

४—यदि सप्तम या अष्टम स्थानमे पापग्रह और मगल द्वादश भावमें हो तथा द्वादशेश अदृश्य चक्रार्धमें हो तो जातकका द्वितीय विवाह अवश्य होता है।

५—लग्न, सप्तम स्थान और चन्द्रलग्न ये तीनो द्विस्वभाव राशिमे हो तो जातकके दो विवाह होते है।

६—लग्नेश, सप्तमेश और राशीश द्विस्वभाव राशिमें हो तो दो विवाह होते है।

७—लग्नेश द्वादश भावमें और द्वितीयेश पापग्रहके साथ कही भी हो तथा सप्तम स्थानमें पापग्रह बैठा हो तो जातककी दो स्त्रियाँ होती है।

८—शुक्र पापग्रहके साथ हो अथवा नीचका हो तो जातकके दो विवाह होते हैं।

९—अष्टमेश १।७वें भावमें हो, लग्नेश लग्नमें हो, लग्नेश छठे भावमें हो, सप्तमेश शुभ ग्रहसे युत शत्रु या नीच राशिमें गया हो एव शुक्र नीच शत्रु और अस्तगत राशिका हो तो दो विवाह होते हैं।

१०—धन स्थानमें अनेक पापग्रह हो और धनेश भी पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो तीन विवाह होते हैं।

११—सप्तम भावमें वहुत पापग्रह हो तथा सप्तमेश पापग्रहोंसे युत हो तो तीन विवाह होते है।

१२—वली चन्द्र और शुक्र एक साथ हो, वली शुक्र सप्तम भावको

पूर्ण दृष्टिसे देखता हो, लग्नेश उच्चका हो या लग्न भावमें उच्चका ग्रह एव लग्नेश, द्वितीयेश और षष्ठेश ये तीनो ग्रह पापग्रहोंसे युक्त होकर सप्तम भावमें स्थित हो तो जातक अनेक स्त्रियोके साथ बिहार करनेवाला होता है।

१३—सप्तमेशसे तीसरे स्थानमें चन्द्रमा, गुरुसे दृष्ट हो, या सप्तमेशसे तीसरे, सातवें भावमें चन्द्रमा हो, सप्तमेश शनि हो, सप्तमेश और नवमेश वली होकर ५।९वें भावमें स्थित हो एव दशमेशसे दृष्ट सप्तमेश १।४।५। ७।९।१०वें भावमें स्थित हो तो जातक अनेक स्त्रीभोगी होता है।

१४—७वें या १२वें भावमें वुध हो तो वेश्यागामी होता है।

स्त्रीरोग विचार

१—लग्न स्थानमें शनि, मगल, वुध, केतु इन चारोंमें-से किसी भी ग्रहके रहनेसे स्त्री रोगिणी रहती है।

२—सप्तमेश ८।१२वें भावमें हो तो भार्या रोगिणी रहती है।

३—सप्तमेश और द्वितीयेश दोनो पापग्रहोसे युत होकर २।१२वें भावमे हो तो स्त्री रोगिणी रहती है।

विवाह-समय विचार

१—वृहत्पाराशरीकारने वताया है कि सप्तमेश शुभग्रहकी राशिमे गया हो और शुक्र अपनी उच्च राशिमे हो तो नौ वर्षकी अवस्थामे विवाह होता है।

२—शुक्र धन स्थानमें और सप्तमेश ग्यारहवें भावमें हो तो १० या १६ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

३—लग्नमें शुक्र और लग्नेश १०।११ राशिमें हो तो ११ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

४—केन्द्र स्थानमें शुक्र हो और शुक्रसे सातवें शनि हो तो १२ या

१९ की अवस्थामे विवाह होता है।

५—सातवें स्थानमे चन्द्रमा हो और शुक्रसे सातवें स्थानमें शनि हो तो १८ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

६—द्वितीयेश ११वें और एकादशेश २रे भावमे हो तो १३ वर्षकी आयुमे विवाह होता है।

७—शुक्र द्वितीय स्थानमे हो और द्वितीयेश तथा मंगल इन दोनोका योग हो तो २७वें वर्षमें विवाह होता है। मतान्तरसे इस योगके रहनेपर २२ या २३ वर्षकी आयुमे विवाह होता है।

८—पचम भावमे शुक्र और चतुर्थमे राहु हो तो ३१वें या ३३वें वर्षकी आयुमे विवाह होता है।

९—तृतीय भावमे शुक्र और ९वें भावमे सप्तमेश गया हो तो ३०वें या २७वें वर्षमे विवाह होता है।

१०—लग्नेशसे शुक्र जितना नजदीक हो उतनी ही जल्दी विवाह होता है। शुक्रकी स्थिति जिस राशिमे हो उस राशिकी दशामे विवाह होता है।

११—सप्तमस्थ राशिकी जो सख्या हो उसमे आठ और जोड देनेपर विवाहकी वर्षसख्या आ जाती है। शुक्र, लग्न और चन्द्रमासे सप्तमाधिपतिकी सख्यामे विवाहका योग आता है।

१२—लग्न, द्वितीय और सप्तममे शुभग्रह हो या इन स्थानोपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो छोटी अवस्थामें विवाह होता है।

१३—लग्नेश और सप्तमेशको जोडकर जो राशि हो उस राशिमे जव गोचरका गुरु पहुँचता है तव विवाहका योग होता है। अपनी जन्मराशिके स्वामी और अष्टमेशको जोडनेसे जो राशि आवे, उस राशिमे जव गोचरका गुरु पहुँचता है तव विवाह होता है।

१४—शुक्र और चन्द्रमा इन दोनोमें-से जो ग्रह वली हो उसकी महादशामें विवाह होता है।

१५—यदि सप्तमेश शुक्रके साथ हो तो सप्तमेशकी अन्तर्दशामें विवाह होता है। नवमेश, दशमेश और सप्तम भावस्थ ग्रहकी अन्तर्दशामें विवाह होता है।

स्त्रीमृत्युविचार

१—कोई पापग्रह सप्तम स्थानमें हो, पंचमेश सप्तम स्थानमें हो, अष्टमेश सप्तम स्थानमें हो, गुरु सप्तम स्थानमें हो एव पाप ग्रहसे युत शुक्र सप्तममें हो तो जातककी स्त्रीका मरण उसकी जीवित अवस्थामें होता है।

२—स्त्रीके जन्मनक्षत्रसे पुरुषके जन्मनक्षत्र तक तथा पुरुषके जन्मनक्षत्रसे स्त्रीके जन्मनक्षत्र तक गिननेसे जो सख्या आवे उसमें अलग अलग ७ से गुणा कर २८ का भाग देनेसे यदि प्रथम सख्यामे अधिक शेष रहे तो स्त्रीकी मृत्यु पहले और द्वितीय सख्यामें अधिक शेष रहे तो पुरुषकी मृत्यु पहले होती है।

३—शुक्रके नवांशमें या लग्नसे सप्तम स्थानमें शुक्र हो और सप्तमेश पचम स्थानमें हो तो जातकको स्त्रीमरणका दु ख सहन करना पडता है।

४—द्वितीयेश और सप्तमेश ६।८।१२वें भावमे हो तो स्त्रीमरण, छठेमे मगल, सप्तममें राहु और अष्टममे शनि हो तो भार्यामरण होता है।

५—शुक्र द्विस्वभाव राशिमें हो और सप्तममे पापग्रह स्थित हो अथवा सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि हो तो जातककी स्त्रीका मरण होता है।

सप्तमेशका द्वादश भावोमे फल

सप्तमेश लग्न स्थानमे हो तो जातक स्वस्त्रीसे प्रेम करनेवाला, सदाचारी, परस्त्री रतिसे घृणा करनेवाला, रूपवान्, स्त्रीके वशमें रहनेवाला, सुपुत्रवान् और धर्मभीरु, द्वितीय भावमे हो तो सुखरहित, दु खी, ससुरालसे

धन प्राप्त करनेवाला, स्त्रीके सुखसे रहित और रतिसुखके लिए सदा लालायित रहनेवाला, तृतीय भावमें हो तो पुत्रसे प्रेम करनेवाला, रोगिणी भार्याका पति, दु खी, रोगी और कौटुम्बिक सुखसे हीन, चौथे भावमे हो तो साधक, पितासे द्वेप करनेवाला, चचल, समाजसेवी और सुखी, पाँचवें भावमें हो तो सौभाग्ययुक्त, पुत्रवान्, हठी, दुष्ट विचारवाला, माताकी सेवा करनेवाला और दुष्ट प्रकृतिका, छठे भावमें हो तो स्त्रीसे द्वेप करनेवाला, रोगिणी भार्याका पति, स्त्रीसे हानि और कुटुम्बसे दु खी, सातवे भावमे हो तो दीर्घायु, शीलवान्, तेजस्वी, सुन्दर नारीका पति, सौभाग्यशाली, सुखी और कुटुम्बसे परिपूर्ण, आठवें भावमे हो तो वेश्यागामी, विवाहसे वचित, वास्तविक रतिसुखसे वचित और रोगी, नौवे भावमे हो तो तेजस्वी, शिल्पी, स्त्रीसुखसे परिपूर्ण, सुन्दर रमणीके साथ रमण करनेवाला, धर्मात्मा और नीतिज्ञ, दसवें भावमे हो तो राजासे दण्ड पानेवाला, लम्पट, कामी, क्रूर और नीच कर्मरत, ग्यारहवे भावमे हो तो रूपवती, सुशीला रमणीका पति, गुणवान्, दयालु और धनिक एव वारहवें भावमे हो तो गृह और वन्धुसे हीन, स्त्रीसुखरहित या अल्प स्त्रीसुख पानेवाला होता है। यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह हो तो उसका प्रत्येक भावमे अनिष्ट फल ज्ञात करना चाहिए।

अष्टम भाव विचार

अष्टम भावसे प्रधानत आयुका विचार किया जाता है। दीर्घायुके योग निम्न हैं—

१—पचममे चन्द्रमा, नौवेंमे गुरु और दसवे भावमे मगल हो तो दीर्घायु योग होता है।

२—अष्टमेश अपनी राशिमे हो और शनि अष्टममें हो।

३—अष्टमेश, लग्नेश और दशमेश १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो दीर्घायु होता है।

४—षष्ठेश और व्ययेश दोनों लग्नमें हों, दशमेश केन्द्रमे हो और लग्नेश केन्द्रमें हो तो दीर्घायु योग होता है।

५—पापग्रह ३।६।११ और शुभग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो दीर्घायु योग होता है।

६—लग्नेश बलवान् होकर केन्द्रमे हो तो दीर्घायु और सभी ग्रह तीसरे, चौथे अथवा आठवें स्थानमें हो तो जातक दीर्घायु होता है।

अल्पायु योग

१—वृश्चिकका सूर्य गुरुके साथ लग्नमें हो और अष्टमेश केन्द्रमें हो तो २२ वर्षकी आयु होती है।

२—१।४।५।८ राशियोंका शनि लग्नमे हो, शुभग्रह ३।६।९।१२ मे हो तो २६ या २७ वर्षकी आयु होती है।

३—अष्टमेश पापग्रह हो और गुरु या पापग्रहसे दृष्ट हो, लग्नेश अष्टम भावमे हो तो २८ वर्षकी आयु होती है।

४—चन्द्र या शनियुक्त सूर्य आठवें भावमे हो तो २९ वर्षकी आयु, राशीश और अष्टमेशके मध्यमें चन्द्र हो, व्यय भावमे गुरु हो तो २७ या ३० वर्षकी आयु होती है।

५—क्षीण चन्द्रमा हो, अष्टमेश पापयुक्त केन्द्र या अष्टममें हो, लग्न पापयुक्त निर्बल हो तो ३२ वर्षकी आयु होती है।

६—६।८।१२वें भावोंमें पापग्रह हो, लग्नेश निर्बल हो तथा शुभग्रहोंसे युत और दृष्ट न हो तो जातक अल्पायु होता है।

७—सभी पापग्रह ३।६।९।१२ भावोंमे हो तो अल्पायु, लग्नेश और अष्टमेश ६ठे या ८वें भावमे हो तो अल्पायु होता है।

८—द्वितीयेश नवम भावमे, शनि सातवें और गुरु, शुक्र ग्यारहवें

भावमे हो तो अल्पायु योग होता है।

९—लग्नेश निर्वल हो तथा सभी पापग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो और शुभग्रहोकी दृष्टि भी नही हो तो अल्पायु योग होता है।

१०—शुक्र, गुरु लग्नमे हो और पचममे मगल पापग्रहसे युत हो तथा सूर्यसहित लग्नेश लग्नमें हो तो जातक अल्पायु होता है।

मध्यमायु योग

१—सभी पापग्रह २।५।८।११वें स्थानमे हो या ३।४ स्थानोमे हो तो मध्यमायु योग होता है।

२—लग्नेश निर्वल हो, गुरु १।४।७।१०।५।९ स्थानोमे हो और पाप-ग्रह ६।८।१२वें भावमें स्थित हो तो मध्यमायु योग होता है।

३—सभी शुभग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो, शनि ६।८ स्थानोमें हो और पापग्रह वलवान् होकर ७।८ स्थानोमे हो तो जातक मध्यमायु होता है।

४—१।४।५।७।९।१० स्थानोमें शुभ और पाप दोनो ही प्रकारके मिश्रित ग्रह हो तो मध्यमायु योग होता है।

५—दिनमे जन्म हो और चन्द्रमासे आठवें स्थानमे पापग्रह हो तो मध्यमायु योग होता है।

मृत्युका निर्णय करनेके लिए मारकका ज्ञान कर लेना आवश्यक है। ज्योतिष शास्त्रमे लग्नेश, षष्ठेश, अष्टमेश, गुरु और शनि इनके सम्बन्धसे मारकेशका विचार किया गया है। अष्टमेश वली होकर ३।४।६।१०।१२ स्थानोमे हो तो मारक होता है। लग्नेशसे अष्टमेश वलवान् हो तो अष्ट-मेशकी अन्तर्दशा मारक होती है। शनि षष्ठेश और अष्टमेश होकर लग्नेशको देखता हो तो लग्नेश भी मारक हो जाता है। अष्टमेश सप्तम भावमे वैठकर लग्नको देखता हो तो पापग्रहकी दशा-अन्तर्दशामे वह मारक

होता है। मगलकी दशामे शनि तथा शनिकी दशामें मगल सदा जातकको रोगी वनाते हैं। अष्टमेश चतुर्थ स्थानमे शत्रुक्षेत्री हो तो मारक वन जाता है।

पाराशरके मतसे द्वितीय और सप्तम मारक स्थान है। तथा इन दोनोके स्वामी—द्वितीयेश, सप्तमेश, द्वितीय और सप्तममें रहनेवाले पापग्रह एव द्वितीयेश और सप्तमेशके साथ रहनेवाले पापग्रह मारकेश होते हैं। अभिप्राय यह है कि यदि द्वितीयेश पापग्रह हो तथा पापग्रहसे दृष्ट हो तो प्रथम वही मारकेश होता है, पश्चात् सप्तमेश पापग्रह हो और पापग्रहसे दृष्ट हो, अनन्तर द्वितीयेशमे रहनेवाला पापग्रह, अनन्तर सप्तममें रहनेवाला पापग्रह, द्वितीयेशके साथ रहनेवाला पापग्रह और सप्तमेशके साथ रहनेवाला पापग्रह मारकेश होता है। शनि यदि मारकेशके साथ हो तो मारकेशको हटाकर स्वय मारक वन जाता है। द्वादशेश भी पापग्रह होनेपर मारक वन जाता है। पापग्रह पष्ठेश हो या पापराशिमे पष्ठेश वैठा हो अथवा पापग्रहसे दृष्ट हो तो षष्ठेशकी दशामें भी मरणकी सम्भावना होती है। मारकेशकी दशामें पष्ठेश, अष्टमेश और द्वादशेशकी अन्तर्दशामें मरण सम्भव होता है। यदि मारकेश अविक वलवान् हो तो उसकी दशा या अन्तर्दशामें मरण होता है। राहु या केतु १।७।८।१२वें भावमे हो अथवा मारकेशसे ७वें भावमें हो या मारकेशके साथ हो तो मारक होते हैं। मकर और वृश्चिक लग्नवालोके लिए राहु मारक वताया गया है।

जैमिनीके मतसे आयुविचार

लग्नेश-अष्टमेश, जन्मलग्न-चन्द्र एव जन्मलग्न-होरालग्न इन तीनोके द्वारा आयुका विचार करना चाहिए। उपर्युक्त तीनो योगोवाले ग्रह अर्थात् लग्नेश और अष्टमेश, जन्मलग्न और चन्द्र, तथा जन्मलग्न और होरालग्न-द्वारा नोचेके चक्रसे आयुका निर्णय करना चाहिए।

दीर्घायु	मध्यमायु	अल्पायु
चरराशि-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश	चरराशि-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश	चरराशि-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश
स्थिरराशि-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश	स्थिरराशि-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश	स्थिरराशि-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश
द्विस्वभाव-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश	द्विस्वभाव-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश	द्विस्वभाव लग्नेश चरराशि-अष्टमेश

इसी प्रकार लग्न-चन्द्र अथवा शनि-चन्द्र, जन्मलग्न तथा होरालग्न-पर-से आयुका विचार होता है। यदि तीनो प्रकारसे अथवा दो प्रकारसे एक ही प्रकारकी आयु आये तो उसे ठीक समझना चाहिए। यदि तीनो प्रकारसे भिन्न-भिन्न प्रकारकी आयु आये तो जन्मलग्न और होरालग्न[1]-पर-से जो आयु निकले उसीको ग्रहण करना चाहिए।

विसवाद होनेपर लग्न या सप्तममें चन्द्रमा हो तो शनि और चन्द्रमा-परसे आयु निकालना चाहिए। अन्यथा जन्मलग्न और होरालग्नपर-से ही आयु सिद्ध करना चाहिए।

इस प्रकार आयुका योग निश्चित कर लेनेपर भी यदि लग्नेश या अष्टमेश शनि हो तो कक्षा हानि अर्थात् दीर्घायु योग आया हो तो उसको मध्यमायु योग, मध्यमायु योग आया हो तो अल्पायु योग और अल्पायु योग आया हो तो हीनायु योग होता है, परन्तु शनि ७।१०।११ राशियो-में-से किसी भी राशिमें हो तो कक्षा हानि नहीं होती है।

---

१ इष्टकालको २से गुणाकर पाँचका भाग देनेसे जो राश्यादि आवें उनमें रविस्पष्टको जोड़ देनेपर होरालग्न होता है।

लग्न या सप्तममें गुरु हो अथवा केवल शुभग्रहसे युत या दृष्ट गुरु हो तो कक्षा-वृद्धि अर्थात् अल्पायुमें मध्यमायु, मध्यमायुमे दीर्घायु और दीर्घायुमें पूर्णायु होती है।

तीनो प्रकारसे दीर्घायु आये तो १२० वर्ष, दो प्रकारसे आये तो १०८ वर्ष तथा एक प्रकारसे आये तो ९६ वर्ष होते हैं।

तीनो प्रकारसे मध्यमायुमें ८० वर्ष, दो प्रकारसे मध्यमायुमे ७२ वर्ष और एक प्रकारसे मध्यमायुमे ६४ वर्ष होते हैं।

तीनो प्रकारसे अल्पायुमें ३२ वर्ष, दो प्रकारसे अल्पायु योगमे ३६ वर्ष और एक प्रकारसे अल्पायु हो तो ४० वर्ष होते हैं।

स्पष्टायु साधनका नियम

जिन ग्रहोपर-से आयु जानना हो उन स्पष्ट ग्रहोकी राशियोको छोड अंशादिका योग करके, योगकारक ग्रहोकी सख्यासे भाग देकर जो अंशादि आयें, उनके अनुसार अंश, कला, विकला फलके कोष्ठकके नीचे जो वर्ष, मास और दिनादि हो उन्हें जोडकर दीर्घायु हो तो ९६मे-से, मध्यमायु हो तो ६४में-से और अल्पायु हो तो ३२में-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

मतान्तरसे योगकारक ग्रहोके अंशादि जोडनेसे जो आये उसमें योग-कारक ग्रहोकी सख्याका भाग देनेसे जो लब्ध आये उसमें तीन प्रकारसे आयु आनेपर ४०से, दो प्रकारसे आनेपर ३६से और तीन प्रकारसे आने-पर ३२मे गुणाकर ३०का भाग देनेपर लब्ध वर्षादिको पूर्वोक्त आयु खण्डमें-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

उदाहरण—द्वितीय अध्यायमें दी गयी उदाहरण-कुण्डली ही यहांपर उदाहरण समझना चाहिए। यहाँ लग्नेश सूर्य है और अष्टमेश शुक्र है। सूर्य चर राशिमें और अष्टमेश द्विस्वभाव राशिमें है, अत अल्पायु योग हुआ। द्वितीय प्रकार अर्थात् चन्द्र-शनिसे विचार किया तो चन्द्रमा स्थिर राशिमें और शनि द्विस्वभाव राशिमें है अत दीर्घायु योग हुआ।

इष्टकाल २३।२२ × २ = ४६।४४ ÷ ५ = ९।१०।४८ + रविस्पष्ट ०।१०। ७।३४ सूर्य स्पष्ट

९।१०।४८। ०

९।२०।५५।३४ स्पष्ट होरालग्न

इस उदाहरणमे जन्मलग्न स्थिर और होरालग्न स्थिर राशिमे है अत अल्पायु योग हुआ।

इस उदाहरणमें दो प्रकारसे अल्पायु योग आया है, अतएव अल्पायु समझनी चाहिए।

स्पष्टायु निकालनेके लिए गणित क्रिया की—

लग्नेश सूर्य	०।१०। ७।३४	
अष्टमेश शुक्र	११।२३।२०।१०	राशियोको जोड दिया
होरालग्न	९।२०।५५।३४	
जन्मलग्न	४।२३।२५।२७	
	—।७७।४८।४५	

७७।४८।४५ − ४ = १९।२७।११ इसे ३२ से गुणा किया और ३० का भाग दिया तो वर्षादि २३।४।३।४३ मिला। इसे अल्पायुके द्वितीय खण्डमें-से घटाया—

३६।०।०। ०

२३।४।३।४३

१२।७।२६।१७ स्पष्टायु

आयुसाधनकी दूसरी प्रक्रिया

जन्मकुण्डलीके केन्द्राक, त्रिकोणाक, केन्द्रस्थ ग्रहाक[1] और त्रिकोणस्थ

१ केन्द्रमें सिर्फ चन्द्रमा है, सूर्यसे चन्द्रमा दूसरी सख्याका है। अत. २ अक लिया है, इसी प्रकार मगलसे ३, बुधसे ४, गुरुसे ५, शुक्रसे ६, शनिसे ७, राहुसे ८ और केतुसे ९ अक लेते हैं।

लग्न या सप्तममें गुरु हो अथवा केवल शुभग्रहसे युत या दृष्ट गुरु हो तो कक्षा-वृद्धि अर्थात् अल्पायुमें मध्यमायु, मध्यमायुमें दीर्घायु और दीर्घायुमे पूर्णायु होती है।

तीनो प्रकारसे दीर्घायु आये तो १२० वर्ष, दो प्रकारसे आये तो १०८ वर्ष तथा एक प्रकारसे आये तो ९६ वर्ष होते हैं।

तीनो प्रकारसे मध्यमायुमें ८० वर्ष, दो प्रकारसे मध्यमायुमे ७२ वर्ष और एक प्रकारसे मध्यमायुमे ६४ वर्ष होते है।

तीनो प्रकारसे अल्पायुमें ३२ वर्ष, दो प्रकारसे अल्पायु योगमें ३६ वर्ष और एक प्रकारसे अल्पायु हो तो ४० वर्ष होते है।

स्पष्टायु साधनका नियम

जिन ग्रहोपर-से आयु जानना हो उन स्पष्ट ग्रहोकी राशियोको छोड अंशादिका योग करके, योगकारक ग्रहोकी सख्यासे भाग देकर जो अंशादि आयें, उनके अनुसार अंश, कला, विकला फलके कोष्ठकके नीचे जो वर्ष, मास और दिनादि हो उन्हें जोडकर दीर्घायु हो तो ९६मे-से, मध्यमायु हो तो ६४में-से और अल्पायु हो तो ३२में-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

मतान्तरसे योगकारक ग्रहोके अंशादि जोडनेसे जो आये उसमें योग-कारक ग्रहोकी सख्याका भाग देनेसे जो लब्ध आये उसमें तीन प्रकारसे आयु आनेपर ४०से, दो प्रकारसे आनेपर ३६से और तीन प्रकारसे आने-पर ३२मे गुणाकर ३०का भाग देनेपर लब्ध वर्षादिको पूर्वोक्त आयु खण्डमें-से घटानेपर स्पष्टायु होती है।

उदाहरण—द्वितीय अध्यायमें दी गयी उदाहरण-कुण्डली ही यहाँपर उदाहरण समझना चाहिए। यहाँ लग्नेश सूर्य है और अष्टमेश शुक्र है। सूर्य चर राशिमें और अष्टमेश द्विस्वभाव राशिमें है, अत· अल्पायु योग हुआ। द्वितीय प्रकार अर्थात् चन्द्र-शनिसे विचार किया तो चन्द्रमा स्थिर राशिमे और शनि द्विस्वभाव राशिमे है अत दीर्घायु योग हुआ।

इष्टकाल २३।२२ × २ = ४६।४४ ÷ ५ = ९।१०।४८ + रविस्पष्ट ०।१०। ७।३४ सूर्य स्पष्ट
९।१०।४८। ०
९।२०।५५।३४ स्पष्ट होरालग्न

इस उदाहरणमे जन्मलग्न स्थिर और होरालग्न स्थिर राशिमे है अत अल्पायु योग हुआ।

इस उदाहरणमें दो प्रकारसे अल्पायु योग आया है, अतएव अल्पायु समझनी चाहिए।

स्पष्टायु निकालनेके लिए गणित क्रिया की—

लग्नेश सूर्य	०।१०। ७।३४	
अष्टमेश शुक्र	११।२३।२०।१०	राशियोको
होरालग्न	९।२०।५५।३४	जोड दिया
जन्मलग्न	४।२३।२५।२७	
	—।७७।४८।४५	

७७।४८।४५ ÷ ४ = १९।२७।११ इसे ३२ मे गुणा किया और ३० का भाग दिया तो वर्षादि २३।४।३।४३ मिला। इसे अल्पायुके द्वितीय खण्डमे-से घटाया—

३६।०।०। ०
२३।४।३।४३
१२।७।२६।१७ स्पष्टायु

आयुसाधनकी दूसरी प्रकिया

जन्मकुण्डलीके केन्द्राक, त्रिकोणाक, केन्द्रस्थ ग्रहाक[1] और त्रिकोणस्थ

[1] केन्द्रमें सिर्फ़ चन्द्रमा है, सूर्यसे चन्द्रमा दूसरो सख्याका है। अतः २ अक लिया है, इसी प्रकार मगलसे ३, बुधसे ४, गुरुसे ५, शुक्रसे ६, शनिसे ७, राहुसे ८ और केतुसे ९ अक लेते हैं।

ग्रहाक इन चारो सख्याओको जोडकर योगफलको १२ से गुणाकर १० का भाग देनेसे जो वर्षादि लब्ध आयें उनमें-से १२ घटानेपर आयु प्रमाण निकलता है।

उदाहरण—दूसरे अध्यायमे जो उदाहरण-कुण्डली लिखी गयी है उसकी आयु—

केन्द्राक	५ + ८ + ११ + २	= २६
त्रिकोणाक	९ + १	= १०
केन्द्रस्थग्रहाक	२	= २
त्रिकोणस्थग्रहाक	४ + १	= ५

$$२६ + १० + २ + ५ = ४३ ।\ \frac{४३ \times १२}{१०} = \frac{५१६}{१०} = ५१\frac{६}{१०}$$

$$\frac{६}{१०} \times \frac{१२}{१} = \frac{७२}{१०} = ७\frac{२}{१०} ।\ \frac{२}{१०} \times \frac{३०}{१} = ६$$

५१।७।६
१२।०।०

३९।७।६ आयुमान हुआ।

नक्षत्रायु

जन्मनक्षत्रकी भुक्त घटियोको ४से गुणाकर ३का भाग देनेसे जो लब्ध आये उसे १०० वर्षमे-से घटानेसे नक्षत्रायु आती है। उदाहरण—भुक्तनक्षत्र १२।१० है।

$$१२।१० \times ४ = ४८।४० - ३ = ४८\frac{४०}{६०} = ४८ + \frac{२}{३} = \frac{१४६}{३} \times \frac{१}{३} =$$

$$\frac{१४६}{९} = १६\frac{२}{९} \times १२ = \frac{८}{३} = २\frac{२}{३} \times ^{३०}$$

१६।२।२० को १०० वर्षमे-से घटाया
१००।०
१६।२।२०
८३।९।१० नक्षत्रस्पष्टायु हुई ।

ग्रहरश्मियो-द्वारा आयु साधन

सूर्यका रश्मि गुणाक १०, चन्द्रका ११, मगलका ५, बुधका ५, गुरुका ७, शुक्रका ८ और शनिका ५ रश्मि गुणाक है ।

ग्रहमें-से अपने-अपने उच्चको घटाना, शेष छह राशिमे कम हो तो उसे १२ राशियोमें-से घटानेपर जो शेष रहे उसकी कला बनाकर अपने गुणाकमे गुणा करना चाहिए । जो गुणनफल आवे उसमे २१६०० का भाग देनेपर ग्रहकी रश्मिज आयु आती है । इस विधिमे समस्त ग्रहोकी रश्मिज आयुका साधन कर लेना चाहिए । जो ग्रह स्वगृही, उच्चराशि, मित्रक्षेत्री और वक्री होनेवाला हो उसके वर्षोंको द्विगुणित कर लेना चाहिए । वक्री और अस्तगत ग्रहके वर्षोंका आधा करनेपर ग्रहकी आयु आती है । समस्त ग्रहोकी आयुको जोड देनेपर जातककी आयु आ जाती है । रश्मिज आयुमें राहु और केतुकी आयु नही निकाली गयी है ।

लग्नायु साधन

जन्मकुण्डलीमें जिस-जिस स्थानमें ग्रह स्थित हो, उस-उस स्थानमे जो-जो राशि हो, उन सभी ग्रहस्थ राशियोके निम्न ध्रुवाकोको जोड देनेसे लग्नायु होती है । ध्रुवाक—मेष १०, वृष ६, मिथुन २०, कर्क ५, सिंह ८, कन्या २, तुला २०, वृश्चिक ६, धनु १०, मकर १४, कुम्भ ३ और मीन १० ध्रुवाक सख्यावाली है ।

केन्द्रायु साधन

जन्मकुण्डलीमें चारो केन्द्रस्थानो (१।४।७।१०) की राशियोका

योग कर भौम और राहु जिस-जिस राशिमें हो उनके अकोकी सख्याका योग केन्द्राक सख्याके योगमे-से घटा देनेपर जो शेप बचे उसे तीनसे गुणा करनेसे केन्द्रायु होती है।

प्रकारान्तरसे नक्षत्रायु

भयातको ९० मे-से घटाकर जो शेप रहे उसको चारसे गुणाकर तीन-का भाग देनेसे लब्ध वर्पादि नक्षत्रायु होते है।

ग्रहयोगोपर-से आयु विचार

१—शनि तुलाके नवाशमे हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो तथा शनि, राहु वारहवेंमे हो और शनि वक्री हो तो १३ वर्पकी आयु होती है।

२—शनि कन्याके नवाशमे हो और बुधसे दृष्ट हो, राहु, सूर्य, मगल, बुध और शनि ये पाँचो ग्रह या इनमें-से कोई चार ग्रह अष्टममे हो एव मगल-राहु या शनि-राहु वारहवें स्थानमें हो तो १४ वर्पकी आयु होती है।

३—शनि सिहके नवाशमे हो और राहुसे दृष्ट हो तथा चौथेमे चन्द्रमा और छठेमे सूर्य हो तो १५ वर्पकी आयु होती है।

४—३ या ११वें भावमे शनि या ९ वेंमे रवि और गुरु, शुक्र केन्द्रमे नही हो, तथा शनि कर्कके नवाशमें, केतुसे दृष्ट हो तो १६ वर्पकी आयु होती है।

५—शनि मिथुनके नवाशमे लग्नेशसे दृष्ट हो, सूर्य वृश्चिक या कुम्भ राशिमे, शनि मेपमे और गुरु मकर राशिमें हो एव कर्क या कुम्भ राशिमें सूर्य, शनि और मेप राशिमे गुरु, शुक्र स्थित हो तो १७ वर्पकी आयु होती है।

६—लग्नेश अष्टममें, अष्टमेश लग्नमे हो, छठे स्थानमें शनि, सूर्य और चन्द्रमा एकत्रित हो एव पापग्रहोसे दृष्ट चन्द्रमा ६।८।१२वे भावमे हो, लग्नेश अष्टममें पापग्रह दृष्ट या युत हो तो १८ से २० वर्प तक आयु होती है।

७—लग्नमे वृश्चिक राशि हो और उसमे सूर्य, गुरु स्थित हो तथा अष्टमेश केन्द्रमे हो, चन्द्रमा और राहु ७।८ वे भावमे हो, पापग्रहके साथ गुरु लग्नमे हो, अष्टम स्थान ग्रहशून्य हो, अष्टमेश, द्वितीयेश और नवमेश एक साथ हों तथा लग्नेश अष्टममे हो तो २२ या २४ वर्षकी आयु होती है।

८—शनि द्विस्वभाव राशिगत होकर लग्नमे हो और द्वादशेश तथा अष्टमेश निर्बल हो तो २५ वर्षकी आयु होती है।

९—लग्नेश निर्बल हो, अष्टमेश द्वितीय या तृतीयमें हो; लग्नेश, अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तथा केन्द्रमे और शुभग्रह नही हो तो जातककी ३० या ३२ वर्षकी आयु होती है।

१०—गुरु और शुक्र केन्द्रमे हो और लग्नेश किसी पापग्रहके साथ आपोक्लिममे हो और जन्म सन्ध्या समयका हो तो ३६ वर्षकी आयु होती है।

११—अष्टमेश स्थिर राशिमे स्थित होकर केन्द्रमे हो और अष्टम स्थान पाप दृष्ट हो, अष्टमेश लग्नमे हो और अष्टम स्थानमे कोई शुभग्रह नही हो एव स्वक्षेत्री शुभग्रहकी दृष्टि अष्टम स्थानपर पडती हो तो जातक-की ४० वर्षकी आयु होती है।

१२—अष्टमेश लग्नमे मगलके साथ हो अथवा अष्टमेश स्थिर राशिमे स्थित होकर १।८।१२ स्थानोमे-से किसी भी स्थानमे स्थित हो तो जातक की ४२ वर्षकी आयु होती है।

१३—लग्न द्विस्वभाव राशिमे हो, बृहस्पति केन्द्रमे और शनि दसवें स्थानमे हो, सूर्य और शुक्र मकर राशिमे ३।६वें स्थानमे हो और अष्टमेश केन्द्रमे हो तो ४४ वर्षकी आयु होती है।

१४—जन्मराशीश पापग्रहके साथ अष्टम स्थानमे हो और लग्नेश किसी पापग्रहके साथ छठे स्थानमे हो तो ४५ वर्षकी आयु होती है।

१५—सभी पापग्रह केन्द्रमे हो तो ४७ वर्षकी आयु होती है।

१६—बुध चौथे या दसवें स्थानमे हो और चन्द्र लग्न अष्टम या द्वादशमे हो और बृहस्पति शुक्र किसी भी स्थानमे एकत्रित हो तो ५० वर्षकी आयु होती है।

१७—लग्न मीन राशि हो और शनि अन्य ग्रहोके साथ उसमे स्थित हो तथा चन्द्रमा ८।१२ वें स्थानमे हो, शुक्र और गुरु उच्चके हो एवं द्वादशेश और अष्टमेश उच्चके हो तो ५५ वर्षकी आयु होती है।

१८—तृतीयेश गुरुके साथ लग्नमे हो, कोई भी पापग्रह कुम्भ राशिका होकर केन्द्रमे हो, अष्टमेश लग्नमे हो, लग्नेश द्वादश भावमें हो तथा अष्टम स्थानमें पापग्रह हो, सूर्य शत्रुग्रह और मगलके साथ लग्नमे हो, लग्नेश पापग्रहके साथ ६।८।१२वें भावमें हो एव अष्टम स्थान शुभग्रहसे रहित हो और लग्नेश पापग्रहके साथ ६।८।१२ वें स्थानमे हो तो ६० वर्षकी आयु होती है।

१९—नीचका शनि केन्द्र या त्रिकोणमें हो और रवि शुभग्रहके साथ १।८।७।१० स्थानोमे किसी भी स्थानमे हो तो ६५ वर्षकी आयु होती है।

२०—मगल पाँचवें, सूर्य सातवें और शनि नीच राशिका हो तो ७० वर्षकी आयु होती है।

अष्टमेशका द्वादश भावोमे फल

अष्टमेश लग्न स्थानमे हो तो जातक सहनशील, दीर्घरोगी, राजाके द्वारा धन प्राप्त करनेवाला, अशुभ कर्मरत और दु खी, द्वितीय स्थानमे हो तो अल्पायु, शत्रुओंसे युत, नीचकर्मरत, अभिमानी और दु ख प्राप्त करनेवाला, तृतीय भावमे हो तो बन्धुविरोधी, सहोदररहित, दुर्बल, रोगी, अल्पसुखी और विकलांगी, चौथे भावमे हो तो पितामे शत्रुता करनेवाला, अन्यायसे पिताके धनका हरण करनेवाला, पिताके लिए विभिन्न प्रकारके कष्ट देनेवाला, चालाक, वावदूक और उग्र प्रकृतिवाला, पाँचवें भावमे हो तो सुतहीन, अल्प सन्ततिवाला, सन्तानके द्वारा सर्वदा कष्ट पाने-

वाला और मेधावी, छठे स्थानमे हो तो रोगी, दु खी, जीवनमे अनेक प्रकारके उतार-चढाव देखनेवाला, शत्रुओसे पीडा प्राप्त करनेवाला तथा उनके द्वारा मृत्युको प्राप्त होनेवाला और सन्तप्त, सातवें भावमें हो तो दुष्ट कुलोत्पन्न स्त्रीका पति, गुल्मरोगी, कष्ट पानेवाला, स्त्रीके साथ निरन्तर कलहसे दु खी रहनेवाला और अल्पसुखी, आठवें भावमें हो तो व्यवसायी, नीरोग, व्याधिरहित, नीचोंका नेता, नीचकर्मरत और धूर्तोंका सरदार; नौवें भावमे हो तो पापी, नीच, धर्मविमुख, अकेला रहनेवाला, सज्जन तथा नीच अष्टमेश होनेसे ब्राह्मणकी हत्या करनेवाला और कुरूप, दसवें भावमे हो तो नीचकर्मरत, राजाकी सेवा करनेवाला, आलसी, क्रूर प्रकृति, जारज, नीच और मातृघातक, ग्यारहवें भावमें हो तो बाल्यावस्थामे दु खी, पर अन्तिम तथा मध्यावस्थामे सुखी, दीर्घायु, सत्कार्यरत तथा पापग्रह अष्टमेश ग्यारहवेंमें हो तो अल्पायु, नीचकर्मरत, हिंसक और दु खी एव बारहवें भावमें अष्टमेश क्रूरग्रह हो तो निकृष्ट, चोर, शठ, कुब्जक, रोगी, दु खी और अनेक प्रकारके कष्ट पानेवाला होता है।

अष्टमेश लग्नमे और लग्नेश अष्टममे हो तथा द्वादश, द्वितीय और तृतीय स्थानोपर पापग्रहोकी दृष्टि हो या पापग्रह इन स्थानोमे हो तो जातक नाना व्याधियोंसे पीडित होकर मृत्युको प्राप्त करता है।

नवम भाव विचार

नवमसे भाग्य और धर्म-कर्मके सम्बन्धमे विचार किया जाता है। भाग्येशके बलवान् होनेसे जातक भाग्यशाली होता है। यदि भाग्य-भवनपर अनेक ग्रहोकी दृष्टि हो तो भाग्योदयके समय अनेक व्यक्तियोकी सहायता लेनी पडती है। भाग्येश ६।८।१२वे भावमें शत्रुगृहमें बैठा हो तो भाग्य उत्तम नही होता है। भाग्यस्थानमें लाभेश बैठा हो तो नौकरीका योग होता है। धनेश लाभमें गया हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है। लाभेश नौवें भावमे हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो

तो भाग्यवान् होता है। नवमेश धन भावमें गया हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है। लाभेश नवम भावमें, धनेश लाभ भावमें, नवमेश धन भावमें हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो महाभाग्यवान् होता है। नवम भाव गुरु और शुक्रसे युत, दृष्ट हो या भाग्येश गुरु, शुक्रसे युत हो या लग्नेश और धनेश पचममें स्थित हो अथवा नवम भावमे, नवमेश लग्न भावमे गया हो तो जातक भाग्यवान् होता है।

भाग्योदय काल

सप्तमेश या शुक्र ३।६।१०।११।७वें स्थानमे हो तो विवाहके बाद भाग्योदय होता है। भाग्येश रवि हो तो २२वें वर्षमे, चन्द्र हो तो २४वें वर्षमे, मगल हो तो २८वे वर्षमे, बुध हो तो ३२वें वर्षमे, गुरु हो तो १६वें वर्षमे, शुक्र हो तो २५वे वर्षमे, शनि हो तो ३६वे वर्षमे और राहु हो तो ४२वें वर्षमे भाग्योदय होता है।

इस भावका विशेप फल

१—नवम भावमे गुरु या शुक्र स्थित हो तो मन्त्री, शासनकार्यमे सहयोग या विचार परामर्श देनेवाला, कौन्सिलका मेम्बर, पार्लमेण्ट-सेक्रेटरी और प्रधान न्यायाधीशका पेशकार होता है। पर इस योगमे ध्यान देनेकी एक बात यह है कि यह फल गुरु या शुक्रके उच्च राशिमे रहनेपर ही घटता है। नवम भावपर शुभग्रहकी दृष्टि भी अपेक्षित है।

२—नवमस्थ गुरुको सूर्य देखता हो तो राजाके समान, धारासभाओंका सदस्य, जनताके प्रतिनिधि, चन्द्र देखता हो तो विलासी, सुन्दरदेही, मगल देखता हो तो काचन, हिरण्य आदि मूल्यवान् धातुओंवाला, बुध देखता हो तो धनी, शुक्र देखता हो तो पशु, धनधान्य आदि सम्पत्तिसे युक्त, शनि देखता हो तो चल-अचल नाना प्रकारकी सम्पत्तिका स्वामी होता है।

३—गुरुको सूर्य-मगल देखते हो तो ऐश्वर्य, रत्न, स्वर्ण आदि सम्पत्तिसे युक्त, साहसी, धीरवीर, पराक्रमी और वडे परिवारवाला होता है, सूर्य-वुध देखते हो तो सुन्दर, भाग्यवान्, सुन्दर स्त्रीका पति, धनी, कवि, लेखक, सशोधक, सम्पादक और विद्वान् होता है, सूर्य-शुक्र देखते हो तो उद्यमी, कलाविद्, यशस्वी, सुरुचिसम्पन्न, सुखी और नम्र होता है, सूर्य-शनि नवमस्थ गुरुको देखते हो तो नेता, प्रतिनिधि, कोपाध्यक्ष, प्रख्यात, मजिस्ट्रेट, न्यायाधीश और सग्रहकर्त्ता होता है, चन्द्र-मगल देखते हो तो सेनापति, कीर्तिवान्, धारासभाका सदस्य, मन्त्री, सुखी, भाग्यवान्, चतुर और मान्य, चन्द्र-वुध देखते हो तो उत्तम सुख प्राप्त करनेवाला, तेजस्वी, क्षमावान्, विद्वान्, कवि, कहानीकार और सगीतप्रिय, चन्द्र-शुक्र देखते हो तो धनिक, कर्त्तव्यपरायण, सन्तानहीन और कुटुम्बसे दु खी, चन्द्र-शनि देखते हो तो अभिमानी, प्रवासी, मध्यावस्थामे सुखी, अन्तिम जीवनमे दु.खी और कष्ट प्राप्त करनेवाला, मगल-वुध देखते हो तो चतुर, सुशील, गायक, भूमिपति, विद्या-द्वारा यशोपार्जन करनेवाला, प्रतिज्ञा पूर्ण करनेवाला और मान्य, मगल-शुक्र देखते हो तो धनिक, विद्वान्, विदेश जानेवाला, तेजस्वी, सात्त्विक, चतुर, लब्धप्रतिष्ठ और शासन करनेवाला, मगल-शनि देखते हो तो नीच, पिशुन, द्वेषी, विदेश यात्रा करनेवाला, नीच प्रकृति, धन-धान्यसे परिपूर्ण होता है ।

भाग्येशका द्वादश भावोमे फल

भाग्येश लग्नमें हो तो जातक धर्मात्मा, श्रद्धालु, पराक्रमी, कृपण, राज-कार्य करनेवाला, वुद्धिमान्, विद्वान्, कोमल प्रकृतिका और श्रेष्ठ कार्योंमे अभिरुचि रखनेवाला, द्वितीय भावमें हो तो शीलवान्, प्रख्यात, सत्यप्रिय, दानी, धर्मात्मा, धनिक, ऐश्वर्यवान् और मान्य, तृतीय भावमे हो तो वन्धुओंसे प्रेम करनेवाला, अनाथोका आश्रयदाता और कुटुम्वियोको सब प्रकारसे सहायता देनेवाला, चौथे भावमे हो तो पिताका भक्त,

विद्वान्, कीर्त्तिवान्, सत्कार्यरत, दानी, मित्रवर्गको सुख देनेवाला, उद्योगी, तेजस्वी और चपल, पाँचवें भावमे हो तो पुण्यात्मा, देव-द्विज और गुरुकी सेवामें तत्पर रहनेवाला, सुपुत्रवान्, सन्तान-द्वारा यश प्राप्त करनेवाला और माताकी सेवामें सर्वदा प्रस्तुत रहनेवाला, छठे भावमें हो तो शत्रुओसे पीडित, भीरु, पापी, नीच, शौक़ीन, निद्रालु, मूर्ख और धूर्त, सातवें भावमें हो तो सुन्दर, सत्यवती, सुशीला, धनवती तथा मधुरभापिणी नारीका पति, विलामी, रतिकर्ममें प्रवीण और सुन्दर, आठवें भावमें हो तो दुष्ट, हिंसक, कुटुम्बियोंसे विरोध करनेवाला, निर्दयी, विचित्र स्वभावका और दुराचारी, नौवें भावमे हो तो स्नेही, कुटुम्बकी वृद्धि करनेवाला, भाग्यवान्, धनिक, दानी, श्रद्धालु, सेवापरायण, सज्जन, व्यापार-द्वारा धनार्जन करनेवाला और प्रख्यात, दसवें भावमें हो तो ऐश्वर्यवान्, राजमान्य, सुखी, विलासी, कठिनसे-कठिन कार्यमें भी सफलता प्राप्त करनेवाला, लब्धप्रतिष्ठ, शासन-कार्यमें भाग लेनेवाला, धारासभाओका सदस्य और उच्च पदपर रहनेवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो दीर्घायु, धर्मपरायण, धनिक, प्रेमी, व्यापार-द्वारा लाभ प्राप्त करनेवाला, राजमान्य, पुण्यात्मा, यशस्वी और स्व-परकार्यरत एवं बारहवें भावमें हो तो विदेशमें मान्य, सुन्दर, विद्वान्, कलाविज्ञ, चतुर, सेवा-द्वारा ख्याति प्राप्त करनेवाला और किसी महान् कार्यमें सफलता प्राप्त करनेवाला होता है। यदि भाग्येश क्रूर ग्रह हो तो जातक दुर्बुद्धि और नीचकार्यरत होता है।

दशम भाव विचार

दशम भावपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तो मनुष्य व्यापारी होता है। (क) दसवें भावमें बुध स्थित हो, (ख) दशमेश और लग्नेश एक राशिमें हो, (ग) लग्नेश दशम भावमें गया हो, (घ) दशमेश १।४।५।७।९।१० में हो तथा शुभग्रहोंसे दृष्ट हो, (ङ) दशमेश अपनी राशिमें हो तथा शुभ-ग्रहकी दृष्टि हो तो जातक व्यापारी होता है।

१—६।८।१२वे भावमे पापग्रहोसे दृष्ट बुध, गुरु और शुक्र हो तो जातकको किसी भी काममें सफलता नही मिलती है। दशमेश ६।८।१२वें भावमें हो तो मन चचल रहनेसे काम ठीक नही होता।

२—दशमेश ग्यारहवें भावमें हो और एकादशेश दशम भावमें हो अथवा नवमेश दशममे और दशमेश नवम भावमें हो तो जातक श्रीमान्, प्रतापी, शासक और लोकमान्य होता है।

३—१।४।७।१०मे रवि हो, चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो, १।४थे भावमे गुरु हो तो राजयोग होता है।

४—अष्टमेश छठे और षष्ठेश आठवें भावमे हो अथवा अष्टमेश और षष्ठेश ये दोनो ग्रह १।४।७।१० मे स्थित हो या छठेमे गुरु और ग्यारहवेमें चन्द्रमा तथा लाभेश शुभग्रहकी राशि और शुभग्रहके नवाशमें स्थित हो तो जातक प्रतापी होता है।

५—बली शुभग्रह ग्यारहवे भावमें हो और किसी अन्य शुभग्रहके द्वारा देखा भी जाता हो अथवा द्वितीय स्थानमें चन्द्र, गुरु और शुक्र गये हो तो जातक श्रीमान् होता है।

६—पचम स्थानमे गुरु और दशम स्थानमे चन्द्रमा हो तो जातक राजा, बुद्धिमान् या तपस्वी होता है।

पितृसुख योग

१—(क) दशमेश शुभग्रह हो और वह शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो, (ख) दशमेश गुरु, शुक्रसे युत हो, (ग) नवमेश परमोच्चका हो, (घ) चन्द्र-कुण्डलीमें केन्द्रस्थानमे शुक्र हो, एव (ङ) दशमेश शुभग्रहोके मध्यमे हो तो जातकको पिताका सुख अधिक होता है।

२—(क) सूर्य, मगल दसवें या नौवें भावमें हो, (ख) पापग्रहसे युत सूर्य सातवे भावमे हो, (ग) सातवेंमें सूर्य, दसवें स्थानमे मगल और बारहवें स्थानमें राहु हो, (घ) चतुर्थेश ६।८।१२वें भावमे हो, (ङ) दशमेश

रवि, मंगलसे युक्त हो, एवं (च) दशम भावमें दशमेशको शत्रुराशिका ग्रह हो तो जातकके पिताकी शीघ्र मृत्यु होती है। जातक अपने पिताका बहुत कम सुख प्राप्त करता है।

३—(क) कर्क राशिमें राहु, मंगल और शनि हो, (ख) चतुर्थ स्थानमें क्रूर ग्रह हो, (ग) चतुर्थेश क्रूर ग्रहोंसे दृष्ट या युत हो, (घ) दशम स्थानमें समराशिगत हो और उस राशिका स्वामी क्रूर ग्रह हो, (ङ) चन्द्रमा पापग्रहके साथ हो तथा चन्द्रमासे चतुर्थ शनि और राहु हो तो जातकको माताका सुख कम मिलता है, अर्थात् छोटी ही अवस्थामें माताकी मृत्यु हो जाती है।

दशमेशका द्वादश भावोंमें फल

दशमेश लग्नमें हो तो जातक पितासे स्नेह करनेवाला, बाल्यावस्थामें दुःखी, मातासे द्वेष करनेवाला, अन्तिम अवस्थामें सुखी, धनिक, पुत्रवान् और देशमान्य, द्वितीय स्थानमें हो तो अल्पसुखी, जागीरदार, मातासे द्वेष करनेवाला और परिश्रमसे जी चुरानेवाला, तृतीय स्थानमें हो तो कुटुम्बियोंसे विरोध करनेवाला, मामाके द्वारा सहायता प्राप्त करनेवाला और प्रत्येक कार्यमें असफलता प्राप्त करनेवाला, चौथे स्थानमें हो तो सुखी, कुटुम्बियोंकी सेवा करनेवाला, राजमान्य, शासनमें भाग लेनेवाला, पंच, प्रमुख, सबका प्रिय और ऐश्वर्यवान्, पाँचवें भावमें हो तो शुभ कार्य करनेवाला, पाखण्डी, राजासे धन प्राप्त करनेवाला, विलासी, माताको सर्व-प्रकारसे सुख देनेवाला और सुखी; छठे भावमें दशमेश पापग्रह होकर स्थित हो तो बाल्यावस्थामें दुःखी, मध्यावस्थामें सुखी, मातासे द्वेष करनेवाला, भाग्यरहित, सामान्य धनिक और शत्रु-द्वारा हानि प्राप्त करनेवाला, सातवेंमें हो तो सुन्दर रूपवती और पुत्रवाली रमणीका भर्त्ता, कौटुम्बिक सुखसे परिपूर्ण, भोगी, ससुरालसे सुख प्राप्त करनेवाला और सुखी, आठवें भावमें हो तो क्रूर, तस्कर, पाखण्डी, धूर्त, मिथ्याभाषी,

अल्पायु, माताको सन्ताप देनेवाला, कष्टोंसे दु:खित और नीचकर्मरत, नौवें भावमें हो तो बन्धु-बान्धव समन्वित, मित्रोंके सुखमे परिपूर्ण, अच्छे स्वभाववाला, धर्मात्मा और लोकप्रिय, दसवें भावमें हो तो पिताको सुख देनेवाला, माताके कुटुम्बको प्रसन्न रखनेवाला, मातुलकी सेवा करनेवाला, राजमान्य, मुखिया, धनी, चतुर, लेखक और कार्यकुशल, ग्यारहवे भावमें हो तो माता-पिताको सम्मानित करनेवाला, धनिक, उद्योगी और व्यापार-मे अत्यन्त निपुण, एव बारहवें भावमें हो तो राजकार्यमे प्रेम रखनेवाला, मान्य, शासनके कार्योमें सुधार करनेवाला, स्वाभिमानी और प्रवासी होता है।

एकादश भाव विचार

लाभ भावमे शुभग्रह हो तो न्यायमार्गसे धनका लाभ और पापग्रह हो तो अन्याय मार्गसे धनका लाभ होता है तथा शुभ और अशुभ दोनो प्रकारके ग्रह लाभ भावमे हो तो न्याय, अन्याय मिश्रित मार्गसे धन आता है।

लाभ भावपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो लाभ और पापग्रहोकी दृष्टि हो तो हानि होती है। लाभेश १।४।५।७।९।१० भावोमे हो तो धनका बहुत लाभ होता है।

लाभेश शुभग्रहसे सम्बन्ध करता हो तो लाभ होता है।

यद्यपि ससुरालसे धन प्राप्त करनेके दो-तीन योग पहले भी लिखे गये है, किन्तु ग्यारहवें भावके विचारमे इन योगोपर कुछ विचार कर लेना आवश्यक है। निम्न योग अनुभवसिद्ध है—

१—सप्तम और चतुर्थ स्थानका स्वामी एक ही ग्रह हो तथा वह ग्रह इन्ही दोनो भावोमे-से किसी भावमे हो।

२—जायेश कुटुम्ब[1] स्थानमे और कुटुम्बेश जाया[2] स्थानमे हो।

---

१. चौथा स्थान। २ सप्तम स्थान।

३—जायेश[1] और कुटुम्वेश दोनो ग्रह सप्तममे अथवा कुटुम्व स्थानमे एकत्र स्थित हो ।

४—जायेश और कुटुम्वेश दोनो ग्रह १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो या चन्द्रसे ७वें अथवा चतुर्थ स्थानमें एकत्रित हो ।

वहुलाभ योग—लाभेश शुभग्रह होकर दशममे और दशमेश नवम भावमे हो या लाभेश नवम भावमे हो और नवमेश लाभ भावमे हो तो जातकको प्रचुर सम्पत्तिका लाभ होता है ।

द्वादश भावोमे लाभेशका फल

लाभेश लग्नमें हो तो जातक अल्पायु, रोगी, वलवान्, पराक्रमी, दानी, सत्यकार्यरत, धनिक, ऐश्वर्यवान्, लोभी, समयपर कार्य करनेकी सूझसे अनभिज्ञ और हठी, दूसरे भावमें हो तो भोगी, साधारणतया धनी, रोगी, रत्न, सोना और चाँदीके आभूषण धारण करनेवाला और आधि-व्याधिग्रस्त, तीसरे भावमें हो तो वन्धु-वान्धवसे युक्त, लक्ष्मीवान्, सर्वप्रिय और कुलमे ख्याति प्राप्त करनेवाला, चौथे भावमे हो तो दीर्घायु, समयकी गतिको पहचाननेवाला, धर्मरत, धनधान्यका लाभ प्राप्त करनेवाला और ऐश्वर्यवान्, पाँचवें भावमें हो तो पुत्रवान्, गुणवान्, अल्प लाभ प्राप्त करनेवाला, मध्यावस्थामें आर्थिक सकटसे दु खी और पितासे प्रेम करनेवाला, छठे भावमें हो तो रोगी, शत्रुओसे पीडित, पशुओका व्यापार करनेवाला और प्रवासी, सातवें भावमे हो तो तेजस्वी, पराक्रम शाली, सम्पत्तिवान्, दीर्घायु, पत्नीसे प्रेम करनेवाला, सब प्रकारके कौटुम्बिक सुखोको प्राप्त करनेवाला और रति कर्ममे प्रवीण, आठवें भावमे हो तो अल्पायु, रोगी, दु खी, जीविकाहीन, आलसी, निस्तेज और अर्द्धमृतक समान, नौवें भावमे हो तो ज्ञानवान्, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, ख्यातिवान् और श्रद्धालु, दसवें भावमे हो तो माताका भक्त, पुण्यात्मा, पितासे द्वेष करने-

---

१ सप्तम स्थानेश ।

वाला, दीर्घायु, धनिक, उद्योगी, समाज-मान्य, सत्कार्यरत, राष्ट्रीय कार्योंमे प्रमुख भाग लेनेवाला, देशकी उन्नतिमे अपने जीवन और प्राणोका उत्सर्ग करनेवाला, देशमे प्रतिनिधित्व प्राप्त करनेवाला और अमर कीर्त्तिको स्थापित करनेवाला, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, पुत्रवान्, सुकर्मरत, सुशील, हँसमुख, मिलनसार, साधारण धनिक एव वारहवें भावमे हो तो चचल, भोगी, रोगी, वाल्यावस्थामे दु खी, मध्यावस्थामे साधारण दु खी किन्तु अन्तिमावस्थामे आधि-व्याधियोसे पीडित, अभिमानी, अवसर आनेपर दान देनेवाला और सदा चिन्तित रहनेवाला होता है ।

वारहवें भावका विचार

द्वादश भावमे शुभग्रह स्थित हो तो सन्मार्गमे धन व्यय, अशुभग्रह स्थित हो तो असत्कार्योमे धन व्यय एव शुभ और पाप दोनो ही प्रकारके ग्रह हो तो सद्-असद् दोनो ही प्रकारके कार्योमे धन व्यय होता है । रवि, राहु और शुक्र ये तीनो वारहवें भावमे हो तो राजकार्यमे तथा गुरु वारहवें भावमे हो तो टैक्स और व्याज देनेमे धन व्यय होता है । वारहवे भावमे शनि, मगल हो तो भाईके द्वारा धन खर्च और क्षीण चन्द्र एव रवि हो तो राज-दण्डमे धन खर्च होता है ।

यद्यपि जातकके व्यवसायके वारेमे पहले लिखा जा चुका है किन्तु द्वादश भावकी सहायतासे भी व्यवसायका निर्णय करना चाहिए । चर राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो जातक किसी स्वतन्त्र व्यवसायका करनेवाला, स्थिर राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो डॉक्टर, वकील एव स्थायी व्यवसायवाला तथा द्विस्वभाव राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो जातक अध्यापक, प्रोफेसर, मास्टर, किरानी, अढतिया आदिका पेशा करता है ।

राशि और ग्रहोके तत्त्व प्रथम भावके विचारमे लिखे गये है । उनके अनुसार निम्न प्रकार विचार किया जाता है—

(१) बली ग्रह (२) बली ग्रहकी राशि (३) लग्न और (४) दशम राशि इन चारोंमे यदि अग्नि तत्त्वकी विशेषता हो तो बुद्धि और मानसिक क्रियाओंमें चमत्कारपूर्ण कार्य, पृथ्वी तत्त्वकी विशेषता हो तो शारीरिक श्रमसाध्य कार्य एवं जल तत्त्वकी विशेषता हो तो जातकका व्यवसाय बदला करता है।

द्वादश भावोंमे द्वादशेशका फल

व्ययेश लग्नमे हो तो जातक विदेश भ्रमण करनेवाला, मधुरभाषी, धन खर्च करनेवाला, रूपवान्, कुसंगतिमे रहनेवाला, झगडालू, नाना प्रकारके उपद्रवोंको करनेवाला और पुंसत्व शक्तिमे हीन या अल्प पुंसत्व शक्तिवाला, द्वितीय भावमें हो तो कृपण, कठोर, कटुभाषी, रोगी, निर्धन और दुःखी, तीसरे भावमें हो तो मातृहीन या अल्प भाइयोंवाला, प्रवासी, रोगी, अल्पधनी, व्यवसायी, परिश्रमी और वाचाल, चौथे भावमें हो तो रोगी, श्रेष्ठ कार्यरत, पुत्रसे कष्ट प्राप्त करनेवाला, दुःखी, आर्थिक संकटमे परिपूर्ण और जीवनमें प्रायः असफल रहनेवाला, पाँचवें भावमें पापग्रह व्ययेश हो तो पुत्रहीन, पुत्रसुखसे वंचित, दुःखी तथा शुभग्रह व्ययेश हो तो पुत्रसुखसे अन्वित, सत्कार्यरत और अल्पसन्तति, सुखको प्राप्त करनेवाला, छठे भावमें पापग्रह व्ययेश हो तो कृपण, दुष्ट, नीचकार्यरत, अल्पायु तथा शुभग्रह व्ययेश हो तो मध्यमायु, लाभान्वित, साधारणतया सुखी और अन्तिम जीवनमे कष्ट प्राप्त करनेवाला, सातवें भावमें हो तो दुश्चरित्र, चतुर, अविवेकी परस्त्रीरत तथा क्रूरग्रह सप्तमेश हो तो अपनी स्त्रीसे मृत्यु प्राप्त करनेवाला या किसी वेश्याके जालमे फँसकर मृत्युको प्राप्त करनेवाला और व्यसनी, आठवें भावमें हो तो पाखण्डी, धूर्त, धनरहित और नीचकार्यरत, नौवें भावमें हो तो तीर्थयात्रा करनेवाला, चंचल, आलसी, दानी, धनार्जन करने- वाला और सनिहीन, दसवें भावमें हो तो परस्त्रीसे पराङ्मुख, सुन्दर

सन्तानवाला, पवित्र, धनिक, जीवनको सफलतापूर्वक व्यतीत करनेवाला और माताके साथ द्वेष करनेवाला, ग्यारहवें भावमें हो तो दीर्घजीवी, प्रमुख, दानी, सत्यवादी, सुकुमार, प्रसिद्ध, श्रेष्ठकार्यरत, मान्य, सेवावृत्तिके मर्मको जाननेवाला और परिश्रमी एव बारहवें भावमे हो तो ऐश्वर्यवान्, ग्रामीण, कृपण, पशु-सम्पत्तिवाला, ज़मीन्दार या मामूली जागीरका स्वामी और स्वकार्यरत होता है।

द्वादश लग्नोका फल

मेष लग्नमे जन्म लेनेवाला जातक दुर्बल, अभिमानी, अधिक बोलनेवाला, बुद्धिमान्, तेज स्वभाववाला, रजोगुणी, चचल, स्त्रियोसे द्वेष रखनेवाला, धर्मात्मा, कम सन्तानवाला, कुलदीपक, उदारवृत्ति तथा १।३ ६।८।१५।२१।३६।४०।४५।५६।६३ इन वर्षोमे शारीरिक कष्ट, धनहानि और १६।२०।२८।३४।४१।४८।५१ इन वर्षोमें भाग्यवृद्धि, धनलाभ, वाहन सुख आदिको प्राप्त करनेवाला, वृषमे जन्म हो तो जातक गौरवर्ण, स्त्रियोका-सा स्वभाव, मधुरभाषी, शौकीन, उदारवृत्ति, रजोगुणी, ऐश्वर्यवान्, अच्छी सगतिमे बैठनेवाला, पुत्रसे रहित, लम्बे दांत और कुंचित केशवाला, पूर्णायु और ३६ वर्षकी आयुके पश्चात् दु ख भोगनेवाला, मिथुन लग्नमें जन्म हो तो गेहुँआ रग, हास्यरसमें प्रवीण, गायन-वाद्य-रसिक, स्त्रियोकी अभिलाषा करनेवाला, विषयासक्त, गोल चेहरेवाला, शिल्पज्ञ, चतुर, परोपकारी, कवि, गणितज्ञ, तीर्थयात्रा करनेवाला, प्रथम अवस्थामे सुखी, मध्यमे दु खी और अन्तिम अवस्थामे सुख भोगनेवाला, ३२–३५ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला, मध्यमायु और नाना प्रकारके सुखोको प्राप्त करनेवाला, कर्क लग्नमे जन्म हो तो ह्रस्वकाय, कुटिल स्वभाव, स्थूल शरीर, स्त्रियोके वशीभूत रहनेवाला, धनिक, जलाशयसे प्रेम करनेवाला, मित्रद्रोही, शत्रुओसे पीडित, कन्या सन्तति वाला, व्यापारी, सुन्दर नेत्रवाला, अपने स्थानको छोडकर अन्य स्थानमें

वास करनेवाला, १६ या १७ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त होने-वाला और व्यसनी, सिंह लग्नमें जन्म हो तो पराक्रमी, वडे हाथ-पैर-वाला, चौडे हृदयवाला, ताम्रवर्ण, पतली कमरवाला, तेज स्वभावका, क्रोधी, वेदान्त विद्याको जाननेवाला, घोडेकी सवारीसे प्रेम करनेवाला, रजोगुणी, अस्त्र चलानेमे निपुण, उदारवृत्ति, साधु-सेवामे सलग्न, प्रथमावस्थामे सुखी, मध्यमावस्थामें दु खी, अन्तिमावस्थामे पूर्ण सुखी तथा २१ या २८ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला, कन्या लग्नमे जन्म हो तो जनाने स्वभावका, शृगारप्रिय, वडे नेत्रवाला, स्थूल तथा सामान्य शरीरका, अल्प और प्रियभाषी, स्त्रीके वशमें रहनेवाला, भ्रातृद्रोही, चतुर, गणितज्ञ, कन्या सन्तति उत्पन्न करनेवाला, धर्ममे रुचि रखनेवाला, प्रवासी, गम्भीर स्वभाववाला, अपने मनकी वात किसीसे भी नही कहनेवाला, वाल्यावस्थामे सुखी, मध्यावस्थामे सामान्य और अन्त्यावस्थामें दु खी रहनेवाला और २३-२४ से ३६ वर्षकी अवस्था पर्यन्त भाग्योदय-द्वारा धन ऐश्वर्यको वढानेवाला, तुला लग्नमे जन्म हो तो गौरवर्ण, सतोगुणी, परोपकारी, शिथिल गात्र, देवता, तीर्थमे प्रीति करनेवाला, मोटी नासिकावाला, व्यापारी, ज्योतिषी, प्रिय वचन वोलनेवाला, लोभरहित, भ्रमणशील, कुटुम्वसे अलग रहनेवाला, स्त्रियोंका द्रोही, वीर्य-विकारसे युक्त, प्रथमावस्थामे दु खी, मध्यमावस्थामे सुखी, अन्तिमावस्थामें सामान्य, मध्यमायु और ३१ या ३२ वर्षकी अवस्थामें भाग्यवृद्धिको प्राप्त करनेवाला, वृश्चिक लग्नमे जन्म हो तो ह्रस्व-काय, स्थूल शरीर, गोल नेत्र, चौडी छातीवाला, निन्दक, सेवाकर्म करने-वाला, कपटी, पाखण्डी, भ्राताओंसे द्रोह करनेवाला, कटु स्वभाव, झूठ वोलनेवाला, भिक्षावृत्ति, तमोगुणी, पराये मनकी वात जाननेवाला, ज्योतिषी, दयारहित, प्रथमावस्थामे दु खी, मध्यमावस्थामे सुखी, पूर्णा-युप और २० या २८ वर्षकी अवस्थामे भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला, धनु लग्नमें जन्म हो तो सतोगुणी, अच्छे स्वभाववाला, वडे दाँतवाला, धनिक, ऐश्वर्यवान्, विद्वान्, कवि, लेखक, प्रतिभावान्, व्यापारी, यात्रा करनेवाला,

महात्माओंकी सेवा करनेवाला, पिंगलवर्ण, पराक्रमी, अल्प सन्तानवाला, प्रेमके वशमें रहनेवाला, प्रथमावस्थामें सुख भोगनेवाला, मध्यावस्थामें सामान्य, अन्तमें धन-ऐश्वर्यसे परिपूर्ण और २२ या २३ वर्षकी अवस्थामें धनलाभ प्राप्त करनेवाला, मकर लग्नमें जन्म हो तो मनुष्य तमोगुणी, सुन्दर नेत्रवाला, पाखण्डी, आलसी, खर्चीला, भीरु, अपने धर्मसे विमुख रहनेवाला, स्त्रियोंमें आसक्ति रखनेवाला, कवि, निर्लज्ज, प्रथमावस्थामें सामान्य, मध्यमें दुःखी, पूर्णायु और अन्तमें ३२ वर्षकी आयुके पश्चात् सुख भोगनेवाला, कुम्भ लग्नमें जन्म हो तो रजोगुणी, मोटी गरदनवाला, अभिमानी, ईर्ष्यालु, द्वेपयुक्त, गजे सिरवाला, ऊँचे शरीरवाला, पर-स्त्रियोंकी अभिलाषा करनेवाला, प्रथमावस्थामें दुःखी, मध्यमावस्थामें सुखी, अन्तिम अवस्थामें धन, पुत्र, भूमि प्रभृतिके सुखोंको भोगनेवाला, भ्रातृद्रोही और २४ या २५ वर्षकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला एवं मीन लग्नमें जन्म हो तो सतोगुणी, बड़े नेत्रवाला, ठोढीमें गड्ढा, सामान्य शरीरवाला, प्रेमी, स्त्रीके वशीभूत रहनेवाला, विशाल मस्तिष्कवाला, ज्यादा सन्तान पैदा करनेवाला, रोगी, आलसी, विपयासक्त, अकस्मात् हानि उठानेवाला, प्रथमावस्थामें सामान्य, मध्यमें दुःखी और अन्तमें सुख भोगनेवाला तथा २१–२२ वर्षकी आयुमें भाग्यवृद्धि करनेवाला होता है।

होराफल

द्वितीय अध्यायमें होराका साधन किया गया है। अतएव होराकुण्डली बनाकर देखना चाहिए कि होरालग्न सूर्य-राशि हो और सूर्य उसीमें स्थित हो तो जातक रजोगुणी, उच्चपदाभिलापी, गुरु और शुक्र होरालग्नमें सूर्यके साथ हो तो सम्पत्तिवान्, सुखी, मान्य, उच्चपदारूढ, शासक, नेता, शीलवान्, राजमान्य तथा होरेश लग्नमें पापग्रहसे युक्त हो तो नीच प्रकृतिवाला, दुश्शील, सम्पत्तिरहित, कुलके विरुद्ध आचरण करनेवाला और नीच कर्मरत होता है। यदि चन्द्रमाकी राशि होरा लग्नमें

हो और होरेश चन्द्रमा उसमें स्थित हो तो जातक शान्त स्वभाववाला, मातृभक्त, लज्जालु, व्यवसायी, कृपिकर्ममें अभिरुचि करनेवाला, अल्प लाभमें सन्तोष करनेवाला, तथा शुभग्रह गुरु शुक्र आदि भी होरालग्नमें चन्द्रमाके साथ हो तो जातक भक्ति-श्रद्धा-सदाचारयुक्त आचरण करनेवाला, शीलवान्, धनिक, सन्तानवान्, सुखी और चन्द्रमाके साथ पापग्रह हो तो विपरीत आचरणवाला, निर्धन, दु खी तथा नीच कार्योंसे प्रेम करनेवाला होता है।

सप्तमाश चक्रका फल विचार

सप्तमाश लग्नसे केवल सन्तानका विचार करना चाहिए। सप्तमाश लग्नका स्वामी पुरुषग्रह हो तो जातकको पुत्र उत्पन्न होते हैं और सप्तमाश लग्नका स्वामी स्त्रीग्रह हो तो जातकको कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती हैं। सप्तमाश लग्नका स्वामी पापग्रह हो, पापग्रहके साथ हो या पापग्रहकी राशिमें हो तो सन्तान नीच कर्म करनेवाली होती है और सप्तमाश लग्नका स्वामी स्वराशिका शुभग्रहसे युक्त वा दृष्ट हो या शुभग्रहकी राशिमें स्थित हो तो सन्तान शुभाचरण करनेवाली, सुन्दर, सुशील और गुणी होती हैं।

सप्तमाश लग्नका स्वामी सप्तमाश लग्नसे ६ या ८वें स्थानमें पापग्रहसे युक्त या दृष्ट हो तो जातक सन्तानहीन होता है।

नवमाश कुण्डलीके फलका विचार

नवमाश लग्नसे स्त्रीभावका विचार किया जाता है। इससे स्त्रीका आचरण, स्वभाव, चेष्टा प्रभृतिको देखना चाहिए। नवमाश लग्नका स्वामी मगल हो तो स्त्री क्रूर स्वभावकी, कुलटा, लडाकू; सूर्य हो तो पतिव्रता, उग्रस्वभावकी, चन्द्रमा हो तो शीतलस्वभावकी, गौरवर्ण और मिलनसार प्रकृतिकी, बुध हो तो चतुर, चित्रकार, सुन्दर आकृति, शिल्प विद्यामें निपुण, गुरु हो तो पीत वर्ण, ज्ञानवती, शुभाचरणवाली, पतिव्रता, सौम्य स्वभाव, व्रत-तीर्थ करनेवाली; शुक्र हो तो चतुर, शृंगारप्रिय,

विलासी, कामक्रीडामे प्रवीण, गौरवर्ण, व्यभिचारिणी और शनि हो तो, क्रूर स्वभाववाली, कुलके विरुद्ध आचरण करनेवाली, श्यामवर्ण, नीच सगति-मे रत, पतिसे विरोध करनेवाली होती है। नवमाश लग्नका स्वामी राहु, केतुके साथ हो तो दुराचारिणी, कुटिला, दुष्टा, नवमाश लग्नका स्वामी शुभग्रह हो और स्वराशिस्थ केन्द्र त्रिकोणमे हो तो जातकको स्त्री-का पूर्ण सुख मिलता है तथा नवमाश लग्नका स्वामी भाग्येशके साथ २।११ वें भावमें उच्चका होकर स्थित हो तो स्त्रियोसे अनेक प्रकारका लाभ तथा ससुरालके धनका स्वामी होता है। नवमाश लग्नका स्वामी पापग्रहोसे युक्त या दृष्ट ६।८।१२वें भावमे स्थित हो तो जातकको स्त्रीका सुख नही होता है। यह जितने पापग्रहोसे युक्त या दृष्ट हो उतनी ही स्त्रियोका नाश करनेवाला होता है।

द्वादशाश कुण्डलीके फलका विचार

द्वादशाश लग्नपर-से माता-पिताके सुख-दु खका विचार किया जाता है। यदि द्वादशाश लग्नका स्वामी शुभग्रह हो तो जातकके माता-पिताका शुभाचरण और पापग्रह हो तो व्यभिचारयुक्त आचरण होता है। द्वाद-शाश लग्नका स्वामी पुरुषग्रह अपनी राशि, मित्रकी राशि या उच्चकी राशिमे स्थित होकर १।४।५।७।९।१०वें स्थानोमे स्थित हो तो जातकको पिताका पूर्ण सुख और नीच राशि, शत्रुराशि या पाप ग्रहकी राशिमें स्थित हो या ६।८।१२वें भावमे बैठा हो तो पिताका अल्प सुख होता है। द्वादशाश लग्नका स्वामी स्त्रीग्रह सौम्य हो और स्वराशि, मित्रराशि या उच्चकी राशिमे स्थित होकर १।४।५।७।९।१० भावोमे स्थित हो तो जातकको माताका सुख होता है। यही यदि स्त्रीग्रह पापयुक्त या पापदृष्ट होकर ६।८।१२ वें भावमे हो तो माताका सुख नही होता।

चन्द्रकुण्डली फल विचार

चन्द्रकुण्डलीसे जन्मकुण्डलीके समान फलका विचार करना चाहिए।

यदि चन्द्र लग्नेश उच्च राशि, स्वराशि या मित्रराशिमें स्थित होकर १।४। ५।७।९।१०वें भावमे स्थित हो तो जातक चतुर, धनिक, कार्यकुशल, ख्यातिवान्, धन धान्य समन्वित होता है तथा चन्द्र लग्नेश पाप दृष्ट या पापयुत होकर ६।८।१२वें भावमे स्थित हो तो जातकको नाना प्रकारके कष्ट सहन करने पडते हैं। चन्द्र-लग्नेश शुभग्रहोंसे युत होकर जन्म-लग्नेश-से इत्थशाल करता हो तो जातक ऐश्वर्यवान्, पराक्रमी और सहनशील होता है। चन्द्र लग्नसे चौथे मगल, दसवें गुरु और ग्यारहवें शुक्र हो तो जातक राजमान्य, नेता, प्रतिनिधि और धारासभाका मेम्बर होता है। चन्द्र लग्नसे बुध चौथे, शुक्र पाँचवें, गुरु नौवें और मगल दसवें स्थानमे हो तो जातक राजा, मन्त्री, जागीरदार, जमीन्दार, शासक या उच्च पदासीन होनेवाला होता है, चन्द्र लग्नेश चन्द्रलग्नसे नवम स्थानके स्वामीका मित्र होकर चन्द्रलग्नसे दसवें भावमे स्थित हो तो जातक तपस्वी, महात्मा, शासक या पूज्य नेता होता है। चन्द्रलग्नेशका ३।६वें भावमे रहना रोगसूचक है।

विंशोत्तरी दशा फल विचार

दशाके द्वारा प्रत्येक ग्रहको फल-प्राप्तिका समय जाना जाता है। सभी ग्रह अपनी दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा और सूक्ष्म दशाकालमें फल देते हैं। जो ग्रह[1] उच्चराशि, मित्रराशि या अपनी राशिमे रहता है वह अपनी दशामे अच्छा फल और जो नीचराशि, शत्रुराशि और अस्तगत हो वे अपनी दशामे धन-हानि, रोग, अवनति आदि फलोको करते हैं।

रवि दशाफल[2]—सूर्यकी दशामें परदेशगमन, राजासे धन लाभ, व्या-

---

१ ग्रहवीर्यानुसारेण फल ज्ञेय दशासु च।
आद्यद्रेष्काणगे खेटे दशारम्भे फल वदेत्॥
दशामध्ये फल वाच्य मध्यद्रेष्काणगे खगे।
अन्ते फल तृतीयस्थे व्यस्त खेटे च वक्रगे॥—बृहत्पाराशरहोरा दशाफल अ० श्लो० ३-८।

२ देखें बृहत्पाराशरहोरा दशाफल अध्याय श्लोक ७-१५।

पारसे आमदनी, ख्यातिलाभ, धर्ममें अभिरुचि; यदि सूर्य नीच राशिमें पापयुक्त या दृष्ट हो तो ऋणी, व्याधिपीडित, प्रियजनोंके वियोगजन्य कष्टको सहनेवाला, राजासे भय और कलह आदि अशुभ फल होता है। सूर्य यदि मेषराशि हो तो नेत्ररोग, धनहानि, राजासे भय, नाना प्रकारके कष्ट; वृष राशिगत हो तो स्त्री-पुत्रके सुखसे हीन, हृदय और नेत्रका रोगी, मित्रोंसे विरोध, मिथुन राशिमें हो तो अन्न-धन युक्त, शास्त्र-काव्यसे आनन्द, विलास, कर्कमें हो तो राजसम्मान, धनप्राप्ति, माता-पिता बन्धुवर्गमें पृथक्ता, वातजन्यरोग, सिंहमें हो तो राजमान्य, उच्च पदासीन, प्रसन्न, कन्यामें हो तो कन्यारत्नकी प्राप्ति, धर्ममें अभिरुचि, तुलामें हो तो स्त्री-पुत्रकी चिन्ता, परदेशगमन, वृश्चिकमें हो तो प्रतापकी वृद्धि, विष-अग्निसे पीड़ा, धनमें हो तो राजासे प्रतिष्ठा-प्राप्ति, विद्याकी प्राप्ति, मकरमें हो तो स्त्री-पुत्र धन आदिकी चिन्ता, त्रिदोष, रोगी, परकार्योंमें प्रेम, कुम्भमें हो तो पिशुनता, हृदयरोग, अल्पधन, कुटुम्बियोंसे विरोध और मीन राशिमें हो तो रविदशाकालमें वाहन लाभ, प्रतिष्ठाकी वृद्धि, धन-मानकी प्राप्ति, विषमज्वर आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

चन्द्र दशाफल[1]—पूर्ण, उच्चका और शुभग्रह युत चन्द्रमा हो तो उसकी दशामें अनेक प्रकारसे सम्मान, मन्त्री, धारासभाका सदस्य, विद्या, धन आदि प्राप्त करनेवाला होता है। नीच या शत्रुराशिमें रहनेपर चन्द्रमाकी दशामें कलह, क्रूरता, सिरमें दर्द, धननाश आदि फल होता है। चन्द्रमा मेषराशिमें हो तो उसकी दशामें स्त्रीसुख, विदेशसे प्रीति, कलह, सिररोग, वृषमें हो तो धन वाहन लाभ, स्त्रीसे प्रेम, माताकी मृत्यु, पिताको कष्ट, मिथुनमें हो तो देशान्तरगमन, सम्पत्ति-लाभ, कर्कमें हो तो गुप्तरोग, धन-धान्यकी वृद्धि, कलाप्रेम, सिंहमें हो तो बुद्धिमान्, सम्मान्य, धनलाभ, कन्यामें हो तो विदेशगमन, स्त्रीप्राप्ति, काव्यप्रेम, अर्थलाभ, तुलामें

---

१. वही, श्लो० १५-२६

हो तो विरोध, चिन्ता, अपमान, व्यापारसे धनलाभ, मर्म स्थानमे रोग, वृश्चिकमें हो तो चिन्ता, रोग, साधारण धन-लाभ, धर्महानि, धनुमे हो तो सवारीका लाभ, धननाश, मकरमें हो तो सुख, पुत्र-स्त्री-धनकी प्राप्ति, उन्माद या वायु रोगसे कष्ट, कुम्भमे हो तो व्यसन, ऋण, नाभिसे ऊपर तथा नीचे पीडा, दाँत नेत्रमे रोग और मीनमे हो तो चन्द्रमाकी दशामें अर्थागम, धनसग्रह, पुत्रलाभ, शत्रुनाश आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

भौम दशाफल[1]—मगल उच्च, स्वस्थान या मूलत्रिकोणगत हो तो उसकी दशामे यशलाभ, स्त्री-पुत्रका सुख, साहस, धनलाभ आदि फल प्राप्त होते है। मगल मेष राशिमे हो तो उसकी दशामें धनलाभ, ख्याति, अग्निपीडा, वृषमे हो तो रोग, अन्यसे धनलाभ, परोपकाररत, मिथुनमे हो तो विदेशवासी, कुटिल, अधिक खर्च, पित्त-वायुसे कष्ट, कानमें कष्ट, कर्कमे हो तो धनयुक्त, क्लेश, स्त्री-पुत्र आदिसे दूर निवास, सिंहमे हो तो धामनलाभ, शस्त्राग्निपीडा, धनव्यय, कन्यामें हो तो पुत्र, भूमि, धन, अन्नसे परिपूर्ण, तुलामें हो तो स्त्री-धनसे हीन, उत्सव-रहित, झझट अधिक, क्लेश, वृश्चिकमें हो तो अन्न-धनसे परिपूर्ण, अग्नि-शस्त्रसे पीडा, धनुमे हो तो राजमान्य, जय-लाभ, धनागम, मकरमें हो तो अधिकार-प्राप्ति, स्वर्ण-रत्नलाभ, कार्यसिद्धि, कुम्भमें हो तो आचारका अभाव, दरिद्रता, रोग, व्यय अधिक, चिन्ता और मीनमे हो तो ऋण, चिन्ता, विसूचिकारोग, खुजली, पीडा आदि फल प्राप्त होते हैं।

बुध दशाफल[2]—उच्च, स्वराशिगत और बलवान् बुधकी दशामें विद्या, विज्ञान, शिल्पकृषि कर्ममें उन्नति, धनलाभ, स्त्री-पुत्रको सुख, कफ-वात-पित्तकी पीडा होती है। मेष राशिमें बुध हो तो बुधकी दशामे धनहानि, छल-कपटयुक्त व्यवहारके लिए प्रवृत्ति, वृष राशिमे हो तो धन, यशलाभ, स्त्रीपुत्रकी चिन्ता, विषसे कष्ट, मिथुनमे हो तो अल्पलाभ, साधारण कष्ट,

१. विशेषके लिए देखें—बृहत्पाराशरहोरा दशाफलाध्याय श्लोक २७-३३।
२ वही श्लो० ६१-७०।

माताको सुख, कर्कमे हो तो धनार्जन, काव्यसृजन योग्य प्रतिभाकी जागृति, विदेशगमन, सिंहमे हो तो ज्ञान, यश, धननाश, कन्यामे हो तो ग्रन्थोका निर्माण, प्रतिभाका विकास, धन-ऐश्वर्य लाभ, वृश्चिकमे हो तो कामपीडा, अनाचार, अधिक खर्च, धनुमे हो तो मन्त्री, शासनकी प्राप्ति, नेतागिरी, मकरमे हो तो नीचोंसे मित्रता, धनहानि, अल्पलाभ, कुम्भमे हो तो बन्धुओंको कष्ट, दरिद्रता, रोग, दुर्बलता और मीन राशिमे हो तो बुधकी दशामें खाँसी, विप-अग्नि-शस्त्रसे पीडा, अल्पहानि, नाना प्रकारकी झझटें आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

गुरु दशाफल[1]—गुरुकी दशामे ज्ञानलाभ, धन-वस्त्र-वाहन लाभ, कण्ठ रोग, गुल्मरोग, प्लीहा रोग आदि फल प्राप्त होते है। मेप राशिमे गुरु हो तो उसकी दशामे अफसरी, विद्या, स्त्री, धन, पुत्र, सम्मान आदिका लाभ, वृपमें हो तो रोग, विदेशमे निवास, धनहानि, मिथुनमें हो तो विरोध, क्लेश, धननाश, कर्कमे हो तो राज्यसे लाभ, ऐश्वर्यलाभ, ख्यातिलाभ, मित्रता, उच्चपद, सेवावृत्ति, सिंहमे हो तो राजासे मान, पुत्र-स्त्री-बन्धु-लाभ, हर्प, धन-धान्य पूर्ण, कन्यामे हो तो रानीके आश्रयसे धनलाभ, शासनमे योग दान देना, भ्रमण, विवाद, कलह, तुलामे हो तो फोडा-फुन्सी, विवेकका अभाव, अपमान, शत्रुता, वृश्चिकमे हो तो पुत्रलाभ, नीरोगता, धनलाभ, पूर्व ऋणका अदा होना, धनु राशिमे हो तो सेनापति, मन्त्री, सदस्य, उच्च पदासीन, अल्पलाभ, मकरमे हो तो आर्थिक कष्ट, गुह्यस्थानोमें रोग, कुम्भमे हो तो राजासे सम्मान, धारासभाका सदस्य, विद्या-धनलाभ, आर्थिक साधारण सुख और मीनमे हो तो विद्या, धन, स्त्री, पुत्र, प्रसन्नता, सुख आदिको प्राप्त करता है।

शुक्र दशाफल[2]—शुक्रकी दशामे रत्न, वस्त्र आभूपण सम्मान, नवीन कार्यारम्भ, मदनपीडा, वादनसुख आदि फल मिलते हैं। मेप राशिमे

---

१. वही, श्लो० ४४–५१।

२. वही, श्लो० ७८–८६।

शुक्र हो तो मनमे चंचलता, विदेश भ्रमण, उद्वेग, व्यसन प्रेम, धनहानि, वृषमें हो तो विद्यालाभ, धन, कन्या सुखकी प्राप्ति, मिथुनमे हो तो काव्य-प्रेम, प्रसन्नता, धनलाभ, परदेशगमन, व्यवसायमें उन्नति, कर्कमें हो तो उद्यमसे धनलाभ, आभूषणलाभ, स्त्रियोसे विशेष प्रेम, सिंहमें हो तो साधारण आर्थिक कष्ट, स्त्री-द्वारा धनलाभ, पुत्रहानि, पशुओसे लाभ, कन्यामें हो तो आर्थिक कष्ट, दुःखी, परदेशगमन, स्त्री-पुत्रसे विरोध, तुलामे हो तो ख्यातिलाभ, भ्रमण, अपमान, वृश्चिकमे हो तो प्रताप, क्लेश, धनलाभ, सुख, चिन्ता, धनुमें हो तो काव्यप्रेम, प्रतिभाका विकास, राज्य-से सम्मान लाभ, पुत्रोंसे स्नेह, मकरमे हो तो चिन्ता, कष्ट, वात-कफके रोग, कुम्भमे हो तो व्यसन, रोग, कष्ट, धनहानि और मीनमे हो तो राजा-से धनलाभ, व्यापारसे लाभ, कारोबारकी वृद्धि, नेतागिरी आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

शनि दशाफल[1]—बलवान् शनिकी दशामें जातकको धन, जन, सवारी, प्रताप, भ्रमण, कीर्त्ति, रोग आदि फल प्राप्त होते है। मेष राशिमे शनि हो तो शनिकी दशामे स्वतन्त्रता, प्रवास, मर्मस्थानमे रोग, चर्मरोग, बन्धु-बान्धवसे वियोग, वृषमे हो तो निरुद्यम, वायुपीडा, कलह, वमन, दस्तके रोग, राजासे सम्मान, विजयलाभ, मिथुनमें हो तो ऋण, कष्ट, चिन्ता, परतन्त्रता, कर्कमे हो तो नेत्र-कानके रोग, बन्धुवियोग, विपत्ति, दरिद्रता, सिंहमे हो तो रोग, कलह, आर्थिक कष्ट, कन्यामें हो तो मकानका निर्माण करना, भूमिलाभ, सुखी होना, तुलामे हो तो धन-धान्य-का लाभ, विजय-लाभ, विलास, भोगोपभोग वस्तुओंकी प्राप्ति, वृश्चिकमें हो तो भ्रमण, कृपणता, नीच संगति, साधारण आर्थिक कष्ट, धनुमे हो तो राजासे सम्मान, जनतामें ख्याति, आनन्द, प्रसन्नता, यशलाभ, मकरमे हो तो आर्थिक संकट, विश्वासघात, बुरे व्यक्तियोंका साथ, कुम्भमें

---

[1] बृहत्पाराशरहोरा, दशाफलाध्याय श्लो० ५२–६०।

हो तो पुत्र, धन, स्त्रीका लाभ, सुखलाभ, कीर्त्ति, विजय और मीनमें हो तो अधिकार-प्राप्ति, सुख, सम्मान, स्वास्थ्य, उन्नति आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

राहु दशाफल[1]—मेष राशिमे राहु हो तो उसकी दशामे अर्थ-लाभ, साधारण सफलता, घरेलू झगडे, भाईसे विरोध, वृषमें हो तो राज्यसे लाभ, अधिकारप्राप्ति, कष्टसहिष्णुता, सफलता, मिथुनमे हो तो दशाके प्रारम्भमे कष्ट, मध्यमे सुख, कर्कमे हो तो अर्थलाभ, पुत्रलाभ, नवीन कार्य करना, धन सचित करना, सिहमे हो तो प्रेम, ईर्ष्या, रोग, सम्मान, कार्योंमे सफलता, कन्यामे हो तो मध्यवर्गके लोगोसे लाभ, व्यापारसे लाभ, व्यसनोसे हानि, नीच कार्योंसे प्रेम, सन्तोष, तुला राशिका हो तो झझट, अचानक कष्ट, बन्धु-बान्धवोसे क्लेश, धनलाभ, यश और प्रतिष्ठाकी वृद्धि, वृश्चिक राशिका राहु हो तो आर्थिक कष्ट, शत्रुओसे हानि, नीचकार्यरत, धनुका हो तो यशलाभ, धारासभाओमे प्रतिष्ठा, उच्चपद-प्राप्ति, मकरका राहु हो तो सिरमे रोग, वातरोग, आर्थिक सकट, कुम्भका हो तो धनलाभ, व्यापारसे साधारण लाभ, विजय और मीनका हो तो विरोध, झगडा, अल्पलाभ, रोग आदि बातें होती है।

केतु दशाफल[2]—मेषमें केतु हो तो धनलाभ, यश, स्वास्थ्य, वृषमे हो तो कष्ट, हानि, पीडा, चिन्ता, अल्पलाभ, मिथुनमें हो तो कीर्त्ति, बन्धुओंसे विरोध, रोग, पीडा; कर्कमे हो तो सुख, कल्याण, मित्रता, पुत्रलाभ, स्त्री-लाभ, सिहमें हो तो अल्पसुख, धनलाभ, कन्यामें हो तो नीरोग, प्रसिद्ध, सत्कार्योंसे प्रेम, नवीन काम करनेकी रुचि, तुलामे हो तो व्यसनोमें रुचि, कार्यहानि, अल्पलाभ, वृश्चिकमे हो तो धन-सम्मान-पुत्र-स्त्रीलाभ, कफ रोग, बन्धनजन्य कष्ट, धनुमे हो तो सिरमें रोग, नेत्रपीडा, भय, झगडे, मकरमे हो तो हानि, साधारण व्यापारोसे लाभ, नवीन कार्योमे असफलता,

---

१ वही श्लो० ७१–७७।

२ वही, श्लो० ४४–५१।

कुम्भमें हो तो आर्थिक संकट, पीडा, चिन्ता, बन्धु-बान्धवोंका वियोग और मीनमें हो तो साधारण लाभ, अकस्मात् धनप्राप्ति, लोकमें ख्याति, विद्या लाभ, कीर्त्तिलाभ आदि बातें होती है। दशाफलका विचार करते समय ग्रह किस भावका स्वामी है और उसका सम्बन्ध कैसे ग्रहोंसे है, इसका ध्यान रखना आवश्यक है।

भावेशोंके अनुसार विंशोत्तरी दशाका फल

१—लग्नेशकी दशामें शारीरिक सुख और धनागम होता है, परन्तु स्त्रीकष्ट भी देखा जाता है।

२—धनेशकी दशामें धनलाभ, पर शारीरिक कष्ट भी होता है। यदि धनेश पापग्रहसे युत हो तो मृत्यु भी हो जाती है।

३—तृतीयेशकी दशा कष्टकारक, चिन्ताजनक और साधारण आमदनी करानेवाली होती है।

४—चतुर्थेशकी दशामें घर, वाहन, भूमि आदिके लाभके साथ माता, मित्रादि और स्वयं अपनेको शारीरिक सुख होता है। चतुर्थेश बलवान्, शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो इसकी दशामें नया मकान जातक बनवाता है। लाभेश और चतुर्थेश दोनों दशम या चतुर्थमें हों तो इस ग्रहकी दशामें मिल या बड़ा कारोबार जातक करता है। लेकिन इस दशाकालमें पिताको कष्ट रहता है। विद्यालाभ, विश्वविद्यालयोंकी बड़ी डिग्रियाँ इसके कालमें प्राप्त होती हैं। यदि जातकको यह दशा अपने विद्यार्थीकालमें नहीं मिले तो अन्य समयमें इसके कालमें विद्याविषयक उन्नति तथा विद्या-द्वारा यशकी प्राप्ति होती है।

५—पंचमेशकी दशामें विद्याप्राप्ति, धनलाभ, सम्मानवृद्धि, सुबुद्धि, माताकी मृत्यु या माताको पीड़ा होती है। यदि पंचमेश पुरुषग्रह हो तो पुत्र और स्त्रीग्रह हो तो कन्या सन्तानकी प्राप्तिका भी योग रहता है, किन्तु सन्तान योगपर इस विचारमें दृष्टि रखना आवश्यक है।

६—षष्ठेशकी दशामे रोगवृद्धि, शत्रुभय और सन्तानको कष्ट होता है।

७—सप्तमेशकी दशामे शोक, शारीरिक कष्ट, आर्थिक कष्ट और अवनति होती है। सप्तमेश पापग्रह हो तो इसकी दशामे स्त्रीको अधिक कष्ट और शुभग्रह हो तो साधारण कष्ट होता है।

८—अष्टमेशकी दशामे मृत्युभय, स्त्री-मृत्यु एव विवाह आदि कार्य होते है। अष्टमेश पापग्रह हो और द्वितीयमे बैठा हो तो निश्चय मृत्यु होती है।

९—नवमेशकी दशामे तीर्थयात्रा, भाग्योदय, दान, पुण्य, विद्या-द्वारा उन्नति, भाग्यवृद्धि, सम्मान, राज्यसे लाभ और किसी महान् कार्यमे पूर्ण सफलता प्राप्त करनेवाला होता है।

१०—दशमेशकी दशामे राजाश्रयकी प्राप्ति, धनलाभ, सम्मान-वृद्धि और सुखोदय होता है। माताके लिए यह दशा कष्टकारक है।

११—एकादशेशकी दशामे धनलाभ, ख्याति, व्यापारसे प्रचुर लाभ एव पिताकी मृत्यु होती है। यह दशा साधारणत शुभ फलदायक होती है। यदि एकादशेशपर क्रूरग्रहकी दृष्टि हो तो यह रोगोत्पादक भी होती है।

१२—द्वादशेशकी दशामे धनहानि, शारीरिक कष्ट, चिन्ताएँ, व्याधियाँ और कुटुम्बियोको कष्ट होता है।

ग्रहोकी दशाका फल सम्पूर्ण दशाकालमे एक-सा नही होता है, किन्तु प्रथम द्रेष्काणमे ग्रह हो तो दशाके प्रारम्भमें, द्वितीय द्रेष्काणमें हो तो दशाके मध्यमे और तृतीय द्रेष्काणमें ग्रह हो तो दशाके अन्तमें फलकी प्राप्ति होती है। वक्रीग्रह हो तो विपरीत अर्थात् तृतीय द्रेष्काणमें हो तो प्रारम्भमे, द्वितीयमे हो तो मध्यमें और प्रथम द्रेष्काणमे हो तो अन्तमे फल समझना चाहिए।

वक्रीग्रहकी दशाका फल—वक्रीग्रहकी दशामे स्थान, धन और सुख-का नाश होता है, परदेशगमन तथा सम्मानकी हानि होती है।

मार्गीग्रहकी दशाका फल—मार्गीग्रहकी दशामे सम्मान, सुख, धन, यशकी वृद्धि, लाभ, नेतागिरी और उद्योगकी प्राप्ति होती है। यदि मार्गीग्रह ६।८।१२वें भावमे हो तो अभीष्ट सिद्धिमें बाधा आती है।

नीच और शत्रुक्षेत्री ग्रहकी दशाका फल—नीच और शत्रुग्रहकी दशामें परदेशमें निवास, वियोग, शत्रुओंसे हानि, व्यापारसे हानि, दुराग्रह, रोग, विवाद और नाना प्रकारकी विपत्तियाँ आती हैं। यदि ये ग्रह सौम्य ग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो बुरा फल कुछ न्यून रूपमे मिलता है।

अन्तर्दशा फल

१—पापग्रहकी महादशामें पापग्रहकी अन्तर्दशा धनहानि, शत्रुभय और कष्ट देनेवाली होती है।

२—जिस ग्रहकी महादशा हो उससे छठे या आठवें स्थानमें स्थित ग्रहोंकी अन्तर्दशा स्थानच्युत, भयानक रोग, मृत्युतुल्य कष्ट या मृत्यु देने-वाली होती है।

३—पापग्रहकी महादशामे शुभग्रहकी अन्तर्दशा हो तो उस अन्तर्दशा-का पहला आधा भाग कष्टदायक और आखिरी आधा भाग सुखदायक होता है।

४—शुभग्रहकी महादशामे शुभग्रहकी अन्तर्दशा धनागम, सम्मानवृद्धि, सुखोदय और शारीरिक सुख प्रदान करती है।

५—शुभग्रहकी महादशामें पापग्रहकी अन्तर्दशा हो तो अन्तर्दशाका पूर्वार्द्ध सुखदायक और उत्तरार्द्ध कष्टकारक होता है।

६—पापग्रहकी महादशामें अपने शत्रुग्रहसे युक्त पापग्रहकी अन्तर्दशा हो तो विपत्ति आती है।

७—शनिक्षेत्रमे चन्द्रमा हो तो उसकी महादशामे सप्तमेशकी महादशा परम कष्टदायक होती है।

८—शनिमे चन्द्रमा और चन्द्रमामे शनिका दशाकाल आर्थिक रूपसे कष्टकारक होता है।

९—बृहस्पतिमे शनि और शनिमे बृहस्पतिकी दशा खराब होती है।

१०—मगलमे शनि और शनिमे मगलकी दशा रोगकारक होती है।

११—शनिमे सूर्य और सूर्यमें शनिकी दशा गुरुजनोके लिए कष्टदायक तथा अपने लिए चिन्ताकारक होती है।

१२—राहु और केतुकी दशा प्राय अशुभ होती है, किन्तु जब राहु ३।६।११वें भावमे हो तो उसकी दशा अच्छा फल देती है।

सूर्यकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

सूर्यमें सूर्य—सूर्य उच्चका हो और १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो उसकी अन्तर्दशामे धनलाभ, राजसम्मान, विवाह, कार्यसिद्धि, रोग और यश-प्राप्ति होता है। यदि सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अल्पमृत्यु भी हो सकती है।

सूर्यमें चन्द्रमा—लग्न, केन्द्र और त्रिकोणमें हो तो इस दशाकालमे धनवृद्धि, घर, खेत और वाहनकी वृद्धि होती है। चन्द्रमा उच्च अथवा स्वक्षेत्री हो तो स्त्रीसुख, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ और राजासे समागम होता है। क्षीण या पापग्रहसे युक्त हो तो धन-धान्यका नाश, स्त्री-पुरुषोको कष्ट, भृत्यनाश, विरोध और राजविरोध होता है। ६।८।१२वें स्थानमे हो तो जलसे भय, मानसिक चिन्ता, बन्धन, रोग, पीडा, मूत्रकृच्छ्र और स्थान-भ्रंश होता है। महादशाके स्वामीसे १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो तो सन्तोष, स्त्री-पुत्रकी वृद्धि, राज्यसे लाभ, विवाह, धनलाभ और सुख होता है। महादशाके स्वामीसे २।८।१२वे भावमें हो तो धननाश, कष्ट, रोग और झझट होता है।

सूर्यमें मंगल—उच्च और स्वक्षेत्री मगल हो या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशाकालमे भूमिलाभ, धनप्राप्ति, मकानकी प्राप्ति, सेनापति, पराक्रमवृद्धि, शासनसे सम्बन्ध और भाइयोकी वृद्धि होती है। दशेशसे मगल ६।८।१२वें भावमे हो या पापग्रहसे युक्त हो तो धनहानि, चिन्ता, कष्ट, भाइयोमे विरोध, जेल, क्रूरबुद्धि आदि बातें होती है।

सूर्यमे राहु—१।४।५।७।९।१०वें भावमे राहु हो तो इस दशाकालमे धननाश, सर्प काटनेका भय, चोरी, स्त्री-पुत्रोको कष्ट होता है। यदि राहु ३।६।१०।११वें स्थानमें हो तो राजमान, धनलाभ, भाग्यवृद्धि, स्त्री-पुत्रोको कष्ट होता है। दशाके स्वामीसे राहु ६।८।१२वें हो तो बन्धन, स्थान-नाश, कारागृहवास, क्षय, अतिसार आदि रोग, सर्प या घावका भय होता है। यदि राहु द्वितीय और सप्तम स्थानोका स्वामी हो तो अल्पमृत्यु होती है।

सूर्यमे गुरु—गुरु उच्च या स्वराशिका १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो इस दशाकालमे विवाह, अधिकार-प्राप्ति, बड़े पुरुषोके दर्शन, धन-धान्य-पुत्रका लाभ होता है। गुरु नौवें या दसवें भावका स्वामी हो तो सुख मिलता है। यदि दायेश—दशाके स्वामीसे गुरु ६।८।१२वें स्थानमे हो या नीच राशि अथवा पापग्रहोंसे युक्त हो तो राजकोप स्त्री-पुत्रको कष्ट, रोग, धननाश, शरीरनाश और मानसिक चिन्ताएँ रहती है।

सूर्यमे शनि—१।४।५।७।९।१०वें भावमे शनि हो तो इस दशाकालमें शत्रुनाश, कल्याण, विवाह, पुत्रलाभ, धनप्राप्ति होती है। दायेश—दशाके स्वामीसे शनि ६।८।१२वें भावमे नीच या पापग्रहसे युक्त हो तो धननाश, पापरमेरत, वातरोग, कलह, नाना रोग होते है। यदि द्वितीयेश और सप्त-मेश शनि हो तो अल्पमृत्यु होती है।

सूर्यमे बुध—स्वराशि या उच्च राशिका बुध १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो इस दशाकालमें उत्साह बढानेवाली, सुखदायक और धन-

लाभ करनेवाली दशा होती है। यदि शुभ राशिमे हो तो पुत्रलाभ, विवाह, सम्मान आदि मिलते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो पीडा, आर्थिक सकट और राजभय आदि होते हैं। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो ज्वर, अर्श रोग आदि होते हैं।

सूर्यमे केतु—इस दशामे देहपीडा, धननाश, मनमे व्यथा, आपसी झगडे, राजकोप आदि बाते होती है। दायेशसे केतु ६।८।१२वें भावमे हो तो दांतरोग, मूत्रकृच्छ्र, स्थानभ्रंश, शत्रुपीडा, पिताका मरण, परदेश-गमन आदि फल होते हैं। केतु ३।६।१०।११वे भावमे हो तो सुखदायक होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश केतु हो तो अल्पमृत्युका योग करता है।

सूर्यमे शुक्र—उच्च या मित्रके वर्गमे शुक्र हो अथवा १।४।५।७।९।१० स्थानोमें-से किसीमें हो तो इस दशाकालमें सम्पत्तिलाभ, राजलाभ, यशलाभ, और नाना प्रकारके सुख होते हैं। यदि दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमे हो तो राजकोप, चित्तमे क्लेश, स्त्री-पुत्र-धनका नाश होता है। यदि शुक्र लग्नसे ६।८वें भावमें हो तो अल्पमृत्यु होती है।

चन्द्रकी महादशामे सभी ग्रहोको अन्तर्दशाका फल

चन्द्रमें चन्द्र—चन्द्रमा उच्चका या स्वक्षेत्री हो या १।५।९।११वें स्थानमे हो अथवा भाग्येशसे युत हो तो इस दशाकालमे धन-धान्यकी प्राप्ति, यशलाभ, राजसम्मान, कन्यासन्तानका लाभ, विवाह आदि फल मिलते है। पापयुक्त चन्द्रमा हो, नीचका हो, या ६।८वें स्थान-में हो तो धनका नाश, स्थानच्युत, आलस, सन्ताप, राज्यसे विरोध, माताको कष्ट, कारागृहवास और भार्याका नाश होता है। यदि द्वितीयेश और सप्तमेश चन्द्रमा हो तो अल्पायुका भय होता है।

चन्द्रमे मगल—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमें मगल हो तो इस दशा-कालमे सौभाग्य, वृद्धि, राजसे सम्मान, घर-क्षेत्रकी वृद्धि, विजयी होता है।

उच्च और स्वक्षेत्री हो तो कार्यलाभ, सुखप्राप्ति और धनलाभ होता है। यदि ६।८।१२वें स्थानमे पापयुक्त हो अथवा दायेशसे शुभ स्थानमे हो तो घरक्षेत्र आदिको हानि पहुँचाता है, बान्धवोंसे वियोग और नाना प्रकारके कष्ट होते हैं।

चन्द्रमें राहु—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमे राहु हो तो इस दशाकालमे शत्रुपीडा, भय, चोर-सर्प-राजभय, बान्धवोका नाश, मित्रको हानि, अपमान, दुःख, सन्ताप होता है। यदि शुभग्रहकी दृष्टि या ३।६।१०।११वें स्थानमें राहु हो तो कार्यसिद्धि होती है। दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमे हो तो स्थानभ्रंश, दुःख, पुत्रका क्लेश, भय, स्त्रीको कष्ट होता है। दायेशसे केन्द्रस्थानमे हो तो शुभ होता है।

चन्द्रमें गुरु—लग्नमे गुरु १।४।५।७।९।१०मे हो, उच्च या स्वराशिमें हो तो इस दशाकालमें शासनसे सम्मान, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ होता है। यदि ६।८।१२वें भावमें हो या नीच, अस्त अथवा शत्रुक्षेत्री हो तो अशुभ फलकी प्राप्ति, गुरुजन तथा पुत्रका नाश, स्थानच्युति, दुःख और कलहादि होते हैं। दायेशसे १।४।५।७।९।१०।३मे हो तो धैर्य, पराक्रम, विवाह, धनलाभ आदि फल होते हैं। यदि दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो जातक अल्पायु होता है।

चन्द्रमें शनि—१।४।५।७।९।१०।११मे शनि हो, स्वक्षेत्री हो या उच्चका हो, शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशाकालमे पुत्र, मित्र और धनकी प्राप्ति, व्यवसायमे लाभ, घर और खेत आदिकी वृद्धि होती है। यदि ६।८।१२वें स्थानमें हो, नीचका हो अथवा धन स्थानमे हो तो पुण्यतीर्थमे स्नान, कष्ट, शस्त्रपीडा होती है।

चन्द्रमें बुध—१।४।५।७।९।१०।११वे स्थानमें बुध हो या उच्चका हो तो इस दशामे राजासे आदर, विद्यालाभ, ज्ञानवृद्धि धनकी प्राप्ति, सन्तान-प्राप्ति, सन्तोष, व्यवसाय-द्वारा प्रचुर लाभ, विवाह आदि फल

मिलते हैं। यदि दायेशसे बुध २।११वें स्थानमें हो तो निश्चय विवाह, धारासभाके सदस्य, आरोग्य या सुखकी प्राप्ति होती है। यदि बुध दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें नीचका हो तो बाधा, कष्ट, भूमिका नाश, कारागृहवास, स्त्री-पुत्रको कष्ट होता है। यदि बुध द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो ज्वरसे कष्ट होता है।

चन्द्रमें केतु—३।१।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें केतु हो तो इस दशाकालमें धनका लाभ, सुखप्राप्ति, स्त्री-पुत्रसे सुख होता है। यदि दायेशसे केतु केन्द्र, लाभ और त्रिकोणमें हो तो अल्पसुख मिलता है, धनकी प्राप्ति होती है। यदि पापग्रहसे दृष्ट अथवा युत हो या दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो कलह होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो आरोग्यमें हानि होती है।

चन्द्रमें शुक्र—केन्द्र, लाभ, त्रिकोणमें शुक्र हो या उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो तो इस दशाकालमें राजशासनमें अधिकार, ख्याति, मन्त्री या अफसर, स्त्री-पुत्र आदिकी वृद्धि, नवीन घरका निर्माण, सुख, रमणीय स्त्रीका लाभ, आरोग्य आदि फल प्राप्त होते हैं। यदि दायेशसे शुक्र युत हो तो देहमें सुख, अच्छी ख्याति, सुख-सम्पत्ति, घर-खेत आदिकी वृद्धि होती है। यदि नीचका हो, अस्तगत हो, पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो भूमि, पुत्र, मित्र, पत्नी आदिका नाश, राजसे हानि होती है। यदि धनस्थानमें हो, अपने उच्चका हो अथवा स्वक्षेत्री हो तो निधिलाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो, पापयुक्त हो तो परदेशमें रहनेसे दुःख होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो अल्पायुका भय होता है।

चन्द्रमें सूर्य—सूर्य उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशामें राजसम्मान, धनलाभ, घरमें सुख, ग्राम, भूमि आदिका लाभ, सन्तानप्राप्ति होती है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो, पापयुत हो तो सर्प, राजा एवं चोरसे भय, ज्वर रोग, परदेशगमन

और पीडा होती है। सूर्य द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो ज्वरबाधा होती है।

मगलकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

मगलमे मगल—मगल १।४।५।७।९।१० मे हो, लग्नेशसे युत हो तो इसकी दशामें वैभवप्राप्ति, धनलाभ, पुत्रप्राप्ति, सुखप्राप्ति होती है। यदि अपने उच्चका हो अथवा स्वक्षेत्री हो तो घर या खेतकी वृद्धि तथा धनलाभ होता है। यदि ६।८।१२वें स्थानमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो मूत्रकृच्छ्र रोग, घाव, फोडा-फुन्सी, सर्प और चोरसे पीडा, राजासे भय होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो शारीरिक कष्ट होते हैं।

मगलमे राहु—राहु उच्च, मूलत्रिकोणी और शुभग्रहसे दृष्ट या युत हो या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशाकालमे राजासे सम्मान, घर, खेतका लाभ, स्त्री-पुत्रका लाभ, व्यवसायमे सफलता, परदेशगमन आदि फल होते है। यदि पापग्रहसे युक्त ६।८।१२वें स्थानमें राहु हो तो चोर, सर्प, राजासे कष्ट, वात, पित्त और क्षयरोग, जेल आदि फल होते है। यदि धन स्थानमे राहु हो तो धनका नाश होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश राहु हो तो अल्पमृत्युका भय होता है।

मगलमें गुरु—१।४।५।७।९।१०।११।१२ स्थानमें गुरु हो, उच्चका हो तो इस दशाकालमें यशलाभ, देशमे मान्य, धन-धान्यकी वृद्धि, शासनमे अधिकार, स्त्री-पुत्र लाभ होता है। यदि दायेश १।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें हो तो घर, खेत आदिकी वृद्धि, आरोग्यलाभ, यशप्राप्ति, व्यापारमें लाभ, उद्यम करनेसे फल प्राप्ति, स्त्री-पुत्रका ऐश्वर्य, राजासे आदरकी प्राप्ति होती है, ६।८।१२वें स्थानमे नीचका गुरु हो, अस्तगत हो, पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो चोर और सर्पसे पीडा, पित्तविकार, उन्मत्तता, भ्रातृनाश होता है।

मंगलमें शनि—शनि स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोणी, उच्चका या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशामें राजसुख, यशवृद्धि, पुत्र-पौत्रकी वृद्धि होती है। नीचका शत्रु क्षेत्री हो या ६।८।१२वें भावमें हो तो धन-धान्यका नाश, जेल, रोग, चिन्ता होती है। सप्तमेश और द्वितीयेश हो तो मृत्यु अथवा ६।८।१२वें भावमें पापदृष्ट हो तो मृत्यु होती है।

मंगलमें बुध—बुध १।४।५।७।९।१० में हो तो इस दशाकालमें सुन्दर कन्या सन्ततिवाला, धर्ममें रुचि, यशलाभ, न्यायसे प्रेम होता है तथा सुन्दर पदार्थ खानेको मिलते हैं। नीच या अस्तगत अथवा ६।८।१२वें भावमें हो तो हृदयरोग, मानहानि, पैरोंमें बेड़ीका पड़ना, बान्धवोंका नाश, स्त्री-मरण, पुत्रमरण और नाना कष्ट होते हैं। बुध दायेशसे पापयुक्त होकर ६।८।१२वें स्थानमें हो तो मानहानि होती है और यह द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो महाव्याधि होती है।

मंगलमें केतु—केतु १।४।५।७।९।१०।११वे स्थानमें शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशाकालमें धन, भूमि, पुत्रका लाभ, यशकी वृद्धि, सेना-पतिका पद, सम्मान आदि मिलते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें पापयुक्त हो तो व्याधि, भय, अविश्वास, पुत्र-स्त्रीको कष्ट होता है।

मंगलमें शुक्र—शुक्र १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो, उच्च, मूलत्रिकोणी अथवा स्वराशिका हो तो इस दशाकालमें राजलाभ, आभूषणप्राप्ति और सुखप्राप्ति होती है। यदि लग्नेशसे युत हो तो पुत्र-स्त्री आदिकी वृद्धि, ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। यदि शुक्र दायेशसे १।२।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें हो तो लक्ष्मीकी प्राप्ति, सन्तानलाभ, सुखप्राप्ति, गीत, नृत्य आदि-का होना, तीर्थयात्राका होना आदि फल होते हैं। यदि शुक्र कर्मेशसे युक्त हो तो तालाब, धर्मशाला, कुआँ आदि बनवानेका परोपकारी काम करता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो कष्ट, झंझटें, सन्तानचिन्ता, धननाश, मिथ्यापवाद, कलह आदि फल मिलते हैं।

मगलमें सूर्य—सूर्य उच्च, स्वराशि या मूलत्रिकोणी सूर्य १।४।५।७। ९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशाकालमें वाहनलाभ, यशप्राप्ति, पुत्रलाभ, धन-धान्य लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो पीडा, सन्ताप, कष्ट, व्याधि, धननाश, कार्यबाधा आदि बातें होती है।

मगलमें चन्द्र—चन्द्र उच्च, मूलत्रिकोणी, स्वराशि या शुभग्रह युत हो तो इस दशाकालमें राजलाभ, मन्त्रीपद, सम्मान, उत्सवोका होना, विवाह, स्त्री-पुत्रोंको सुख, माता-पितासे सुख, मनोरथसिद्धि आदि फल मिलते हैं। नीच, शत्रु राशि या अस्तगत होकर दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो स्त्री-पुत्रकी हानि, कष्ट, पशु, धान्यका नाश, चोरभय प्रभृति फल होते हैं। द्वितीयेश या सप्तमेश चन्द्रमा हो तो अकालमरण होता है।

राहुकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

राहुमें राहु—कर्क, वृष, वृश्चिक, कन्या और धनराशिका राहु हो तो उसकी दशामें सम्मान, शासनलाभ, व्यापारमे लाभ होता है। राहु ३।६। ११वें भावमें हो, शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो, उच्चका हो तो इस दशामें राज्यशासनमें उच्चपद, उत्साह, कल्याण एव पुत्रलाभ होता है। ६।८।१२वें भावमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो कष्ट, हानि, बन्धुओंका वियोग, झझटें, चिन्ताएं आदि फल होते है। ७वें भावमे हो तो रोग होते है।

राहुमें गुरु—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमें स्वगृही, मूलत्रिकोणी या उच्चका हो तो इस दशाकालमें शत्रुनाश, पूजा, सम्मान, धनलाभ, सवारी, मोटर, पुत्र आदिकी प्राप्ति होती है। नीच, अस्तगत या शत्रुराशिमें होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो धनहीन, कष्ट, विघ्न-बाधाओंका बाहुल्य, स्त्री-पुत्रोंको पीडा आदि फल होते हैं।

राहुमें शनि—शनि १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें उच्च या मूल-त्रिकोणी हो तो उसकी दशामें उत्सव, लाभ, सम्मान, बडे कार्य, धर्मशाला,

तालाबका निर्माण आदि बातें होती हैं। नीच, शत्रुक्षेत्री होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो स्त्री-पुत्रका मरण, लडाई और नाना कष्टोंकी प्राप्ति होती है। द्वितीयेश या सप्तमेश शनि हो तो अकालमरण होता है।

राहुमें बुध—राहु १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें स्वक्षेत्री, उच्चका, बलवान् हो तो इस दशाकालमें कल्याण, व्यापारसे धनप्राप्ति, विद्याप्राप्ति, यशलाभ और विवाहोत्सव आदि होते हैं। ६।८।१२वें स्थानमें शनैश्चरकी राशिसे युत या दृष्ट हो या दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो हानि, कलह, संकट, राजकोप, पुत्रका वियोग होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो अकालमरण होता है।

राहुमें केतु—इस दशाकालमें वातज्वर, भ्रमण और दुःख होता है। यदि शुभग्रहमें केतु युत हो तो धनकी प्राप्ति, सम्मान, भूमिलाभ और सुख होता है। १।४।५।७।९।१०।८।१२वें स्थानमें केतु हो तो उसकी दशा महान् कष्ट देनेवाली होती है।

राहुमें शुक्र—१।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें शुक्र हो तो उसकी दशामें पुत्रोत्सव, राजसम्मान, वैभवप्राप्ति, विवाह आदि उत्सव होते हैं। ६।८।१२वें भावमें शुक्र नीचका, शत्रुक्षेत्री, शनि या मंगलसे युत हो तो रोग, कलह, वियोग, बन्धुहानि, स्त्रीको पीडा, शूलरोग आदि फल होते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें शुक्र हो तो अचानक विपत्ति, झूठे दोष, प्रमेह रोग आदि फल होते हैं। द्वितीयेश और सप्तमेश शुक्र हो तो अकाल-मरण भी इसकी दशामें होता है।

राहुमें सूर्य—सूर्य स्वक्षेत्री, उच्चका ५।९।११वें भावमें हो तो धन-धान्यकी वृद्धि, कीर्त्ति, परदेशगमन, राजाश्रयसे धनप्राप्ति होती है। दायेशसे सूर्य ६।८।१२वें भावमें नीचका हो तो ज्वर, अतिसार, कलह, राजद्वेष, अग्निपीडा आदि फल मिलते हैं।

राहुमें चन्द्र—बलवान् चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो

इस दशाकालमे सुख-समृद्धि होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारके कष्ट, धनहानि, विवाद, मुकद्दमा आदिसे कष्ट होता है।

राहुमे मगल—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमे मगल हो तो उसकी दशामे घर, खेतकी वृद्धि, सन्तानसुख, शारीरिक कष्ट, अकस्मात् किसी प्रकारकी विपत्ति, नौकरीमे परिवर्तन एव उच्च पदकी प्राप्ति होती है। दायेशमे मगल ६।८।१२वें स्थानमे पापयुक्त हो तो स्त्री-पुत्रको हानि, सहोदर भाईको पीडा और अनेक प्रकारकी झझटे आती है।

गुरुकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

गुरुमे गुरु—गुरु उच्च और स्वक्षेत्री होकर केन्द्रगत हो तो इस दशामे वस्त्र, मोटर, आभूषण, नवीन सुन्दर मकान आदिकी प्राप्ति होती है। यदि गुरु भाग्येश और कर्मेशसे युक्त हो तो स्त्री, पुत्र, धन, लाभ होता है। नीच राशिका बृहस्पति हो या ६।८।१२वें भावमे स्थित हो तो दुःख, कलह, हानि, कष्ट और पुत्र-स्त्रीका वियोग होता है। प्राय देखा जाता है कि गुरुमे गुरुका अन्तर अच्छा नही बीतता है।

गुरुमे शनि—शनि उच्च, स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोणी हो या १।४।५।७।९। १०।११वें भावमे स्थित हो तो इस दशामे भूमि, धन, सवारी, पुत्र आदि-का लाभ, पश्चिम दिशामें यात्रा और बडे पुरुषोसे मिलना होता है। नीच, अस्तगत या शत्रुक्षेत्री शनि हो या ६।८।१२वें भावमें हो तो ज्वरबाधा, मानसिक दुःख, स्त्रीको कष्ट, सम्पत्तिकी क्षति होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारसे कष्ट होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो शारीरिक कष्ट या अकालमरण होता है।

गुरुमे बुध—बुध स्वराशि, उच्च या मूलत्रिकोणी हो अथवा १।४।५। ७।९।१०।११वें भावमे बलवान् होकर स्थित हो तो इस दशामे धारा-सभाओका सदस्य, मन्त्री, अफसर, सुख, धनलाभ, पुत्रलाभ होता है। ६।८।१२वें भावमें हो या दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारके

कष्ट, रोग, भार्यामरण आदि फल होते है। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो इसकी दशामे महान् कष्ट या अकालमरण होता है।

गुरुमे केतु—यदि शुभग्रहसे केतु युक्त हो तो इस दशामे सुख प्रदान करता है। दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे पापयुक्त हो तो राजकोप, बन्धन, धननाश, रोग आदि फल होते है। दायेशसे ४।५।९।१०वे स्थानमे हो तो अभीष्ट लाभ, उद्यमसे लाभ, पशुलाभ होता है।

गुरुमें शुक्र—बलवान् शुक्र केन्द्रेशसे युक्त होकर ५।११वे भावमे हो तो इस दशामे सुख, कल्याण, धनलाभ, धर्मशाला, तालाब, कुआँ आदिका निर्माण, पुत्रलाभ, स्त्रीलाभ, नवीन कार्य आदि फल मिलते है। शुक्र दायेशसे या लग्नसे ६।८।१२वें स्थानमे हो तो कष्ट, कलह, बन्धन, चिन्ता आदि फल होते है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो अकालमरण भी होता है।

गुरुमे सूर्य—सूर्य उच्चका स्वक्षेत्री होकर १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो इस दशामे सम्मानप्राप्ति, तत्काल लाभ, सवारीकी प्राप्ति, पुत्रप्राप्ति आदि फल होते है। लग्नेश या दायेशसे सूर्य ६।८।१२वे स्थानमें हो तो निरमे रोग, ज्वरपीडा, पापकर्म, बन्धु वियोग आदि फल मिलते है। सूर्य द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो यह समय महाकष्टकारक होता है।

गुरुमें चन्द्र—बलवान् चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे हो तो इस दशामे सत्कार्य, सम्मान, कीर्त्ति, पुत्र-पौत्रकी वृद्धि होती है। लग्नेश या दायेशसे (दशापति) ६।८।१२वे स्थानमे चन्द्रमा हो तो अपमान, खेद, स्थानच्युति, मातुलवियोग, माताको दुःख आदि फल होते है। द्वितीयेश हो तो महाकष्ट होता है।

गुरुमें भौम—उच्च या स्वगृही मंगल १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो इस दशामे भूमिलाभ, मिलोंका निर्माण और कार्यसिद्धि होती है। दायेशसे केन्द्र स्थानमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो तीर्थयात्रा, विद्वत्तासे

भूमिलाभ, नवीन कार्यों-द्वारा यश लाभ होता है। दायेशसे भौम ६।८।१२वें भावमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो धन-धान्य और घरका नाश होता है।

गुरुमें राहु—उच्च, स्वक्षेत्री या मूलत्रिकोणी राहु ३।६।११वें भावमें हो तो इस दशामें ख्याति, सम्मान, विद्यालाभ, दूरदेशगमन, सम्पत्ति और कल्याणकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें राहु हो तो कष्ट, भय, व्याकुलता, कलह, रोग, दुःस्वप्न, शारीरिक कष्ट, अल्पलाभ आदि फल प्राप्त होते हैं।

शनि महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

शनिमें शनि—स्वराशि, उच्च और मूलत्रिकोणका शनि हो अथवा १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें स्थित हो तो इस दशामें सम्मान, ख्याति, शासन-प्राप्ति, उच्चपदकी प्राप्ति, विदेशीय भाषाओंका ज्ञान, स्त्री-पुत्रकी वृद्धि होती है। नीच या पापयुक्त होकर शनि ६।८।१२वें भावमें हो तो रक्तस्राव, अतिसार, गुल्मरोग होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश शनि हो तो मृत्यु भी इस दशाकालमें सम्भव होती है।

शनिमें बुध—१।४।५।७।९।१०वें स्थानमें बुध हो तो इस दशामें सम्मान, कीर्ति, विद्या, धन, देहसुख आदिकी प्राप्ति होती है। इस दशा-में नवीन व्यापार आरम्भ करनेसे प्रचुर धन लाभ किया जा सकता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें बुध हो तो अल्पसुख, बुद्धिसे कार्यसिद्धि, बड़े लोगोंका समागम, अल्पमृत्यु, भय, शीतज्वर, अतिसार आदि रोग होते हैं।

शनिमें केतु—शुभग्रहसे युत या दृष्ट केतु हो तो इस दशामें स्थानभ्रंश, क्लेश, धनहानि, स्त्री पुत्रका मरण होता है। लग्नेशसे युत या दायेशसे ६।८।१२वें भावमें केतु हो तो सुख मिलता है।

शनिमें शुक्र—उच्चका या स्वक्षेत्री शुक्र १।४।५।७।९।१०।११वें

भावमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशामे आरोग्यलाभ, धनप्राप्ति, कल्याण, आदर, उन्नति, जीवनमे सुखकी प्राप्ति होती है। शत्रुक्षेत्री नीच या अस्तगत शुक्र ६।८।१२वे स्थानमे हो तो स्त्रीमरण, स्थानभ्रंश, पद-परिवर्त्तन, अल्पलाभ होता है। शुक्र दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो ज्वर, पीडा, पायरिया रोग, वृक्षमे पतन, सन्ताप, विरोध और झगडे होते है।

शनिमें सूर्य—उच्चका, स्वराशिका या भाग्येशसे युत १।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमे सूर्य हो तो इस दशामे घरमे दही-दूधकी प्रचुरता, पुत्रकी प्राप्ति, कल्याण, पदवृद्धि, जीवनमे परिवर्त्तन, यशकी प्राप्ति होती है। सूर्य लग्न या दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो हृदयमे रोग, मान-हानि, स्थानभ्रंश, दुख, पश्चात्ताप होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश होने-पर महान् कष्ट होता है।

शनिमे चन्द्रमा—चन्द्रमा गुरुसे दृष्ट हो, अपने उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो, १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे हो तो इस दशामे सौभाग्य वृद्धि, माता-पिताको सुख, कारोबारमे बढती होती है। क्षीण चन्द्रमा हो या पापग्रहसे युत चन्द्रमा हो तो धननाश, माता-पिताका वियोग, सन्तानको कष्ट, धन-का खर्च और रोग होते हैं।

शनिमें भौम—बलवान् भौम १।४।५।७।९।१०।११वें भावमे हो या लग्नेशमे युत हो तो इस दशामे सुख, धनलाभ, राजप्रीति, सम्पत्तिलाभ, नये घरका निर्माण, मिल या नवीन कारखानोका स्थापन आदि फल मिलते है। नीचका मगल हो या अस्तगत हो तो परदेशगमन, धनहानि, कारागृह-का दण्ड आदि फल मिलते है। द्वितीयेश या सप्तमेश होनेमे मगलकी दशा-मे अकालमरण भी हो सकता है।

शनिमें राहु—इस दशामे कलह, चित्तमे क्लेश, पीडा, चिन्ता, द्वेष, धननाश, परदेशगमन, मित्रोसे कलह आदि फल होते है। उच्चक्षेत्री या

स्वगृही राहु लाभस्थानमे हो तो धनलाभ, सम्पत्तिकी प्राप्ति और अन्य प्रकारके समस्त सुख होते है।

शनिमें गुरु—बलवान् गुरु शुभग्रहोमे युत होकर १।४।५।७।९।१०।११ वें भावमे हो तो इस दशामें मनोरथसिद्धि, सम्मानप्राप्ति, पुत्रलाभ, नवीन कार्योंके करनेकी प्रेरणा होती है। ६।८।१२वें स्थानमे नीच अस्त-गत या पापग्रहसे युत होकर स्थित हो तो कुष्टरोग, परदेशगमन, कार्य-हानि, धन-धान्यका नाश होता है। दायेशसे ६।८।१२वे स्थानोमे निर्वल गुरु हो तो भाइयोमे द्वेप, धन-लाभ, पुत्रका नाश और राजदण्ड भोगना पड़ता है।

बुधकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

बुधमें बुध—इस दशामे लाभ, सुख, विद्या, कीर्त्ति, वैभवकी प्राप्ति होती है। नीच या उग्र ग्रहसे युक्त होकर बुध ६।८।१२वे स्थानमे हो तो भय, क्लेश, कलह, रोग, शोक, हानि आदि फल होते है। बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो किसी सम्बन्धीकी मृत्यु इस दशामें होती है।

बुधमें केतु—लग्नेश या दायेशसे केतु युक्त हो तो इस दशामें अल्प-लाभ, शारीरिक सुख, विद्या और यशका लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें पापग्रह युत हो तो जातकको नाना प्रकारका कष्ट सहन करना पड़ता है।

बुधमें शुक्र—इस दशामे धन, सम्पत्तिका लाभ, विद्या-द्वारा ख्याति, धनका सचय, व्यवसायमे लाभ, समृद्धि आदि फल होते है। दायेशसे शुक्र ६।८।१२वें स्थानोंमें हो तो नाना प्रकारकी झझटें, अल्पलाभ, भार्याकष्ट, बन्धुवियोग, मनमें सन्ताप होता है। द्वितीयेश या सप्तमेश शुक्र हो तो मृत्यु भी इसकी दशामे हो सकती है।

बुधमें सूर्य—उच्चका सूर्य हो तो सुख, मगल युत हो तो इस दशामें

भूमिलाभ। लग्नेशसे युत या दृष्ट हो तो धनप्राप्ति, भूमिलाभ होता है। दायेशसे सूर्य ६।८।१२वें स्थानमें मंगल राहुसे युत हो तो चोर, अग्नि या शस्त्रसे पीडा, पित्तजन्य रोग, सन्ताप होते हैं। सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अकालमरण भी इस दशामे होता है।

बुधमें चन्द्रमा—उच्च, स्वराशि और शुभग्रहोंसे युत चन्द्रमा हो तो इस दशामे सुख, कन्यालाभ, धनप्राप्ति, नौकरीमे तरक्की होती है। निर्बल चन्द्रमा दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो धननाश, बुरे कार्य, राजदण्ड, छल कपट-द्वारा धन हरण आदि फल होते हैं।

बुधमें भौम—उच्च, स्वराशि और शुभग्रहोंसे युत होनेपर इस दशामे मकान, भूमि, खेतकी प्राप्ति, पुस्तकोंके निर्माण-द्वारा यश, कवितामे अभिरुचि होती है। मंगल नीचका, अस्तगत या शत्रुक्षेत्री हो तो चोरसे भय, स्थानभ्रंश, पुत्र-मित्रोंसे विरोध होता है। द्वितीयेश या सप्तमेश मंगल हो तो इस दशामें अकालमरण होता है।

बुधमें राहु—राहु ६।८।१२वें स्थानमे हो तो रोग, धननाश, वातज्वर होता है। ३।६।१०।११वे भावमे हो तो सम्मान, राजासे लाभ, अल्प धनलाभ, व्यापारमे वृद्धि और कीर्ति होती है।

बुधमें गुरु—उच्च, स्वराशि या शुभग्रहोंसे युत गुरु १।४।५।७।९।१०वें स्थानमे हो तो इस दशामे प्रतिष्ठा, ग्रन्थ निर्माण, उत्सव, धनलाभ आदि फल मिलते हैं। गुरु दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो हानि, अपमान तथा शनि, मंगलसे युत हो तो कलह, पीडा, माताकी मृत्यु, झगडा, धननाश, शारीरिक कष्ट आदि फल होते हैं।

बुधमें शनि—उच्च, स्वराशि या मूलत्रिकोणका शनि हो तो इस दशामे कल्याणकी वृद्धि, लाभ, राजसम्मान, बडप्पन आदि फल प्राप्त होते हैं। दायेशसे शनि ६।८।१२वें भावमे हो तो बन्धुनाश, दुःखप्राप्ति, कष्ट, परदेशगमन होता है। शनि द्वितीयेश या सप्तमेश होकर द्वितीय या तृतीयमें हो तो इस दशामे मृत्यु होती है।

केतुकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

केतुमें केतु—केतु केन्द्र, त्रिकोण और लाभ भावमें हो तो इस दशामें भूमि, धन-धान्य, चतुष्पद आदिका लाभ, स्त्री-पुत्रसे सुख मिलता है। नीच या अस्तगत हो या ६।८।१२वें स्थानमें हो तो रोग, अपमान, धन-धान्यका नाश, स्त्री-पुत्रको पीडा, मन चचल होता है। द्वितीयेश या सप्तमेशके साथ सम्बन्ध हो तो महाकष्ट होता है।

केतुमें शुक्र—शुक्र उच्च, स्वराशिका हो या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें या दायेशसे युक्त हो तो इस दशामें राजप्रीति, सौभाग्य, धनलाभ होता है। यदि भाग्येश और कर्मेशसे युक्त हो तो राजासे धनलाभ, सम्मान, सुख और उन्नति होती है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो या पापयुक्त होकर इन स्थानोंमें हो तो मानहानि, धनकष्ट, स्त्रीसे झगडा, पुत्रोंको कष्ट और अवनति होती है।

केतुमें सूर्य—सूर्य स्वक्षेत्री, उच्चका हो या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो इस दशामें प्रारम्भमे सर्वसुख, मध्यमे कुछ कष्ट होता है। नीच, अस्तगत या पापग्रहमें युक्त ६।८।१२वें भावमें हो तो राजदण्ड, कष्ट, पीडा, माता-पिताका वियोग, विदेश गमन होता है। सूर्य द्वितीयेश हो तो कष्टकारक होता है।

केतुमें चन्द्रमा—चन्द्रमा उच्चका, स्वराशिका हो तो इस दशामें राज्यसे सुख, धनलाभ, कन्या सन्तानकी प्राप्ति, कल्याण, भूमिलाभ, उद्योगमें सफलता, धनसग्रह, पुत्रसे सुख आदि फल होते हैं। नीचका क्षीण चन्द्रमा ६।८।१२वें भावमें हो तो भय, रोग, चिन्ता और मुकद्दमाके झझटमें फँसना पडता है।

केतुमें भौम—भौम उच्चका, स्वराशिका या १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें हो तो इस दशामें भूमिलाभ, विजय, पुत्रलाभ, व्यापारमें वृद्धि होती है। दायेशसे भौम केन्द्र, त्रिकोण स्थानमें हो तो देशमें सम्मान, कीर्ति,

वडप्पन आदि फल मिलते है। दायेशसे २।६।८।१२वे स्थानमे हो तो परदेशगमन, अवनति, कारोवारमे हानि, मृत्यु, पागल, प्रमेह या अन्य जननेन्द्रिय-सम्बन्धी रोग होते है।

केतुमें राहु—राहु उच्चका, स्वराशि या मित्रक्षेत्री हो तो इस दशामे धन-धान्यका लाभ, सुख, भूमिका लाभ, नौकरीमेतरक्की होती है। ७।८। १२ वें स्थानमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो धनहानि, नौकरीमे गडवडी, प्रमेह, नेत्ररोग होते हैं। राहु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शीतज्वर, कलह, शूलरोग होते है।

केतुमें गुरु—१।४।५।७।९।१०।११वे भावमे गुरु हो तो इस दशामे विद्यालाभ, कीर्त्तिलाभ, सम्मान, रक्तविकार, परदेशगमन, पुत्रप्राप्ति, स्थानभ्रंश, शान्तिलाभ होता है। गुरु, नीच, अस्तगत होकर दायेशसे ६।८। १२वें भावमें हो तो धन-धान्यका नाश, आचारकी शिथिलता, स्त्रीवियोग और अनेक प्रकारके कष्ट होते है।

केतुमे शनि—८।१२वें भावमे शनि हो तो इस दशामे कष्ट, चित्तमे सन्ताप, धननाश और भय होना है। उच्च या मूलत्रिकोणी शनि ३।६।११वे भावमे स्थित हो तो जातकको साधारणत सुख, मनोरथसिद्धि, सम्मान-प्राप्ति होती है। शनि दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो इस दशामें मृत्यु, भयकर रोग, धनहानि होती है।

केतुमे वुध—१।४।५।७।९।१०वें भावमे वलवान् वुध हो तो इस दशामे ऐश्वर्यप्राप्ति, चतुराई, यशलाभ और सत्सगतिकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ६।८।१२वे भाव नीच या अस्तगत हो तो खर्च अधिक, वन्धन, द्वेष, झगडा होता है तथा अपना घर छोडकर अन्यत्र निवास करना पडता है।

शुक्रकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल

शुक्रमें शुक्र—१।४।५।७।९।१०वें भावमें वली शुक्र वैठा हो तो इस

दशामे धनप्राप्ति, श्रेष्ठ कार्योंमें रत, पुत्रकी प्राप्ति, कल्याण, सम्मान, अकस्मात् धनप्राप्ति, नये घरका निर्माण आदि फल होते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमे नीच या अस्तगत राहु हो तो कष्ट, मृत्यु, रोग, राजासे भय और आर्थिक कष्ट आदि फल होते है। शुक्र स्वराशि या उच्चका होकर १।४।५वें भावमे हो तो जातक अनेक नवीन ग्रन्थोका निर्माण इसकी दशामे करता है।

शुक्रमे सूर्य—इस दशामे कलह, सन्ताप, दारिद्रय आदि होते है। यदि सूर्य उच्च या स्वराशिका हो अथवा दायेशसे १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो धनलाभ, सम्मान, शासनकी प्राप्ति, माता-पितासे सुख, भाईसे लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो पीडा, चिन्ता, कष्ट, रोग आदि होते है।

शुक्रमे चन्द्रमा—चन्द्रमा उच्चका, स्वराशिका या मित्रवर्गका हो तो जातकको उस दशामे स्त्रीको सुख, धनलाभ, पुत्रीकी प्राप्ति, उन्नति, उच्च-पदका लाभ आदि फल प्राप्त होते है। यदि चन्द्रमा दायेशसे ६।८।१२वें भावमे हो तो नाना प्रकारके कष्ट भोगने पडते है।

शुक्रमें भौम—१।४।५।७।९।१०।११वे भावमे बलवान् भौम स्थित हो तो इस दशामे मनोरथसिद्धि, धनलाभ, स्थानभ्रंश, कलह आदि फल प्राप्त होते हैं। यदि दायेशसे ६।८।१२वें भावमे भौम हो तो जातकको रोग, कष्ट, धननाश, खेतकी हानि और मकानकी हानि भी इस दशामे सहनी पडती है।

शुक्रमे राहु—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमें राहु बलवान् हो तो इस दशामे कार्यसिद्धि, व्यापारमे लाभ, सुख, धन-ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ७।८।१२वें भावमें हो तो नाना प्रकारके कष्ट होते है।

शुक्रमे गुरु—बलवान् गुरु १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो इस दशामे पुत्रलाभ, कृषिमे धनप्राप्ति, यशप्राप्ति, माता-पिताका सुख और इष्ट बन्धुओंका समागम होता है। ६।८।१२वें भावमें हो तो कष्ट, चोरभय,

पीडा एवं हानि होती है।

शुक्रमें शनि—इस दशामें क्लेश, आलस्य, व्यापारमें हानि, अधिक व्यय होता है। लग्नेश या दायेशसे शनि ६।८।१२वें स्थानमें हो तो स्त्रीको पीडा, उद्योगमें हानि होती है। द्वितीयेश या सप्तमेश शनि हो तो बीमारी या अकाल मृत्यु होती है।

शुक्रमें बुध—बलवान् बुध १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो, लग्नेश, चतुर्थेश या पंचमेशसे युक्त हो तो इस दशामें साहित्यिक कार्यों-द्वारा धन, कीर्त्ति लाभ, सन्मार्गसे धनागम, बड़े कार्योंमें अधिक सफलता मिलती है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें भावमें बुध हो तो अपकीर्त्ति, अल्पलाभ, कुटुम्बियोंमें झगड़ा आदि फल प्राप्त होते हैं।

शुक्रमें केतु—इस दशामें कलह, बन्धुनाश, शत्रुपीड़ा, भय, धननाश होता है। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें पापग्रहसे युक्त केतु हो तो सिरमें रोग, घाव, फोड़े-फुन्सी और बन्धुवियोग आदि फल प्राप्त होते हैं। उच्चका केतु ३।६।११वे भावमें हो तो धनागम, सम्मान और सुखकी प्राप्ति होती है।

स्त्रीजातक

यद्यपि पहले जितना फल पुरुष जातकके लिए बताया गया है, उसीको स्त्रीजातकके सम्बन्धमें समझ लेना चाहिए। किन्तु जो योग पुरुषकी कुण्डलीमें स्त्रीके सूचक थे, वे स्त्रीकी कुण्डलीमें पुरुष—पतिकी उन्नति-अवनति, स्वभाव, गुणके सूचक है।

स्त्रियोंकी कुण्डलीमें लग्न या चन्द्रमासे उनकी शारीरिक स्थिति, पंचमसे सन्तान, सप्तमसे सौभाग्य और अष्टमसे पतिकी मृत्युके सम्बन्धमें विचार करना चाहिए।

लग्न और चन्द्रमा १।३।५।७।९।११वी राशिमें स्थित हो तो पुरुषकी आकृतिवाली, परपुरुषरत, दुराचारिणी और लग्न तथा चन्द्रमा २।४।६।८। १०।१२वी राशिमें हो तो सुन्दरी, शीलवती, पतिव्रता स्त्री होती है। यदि

लग्न और चन्द्रमा १।३।५।७।९।११वीं राशिमें हो तथा शुभग्रहकी दृष्टि उनपर हो तो स्त्री मिश्रित स्वभावकी पापग्रह दृष्ट या युत हों तो नारी दुष्ट स्वभावकी, व्यभिचारिणी, समराशियोंमें लग्न, चन्द्रमा हों और उनपर क्रूर ग्रहोंकी दृष्टि हो तो स्त्री मध्यम स्वभावकी होती है। नारीकी कुण्डली-में उसके स्वभावका निर्णय करनेके लिए अशुभ, शुभग्रहोंकी दृष्टिका मिलान कर लेना आवश्यक है।

स्त्रीकी कुण्डलीमें २।४।३।८।१०।१२ राशियोंमें मंगल, बुध, गुरु और शुक्र हों तो वह नारी विदुषी, साध्वी, विख्यात और गुणवती होती है।

सप्तम भावमें शनि पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो स्त्री आजन्म अविवाहित रहती है। सप्तमेश पापयुत या दृष्ट हो तथा सप्तममें पापग्रह हो तो यह योग विशेष बलवान् होता है। यदि सप्तमेश शनिके साथ हो तो बड़ी आयुमें विवाह करनेवाली होती है।

वैधव्य योग

१—सप्तम भावमें मंगल हो तथा सप्तम भावपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो बालविधवा योग होता है।

२—लग्न या चन्द्रमासे सप्तम या अष्टम भावमें तीन-चार पापग्रह हों तो स्त्री विधवा होती है।

३—मंगलकी राशिमें स्थित राहु पापग्रहसे युत होकर ८ या १२वें भावमें हो तो विधवा होती है।

४—लग्न और सप्तम भावमें पापग्रह हों तो विवाहके सात-आठ वर्ष बाद विधवा होती है। चन्द्रमासे ७वें ८वें और १२वें भावमें शनि, मंगल दोनों हों तथा वे पापग्रहोंसे दृष्ट हों तो स्त्री विवाहके बाद जल्दी ही विधवा होती है।

५—क्षीणचन्द्रमा, नीच या अस्तंगत राशि, चन्द्रमा छठे या आठवें भावमें हो तो जल्दी विधवा होनेका योग होता है।

६—षष्ठेश और अष्टमेश ६।१२वें भावमें पापग्रहयुत या दृष्ट हो तो वैधव्य योग होता है।

७—अष्टमेश सप्तम भावमे और सप्तमेश अष्टम भावमें हो तथा दोनो या एक स्थान पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो वैधव्य योग होता है।

८—चन्द्रमासे सातवें भावमें मंगल, शनि, राहु और सूर्य इन चारोमें-से कोई दो ग्रह हो तो स्त्री विधवा होती है।

सप्तम स्थानमे प्रत्येक ग्रहका फल

सूर्य—सप्तम स्थानमे सूर्य हो तो नारी दुष्ट स्वभाव, पति-प्रेमसे वंचित और कर्कशा होती है।

चन्द्रमा—सप्तममें चन्द्रमा हो तो कोमल स्वभावकी, लज्जाशील तथा उच्चका चन्द्रमा हो तो वस्त्र, आभूषणवाली, धनिक और सुन्दरी होती है।

मंगल—सप्तममें मंगल हो तो नारी सौभाग्यहीन, कुकर्मरत तथा कर्क या सिंह राशिमें शनैश्चरके साथ मंगल हो तो व्यभिचारिणी, वेश्या, धनी और बुरे स्वभावकी होती है।

बुध—सप्तममे बुध हो तो नारी आभूषणवाली, विदुषी, सौभाग्य-शालिनी और पतिकी प्यारी होती है। उच्च राशिका बुध हो तो लेखिका, सुन्दर पतिवाली, धनी और नाना प्रकारके ऐश्वर्यको भोगनेवाली होती है।

गुरु—सप्तम स्थानमें गुरु हो तो नारी पतिव्रता, धनी, गुणवती और सुखी होती है। चन्द्रमा कर्क राशिमें और गुरु सप्तममे हो तो नारी साक्षात् रति स्वरूपा होती है। उसके समान सुन्दरी कम ही नारियाँ लोकमे मिल सकेगी।

शुक्र—सप्तममे शुक्र हो तो नारीका पति श्रेष्ठ, गुणवान्, धनी, वीर, कामकलामें प्रवीण होता है तथा वह नारी स्वयं रसिका और सुन्दर वस्त्रा-भूषणोवाली होती है।

शनि—सप्तममे शनि हो तो उस नारीका पति रोगी, दरिद्र, व्यसनी, निर्बल होता है। यदि उच्चका शनि हो तो पति धनिक, गुणवान्, शील-

वान् और कामकलाका विज्ञ मिलता है। शनिपर राहु या मगलकी दृष्टि हो तो विधवा होती हैं।

राहु—सप्तम स्थानमे राहु हो तो नारी अपने कुलको दोप लगानेवाली, दु खी, पतिसुखसे वचित तथा राहु उच्चका हो तो सुन्दर और स्वस्थ पति मिलता है।

अल्पापत्या या अनपत्या योग

१—चन्द्रमा वृप, कन्या, सिंह और वृश्चिक इन राशियोमें-से किसी राशिमे स्थित हो तो अल्पसन्तानवाली नारी होती है।

२—पचम भावमे धनु या मीन राशि हो, गुरु पचम भावमे स्थित हो या पचम भावपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो सन्तान नही होती।

३—सप्तम भावमे पापग्रहकी राशि हो अथवा सप्तम भाव पापग्रहसे दृष्ट हो तो नारीको सन्तान नही होती अथवा कम सन्तान होती है। मगल पचम भावमे हो और राहु सप्तममे हो तो सन्तानका अभाव होता है। पचमेशके नवमाशमे शनि या गुरु स्थित हो तो भी सन्तान नही होती है।

४—सप्तम स्थानमे सूर्य या राहु हो अथवा अष्टम स्थानमे शुक्र या गुरु हो तो सन्तान जीवित नही रहती।

५—सप्तम स्थानमे चन्द्रमा या वुध हो तो कन्याओको जन्म देनेवाली नारी होती है। यदि नारीकी कुण्डलीमे पचम स्थानमे गुरु या शुक्र हो तो बहुत पुत्रोको प्रजनन करती है।

६—पचम भावमे सूर्य हो तो एक पुत्र, मगल हो तो तीन पुत्र, गुरु हो तो पाँच पुत्र होते है। पचममे चन्द्रमाके रहनेसे दो कन्याएँ, वुधके रहनेसे चार और शुक्रके रहनेसे सात कन्याएँ होती हैं।

७—नवम स्थानमे शुक्र हो तो छह कन्याएँ, सप्तममे राहु हो तो सन्तानाभाव या दो कन्याएँ होती है।

८—जिन नारियोकी जन्मराशि वृष, सिंह, कन्या और वृश्चिक हो तो उनके पुत्र कम होते है, किन्तु इन्ही राशियोमे शुभग्रह स्थित हो तो सन्तान सुन्दर उत्पन्न होती है।

९—पचम स्थानमे तीन पापग्रह हो या पचमपर तीन पापग्रहोकी दृष्टि हो और पंचमेश शत्रुराशिमे हो तो नारी बाँझ होती है।

१०—अष्टम स्थानमे चन्द्रमा और बुध हो तो काकवन्ध्या योग होता है। यदि अष्टममे बुध, गुरु और शुक्र हो तो गर्भनाश होता है या सन्तान होकर मर जाती है।

११—सप्तम स्थानमे मंगल हो और उसपर शनिकी दृष्टि हो, अथवा शनि, मगल दोनो ही सप्तम स्थानमे हो तो गर्भपात होता है या बहुत ही कम सन्तान उत्पन्न होती है।

प्रवासी पतियोग—जन्मलग्न चर राशिमे हो तो नारीका पति प्रवासी होता है। चर राशियोमे लग्नेश और तृतीयेश हो तो भी पति प्रवासी होता है।

पतिके गुण-दोष द्योतक योग

१—सप्तम भावमे २।७ राशि हो तथा शुक्रका नवमाश हो तो पति भाग्यवान् होता है।

२—सप्तममें सूर्यकी राशि या सूर्यका नवमाश हो तो मन्द रति करनेवाला, विद्वान्, लेखक, विचारक अफसर पति होता है।

३—सप्तम भावमे चन्द्रमा हो या चन्द्रमाका नवमाश हो तो कामी, कोमल स्वभावका, दयालु, विद्वान्, रसिक, धनी, व्यापारी पति होता है।

४—सप्तममे मगलकी राशि या मगलका नवमाश हो तो क्रोधी, जमीनदार, कृषक, धनी, हिंसक, व्यसनी और नीच प्रकृतिका व्यक्ति पति होता है।

५—सप्तम भावमें बुधकी राशि या बुधका नवमाश हो तो विद्वान्,

शोधक, इतिहासज्ञ, कवि, लेखक-सम्पादक, मजिस्ट्रेट, धनी, रतिज्ञ, कामी, मायावी और चतुर पति होता है।

६—सप्तम भावमें गुरुकी राशि या गुरुका नवमांश हो तो गुणवान्, विशेषज्ञ, त्यागी, पत्नीभक्त, सेवापरायण, मन्त्री, न्यायाधीश, लोभी, चिड़चिड़ा, धर्मात्मा और प्राचीन परम्पराका पोषक पति होता है।

७—सप्तममें शनिकी राशि या शनिका नवमांश हो तो मूर्ख, व्यसनी क्रोधी, आलसी, साधारण धनी और चिड़चिड़े स्वभावका पति होता है।

०

चतुर्थ अध्याय

ताजिक (वर्षफल-निर्माण-विधि)

वर्षपत्र बनानेकी प्रक्रिया ताजिक शास्त्रमे बतलायी गयी है। इस शास्त्रका प्रचार भारतमे यवनोके सम्पर्कसे हुआ है। प्राचीन भारतवर्षमें वर्षपत्र जातक ग्रन्थोंके आधारपर विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी आदि दशाओंके समय-विभागानुसार बनाया जाता था। जातक अगके विकास-क्रमपर ध्यान देनेसे ज्ञात होगा कि पहले-पहल जो ग्रह जन्मकुण्डलीके जिस भावस्थानमे पड जाता था उसीके शुभाशुभ फलके अनुसार उस भावका फल माना जाता था। अन्य ग्रहोके सम्बन्धका विचार करना आदिकालकी अन्तिम शताब्दियो तक आवश्यक नही था, परन्तु पूर्वमध्यकालमे इस सिद्धान्त-में विकास हुआ और ग्रहोकी शत्रुता, मित्रता, सबलत्व, निर्बलत्व, स्वामित्व एव दृष्टिकी अपेक्षासे फलाफलका विचार किया जाने लगा। विकसित होकर आगे यही प्रक्रिया दशाके रूपको प्राप्त हुई। इसमे १२० वर्ष या १०८ वर्षकी परमायु मानकर नवग्रहोका विभाजन किया गया है। तात्पर्य यह है कि मनुष्यके जीवन कालमे जन्मनक्षत्रके अनुसार जिस ग्रहकी दशा होती है, उसीकी अपेक्षासे सुख-दु ख आदि फल मिलते हैं। यद्यपि दशा-धिपतिके फलमें मित्र, शत्रु और समग्रहके घरमे रहनेके कारण फलमे न्यूनाधिकता हो जाती है, पर दशाधिपति निश्चित समयकी मर्यादा पर्यन्त वही रहता है।

यवनोको उपर्युक्त जातक शास्त्रकी प्रक्रिया उपयुक्त न जँची और उन्होने एक नयी प्रणाली निकाली, जिसमें एक-एक वर्षका पृथक्-पृथक् फल निकाला गया और प्रत्येक वर्षमे नव ग्रहोको फल देनेका अधिकार देते हुए भी एक प्रधान ग्रहको वर्षेश बतलाया। तत्कालीन भारतीय

ज्योतिर्विदोने इस नयी प्रणालीका स्वागत किया और इसे अपने ढाँचेमे ढालकर वर्पपत्र-विपयक अनेक ग्रन्थोकी रचना भारतीय ज्योतिपकी भित्तिपर की। इन आचार्योंने वर्पप्रवेश समयकी कुण्डलीमे वारह भावोमे स्थित नव ग्रहोके फलका विवेचन जातक शास्त्रके अनुसार किया तथा ग्रहोके जन्मपत्री-विपयक गणितका उपयोग भी कुछ हेर-फेरके साथ वतलाया तथा निम्न पाँच ग्रहोमे से किसी एक वली ग्रहको वर्पका स्वामी निर्धारित करनेकी प्रक्रिया घोपित की—(१) जन्मकुण्डलीकी लग्न-राशिका स्वामी (२) वर्पप्रवेश कालकी लग्न-राशिका स्वामी, (३) वर्पका मुन्थेश, (४) त्रिराशिप एव (५) वर्पप्रवेश दिनमे हो तो वर्ष-कुण्डलीकी सूर्याविष्ठित राशिका स्वामी और रातमें वर्पप्रवेश हो तो वर्प-कुण्डलीकी चन्द्राविष्ठित राशिका स्वामी।

वर्प-कुण्डली वनानेके लिए सर्वप्रथम वर्पेष्टकालका साधन करना चाहिए। ज्योतिप ग्रन्थोमें वताया है कि अभीष्ट सवत्मे-से जन्म सवत्को घटानेसे गतवर्ष आते है। गतवर्पकी सख्या जितनी हो उसमे उसका चौथाई भाग एक स्थानमे जोड दे और दूसरी जगह गतवर्प सख्याको २१ से गुणा करे, गुणनफलमे ४० का भाग देनेमे जो घट्यात्मक लव्धि आवे उसमे जन्म समयके वार आदि इष्टकालको जोडकर ७ का भाग देनेपर शेप तुल्य वार आदि वर्पेष्ट काल होता है।

उदाहरण—जन्म स० १९६९ मे कार्त्तिक मास, शुक्ल पक्ष, १२ तिथि, गुरुवारको इष्टकाल १० घटी २२ पलपर हुआ है। इस दिन सूर्य-स्पष्ट ७।५।४१।४१ है। इस जन्मपत्रीवालेका वर्पपत्र वनाना है अत —

२००३ वर्तमान सवत्मे-से

१९६९ जन्म सवत्को घटाया

३४ गतवर्प हुए, इनका चौथाई भाग =

$$\overset{३०}{३४ - ४} = ८\frac{२}{४} = ८\frac{१}{२} \times \frac{६०}{१} = ८।३०$$ गत वर्पका चतुर्थांश

३४ गतवर्ष + ८।३० गतवर्षका चतुर्थांश = ४२।३०

दूसरे स्थानमे—३४ × २१ = ७१४ − ४० = १७।५१

४२।३० और १७।५१ को जोडा तो =

४२।४७।५१

५।१०।२२ जन्म समयके वारादि

४७।५८।३ − ७ = ६ लब्धि, ५।५८।३ शेप। यहां लब्धिको छोड शेप मात्रको वर्षप्रवेशकालीन वारादि इष्टकाल समझना चाहिए, अर्थात् वृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर वर्षप्रवेश हुआ माना जायेगा।

सारिणी-द्वारा वर्षप्रवेशकालीन वारादि इष्टकाल निकालनेकी विधि आगेवाली वर्ष-सारिणीमें-से गतवर्षके नीचे लिखे गये वारादिको लेकर उसमे जन्मसमयके वारादिको जोड देना चाहिए। यदि वार स्थानमे ७ से अधिक आवे तो उसमे ७का भाग देकर शेपको वार स्थानमे ग्रहण करना चाहिए।

उदाहरण—गतवर्ष सख्या ३४ है, इसके नीचे ०।४७।५१।० लिखा है, इसमे जन्म समयकी वारादि सख्या ५।१०।१२ को जोड दिया तो—

०।४७।५१।०

५।१०।१२।०

५।५८। ३ अर्थात् वृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर वर्षप्रवेश हुआ माना जायेगा।

अन्य उदाहरण—२००३ वर्तमान सवत्मे-से

१९७२ जन्म सवत्को घटाया

३१ गतवर्ष सख्या हुई, इसके नीचे वर्षप्रवेश सारिणीमे ४।१।३६।३० लिखा है, इसमें जन्म समयको वारादि सख्याको जोड दिया तो—

४। १ ।३६।३० सारिणीके वारादि
५।५२।४१।५३ जन्मके वारादि

९।५४।१८।२३ यहाँ वार स्थानमें ७ से अधिक होनेके कारण ७ का भाग दिया तो शेष २।५४।१८।१३ वर्षप्रवेशकालीन वारादि इष्ट हुआ, अर्थात् सोमवारको ५४ घटी १८ पल २३ विपलपर वर्षप्रवेश माना जायेगा।

वर्षप्रवेशसारिणी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	५	६	०	१	३	४	५	६	१	२	३	४	६
१५	३१	४६	२	१७	३३	४८	४	१९	३५	५०	६	२१	३७	५२	८
३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२
०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२	४	५
२३	३९	५४	१०	२६	४१	५७	१२	२८	४३	५९	१४	३०	४५	१	१६
५५	२७	५८	३०	१	३३	४	३६	७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८
६	०	२	३	४	५	०	१	२	३	५	६	०	१	३	४
३२	४७	३	१८	३४	४९	५	२१	३६	५२	७	२३	३८	५४	९	२२
१९	५१	२२	५४	२४	५७	२८	०	३१	३	३४	६	३७	९	४०	१५
०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४
५	६	१	२	३	४	६	०	०	३	४	५	६	१	२	३
४०	५६	११	२७	४२	५८	१३	२९	४४	०	१५	३१	४७	२	१८	३३
४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	३०	१	३३	४	३६
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०
४	६	०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२
४९	४	२०	३५	५१	६	२२	३७	५३	८	२४	३९	५५	१०	२६	४२
७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८	१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६
३	५	६	०	१	३	४	५	०	१	२	३	५	६	०	१
५७	१३	२८	४४	५९	१५	३०	४६	१	१७	३२	४८	३	१९	३४	५०
३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

वर्पप्रवेशकी तिथिका साधन

गतवर्पकी सख्याको ११ से गुणा करके दो स्थानोमे रखे। प्रथम स्थानकी राशिमे १७० का भाग देनेसे जो लब्धि आवे उसे द्वितीय स्थानकी राशिमे जोड दें। इस योगफलमे जन्मकालिक तिथिको शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे गिननेपर जो सख्या हो उसे भी जोडकर ३० का भाग दें। जो शेप बचे, शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे गिननेपर उस सख्यक तिथिमे वर्पप्रवेश जानना चाहिए। पहले निकाले गये वारमे यह तिथि प्राय मिल जाती है, लेकिन कभी-कभी एक तिथिका अन्तर भी पड जाता है। जब-जब अन्तर आवे उस समय वारको ही प्रधान मानकर उस वारकी तिथिको ग्रहण करना चाहिए।

उदाहरण—गतवर्प सख्या ३४ है। ३४ × ११ = ३७४

३७४ – १७० = २ लब्धि ३७४ + २ = ३७६, इसमे जन्म तिथिकी सख्या अभीष्ट उदाहरणके अनुसार शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे गिनकर १२ जोड दी।

और शेप ३४

अत ३७६ + १२ = ३८८ ÷ ३० = १२ लब्धि, शेप २८। शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे २८ सख्या तक तिथि गणना की तो यह सख्या—२८वी सख्या कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको आयी। अत वर्पप्रवेश प्रस्तुत उदाहरणका मार्गशीर्ष वदी १३ बृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर माना जायेगा।

वर्पप्रवेशके तिथि, नक्षत्र, वार आदि जाननेकी एक सरल विधि

ज्योतिष-शास्त्रमें वर्पप्रवेशकालीन तिथि, वार निकालनेका एक सरल नियम यह भी वताया गया है कि, जन्मकालका सूर्य और वर्पप्रवेश-कालकी सूर्य राशि, अंशादिमें समान होता है। जिस दिन उस सवत्में जन्मकालीन सूर्यके राशि, अंशादि मिल जायें, उसी दिन उतने ही मिश्रमान-कालिक इष्टकालपर वर्पप्रवेश समझना चाहिए। प्रस्तुत उदाहरणमें जन्म-कालीन सूर्य ७।५।४१।४१ है, यह मार्गशीर्ष कृष्ण १३ गुरुवारकी रातको ५८।३ इष्टकालपर मिल जाता है, अत इसी दिन वर्पप्रवेश माना जायेगा।

वर्पकुण्डलीका लग्न जन्मकुण्डलीके लग्नके समान ही वनाया जाता है। यहाँपर लग्नसारिणीके अनुसार लग्नका उदाहरण दिखालाया जा रहा है—

५८।३ वर्पप्रवेशका इष्टकाल
८०।४३।१६ सारिणीमें प्राप्त सूर्यफल
३८।४६।१६ योगफल

इस योगफलको पुन लग्नसारिणीमें देखा तो ६।२३ का फल ३८।३६।२३ और ६।२४ का ३८।४७।५२ मिला। अभीष्ट योगफल ३८।४६।१६ है, अत इन २३ और २४ अशके मध्यका समझना चाहिए। कला, विकलाको निकालनेके लिए प्रक्रिया की—

३८।४७।५२, २४ अंशके फलमें-से
३८।३६।२३, २३ अंशके फलको घटाया

११।२९ सजातीय संख्या बनायी।
६०

$६६० + २९ = ६८९$

३८।४६।१६, अभीष्ट योगफलमें-से
३८।३६।२३, २३ अंशके फलको घटाया

९।५३ सजातीय संख्या बनायी
६०

$५४० + ५३ = ५९३$

यहाँ अनुपात किया कि ६८९ प्रतिविकलामें ६० कला फल मिलता है तो ५९३ प्रतिविकलामें क्या ?

$$\frac{५९३ \times ६०}{६८९} = \frac{३५५८०}{६८९} = ५१\frac{४४१}{६८९} \times \frac{६०}{१}$$

३८ $\frac{२७८}{६८९}$ अर्थात् ५१ कला ३८ विकला। इस प्रकार वर्षप्रवेशका लग्न ६।२३।५१।३८ हुआ।

वर्षप्रवेशकालीन इष्टकालपर-से ग्रहस्पष्ट जन्मकुण्डलीके गणितके समान ही कर लेने चाहिए। नीचे गणित कर केवल ग्रहस्पष्ट चक्र लिखा जा रहा है।

वर्षप्रवेशकालीन ग्रहस्पष्ट चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०	ग्र०
७	६	७	७	६	६	३	१	७	राशि
५	१६	१७	०	२३	८	१२	२२	२२	अंश
४१	१२	२	३९	१०	४७	७	५३	५३	कला
४१	५१	३५	५६	२९	३९	३०	२८	२८	विकला
६०	७४५	४३	४१	३	४	०	३	३	कलाविकलात्मक गणित
४९	३६	२२	२०	१८	३३	५५	११	११	
		व०		व०	व०				

वर्षकुण्डली

वर्षकुण्डलीके अन्य गणित, द्वादश भाव चक्र, चलित चक्र आदिका साधन जन्मकुण्डलीके गणितके समान करना चाहिए। वर्षपत्रके लिखनेकी विधि भी जन्मपत्रके लिखनेके समान ही है। सिर्फ गताब्द और प्रवेशाब्द अधिक लिखे जाते हैं तथा जन्मके स्थानपर वर्षप्रवेश लिखा जाता है।

मुन्था-साधन

नव ग्रहोंके समान ताजिक शास्त्रमें मुन्था भी एक ग्रह माना गया है। इसकी वार्षिक गति १ राशि, मासिक २॥ अंश और दैनिक ५ कला है। गणित-द्वारा इसका साधन करनेके लिए गत वर्ष-संख्यामें १ जोड़कर १२का भाग देना चाहिए। जन्मलग्न राशिसे शेष संख्या तक गिननेपर मुन्थाकी राशि आती है। मुन्थालग्न स्पष्ट करनेकी यह प्रक्रिया है कि स्पष्ट जन्मलग्नमें गत वर्ष-संख्याको जोड़कर १२ का भाग देनेपर शेष तुल्य स्पष्ट मुन्थाका लग्न आता है।

उदाहरण—गत वर्ष-संख्या ३४ + १ = ३५ − १२ = २ लब्धि और शेष ११ आया। अभीष्ट कुण्डलीकी लग्नराशि मकर है, अतएव मकरसे आगे ११ राशियोंकी गणना करनेपर वृश्चिक राशि मुन्थाकी आयी।

मुन्था साधनका अन्य नियम

जन्मलग्नमे गतवर्षकी सख्याको जोडकर १२ का भाग देनेसे शेष तुल्य मुन्थालग्न होता है ।

उदाहरण—९।३।१०।० जन्मलग्न
३४।०।०।० गतवर्ष सख्या
४३।३।१०।० योगफल सख्या

४३।३।१०।० – १२ = २ लब्धि और शेष ७।३।१०।० अर्थात् वृश्चिक राशि मुन्थालग्न हुई—

मुन्थाकुण्डली चक्र
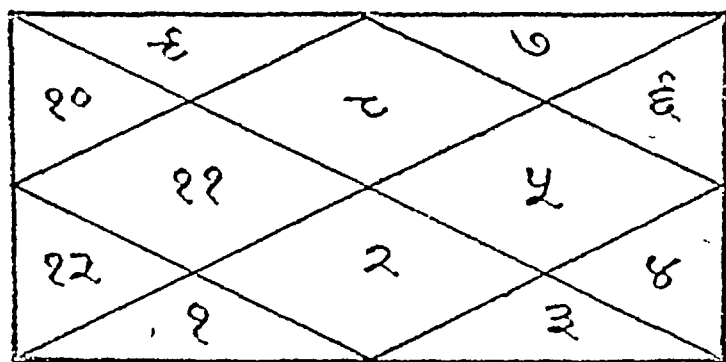
भावस्पष्ट—इस गणितकी विधि जन्मकुण्डलीके गणितमे विस्तारसे प्रतिपादित की गयी है । यहाँपर सिर्फ 'लग्नसे दशम भावसाधन सारिणी'-द्वारा वर्षलग्नके राशि, अशोका फल लेकर दशम भावका साधन किया जा रहा है । वर्षलग्न ६।२३।५१।३८ है, इसका फल उक्त सारिणीमे ३।२७।१५।५६ दशम भावका लग्न मिला ।

३।२७।१५।५६ दशम भाव

६।०।०।०

१।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमें-से

६।२३।५१।३८ लग्नको घटया

३।३।२४।१८ ÷ ६ =

६)३।३।२४।१८(०

०

३ × ३० = ९० + ३ =

६)९३(१५

६

३३

३०

३ × ६० = १८० + २४ =

६)२०४(३४

१८

२४

२४

० × ६० = ० × १८ =

६)१८(३

१८

×

०।१५।३४।३ षष्ठांश हुआ
६।२३।५१।३८ लग्नमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोडा

७। ९।२५।४१ लग्नकी सन्धिमे
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोडा

७।२४।५९।४४ द्वितीय भावमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोडा

८।१०।३३।४७ द्वितीय भावकी सन्धिमें
१५।३४।३ षष्ठांशको जोडा

८।२६।७।५० तृतीय भावमे
१५।३४।३ षष्ठांशको जोडा

९।११।४१।५३ तृतीय भावकी सन्धिमें
१५।३४। ३ षष्ठांशको जोड़ा

९।२७।१५।५६ चतुर्थ भाव
३०।०।० में-से
१५।३४।३ षष्ठांशको घटाया

१४।२५।५७ शेष
९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमें
१४।२५।५७ शेषको जोडा

१०।११।४१।५३ चतुर्थ भावकी सन्धिमे
१४।२५।५७ शेषको जोडा

१०।२६।७।५० पचम भाव
१०।२६।७।५० पचम भावमे

१४।२५।५७ शेपको जोडा

११।१०।३३।४७ पचम भावकी सन्धिमे
१४।२५।५७ शेपको जोडा

११।२४।५९।४४ षष्ठ भावमें
१४।२५।५७ शेपको जोडा

०।९।२५।४१ षष्ठ भावकी सन्धिमें
१४।२५।५७ शेपको जोडा

०।२३।५१।३८ सप्तम भाव

लग्नमे छह राशि जोडनेपर भी सप्तम भाव आता है। यदि उपर्युक्त गणित-द्वारा साधित सप्तम भाव, इस छह राशिके योगवाले सप्तम भावसे मिल जाये तो अपना गणित शुद्ध समझना चाहिए।

६।२३।५१।३८
६।० ।० ।०

०।२३।५१।३८ यह सप्तम भाव पहलेवाले गणितसे मिल गया, अत गणित क्रिया शुद्ध है।

७।९।२५।४१ लग्न सन्धिमें
६।०। ०। ० जोडा
१।९।२५।४१ सप्तम भाव सन्धि
७।२४।५९।४४ द्वितीय भावमें
६। ०। ०। ० जोडा
१।२४।५९।४४ अष्टम भाव
८।१०।३३।४७ द्वितीय भावकी सन्धि
६। ०। ०। ० जोडा
२।१०।३३।४७ अष्टम भावकी सन्धि

८।२६।७।५० तृतीय भावमें
६। ० । ० । ० जोड़ा

२।२६।७।५० नवम भाव
९।११।४१।५३ तृतीय भावकी सन्धिमे
६। ०। ०। ०

३।११।४१।५३ नवम भावकी सन्धि
९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमे
६। ०। ०। ०

३।२७।१५।५६ दशम भाव । यह दशम भाव पहलेवाले दशम भावसे मिल जाये तो गणित शुद्ध समझना चाहिए, अन्यथा अशुद्ध ।

१०।११।४१।५३ चतुर्थ भावकी सन्धिमें
६ । ०। ०।० जोड़ा

४।११।४१।५३ दशम भावकी सन्धि
१०।२६।७।५० पचम भावमें
६। ०। ०। ।० जोड़ा

४।२६।७।५० एकादश भाव
११।१०।३३।४७ पचम भावकी सन्धिमे
६। ०। ०। ० जोड़ा

५।१०।३३।४७ एकादश भावकी सन्धि
११।२४।५९।४४ षष्ठ भावमे
६ । ०। ०। ० जोड़ा

५।२४।५९।४४ द्वादश भाव
०।९।२५।४१ षष्ठ भावकी सन्धिमे
६। ० । ० । ०। जोड़ा

६।९।२५।४१ द्वादश भावकी सन्धि

द्वादश भाव स्पष्ट चक्र

ल०	स०	ध०	स०	स०	स०	सु०	स०	पु०	स०	रि०	स०	भा०
६	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	११	०	राश्यादि
१३	९	२४	१०	२६	११	२७	११	२६	१०	२४	९	
५१	२५	५९	३३	७	४१	१५	४१	७	३३	५९	२५	
३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	५३	५०	४७	४४	४१	

स्त्री	स०	आ	स०	व०	स०	क०	स०	ला०	स०	व्य०	स०	भा०
०	१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	६	राश्यादि
२३	९	२४	१०	२६	११	२७	११	२६	१०	२४	९	
५१	२५	५९	३३	७	४१	१५	४१	७	३३	५९	२५	
३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	५३	५०	४७	४४	४१	

ताजिक मित्रादि-सज्ञा

प्रत्येक ग्रह अपने भावसे ३, ५, ९ और ११वें भावको मित्र दृष्टिसे, २, ६, ८ और १२वें भावको समदृष्टिसे एव १, ४, ७ और १०वें भावको शत्रु दृष्टिसे देखता है। अभिप्राय यह है कि जो ग्रह जहाँपर हो उसके ३, ५, ९ और ११वें स्थानमे रहनेवाले ग्रह मित्र २, ६, ८ और १२वें स्थानमे रहनेवाले ग्रह सम एव १, ४, ७ और १०वें भावमें रहनेवाले ग्रह शत्रु होते है। यह विचार वर्षकुण्डलीसे किया जाता है।

पञ्चवर्ग

वर्षपत्रमें पचवर्गका गणित लिखा जाता है। इसके पचवर्गोमे गृह, उच्च, हद्दा, द्रेष्काण और नवाश ये पांच गिनाये गये है। इनमे गृह, द्रेष्काण एव नवाश साधनको विधि पहले लिखी जा चुकी है। यहाँपर हद्दा साधनका प्रकार लिखा जाता है।

हद्दा-साधन

मेषके ६ अंश तक गुरु, ७ से १२ अंश तक शुक्र, १३ से २० अंश तक बुध, २१ से २५ अंश तक भौम और २६ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। वृषके ८ अंश तक शुक्र, ९ से १४ अंश तक बुध, १५ से २२ अंश तक गुरु, २३ से २७ अंश तक शनि और २८ से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। मिथुनके ६ अंश तक बुध, ७ से १२ अंश तक शुक्र, १३से १७ अंश तक गुरु, १८से २४ अंश तक मंगल और २५ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। कर्कके ७ अंश तक मंगल, ८ से १३ अंश तक शुक्र, १४ से १९ अंश तक बुध, २० से २६ अंश तक गुरु और २७ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। सिंहके ६ अंश तक गुरु, ७से ११ अंश तक शुक्र, १२से १८ अंश तक शनि, १९ से २४ अंश तक बुध और २५से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। कन्याके ७ अंश तक बुध, ८से १७ अंश तक शुक्र, १८से२१ अंश तक गुरु, २२ से २८ अंश तक मंगल और २९ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। तुलाके ६ अंश तक शनि, ७से १४ अंश तक बुध, १५से२१ अंश तक गुरु, २२से २८ अंश तक शुक्र और २९ से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। वृश्चिकके ७ अक तक मंगल, ८ से ११ अंश तक शुक्र, १२से१९ अंश तक बुध, २० से २४ अंश तक गुरु और २५ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। धनुके १२ अंश तक गुरु, १३ से १७ अंश तक शुक्र, १८ से २१ अंश तक बुध, २२ से २६ अंश तक मंगल और २७ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। मकरके ७ अंश तक बुध, ८ से १४ अंश तक गुरु, १५ से २२ अंश तक शुक्र, २३से २६ अंश तक शनि और २७से३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। कुम्भके ७ अंश तक शुक्र, ८ से १३ अंश तक बुध, १४ से २० अंश तक गुरु, २१ से २५ अंश तक मंगल और २६ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। मीनके १२ अंश तक शुक्र, १३ से १६ अंश तक गुरु, १७ से १९ अंश तक बुध, २० से २८ अंश तक मंगल और २९ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है।

मेषादि राशियोंके हद्देश

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
गु० ६	शु० ८	बु० ६	म० ७	गु० ६	बु० ७	श० ६	म० ७	गु० १२	बु० ७	शु० ७	शु० १२	सग्रहांक
शु० ६	बु० ६	शु० ६	शु० ६	शु० ५	शु० १०	बु० ८	शु० ४	शु० ५	गु० ७	बु० ६	गु० ४	सग्रहांक
बु० ८	गु० ८	गु० ५	बु० ६	श० ७	गु० ४	गु० ७	बु० ८	बु० ४	शु० ८	गु० ७	बु० ३	सग्रहांक
म० ५	श० ५	म० ७	गु० ७	बु० ६	म० ७	शु० ७	गु० ५	म० ५	श० ४	म० ५	म० ९	सग्रहांक
श० ५	म० ३	श० ६	श० ४	म० ६	श० २	म० २	श० ६	श० ४	म० ४	श० ५	श० २	सग्रहांक

वर्षकालीन स्पष्टग्रहोंसे प्रत्येक ग्रहका हद्दा अवगत कर नव ग्रहोंका हद्दाचक्र बना लेना चाहिए।

उदाहरण—सूर्य ७।५ है—अर्थात् वृश्चिक राशिके ५ अंशका है, अतः मंगलके हद्दामें माना जायेगा। चन्द्रमा ६।१६—अर्थात् तुला राशिके १६ अंश हैं तथा तुला राशिके १६ वें अंशसे २१ वें अंश तक गुरुका हद्दा होता है, अतः चन्द्रमा गुरुके हद्दामें समझा जायेगा। मंगल ७।१७—अर्थात् वृश्चिक राशिके १८ अंश हैं तथा वृश्चिकके १२वें अंशसे १९वें अंश तक बुधका हद्दा होता है अतः मंगल बुधके हद्दामें समझा जायेगा। इसी प्रकार बुध मंगलके हद्दामें, गुरु शुक्रके हद्दामें, शुक्र बुधके हद्दामें, शनि शुक्रके हद्दामें राहु शनिके हद्दामें और केतु गुरुके हद्दामें माना जायेगा। प्रस्तुत उदाहरण-का हद्देशचक्र निम्नप्रकार है—

सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
मंगल	गुरु	बुध	मंगल	शुक्र	बुध	शुक्र	शनि	गुरु	हद्देश

उच्चबल साधन

द्वितीय अध्यायमें उच्चबल साधनकी जो प्रक्रिया बतायी गयी है, उससे प्रत्येक ग्रहका उच्चबल निकाल लेना चाहिए। जो कलात्मक उच्चबल आये उसमें तीनका भाग देनेसे ताजिकका उच्चबल आ जाता है। उदा-हरणमें पहले सूर्यका उच्चबल ५९।२९ आया है। अतएव—५९।२९ ÷ ३ = १९।५० यह वर्षपत्रके लिए उच्चबल हुआ।

सारिणी-द्वारा उच्चबल साधन

जिस ग्रहका उच्चबल साधन करना हो उसकी उच्चबल साधन-

सारिणीमे राशिके सामने और अंशके नीचे जो फल लिखा हो उसे ग्रहण कर लेना चाहिए। कला, विकलाके फलके लिए आगे और पीछेके अशोका अन्तर करनेसे जो आये, उससे कला, विकलाको गुणा कर ६० का भाग देनेसे कला, विकलाका फल आ जाता है, दोनो फलोका योग करनेसे उच्चबल हो जाता है।

उदाहरण—वर्षप्रवेशकालीन सूर्य ७।५।४१।४१ है, सूर्य उच्चबल साधन सारिणीमे सात राशिके सामने और पाँच अशके नीचे २।४६ दिया है, कला विकलाका फल निकालनेके लिए पाँच अश और छह अशवाले कोष्ठकका अन्तर किया—२।५३

२।४६

०।७

४१।४१ × ७ = २८७। २८७ ÷ ६० = ४।५१

४।५१ विकलात्मक फल। २।४६ प्रथम फलमें

४।५१ द्वितीय फल जोडा

२।५०।५१

अर्थात् २।५०।५१ सूर्यका उच्चबल।

चन्द्रमा—६।१६।१२।५१ है, चन्द्र उच्चबल सारिणीमे ६ राशिके सामने और १६ अशके नीचे १।५३ है।

१।५३—१६ अशका फल

१।४६—१५ अशका फल

०। ७

१२।५१।×७ = ८४।३५७ ÷ ६० = १।२९,

१।५३

१।२९

१।५४।२९ चन्द्र उच्चवल

मगल—७।१७।२।३५ है। मगल उच्चवल सारिणीमे ७ राशि और १७ अशके नीचे १२।६ है।

१२।१३—१८ अशका फल

१२। ६—१७ अशका फल

०। ७   २।३५×७ = १४।२४५ ÷ ६० = ०।१८

१२।१३

०।१८

१२।१३।१८ मंगलका उच्चवल

इसी प्रकार बुधका उच्चबल १४।५७, गुरुका ८।२, शुक्रका १।१८, शनिका ९।७ है।

पञ्चवर्गी वल साधन

अपनी राशिमे जो ग्रह हो उसका ३० विश्वावल, जो अपने उच्चमे हो उसका २० विश्वावल, जो अपने हद्दामें हो उसका १५ विश्वावल, जो अपने द्रेष्काणमे हो उसका १० विश्वावल और जो अपने नवमाशमे हो उसका ५ विश्वावल होता है। इन पाँचो अधिकारियोके वलोको जोडकर चारका भाग देनेसे विश्वावल या विशोपकवल निकलता है।

यदि कोई ग्रह अपनी राशि, अपने उच्च, अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण

और अपने नवमाशमे न पड़ा हो तो उसके बलका विचार निम्न प्रकार करना चाहिए ।

जो ग्रह अपने मित्रके घरमें हो वह तीन चौथाई बलवान्, समराशिमें हो तो आधा बलवान् एव शत्रुराशिमें हो तो चौथाई बलवान् होता है। यह बलमावनकी प्रक्रिया गृह, हद्दा, उच्च, नवमाश और द्रेष्काणमें एक-सी होती है।

बल बोधक चक्र

पतय	स्व०	मि०	सम	शत्रु
गृहेश	३० ०	२२ ३०	१५ ०	७ ३०
हद्देश	१५ ०	११ १५	७ ३०	३ ४५
द्रेष्काणेश	१० ०	७ ३०	५ ०	२ ३०
नवमांशेश	५ ०	३ ४५	२ ३०	१ १५

सूर्य मगलके गृहमें है और मगल उसका शत्रु है, अत सूर्यका गृहबल ७।३० हुआ। चन्द्रमा वर्षकुण्डलीमें शुक्रके गृहमें है, शुक्र चन्द्रमाका शत्रु है, अत चन्द्रमाका गृहबल ७।३० हुआ। मगल स्वगृही है, अत. मगलका ३०।० हुआ। बुध मगलके गृहमें है और मगल बुधका शत्रु है, अत शत्रुगृही होनेसे बुधका गृहबल ७।३० हुआ। इसी प्रकार गुरुका ७।३०, शुक्रका ७।३० और शनिका ७।३० हुआ। उच्चबल—पहले साधन किया है।

सभी ग्रहोंकी उच्चबल साधन-सारिणी आगे दी जाती है।

सूर्य-उच्चबल सारिणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१८ ५३	१९ ००	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ००	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०
वृ १	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ००	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०
मि २	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ००	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ०६	१३ ००
क ३	११ ६	११ ००	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ००	९ ५३	९ ४६	९ ४०
सिं ४	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ००	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०
क ५	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ००	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	६ ६	३ ००

(परमोच्च ०।१०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ०
१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ००	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ००	१७ ५३	मे० ०
१६ १३	१६ ०६	१६ ००	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ०६	१५ ००	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	वृ० १
१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ०६	१२ ००	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	मि २
९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ००	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ००	७ ५३	क० ३
६ १३	६ ६	६ ००	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ००	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	सिं ४
२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ००	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	क ५

सूर्य-उच्चबल सारिणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु.	१	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
६	६	००	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	६	१३	२०
वृ.	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३
७	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	००	६	१३	२०	२६	३३	४०
ध	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	७
८	३३	४०	४६	५३	००	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	००
म.	८	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०
९	५३	००	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	००	६	१३	२०
कुं	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३
१०	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	००	६	१३	२०	२६	३३	४०
मी	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७
११	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	००

(परमोच्च ०।१०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं०
० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ००	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ००	२ ६	तु. ६
३ ४६	३ ५३	४ ००	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ००	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	वृ० ७
७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ००	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	ध ८
१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ००	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ००	१२ ६	म० ९
१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ००	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	कु० १०
१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ००	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	मी ११

चन्द्र-उच्चबल सारणी

अश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६
वृ १	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३
मि २	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३
क ३	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३
सिं ४	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३
क ५	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	३ ५३

(परमोच्च १।३)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	मे. ०
१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	वृ १
१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	मि २
१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	क ३
८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	सि ४
५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	क ५

चन्द्र-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३
वृ ७	० २०	० १३	० ६	० ०	० ०६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६
ध. ८	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६
म. ९	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६
कुं १०	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६
मी. ११	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६

(परमोच्च ११३)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	तु ६
१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	वृ ७
४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	ध ८
७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	म ९
११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	कु १०
१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	मी ११

भौम-उच्चवल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०
वृ. १	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०
मि २	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २५	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०
क ३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०
सिं ४	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०
क ५	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०

(परमोच्च १।२८)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ.
११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	मे ०
८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	वृ १
४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	मि २
१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	क. ३
१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	सिं ४
५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	क. ५

भौम-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०
वृ ७	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०
ध. ८	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०
म ९	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०
कु १०	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०
मी ११	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०

(परमोच्च ९।२८)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ.
८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	तु. ६
११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	वृ ७
१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	ध. ८
१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	म ९
१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	कु १०
१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	मी ११

बुध-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६
वृ. १	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६
मि २	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६
क. ३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६
सिं ४	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६
क ५	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६

(परमोच्च ।१५५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १४	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	मे ०
६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	वृ १
९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	मि २
१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	क ३
१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	सि ४
१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	क ५

बुध-उच्चबल सारणी

अश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३
वृ ७	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३
ध. ८	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३
म ९	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३
कु. १०	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३
मी ११	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३

(परमोच्च ५।१५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं.
१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	तु ६
१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	वृ. ७
१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	ध ८
६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	म ९
३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	कु १०
० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	मी ११

गुरु-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३
वृ. १	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३
मि २	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३
क ३	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६
सिं ४	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६
क ५	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६

(परमोच्च ३।५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	मे ०
१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	वृ १
१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	मि २
१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	क ३
१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	सि ४
१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	क. ५

गुरु-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६
वृ ७	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६
ध ८	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६
म ९	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३
कु १०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३
मी ११	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३

(परमोच्च ३।५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	तु. ६
५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	वृ ७
२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	ध ८
१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	म ९
४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	कु १०
७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	मी ११

शुक्र-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३
वृ १	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३
मि २	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३
क. ३	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३
सिं ४	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३
क ५	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३

(परमोच्च ११।२७)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ.
१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	मे० ०
१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	वृ. १
११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	मि २
८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	८ २६	क ३
४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	मिं ४
१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	क ५

शुक्र-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु ६	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६
वृ. ७	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६
ध ८	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६
म. ९	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६
कु १०	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१३ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६
मी ११	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६

(परमोच्च ११।२७)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	२ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	तु० ६
५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	वृ० ७
८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	ध० ८
११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	म० ९
१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	कु १०
१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	मी ११

शनि-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे ०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	० ०	० ५३	० ४६
वृ १	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३
मि २	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३
क ३	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३
सिं ४	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३
क ५	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३

(परमोच्च ६।२२।०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अ
० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	मे ०
२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	वृ १
६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	७ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	मि २
९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	क ३
१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	सिं ४
१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ८६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	क ५

शनि-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३
वृ ७	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६
ध ८	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६
म ९	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २७	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६
कु १०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६
मी ११	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६

(परमोच्च ६।२२।०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	३९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	तु ६
१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	वृ ७
१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	ध ८
१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	म ९
८ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	कु १०
४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	मी ११

(परमोच्च ६।२२।०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं
१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	तु ६
१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	वृ ७
१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	व ८
१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	म ९
७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	कु १०
४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	मी ११

हद्दावल—सूर्य मंगलके हद्दामे है और सूर्यका मगल शत्रु है, अत शत्रुके हद्दामे होनेके कारण सूर्यका हद्दावल ३।४५ हुआ। चन्द्रमा गुरुके हद्दामे है और गुरु चन्द्रमाका शत्रु है, अत शत्रुके हद्दामे होनेके कारण चन्द्रमाका हद्दावल ३।४५ हुआ। मगल बुधके हद्दामे है और बुध मंगलका शत्रु है अत भौमका हद्दावल ३।४५ हुआ। इसी प्रकार बुधका हद्दावल ३।४५, गुरुका ३।४५, शुक्रका ३।४५ और शनिका ३।४५ हुआ।

द्रेष्काण—द्वितीय अध्यायमे बतायी गयी विधिसे द्रेष्काण लाकर तब विचार करना चाहिए। यहाँ सूर्य भौमके द्रेष्काणमे है अत उसका २।३० बल हुआ। चन्द्रमा शनिके द्रेष्काणमे है अत २।३० बल हुआ। मगल गुरुके द्रेष्काणमे है अत समगृही द्रेष्काण होनेके कारण ५।० बल हुआ। बुध मगलके द्रेष्काणमें है अत उसका २।३० बल हुआ। इसी प्रकार गुरुका द्रेष्काणबल ५।०, शुक्रका १०।० और शनिका ७।३० है।

नवमाश बल—द्वितीय अध्यायमे बतायी गयी विधिसे सूर्य अपने ही नवमाशमें है अत उसका नवमाशबल ५।० हुआ। चन्द्रमा शनिके नवमाशमें है और शनि चन्द्रमाका शत्रु है, अत शत्रुगृही नवमाश होनेसे इसका नवमाशबल १।१५ हुआ। मंगल गुरुके नवमाशमे है और गुरु मगलका सम है अत इसका बल २।३० हुआ। इसी प्रकार बुधका नवमांश बल २।३०, गुरुका २।३०, शुक्रका १।१५ और शनिका १।१५ हुआ।

बलीग्रहका निर्णय

जिस ग्रहका विशोपकबल ११ से २० अश तक हो वह पूर्णबली, जिसका ६ से १० अश तक हो वह मध्यबली, जिसका १ से ५ अश तक हो वह अल्पबली और जिसका विशोपक बल शून्य हो वह निर्बल कहलाता है। कही-कही ५ अशसे कम विशोपकवाले ग्रहको ही निर्बल माना है। स्वयका अनुभव भी यही है कि ५ अशसे कम विशोपकवाला ग्रह निर्बल होता है।

पंचाधिकारी

जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, मुन्थाधिप, त्रिराशिपति और दिनमें वर्ष-प्रवेश हो तो सूर्यराशिपति तथा रात्रिमे वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रराशिपति ये पांच ग्रह वर्षपत्रिकामें विशेषाधिकारी माने जाते है।

त्रिराशिपति विचार

नीचे चक्रमे-से दिनमे वर्षप्रवेश हो तो वर्षलग्नकी राशिके अनुसार दिवा त्रिराशिपति और रात्रिमे वर्षप्रवेश हो तो रात्रिका त्रिराशिपति ग्रहण करना चाहिए।

त्रिराशिपति चक्र

राशि	मे०	वृ०	मि	क०	सि	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
दिवा त्रिराशिपति	सू०	शु०	श०	शु०	गु०	च०	बु०	म०	श०	म०	गु०	च०
रात्रि त्रिराशिपति	गु०	च०	बु०	म०	सू०	शु०	श०	शु०	श०	म०	गु०	च०

उदाहरण कुण्डलीके पचाधिकारी निम्न प्रकार हैं

जन्मलग्नेश	वर्षलग्नेश	मुन्थेश	त्रिराशीश	चन्द्रराशीश
भौम	शुक्र	भौम	भौम	शुक्र
१३	५	१३	७	५
२२	५७	२२	१६	५७
०	०	०	५	०
पूर्णबली	अल्पबली	पूर्णबली	मध्यबली	अल्पबली

उदाहरण–कुण्डलीका पचवर्गी बलचक्र निम्न प्रकार हुआ—

सू०	च०	भौम	वुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
७ ३०	७ ३०	३० ०	७ ३०	७ ३०	७ ३०	७ ३०	गृहवल
२ ५०	१ ५४	१२ १३	१४ ५७	८ २	१ १८	९ ७	उच्चवल
३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	३ ४५	हद्दावल
२ ३०	२ ३०	५ ०	२ ३०	५ ०	१० ०	७ ३०	द्रेष्काणवल
५ ०	१ १५	२ ३०	२ ३०	२ ३०	१ १५	१ १५	नवमाशवल
२१ ३५	१६ ५४	५३ २८	३१ १२	२६ ४७	२३ ४८	२९ ७	योगवल
५ २३ ४५	४ १३ ३०	१३ २२ ०	७ ४८ ०	६ ४१ ४५	५ ५७ ०	७ १६ ४५	विश्वावल

ताजिक शास्त्रानुसार ग्रहोकी दृष्टि

ताजिकमें ग्रहोकी दृष्टि प्रत्यक्षस्नेहा, गुप्तस्नेहा, गुप्तवैरा और प्रत्यक्ष-वैरा, इस प्रकार चार तरहकी होती है। वर्पकुण्डलीमें ग्रह जहाँ रहता है उससे नौवें और पाँचवें स्थानमे स्थित ग्रहको प्रत्यक्षस्नेहा ४५ कलावाली दृष्टिसे देखता है। यह दृष्टि सम्पूर्ण कार्योंमें सिद्धि देनेवाली, मेलापक सज्ञावाली वतायी गयी है।

कोई ग्रह अपने स्थानसे तीसरे और ग्यारहवें स्थानमे स्थित ग्रहको गुप्तस्नेहा दृष्टिसे देखता है। तीसरे भावकी दृष्टि ४० कलावाली और ११वें भावको दृष्टि १० कलावाली होती है। यह दृष्टि कार्यसिद्धि करने-वाली और स्नेहवर्द्धिनी वतायी गयी है।

चौथे और दसवें भावमें गुप्तवैरा एवं १५ कलावाली दृष्टि होती है। पहले और सातवें भावमें प्रत्यक्षवैरा एवं ६० कलावाली दृष्टि होती है। ये दोनों ही दृष्टियाँ शुभ सज्ञक कार्य नाश करनेवाली बतायी गयी है।

विशेष—दृश्य, द्रष्टाका अन्तर द्वादशांश (बारह भाग) से अधिक न हो तो दृष्टियोंका फल ठीक घटता है, अन्यथा नहीं घटता।

बलवती दृष्टि

वाम भागस्थ—छठेंमे बारहवें भाग तक रहनेवाले ग्रहकी दक्षिण भागस्थ—लग्नसे छठे भाग तक स्थित ग्रहके ऊपर बलवती दृष्टि होती है। दक्षिण भागस्थ ग्रहकी वाम भागस्थ ग्रहके ऊपर निर्बल दृष्टि होती है।

विशेष दृष्टि

द्रष्टा ग्रहके दीप्तांशोंके मध्यमें ही दृश्य ग्रह आगे व पीछे स्थित हो तो विशेष दृष्टिका फल होता है और दीप्तांशोंसे अधिक दृश्य ग्रह आगे-पीछे स्थित हो तो मध्यम दृष्टिका फल होता है।

दीप्तांश

सूर्यके १५ अंश, चन्द्रके १२ अंश, मंगलके ८ अंश, बुधके ७ अंश, गुरुके ९ अंश, शुक्रके ७ अंश और शनिके ९ अंश दीप्तांश होते हैं।

उदाहरण—वर्षकुण्डलीमें सूर्य, मंगल और बुधकी शनिके ऊपर प्रत्यक्ष-स्नेहा दृष्टि है। सूर्य वर्षकालीन स्पष्टग्रहमें वृश्चिक राशिके पाँच अंशका आया है और शनि वर्क राशिके बारह अंशका आया है। अंशोंके मानसे सूर्यसे शनि ७ अंश आगे है। सूर्यके दीप्तांश १५ है, अतः शनि सूर्यके दीप्तांशके भीतर हुआ अतएव सूर्यकी दृष्टिका पूर्ण फल समझना चाहिए।

मंगलका स्पष्टमान ३।१७ और शनिका ३।१२ है। दोनोंके अंशोंमें ५ का अन्तर है। मंगलके दीप्तांश ८ है, अतएव दृश्यग्रह दीप्तांशके

भीतर होनेसे पूर्ण फलवाली दृष्टि मानी जायेगी। इसी प्रकार अन्य ग्रहोकी दृष्टि भी समझ लेनी चाहिए।

वर्षेशका निर्णय

वर्षके पंच अधिकारियोमे जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखता हो वही वर्षेश होता है। यदि पचाधिकारियोमे कई ग्रहोका बल समान हो तो जो लग्नको देखता है, वही ग्रह वर्षेश होता है।

पचाधिकारियोकी लग्नपर समान दृष्टि हो और बल भी बराबर हो अथवा पाँचो निर्बली हो तो मुन्थेश ही वर्षेश होता है। यदि पाँचोकी ही दृष्टि लग्नपर न हो तो उनमे जो अधिक बली होता है वही वर्षेश होता है।

कई आचार्योका मत है कि पचाधिकारियोकी दृष्टि एव बल समान हो तो समयाधिपति—दिनमे वर्षप्रवेश हो तो सूर्यराशीश और रातमे वर्ष-प्रवेश हो तो चन्द्रराशीश वर्षेश होता है।

चन्द्रवर्षेशका निर्णय

ताजिक शास्त्रके आचार्योंने चन्द्रमाको वर्षेश होना नही माना है। उनका अभिमत है कि कोमल प्रकृति जलीय चन्द्र अनुशासनका कार्य नही कर सकता है। दूसरी बात यह भी है कि चन्द्रमा मनका स्वामी है, और शासन मनसे नही होता है, उसके लिए शारीरिक बलकी भी आवश्यकता होती है। इसीलिए इस शास्त्रके वेत्ताओने चन्द्रमाको वर्षेश स्वीकार नही किया है।

यदि पूर्वोक्त नियमोके अनुसार चन्द्रमा वर्षेश आता हो तो वह जिस ग्रहके साथ इत्थशाल योग करता है, वही ग्रह वर्षेश होता है, यदि चन्द्र किसी ग्रहके साथ इत्थशाल नही करता हो तो वर्षकुण्डलीका चन्द्र राशीश ही वर्षेश होता है। उदाहरण—पूर्वोक्त उदाहरण वर्षकुण्डलीके पचाधि-कारियोमे सबसे बली मगल आया है, मगलकी लग्नपर दृष्टि भी है अतएव मगल ही वर्षेश होगा।

हर्षबल साधन

ग्रहोके हर्षस्थान चार प्रकारके होते हैं।

१—वर्ष लग्नसे सूर्य ९वें, चन्द्र ३रे, मंगल ६ठे, बुध लग्नमे, गुरु ११वें, शुक्र ५वें और शनि १२वें स्थानमे हो तो ये ग्रह हर्षित होते हैं।

२—स्वगृह और स्वोच्चमें ग्रह हर्षित होते हैं।

३—वर्ष लग्नसे १।२।३।७।८।९वें भावोमें[1] स्त्रीग्रह और ४।५।६।१०।११।१२वें भावोमें पुरुषग्रह हर्षित होते है।

४—पुरुषग्रह—रवि, मंगल, गुरु दिनमें और स्त्रीग्रह तथा नपुंसक ग्रह—शुक्र, चन्द्र, बुध, शनि रातमे वर्षप्रवेश होनेपर हर्षित होते हैं।

जहाँ हर्षबल प्राप्त हो वहाँ ५ विश्वात्मक बल होता है।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्ष कुण्डलीमें प्रथम प्रकारका हर्षबल किसी ग्रहका नही है। द्वितीय प्रकारका हर्षबल स्वगृही होनेसे शुक्र और मंगलका है। तृतीय प्रकारका हर्षबल शुक्र चन्द्र, बुधका है, और चतुर्थ प्रकारका रातमें वर्षप्रवेश होनेके कारण चन्द्र, बुध, शुक्र और शनि इन चारो ग्रहोका है।

हर्षबल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	प्रथम
०	०	५	०	०	५	०	द्वितीय
०	५	०	५	०	५	०	तृतीय
०	५	०	५	०	५	५	चतुर्थ
०	१०	५	१०	०	१५	५	ऐक्य

१ यहाँ स्त्रीग्रह में शुक्र, बुध, शनि और चन्द्र इन चारोंको ग्रहण किया है।